हिन्दी और तेलुगु के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन

हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद, की पीएच.डी. (हिन्दी) उपाधि
के लिए प्रस्तुत

शोध - प्रबन्ध

2003

प्रस्तुतकर्ता

कोणेदल रमेश रतन कुमार

एम. ए., एम. फिल.

निर्देशक एवं विभागाध्यक्ष

प्रो. शशि मुदीराज

डी. लिट.

हिन्दी विभाग

हैदराबाद विश्वविद्यालय

हैदराबाद - 500 046

CERTIFICATE

Department of Hindi
School of Humanities
University of Hyderabad
HYDERABAD – 500 046

Dated : 25 -07-2003

This is to certify that I, **Konedala Ramesh Rathan Kumar** have carried our the research embodied in the present thesis for the full period prescribed under Ph.D. Ordinances of the University.

I declare to the best of my knowledge that no part of this thesis was earlier submitted for the award of research degree of any University.

25/7/03

Signature of the Candidate
Name :- **Konedala Ramesh Rathan Kumar**
Enrollment No.: **98 H H PH 05**

25/7/03
Signature of Supervisor

25/7/03
The Head, Department of Hindi,
Head of the Department
Hyderabad - 500 046. (A.P.)

25/7/03
I/C Dean of the School.
DEAN
SCHOOL OF HUMANITIES
University of Hyderabad
Hyderabad-500 134

भूमिका

सामाज का हित करने वाला ही साहित्य है। विभिन्न साहित्यिक विधाओं में उपन्यास श्रव्य काव्य कहलाने योग्य है। उपन्यास आधुनिक युग की देन है। उपन्यास साहित्य की जितनी अधिक उन्नति संसार की भाषाओं के साहित्य में हो रही है, उतनी अन्य किसी साहित्यांग की नहीं। विश्व साहित्य में आज उपन्यास सर्वाधिक लोकप्रिय साहित्यिक विधा के रूप में समादृत है। इस विशेष साहित्यांग के द्‌वारा लेखक पाठक के निकट अपने मन की विशेष बात रखना चाहता है। शिल्प की दृष्टि से उपन्यास अन्य कलाओं की अपेक्षा अधिक सहज एवं बोधगम्य है। विश्व साहित्य में सबसे पहले अंग्रेजी साहित्य का असर पहले भारत के बंगला साहित्य पर पड़ा। बंगला साहित्य से प्रभावित होकर हिन्दी, तेलुगु, तमिल आदि भाषाओं में उपन्यास विधा का विकास आरम्भ हुआ था। वास्तव में कथा का परम्परागत विकसित स्वरूप ही, आज का उपन्यास है। उपन्यास मानव जीवन का यथार्थ चित्रण है। गद्य के रूप में रहने पर भी, इसका प्रभाव महत्वपूर्ण है। कुछ विद्‌वानों के अनुसार उपन्यास का जन्म पूँजीवाद के उत्थान के साथ हुआ है।

उपन्यास के लंबी सफर में जीवनीपरक उपन्यास एक मंजिल है। जीवनीपरक उपन्यास अर्थात किसी महान व्यक्ति की जीवनी का मौलिक रूप में वर्णन करने वाली गद्य रचना है। जीवनी और उपन्यास के मध्य का सेतु ही, जीवनीपरक उपन्यास है। हिन्दी साहित्य में मौलिक जीवनीपरक उपन्यासों की संख्या कम है। लेकिन अनुदित उपन्यास अधिक हैं। तेलुगु में भी मौलिक जीवनीपरक उपन्यासों की सख्या कम है। हिन्दी और तेलुगु के श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासकार केवल चार-पाँच ही हैं। उन में से डा. रांगेय राघव, बृन्दावन लाल वर्मा अमृतलाल नागर आदि हिन्दी के और नोरि नरसिंह शास्त्री, श्रीप्रसाद, लल्लादेवी आदि तेलुगु के, प्रमुख हैं। इस शोध प्रबन्ध

में कुल–मिलकर 18 हिन्दी और 21 तेलुगु के मौलिक ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण और तुलुनात्मक अध्ययन किया गया। सारे उपन्यासों को कथा वस्तु के आधार पर दो भागों में विभाजन किया गया है। राजा और राजवंशजों की जीवनियों पर आधारित उपन्यासों को एक तरफ और सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक महान व्यक्तियों को दूसरी तरफ कर दिया। बाद में काल के आधार पर चार भागों में विभाजन किया। ईसा पूर्व का समय प्राचीनकाल है। भक्तिकाल का समय पूर्व मध्यकाल है। रीतिकाल का समय उत्तर मध्यकाल है। और अंत में आधुनिक काल जो आधुनिक युग से संबंधित है। उदाहरण के रूप में आर्य चाणक्य, सम्राट अशोक, यशोधरा जीत गई आदि प्राचीन काल के उपन्यास हैं। मानस का हँस, खंजन नचन, कविसार्वभौमुडु, पोतनामात्य, धूर्जटी आदि पूर्व मध्यकाल के उपन्यास हैं। मेरी भव बाधा हरो, दुर्गावती, अहल्याबाई, महाराणा प्रताप सिंह आदि उत्तर मध्यकाल के उपन्यास हैं। भारती का सपूत, झाँसी लक्ष्मीबाई, तात्यटोपे आदि आधुनिक काल के उपन्यास हैं। शिल्प की दृष्टि से ये उपन्यास सफल जीवनी प्रधान उपन्यास साबित हुये हैं। हिन्दी और तेलुगु के जीवनीपरक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन करके दोनों के बीच के समयम और अंतर का निरूपण किया गया।

प्रस्तुत शोधप्रबन्ध हिन्दी और तेलुगु के जीवनीपरक उपन्यासों के ऐतिहासिक साक्ष्य पर जीवनीपरक उपन्यासों का वस्तु निष्ठा समीक्षण और मूल्यांकन है। स्वतंत्र विधा के रूप में स्वीकृत, जीवनीपरक उपन्यासों की अद्यातन विशेषताओं के साक्ष्य पर ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों की विशिष्टताओं, उपलब्धियों और सीमाओं का रेखांकन इस ग्रन्थ का प्रमुख प्रतिपाद्य है। इतिहास और कल्पना के मणिकांचन योग से निर्मित होने वाले ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों का तात्विक विवेचन करके हिन्दी और तेलुगु के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों के विवेचन और विश्लेषण के साथ विधागत विकास में लेखक के प्रदेय का स्पष्ट रेखांकन इस ग्रन्थ का प्रमुख लक्ष्य है।

प्रस्तुत शोध विषय की प्रेरणा मुझे गुरुवर आचार्या शशि मुदीराजजी से मिली है। हिन्दी और तेलुगु के उपन्यास क्षेत्रों में जीवनीपरक उपन्यास विधा का विशेष महत्व है। तुलनात्मक दृष्टि से इन कृतियों पर कोई शोधकार्य भी नहीं हुआ। यही कारण था कि, जब शोधकरने का प्रसंग उपस्थित हुआ तो सब से पहले यही विषय मेरे सामने आया। मेरे मार्गदर्शक आचार्या शशिजी के समर्थन से मुझे बल मिला और मैं ने इसी विषय पर शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करने का निश्चय कर लिया। इस अध्ययन के प्रस्तुतीकरण के लिए मैं अत्यन्त कृतज्ञता-पूर्वक अपने निर्देशिका, पूजनीय आचार्या शशि मुदीराज का उपकृत हूँ।

इस अवसर पर मैं अपने पूजनीय माता-पिता, जो अनपढ़ गाँव के कृषक परिवार में जन्म लेकर भी, कडी मेहनत करके, रोज की मजदीरी की कमाई से मुझे पढा-लिखाकर इतना उत्तम स्थान तक पहुँचाया, उन के प्रति प्रणाम निवेदन करता हूँ। धर्मपत्नी शोभादेवी, अनेक असुविधाएँ झेलकर मेरे इस सारस्वत अनुष्ठान में निरन्तर सहयोग और प्रोत्साहन दिया है। मेरे महाविद्यालय के प्रधानाचार्य, सह प्रवक्तागण के प्रति भी मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ, जिन्हों ने निरन्तर प्रेरित और प्रोत्साहन किया। मैं उन ज्ञात - अज्ञात मनीषि - विद्‌वानों के प्रति भी ऋणी हूँ, जिन के ग्रन्थों से मुझे दृष्टि और दिशा मिली। साथ ही मैं उन ज्ञात - अज्ञात व्यक्तियों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनका प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से इस कार्य में सहयोग मिला।

कोणिदल रमेश रतन कुमार

अनुक्रमणिका

पृष्ठ

विषय प्रवेश

0.1.	**उपन्यास का आरम्भ और विकास**	2
0.1.1.	हिन्दी साहित्य में उपन्यास	8
0.1.2.	तेलुगु साहित्य में उपन्यास	12
0.2.	**हिन्दी और तेलुगु उपन्यासों के प्रवृत्तिगत भेद**	16
0.3.	**जीवनीपरक उपन्यास**	19
0.4.	**जीवनीपरक उपन्यासों और ऐतिहासिक उपन्यासों में अंतर**	20
0.5.	**जीवनीपरक उपन्यासों के लक्षण**	28
0.5.1.	कथानक	28
0.5.2.	पात्र या चरित्र-चित्रण	29
0.5.3.	कथोपकथन	30
0.5.4.	देशकाल वातावरण	30
0.5.5.	शैली	31
0.5.6.	उद्‌देश्य	31
0.6.	**हिन्दी के उपन्यास और लेखक**	33
0.7.	**तेलुगु के उपन्यास**	34

अध्याय एक

हिन्दी के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण

1.1.	**प्राचीनकाल**	38
1.2.	**पूर्व मध्यकाल**	39
1.3.	**उत्तर मध्यकाल**	40
1.4.	**आधुनिककाल**	40
1.5.	**चरित्र और कथावस्तु के आधार पर उपन्यासों का विश्लेषण**	
1.5.	**यशोधरा जीतगई**	41

1.5.1.	ऐतिहासिकता	41
1.5.2.	काल्पनिकता	45
1.5.3.	अनुपात	47
1.6.	**साम्राट अशोक**	48
1.6.1.	ऐतिहासिकता	48
1.6.2.	काल्पनिकता	51
1.6.3.	अनुपात	54
1.7.	**महाराज**	55
1.7.1.	ऐतिहासिकता	55
1.7.2.	काल्पनिकता	60
1.7.3.	अनुपात	63
1.8.	**महाराणा प्रतापसिंह**	64
1.8.1.	ऐतिहासिकता	64
1.8.2.	काल्पनिकता	68
1.8.3.	अनुपात	72
1.9.	**महारानी दुर्गादेवी**	73
1.9.1.	ऐतिहासिकता	73
1.9.2.	काल्पनिकता	77
1.9.3.	अनुपात	80
1.10.	**शिवनेर केसरी**	81
1.10.1.	ऐतिहासिकता	81
1.10.2.	काल्पनिकता	86
1.10.3.	अनुपात	90
1.11.	**झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई**	90
1.11.1.	ऐतिहासिकता	90
1.11.2.	काल्पनिकता	95
1.11.3.	अनुपात	98
1.12.	**तात्याटोपे (स्वतंत्र सेनानी)**	99
1.12.1	ऐतिहासिकता	99
1.12.2	काल्पनिकता	105
1.12.3.	अनुपात	108
1.13.	**निष्कर्ष**	109

अध्याय दो

हिन्दी के साहित्यिक और सामाजिक जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण

2.1.	**काल के आधार पर उपन्यासों का विभाजन**	112
2.2.	**चरित्र, कथावस्तु, ऐतिहासिकता और काल्पनिकता के आधार पर उपन्यासों का विश्लेषण**	113
2.3.	**लोई का ताना**	115
2.3.1.	ऐतिहासिकता	115
2.3.2.	काल्पनिकता	118
2.3.3.	अनुपात	120
2.4.	**लखिमा की आँखे**	123
2.4.1.	ऐतिहासिकता	123
2.4.2.	काल्पनिकता	126
2.4.3.	अनुपात	128
2.5.	**धूनी का धुआँ**	129
2.5.1.	ऐतिहासिकता	129
2.5.2.	काल्पनिकता	133
2.5.3.	अनुपात	136
2.6.	**तानसेन**	138
2.6.1.	ऐतिहासिकता	138
2.6.2.	काल्पनिकता	142
2.6.3.	अनुपात	145
2.7.	**रत्ना की बात**	146
2.7.1.	ऐतिहासिकता	146
2.7.2.	काल्पनिकता	149
2.7.3.	अनुपात	151

2.8.	**खंजन नयन**	153
2.8.1.	ऐतिहासिकता	153
2.8.2.	काल्पनिकता	157
2.8.3.	अनुपात	160
2.9.	**मानस का हंस**	162
2.9.1.	ऐतिहासिकता	162
2.9.2.	काल्पनिकता	164
2.9.3.	अनुपात	166
2.10.	**मेरी भव बाधा हरो**	168
2.10.1.	ऐतिहासिकता	168
2.10.2.	काल्पनिकता	173
2.10.3.	अनुपात	176
2.11.	**भारती का सपूत**	178
2.11.1	ऐतिहासिकता	178
2.11.2	काल्पनिकता	181
2.11.3.	अनुपात	184
2.12.	**निष्कर्ष**	186

अध्याय तीन

तेलुगु के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण

3.1.	**काल के आधार पर विभाजन**	188
3.2.	**चरित्र और कथावस्तु के आधार पर ऐतिहासिक तथ्य और काल्पनिकता का विश्लेषण**	189
3.3.	**आर्य चाणक्य**	191
3.3.1.	ऐतिहासिकता	191

3.3.2	काल्पनिकता	193
3.3.3.	अनुपात	196
3.4.	**साम्राट अशोक**	197
3.4.1.	ऐतिहासिकता	197
3.4.2	काल्पनिकता	201
3.4.3.	अनुपात	202
3.5.	**रुद्रमदेवी**	202
3.5.1.	ऐतिहासिकता	202
3.5.2.	काल्पनिकता	205
3.5.3.	अनुपात	207
3.6.	**अप्पाजी**	208
3.6.1.	ऐतिहासिकता	208
3.6.2.	काल्पनिकता	212
3.6.3.	अनुपात	213
3.7.	**अकबर**	214
3.7.1.	ऐतिहासिकता	214
3.7.2.	काल्पनिकता	218
3.7.3.	अनुपात	221
3.8.	**शाहजहाँ**	222
3.8.1.	ऐतिहासिकता	222
3.8.2.	काल्पनिकता	227
3.8.3.	अनुपात	229
3.9.	**अहल्याबाई**	230
3.9.1.	ऐतिहासिकता	230
3.9.2.	काल्पनिकता	236
3.9.3.	अनुपात	241

3.10.	**छत्रपति शिवाजी**	243
3.10.1.	ऐतिहासिकता	243
3.10.2.	काल्पनिकता	246
3.10.3.	अनुपात	247
3.11.	**झाँसी लक्ष्मीबाई**	248
3.11.1.	ऐतिहासिकता	248
3.11.2.	काल्पनिकता	250
3.11.3.	अनुपात	251
3.12.	**तिप्पु सुल्तान**	252
3.12.1.	ऐतिहासिकता	252
3.12.2.	काल्पनिकता	253
3.12.3.	अनुपात	255
3.13.	**समीक्षा**	256

अध्याय चार

तेलुगु के साहित्यिक और सामाजिक जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण

4.1.	**काल के आधार पर उपन्यासों का विभाजन: चरित्र और कथावस्तु के आधार पर ऐतिहासिक तथ्य और काल्पनिक दृष्टिगत विश्लेषण :**	259
4.2.	**कवि सार्वभौमुडु**	261
4.2.1.	ऐतिहासिकता	261
4.2.2.	काल्पनिकता	263
4.2.3.	अनुपात	266
4.3.	**तिक्कन सोमयाजी**	266
4.3.1.	ऐतिहासिकता	266

4.3.2.	काल्पनिकता	276
4.3.3.	अनुपात	283
4.4.	**कविद्वयम**	285
4.4.1.	ऐतिहासिकता	285
4.4.2	काल्पनिकता	288
4.4.3.	अनुपात	293
4.5.	**धूर्जटि**	294
4.5.1.	ऐतिहासिकता	294
4.5.2.	काल्पनिकता	296
4.5.3.	अनुपात	297
4.6.	**नारायणभट्टु**	298
4.6.1.	ऐतिहासिकता	298
4.6.2.	काल्पनिकता	299
4.6.3.	अनुपात	300
4.7.	**आन्ध्रकविता पितामहुड्डु**	301
4.7.1.	ऐतिहासिकता	301
4.7.2.	काल्पनिकता	308
4.7.3.	अनुपात	316
4.8.	**पोतनामात्युलु**	317
4.8.1.	ऐतिहासिकता	317
4.8.2.	काल्पनिकता	319
4.8.3.	अनुपात	320
4.9.	**लकुमादेवि**	322
4.9.1.	ऐतिहासिकता	322
4.9.2.	काल्पनिकता	324
4.9.3.	अनुपात	325

4.10.	**रोशनारा**	326
4.10.1.	ऐतिहासिकता	326
4.10.2.	काल्पनिकता	329
4.10.3.	अनुपात	330
4.11.	**रुचीदेवी**	331
4.11.1.	ऐतिहासिकता	331
4.11.2.	काल्पनिकता	335
4.11.3.	अनुपात	337
4.12.	**श्री तालपाक अन्नमाचार्यलु**	338
4.13.	**निष्कर्ष**	340

अध्याय पाँच

हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यासों का शिल्प विवेचन 341

अध्याय छः

तेलुगु के जीवनीपरक उपन्यासों का शिल्प विवेचन 360

अध्याय सात

उपसंहार 390

* * * *

विषय प्रवेश

उपन्यास आधुनिक युग की देन है। उपन्यास, श्रव्य काव्य के अन्तर्गत रखा जाता है। आधुनिक युग को गद्य का युग कहा जाता है। आज गद्य साहित्य और विशेष रूप से उपन्यास-साहित्य की जितनी अधिक उन्नति संसार की भाषाओं के साहित्य में हो रही है, उतनी अन्य किसी साहित्यांग की नही। विश्व साहित्य में आज उपन्यास सर्वाधिक लोकप्रिय सााहित्यिक-विधा के रूप में समादृत है। वह मनुष्य के सामाजिक या वैज्ञानिक अथवा दोनों प्रकार के जीवन का रोचक गद्य प्रतिरूप है । साहित्य के आधुनिक प्रचलित रूपों में वह अपेक्षाकृत नवीन विधा है। [1]"*यद्यपि यह शब्द संस्कृत भाषा का है, किन्तु प्राचीन, संस्कृत-साहित्य* में इसका प्रयोग उस अर्थ मे कभी नहीं हुआ, जिस में हम आज करते हैं। भारत की प्रान्तीय भाषाओं में यह शब्द विभिन्न अर्थों मे प्रयुक्त होता है। तेलुगु, तमिल, कन्नड आदि दक्षिण भारत की भाषाओं में यह हिन्दी के 'व्याख्यान', 'वक्तृता' आदि के अर्थ में प्रचलित है। मराठी में उपन्यास को 'कादम्बरी' भी कहते हैं। इसके शब्दार्थ के द्वारा उप=निकट, न्यास=रखना मालूम होता है। इस विशेष साहित्यांग के द्वारा लेखक, पाठक के निकट अपने मन की विशेष बात रखना चाहता है।" शिल्प की दृष्टि से उपन्यास अन्य कलाओं की अपेक्षा अधिक सहज एवं बोधगम्य है। उपन्यासकार अन्य कलाकारों की भाँति एक सर्जक होता है। वह अपने अनुभवों और भोगे हुए सत्य को यथार्थ, परिस्थितियों और वातावरण के बीच चरित्रों के माध्यम से प्रकट करता है। कल्पना, मनोरंजन अथवा रहस्यात्मकता से परे आज के उपन्यास-साहित्य का विषय सामाजिक एवं वैयक्तिक जीवन चित्र उपस्थित करना है। गद्य साहित्य में कहानी और उपन्यास दोनों ही महत्वपूर्ण विधाएं हैं । कथा का परम्परागत विकसित स्वरुप ही आज का उपन्यास है।

---

1. हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास - डा. प्रताप नारायण टंडन - पृ-11

0.1. उपन्यास का आरम्भ और विकास :-

हिन्दी उपन्यासों के सम्बन्ध में विद्वानों में मत-वैभिन्य है। कुछ विद्वान उसे सीधे पाश्चात्य साहित्य से उद्भूत मानते हैं, तो कुछ उसे पूर्णरूपेण भारतीय साहित्यांग के रूप में प्रस्तुत करते हैं। कुछ विद्वानों ने उपन्यास को पश्चिम की देन न मानते हुए उसे संस्कृत साहित्य मे प्रचलित आख्यायिकाओं से आविर्भूत माना है। यह सच है कि हिन्दी के प्रारम्भिक उपन्यासों पर पाश्चात्य उपन्यास के प्रभाव की अपेक्षा, बंगला और उर्दू के कथा-साहित्य तथा हिन्दी की रीतिकालीन प्रवृत्तियों का प्रभाव अधिक रहा है। क्योंकि प्रारम्भिक युग में जब कि हिन्दी - उपन्यास का जन्म हुआ तब न तो हिन्दी लेखक अंग्रेजी भाषा का इतना अधिक ज्ञान ही रखते थे और न तब तक अधिक संख्या में अंग्रेजी उपन्यासों के अनुवाद ही उपलब्ध हो सके थे। लेकिन हम यह कहसकते हैं कि हिन्दी-उपन्यास के जन्म-काल में जो अंग्रेजी उपन्यास उपलब्ध थे, वे अधिकांश मनोरंजन से परिपूर्ण थे और यही मनोरंजन का तत्व हिन्दी के प्रारम्भिक उपन्यासों में अंग्रेजी प्रभाव के रूप में देखा जा सकता है।

हिन्दी उपन्यास का इतिहास, किसी भी देश के उपन्यास के इतिहास की तरह, हिन्दी-भाषी क्षेत्र की सभ्यता और संस्कृति के नवीन रूप के विकास का साहित्यक प्रतिफलन है। हिन्दी उपन्यास के लिए जैसे-जैसे कच्चा माल तैय्यार होता गया, वैसे-वैसे पश्चिमा की तथाकथित भौतिक सभ्यता हमारी वाणी और वेश भूषा को ही नहीं, प्रत्युत हमारी दृष्टि और चेतना को भी आक्रांत करने में सफल होती गयी। उपन्यास सर्वत्र ही साहित्य का उपेक्षित अंग रहा है। उद्देश्य की दृष्टि से वह मात्र मनोरंजन का साधन बनकर रहजाता था। साहित्यक उत्कर्ष के लिए उसे 'गद्य-काव्य' बनकर उन गुणों से मंडित होना पड़ता था , जो वस्तुत: काव्य के हैं। देवकीनंदन खत्री से लेकर 'अज्ञेय' तक के हिन्दी-उपन्यास का इतिहास इस सामान्य तथ्य का दृष्टांत है। हिन्दी में उपन्यास-रचना का प्रारम्भ हुआ तो उसका संबंध

प्राचीन औपन्यासिक परंपरा से नाम-मात्र का भी नहीं था। इसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि हिन्दी-उपन्यास अपने पैरों पर खड़ा होने के पहले घुटनों के बल भी काफी दिनों तक चलता रहा था। आरम्भिक दिनों में उपन्यास मुख्यतः मनोरंजन का साधन था, यद्यपि वह नीति और उपदेश का स्वाँग भी भरता था। हिन्दी-उपन्यास की एक अन्य ऐसी धारा है जो क्षीण होने पर भी विचारयोग्य है। बृंदावनलाल वर्मा, अमृतलाल नागर, राहुल सांकृत्यायन ने ऐसे ऐतिहासिक उपन्यास लिखे जिन से क.मा. मुंशी के अभाव की पूर्णतः पूर्ति होजाती है। किंतु उपन्यास केलिए इतिहास का एक मात्र महत्व यह है कि वह विषय को बहुत दूर पर रखकर अवलोकनीय बन सकता है।

[1] *''हिन्दी 'उपन्यास' शब्द अंग्रेजी भाषा के 'नावेल' शब्द का अर्थ परक है। 'इटालियन' शब्द नावेल्ला से 'अंग्रजी' में 'नावेल' शब्द की उत्पत्ति हुई। इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 'बोलास्सियो' ने 1350 में किया। उन्हों ने अपनी रचना 'डेकामेरान' को 'नवेल्ला स्टोरियाँ ' का नाम रख दिया। गद्य में कहानी की तरह रहते हुए भी कहानी से भिन्न विशिष्टता रखनेवाली प्रक्रिया है। अंग्रेजी-भाषा के प्रथम उपन्यास 'Euphues' की रचना 1479 में हुई। ''* 'New English Dictionary' के अनुसार उपन्यास एक काल्पनिक गद्य कथा अथवा इतिवृत्त है, जो पर्याप्त दीर्घ होता है जिस के कथानक में उन चरित्रों और कार्य-व्यापारों का चित्रण होता है जो वास्तविक जीवन के चरित्र और कार्य व्यापारों को निरुपित करने का प्रयास करता है। यह सही है कि उपन्यास में मनुष्य के जीवन का वास्तविक चित्रण होता है। इसलिए उपन्यास मानव जीवन का नजदीक से दिखाता है। उपन्यास को पढ़ते ही पाठक को ऐसा लगता है कि वह उसके अपने जीवन का चित्रण है। गद्य के रूप में रहने पर भी इसका प्रभाव महत्वपूर्ण है। [2] *"Novel is the interpretation of human life by means of fiction prose in narrative."*

---

1. प्रेमचंद पूर्व के हिन्दी उपन्यास - ज्ञानचंद जैन - पृ-7
2. An Introduction to Literary Criticism - Arnest - P - 118

उपन्यास मानव जीवन का यथार्थ चित्रण है, इस में कोई संदेह नही है। इसी का समर्थन करते हुए 'कलारा रीव' ने कहा [1] "*The novel is a picture of real life and manner of times in which it is written*" इन के अनुसार उपन्यास यथार्थ जीवन का तथा उस काल का चित्र है, जिस काल में वह लिखा गया। इसका समर्थन करते हुए कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार हैं। [2]"*सामान्य रूप से उपन्यास, उस गद्य आख्यान को कहाजाता है, जो यथार्थ जीवन का यथार्थवादी दृष्टि से अध्ययन करें*"... 'क्रास' महाशय ने अपनी किताब "Development of English Novel" में इस प्रकार उपन्यास की परिभाषा दी। यूरोपिय विद्वान शल्फ का के अनुसार.... [3] "*उपन्यास केवल गद्य में लिखी हुई कथा ही नहीं है। उस ने उसे मानव जीवन का गद्य माना है।*" "The Novel is not merely fictional prose, it is the prose of man's life, the first art to attempt to take whole man and give him expression" 'दि न्यू पिक्चर्ड इन्साइक्लोपीडिया' में उपन्यास की परिभाषा उसके आकार की गद्य में रचित उस कल्पित कथात्मक रचना को कहा गया है, जिस में जीवन के यथार्थ स्वरूप की परिचायक कथा तथा पात्र सर्जित किये गये हो"। [4] "*अंग्रेजी के विद्वान ई.एम. कार्स्तर ने उपन्यास को गद्य में लिखी रचना के रूप में परिभाषित करते हुए उसके आकार के सम्बन्ध में कहा है कि, उपन्यास को कम से कम पचास हजार शब्दों की रचना अवश्य होना चाहिए*"। [5] "*फ्रेन्च विद्वान एवेल शेबेल का मन्तव्य है कि उपन्यास एक निश्चित आकार का ऐसा आख्थान है जो गद्य में लिखागया है*"। [6] "*पाश्चात्य विद्वान श्री वेब्स्तर के विचार में उपन्यास गद्य में लिखी हुई एक विशाल आकार की कल्पना प्रधान कथा होती है। उसमें मानव जीवन के यथार्थ स्वरूप का चित्रण करनेवाले पत्रों और उनके कार्यों का अंकन होता है*"। [7]"*विलियम हैनरी हडसन ने भी उपन्यास को परिभाषित करते हुए कहा है, कि वह एक ऐसी कथा होती*

---

1 & 2. Novel and the people - Cross - P - 52

3 To 7. हिन्दी उपन्यास का प्रारम्भिक विकास - डा. कुमारी शैलबाला - पृ - 11 से 14

है जो कल्पित होती है। इस कल्पना प्रधान कथा का आधार मानव का यथार्थ जीवन ही है"। [1]*"इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका के अनुसार उपन्यास का मूल स्थम्भ उसमें सन्निहित यथार्थात्मकता का तत्व है। उपन्यास में मानव जीवन के सत्य का वास्तविक चित्रण प्रस्तुत कियाजाता है।*

उपन्यास वस्तुत: ही नया और ताजा साहित्यांग है, परन्तु इस का प्रयोग प्राचीन साहित्य में भी किया गया है। [2] *"भरतमुनि ने अपने नाट्य शास्त्र नामक ग्रंथ में उपन्यास शब्द का प्रयोग नाट्य विश्लेषण के संदर्भ में पताका स्थानक के चतुर्थ भेद और प्रतिमुख संधि के अंग विशेष के रूप में किया है"*। संस्कृत भाषा में इस शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थ प्रचलित हैं। रामचन्द्र वर्मा द्वारा सम्पादित शब्द कोश को उपन्यास का अर्थ गद्य कथा है। भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से उपन्यास शब्द 'उप' और 'नि' पूर्वक 'अस' धातु से 'धत्र' प्रत्यय जोड़ने से उत्पन्न हुआ। 'अस' धातु का अर्थ होता है 'रखना'। अपने समीप की वस्तु, अर्थात ऐसी रचना जो समीप के जीवन की अपना आधार बनाए, अथवा जिसमें हम अपना समीप जीवन देखसकें। इस दृष्टि से उपन्यास जो साहित्यांग विशेष प्रयुक्त होता है, वह उचित है। हिन्दी भाषा और साहित्य में यहीं 'उपन्यास' शब्द कथा साहित्य की एक विशिष्ट विधा के लिए प्रयुक्त होता है। इस में मनुष्य का सम्पूर्ण विवेचन कियाजाता है। प्राचीन संस्कृत साहित्य तथा अन्य साहित्येतर विधाओं में प्रयुक्त अपने भिन्न-भिन्न अर्थों का प्रसार करता हुआ आधुनिक उपन्यास अपने सर्वाधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय अर्थ कथा- साहित्य की एक विधा, के रूप में प्रख्यात हो गया है। उपन्यास एक ऐसी कहानी है जिस में जीवन के अधिकांश वास्तविक अनुभवों की अभिव्यक्ति होती है। यह एक बृहत गद्य वृत्तांत है जिस में जीवन के प्रतिनिधित्व का दावा करनेवाले पात्रों को कथा में चित्रित कियाजाता है। उपन्यास गद्य में लिखीगई कथा मात्र नही, वह मनुष्य के जीवन का गध्यरूप है। उपन्यास वह प्रथम कलारूप हैं। जो समग्र मनुष्य को समझने और

---

1. हिन्दी उपन्यास का प्रारम्भिक विकास - डा. कुमारी शैलबाला - पृ - 14
2. हिन्दी लघु उपन्यास - घनश्याम मधुप - पृष्ठ - 15

अभिव्यक्त करने का प्रयास करता है। यथार्थ की एक दूसरी-दृष्टि उपन्यास प्रस्तुत करता है। काव्य, नाटक, सिनेमा, चित्रकला या संगीत द्वारा यथार्थ सी निश्चय ही उपन्यास का यथार्थ भिन्न है। ये सब यथार्थ से उन पहलुओं के भले ही अभिव्यक्त करसके जो उपन्यास की पहुँच के बाहर है, परन्तु किसी एक पुरुष, स्त्री या बच्चे का सम्पूर्ण जीवन भली प्रकार अंकित करने में इन में से कोई भी समर्थ नहीं है। एक उपन्यास उपनी विस्तृत व्यख्या में व्यक्तिगत जीवन की सीधी छाप है। इस प्रकार उपन्यास को वास्तविक जीवन की कहानी तथा मानव के क्रिया-व्यापारों का अध्ययन माना गया है।

विविध भारतीय तथा पाश्तात्य मनीषियों ने उपन्यास की परिभाषा विभिन्न दृष्टियों से की है। [1] ''आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपन्यास को हिन्दी-साहित्य के लिए एक नयी वस्तु माना है। हिन्दी साहित्य का सब से नया और शक्तिशाली रूप उपन्यासों में प्रकट हुआ। उन्होंने कहा कि उपन्यास आधुनिक युग का महाकाव्य है। उस में मानव जीवन और मानवचरित्र का चित्रण उपस्थित किया जाता है। वह मनुष्य के जीवन और चरित्र की व्याख्या करता है। [2]''आचार्य नन्द दुलारे वाजपेई ने लिखा है- उपन्यास से आजकल गद्यात्मक कृति का अर्थलिया जाता है । उपन्यास के विकास से गध्य के विकास का भी सम्बन्ध है''। हिन्दी उपन्यास के उद्‌भव में तत्कालीन परिस्थितियों के परिवर्तन का भी विशेष महत्व है। [3]'' मुंशी प्रेमचन्द ने लिखा है, ''मै उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्रमात्र समझता हूँ। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।'' [4]''सीताराम चतुर्वेदी ने उपन्यास को ऐसी साहित्यिक विधा माना है, जिस में विशेष कौशल से कौतूहल उत्पन्न करके कोई ऐसी सत्य या कल्पित कथा कही जाती है,

1. हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव और विकास - डा. प्रताप नारायण टंडन - पृ - 11
2. हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव और विकास - डा. प्रताप नारायण टंडन - पृ - 11
3. साहित्य का उद्‌धेश्य - पृ - 54
4. हिन्दी लगु उपन्यास - घनश्याम - पृ - 16

जिस में मनोविनोद होता हो या किसी विषय या नीति का परिचय और प्रचार किया जाता हो''।[1] ''डा. गुलाबराय के अनुसार उपन्यास-गद्यात्मक कथानक है जिस में अपेक्षाकृत अधिक विस्तार तथा पेचीदगी के साथ जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाले व्यक्तियों से सम्बन्धित वास्तविक या काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानव-जीवन के सत्य का रसात्मक रूप से उद्घाटन किया जाता है।'' डा. भगीरथ मित्र की दृष्टि में युग की गतिशीलता की पृष्ठभूमि पर सहज शैली में स्वाभाविक जीवन की एक पूर्ण व्यापक झाँकी प्रस्तुत करनेवाला गद्य-काव्य उपन्यास है।''[2] ''डा. त्रिभुवन सिंह के अनुसार '' मानवजीवन का चित्र होने के नाते उपन्यास में व्यकित के सामाजिक रूप और उससे अलग एक सामाजिक इकाई के रूप में कियेजानेवाले कार्य-व्यापारों का चित्रण कियाजाता है। वह व्यक्ति के पूर्णजीवन का चित्र उतारने का पक्षपाती है। और एक संदर्भ में वे स्वये कहते हैं कि ''कविता के क्षेत्र में जो स्थान महाकाव्य का है, गद्य के क्षेत्र में वही स्थान 'उपन्यास' का है।'' इसलिए उपन्यास को आधुनिक युग का महाकाव्य भी कहागया है।''

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं से उपन्यास के क्रमिक स्वरूप के विकास का पता तो चलता है, किन्तु उसकी वास्तविक रूपरेखा हमारे सामने नहीं आती। प्रारम्भिक परिभाषाओं में मनोरंजन और कल्पना की प्रधानता दी गई है। कालान्तर में वास्तविकता एवं यथार्थ को उपन्यास का मूल मानागया है। साथ ही व्यक्ति और समाज को कथा के केन्द्र में रखागया है। इन सभी परिभाषाओं में उपन्यास के किसी एक या एकाधिक तत्वों का ही उल्लेख किया गया है। सम्पूर्ण आधुनिक उपन्यास परिभाषा की पकड़ में जैसे आही नही पाता। सच तो यह है कि आधुनिक उपन्यास आज इस रूप में आगया है कि उसे पुरानी परिभाषाओं द्वारा परिभाषित नही कियाजा सकता । बाद के उपन्यासों में सूक्ष्मातिसूक्ष्म मनोभावों और चेतना के सूत्रों के विषय

---

1. काव्य के रूप - पृ - 156
2. काव्य शास्त्र - पृ - 79

बनाया जाने लगा है। नये उपन्यास के सम्बन्ध में डा. देवीशंकर अवस्थी का मत अधिक समीचीन लगता है। [1] " इस शताब्दी के उपन्यासकोरों का मुखय कार्य यह पहचानता रहा है कि जिस दुनिया में वह चलता फिरता है उसकी जडें भयानक रूप से खिसक रही है, और हमलोग उद्वेलनशील परिवर्तन में रहरहे हैं। यह नहीं कहाजासकता कि तब और किसी प्रकार का स्थिति साँचा सामने आएगा। यह भी होसकता है कि इस समय हम उन परिस्थितियों की आकाँक्षा भर सके जो कि महान साहित्य की जन्म देती है"।

0.1.1. हिन्दी साहित्य में उपन्यास :

1860 में हिन्दी में पहला उपन्यास मुद्रित हुआ, अंग्रेजी लेखक 'डेनियल डिफो' की रचना 'शबिन्स क्रूसो' का अनुवाद 'राबिन्सन क्रूसो का इतिहास' शीर्षक से छपा था। बंगला भाषा में अनुदित उपन्यासों की संख्या बढ़ने लगी। 1870 में पी. गौरीदत्त ने देवरानी जेठानी की कहानी शीर्षक से एक रचना की। 1872 में मेरठ के एक मदरसे के अध्यापक मुंशी ईश्वरी प्रसाद और मुंशी कल्याणराय ने एक रचना की। उन्होंने उसका शीर्षक रखा था-'वामा शिक्षक' अर्थात दो भाई और चार बहनों की कहानी। 1877 में श्रद्धाराम के द्वारा 'भाग्यवदी' नामक रचना कीगई। 1875 में भारतेंदु ने सबसे पहले 'नावेल' शब्द के लिए 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग किया। 'कादम्बरी' नामक रचना बंगला भाषा से अनुवादित हिन्दी का पहला उपन्यास था। लेकिन प्रकाशित उपन्यासों में 'परीक्षागुरू' हिन्दी का पहला उपन्यास था। हरिश्चंद्रिका और हिन्दी प्रदीप आदि पत्रिकाओं में धारावाहिक उपन्यास छपे जाते थे। लेकिन हिन्दी उपन्यास को बिकाऊ पुस्तक बनाने का श्रेय 'देवकीनंदन खत्री' को है। उनकी चंद्रकाँता तथा चन्द्रकाँता संतति को पढ़ने के लिए न जाने कितने लोगों ने नागरी सीखी।

---

1. हिन्दी उपन्यास और यथार्थ वाद - पृ - 40

एक समर्थ साहित्य–विधा के रूप में हिन्दी उपन्यास की प्रतिष्ठा का पूरा श्रेय प्रेमचन्द्र को है। प्रेमचन्द से पूर्व देवकीनंदन खत्री और गोपालराय गदृमरी के तिलस्मी तथा जासूसी उपन्यासों ने उपन्यास के पाठक तो उत्पन्न किये, परन्तु सच पूछाजाय तो उनके उपन्यास मनोरंजन के साधन ही अधिक सिद्ध हुए। किशोरी लाल गोस्वामी जैसे उपन्यासकारों ने सामाजिक–ऐतिहासिक प्रणय रोमांसों की रचना की ठाकुर जगमोनसिंह तथा बाबु ब्रजनन्दन सहाय के भावात्मक उपन्यास भी इसी समय सामने आये थे। इस अवधि में सामाजिक, नीतिपरक तथा शिक्षा–प्रधान उपन्यास भी लिखेगये, जिन के रचयिताओं में लाला श्रीनिवास दास, श्री बालकृष्ण भट्ट, श्री राधाकृष्णदास आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है। हिन्दी उपन्यास साहित्यक क्षेत्र में प्रेमचन्द का उदय एक युग प्रवर्तक के रूप में होता है। उन्हों ने हिन्दी उपन्यास–साहित्य को एक नई दिशा दी। जिस समय प्रेमचन्द का प्रथम उपन्यास 'सेवासदन' प्रकाशित हुआ तब हिन्दी कथा साहित्य प्राय: अंधकार में ही था। प्रेमचन्द ने अपने पूर्व के उपन्यास चंद्रकांता, तिलस्म होशरूवा आदि को बड़े चाव से पढ़ा था। इसलिए उन्हों ने अपनी रचनाओं को उन से भिन्न भूमिका दी। प्रेमचन्द के उपन्यास एक ओर तो सामाजिक और युगजीवन का सजीव और वास्तविक चित्र प्रस्तुत करते हैं। और दूसरी ओर उन्हे बदलने का स्पष्ट संकेत भी देते हैं। इस संबंध में उनका कहना था कि ''साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का जुटाना नही है। वह देश भक्ति और राजनीति के पीछे चलानेवली सच्चाई भी नही बल्कि उसके आगे मशाल दिखाती हुई चलनेवाली सच्चाई है''।

उपन्यास साहित्य के इतिहास में हिन्दी के प्रथम उपन्यास की समस्या विवादास्पद रही है। इस प्रश्न पर कुछ विद्वानों ने रचनाकाल की दृष्टि से विचार करने का प्रयत्न किया है तो कुछ ने औपन्यासिक गुणों के आधार पर। हिन्दी में खड़ी बोली गद्य के आविर्भाव के पश्चात सर्वप्रथम 'मुंशी इंशा अल्लाखां' ने सन् 1800 के लगभग 'रानी केतकी की कहानी' या ' उदैभानुचरित' की रचना की। इस में कथात्मक तत्व को

देखकर कुछ विद्वानों ने भ्रमवश इसे प्रथम उपन्यस की संज्ञा से विभूषित किया। डा. गोपालराय ने प. गौरीदत्त कृत 'देवरानी जिठानी की कहानी' (1870) को संपादित किया है तथा उसकी भूमिका में उन्हों ने यह संकेत दिया है कि, 'देवरानी जिठानी की कहानी' को हिन्दी का प्रथम उपन्यास मानना ही अधिक न्यायसंगत है। उनका विचार है कि उपन्यास पर्याप्त आकार की वह मौलिक गद्य गया है, जो पाठक को एक काल्पनिक पर यथार्थ संसार में, जो लेखक द्वारा व्यक्तिगत रूप सें अनुभूत और स्पष्ट होने के कारण नवीन होता, ले जाती है। इस मत की कसौटी पर 'देवरानी जिठानी की कहानी' को परख कर, उसे हिन्दी के प्रथम उपन्यास के पद पर प्रतिष्टित किया है।

डा. सत्येन्द्र ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी उपन्यास - विवेचन' (पृ-275) में 'देवरानी जिठानी की कहानी' को उपन्यास की अपेक्षा कहानी मानना अधिक उचित समझा है। श्रद्धाराम फिल्लौरी ने 1877 इ. में 'भाग्यवती' नामक उपन्यास की रचना की थी। उन्हों ने अपने उपन्यास 'भाग्यवती' में तत्कालीन सामाजिक समस्याओं एवं उनके समाधान की विधि भी प्रभावोत्पादाक ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। वस्तुत: 'भाग्यवती' को हिन्दी का प्रथम मौलिक उपन्यास माना जासकता है। किंतु कुछ विद्वानों का यह मत है कि भाग्यवती उपन्यास के बदले, एक उपदेशात्मक रचना मात्र बनकर रहगई है, जिस में औपन्यासिक गुणों का सर्वथा अभाव है। शुक्लजी ने भाग्यवती को एक सामाजिक उपन्यास माना है। कुछ विद्वान लाला श्रीनिवासदास द्वारा लिखित 'परीक्षागुरू' को हिन्दी में अंग्रेजी ढंग का सफल एवं मौलिक प्रथम उपन्यास मानते हैं। भारतेंदु द्वारा रचित 'पूर्ण प्रभा-चंद्रप्रकाश' को हिन्दी का प्रथम मौलिक उपन्यास माननेवाले कुछ एक-दो विद्वान भी हैं। लेकिन यह गुजराती का अनुवाद मात्र है । अत: इसे मौलिक उपन्यास मानना असंगत ही होगा। अत: भाग्यवती हिन्दी का पहला आधुनिक उपन्यास है। भाग्यवती एव परीक्षागुरू दोनों ही उपन्यास समसामयिकता के प्रशन से जुडे है। परीक्षागुरु समस्याजनित उपन्यास

है। इसकी मूल समस्या मध्यवर्गीय खोखली मनोवृत्ति के शिकार युवकवर्ग की समस्या है। किंतु भाग्यवती एक सामाजिक उपन्यास है, जो एक व्यक्ति के चरित्र की धुरी पर केंद्रित है और वह दर्पण है जो समाज के विन्नि पक्षों को प्रतिबिंबित करता चलता है। प्रकाशण के आधार पर दोनों उपन्यासों को विभाजन कर सकते है। प्रकाशित उपन्यासों में परीक्षागुरु हिन्दी का पहला उपन्यास है। लेकिन लेखनी के आधार पर भाग्यवती ही प्रथम उपन्यास है।

प्रेमचन्द के समय तक हिन्दी-उपन्यास धारा धीरे-धीरे प्रवाहित है। प्रेमचंद ने उपन्यास क्षेत्र को उजागर करदिया। प्रेमचंद के समकालीन उपन्यासकार भी प्रेमचंद के कथा-साहित्य की अनेक प्रवृत्तिथों को आत्मर्पित करते हुए अपने कृत्तिव का निर्माण किया। विश्वम्भरनाथ शर्मा, कौशिक, उषादेवीमित्रा, प्रताप नारायण श्रीवास्तव, चतुरसेन शास्त्री तथा बृन्दावनलाल वर्मा जी ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में मध्यकालीन सामंतीय युग की प्रवृत्तियों का उद्‌घाटन किया है। प्रेमचन्द के समकालीन उपन्यासकारों में जयशंकर प्रसाद का नाम भी उल्लेखनीय है। प्रसादजी ने व्यक्ति के यथार्थ को अपनी रचनाओं का विषय बनाया है। इसी समय उपन्यास की धारा सामाजिक समस्याओं से हटकर व्यक्ति की अपनी रचनाओं में सीमित होगई। व्यकित की समस्याओं पर प्रसाद ने प्रकाश डाला था। परन्तु इन उपन्यासकारों ने विशेषत: जैनेन्द्र, अज्ञेय और इलाचन्द्र जोशी ने उन्हे आधुनिक मनोविज्ञान के संदर्भ मे सुलझाने की कोशिष की। प्रेमचन्दोत्तर युग के उपन्यासकारों में यशपाल, रांगेय राघव, अमृतराय, भैरवप्रसाद गुप्त आदि का स्मरण किया जासकता है। इन की रचनाओं में तत्कालीन सामाजिक विशेषताओं का वर्णन है। जमींदार-सामंतों से किसान मजदूरों का संघर्ष परिस्थितियों के बोझ से दबा मध्यवर्ग, नारी पराधीनता, वर्ग-विषमता, सब के चित्र इनके उपन्यासों में बड़ी सजीव भूमिका पर उपलब्ध होते हैं। आंचलिक उपन्यासों की परम्परा में फणीश्वरनाथ रेणु का प्रवेश एक नया उत्कर्ष देता है। नागार्जुन के उपन्यसों में मिथिला की धरती के हर्ष वषाद चित्रित हैं।

अमृतराय, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर अमरकांत जैसे उपन्यासकारों ने यथार्थ की परम्परा को अपनाया था। यथार्थ-बोध, प्रखर सामाजिकता, व्यापक मानवतावाद तथा सामाजिक हास्य और व्यंग्य की गहरी क्षताओं से युक्त अमृतलाल नागर, प्रेमचन्द की इसी परम्परा की उपज माने जा सकते हैं। इस प्रकार आज तक उपन्यास क्षेत्र का विकास होता रहा।

0.1.2. तेलुगु साहित्य में उपन्यास (నవల) :-

तेलुगु साहित्य में उपन्यास के लिए 'नवल' शब्द का प्रयोग कियागया। 1872 में लार्ड मियो ने 'बंगाल गजिट' नामक सरकारी समाचारपत्र में एक विज्ञापन किया था। इस विज्ञापन के अनुसार उस ग्रंथ को ईनाम मिलेगा जिसमें भारत देश वासियों के रहन-सहन, आचार-व्यवहारों का वर्णन कियागया हो। आँध्रप्राँत के कर्नूल जिला के डिप्टी कलक्टर श्री नरहरी गोपाल कृष्णम्म श्रेष्टि ने अपनी रचना 'श्री रंगराज चरित्र' के द्वारा ईनाम को जीत लिया। मद्रास गजिट नामक सरकारी समाचारपत्र ने इस रचना को तेलुगु गद्यसाहित्य का प्रथम उपन्यास घोषित किया था। लेकिन तेलुगु के महान विद्वान इसे तेलुगु के गद्य प्रबंध मानते थे। उसवक्त तेलुगु साहित्य मे 'नवल' के लिए 'वचनप्रबंधम' शब्द ही प्रचलित था। पच्चीस वर्ष के पश्चात श्री काशीभट्ट ब्रहमय्य शास्त्री ने नवल नामक शब्द का प्रयोग उपन्यास के अर्थ में तेलुगु साहित्य में सबसे पहले किया था। इस के पहले 'नवल' को प्रबन्धकाव्य मानते थे। 1878 में श्री वीरेशलिंगम ने समकालीन समाज में स्थित आचार-विचार, अंधविश्वासों की आलोचना करते हुए 'राजशेखर चरित्र' नामक उपन्यास की रचना की और 'विवेक वर्धिनी' नामक अपने ही माहिक-पत्र में धारावाहिक की रचना के रूप में छपादिया। 1880 में इसे एक पुस्तक का रूप मिला। इसमें जिन पात्रों की सृजन उन्होंने किया, उन सभी को अपने ही परिवार के पात्रों के रूप में पंतुलुजी ने अपनी आत्मकथा में वर्णन किया था। 1883 में आप से रचित सत्यवती चरित्र नामक उपन्यास तेलुगु

साहित्य के प्रथम सामाजिक उपन्यास मानाजाता है। इस प्रकार श्री वीरेशलिंगम जी के साथ तेलुगु उपन्यास साहित्य का विकास आरम्भ हुआ था। उन्हों ने इसविधा को प्रेत्साहित करने के लिए अपने माहिक-पत्रिका में उपन्यास लिखने की स्पर्धा का आरम्भ किया। इसकी प्रशंसा करतेहुए श्री चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहमजी ने इसे उत्कृष्ट कार्य घोषित किया था।

1894 में श्री चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहम उपन्यासकार के रूप में साहित्य क्षेत्र में आये थे। उन की रचनाओं में 'अहल्याबाई' मुख्य उपन्यास है। इसप्रकार 1872 से 1990 तक तेलुगु उपन्यास साहित्य के इतिहास में प्रथम चरण है। 1901 से 1920 तक तेलुगु उपन्यास साहित्य में दूसरा चरण है। इस भाग में बंगला-उपन्यासों का अनुवाद, ऐतिहासिक उपन्यासों का और जासूसी उपन्यासों का सृजन कियागया था। मध्यकालीन उपन्यासकारों में श्री भोगराजु नारायण मूर्ति, केतवरणु वेकटशास्त्रि, श्रीपाद सुब्रहमण्यम शास्त्रि, गुरजाड अप्पाराव, श्री दुग्गिराल राघवचंद्रय्य, श्री उन्नव लक्ष्मी नारायण आदि मुख्य थे। उन्नव लक्ष्मीनारायण की रचनाओं में 'मालपल्लि' विख्यात, विप्लवात्मक और बेमिसाल तेलुगु-उपन्यास है। आधुनिक तेलुगु उपन्यास साहित्य क्षेत्र में श्री विश्वनाथ, श्री बापिराजु, श्री चलम, श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि महान उपन्यासकार हैं। 1940 से 1950 तक की अवधि में श्री बुच्चिबाबु, श्री गोपीचंद, श्री जी.वी. कृष्णाराव, श्री कोडवटिगंटि कुटुम्बराव मुख्य हैं। ऐतिहासिक उपन्यासकारों में श्री नोरि नरसिंह शास्त्रिजी का नाम उल्लेखनीय है। 1940 के बाद जो उपन्यास रचे गये थे, उन में देश भक्तिभाव ने मुख्यस्थान ग्रहण किया था। यथार्थवाद को अपनानेवाले उपन्यासकारों में श्री गोपीचंद, जि.वी. कृष्णाराव, आदि मुख्य हैं। श्री चलमजी की रचनाओं में 'चिवरिकि मिगिलेदि' नामक उपन्यास विख्यात है। जासूसी उपन्यासकारों में कोव्वली, जंपन सोरजु, रामानुजराव मुख्य हैं।

स्वतंत्रता के बाद उपन्यास साहित्य क्षेत्र में काफी परिवर्तन आगया था। पारिवारिक कथावस्तु को अपनाकर यथार्थ और आदर्श को मिलाकर लेखखों ने उपन्यास सृजनकिया। ऐसी रचनाओं में श्री राचकोण्ड विश्वनाथ शास्त्रि द्वारा रचित 'अल्पजीवि' और 'राजु-मनिषि' नामक रचनाएँ प्रमुख हैं। तेलंगाणा प्राँत में जो आँदोलन जमींदार और गरीब मजदूर किसानों के बीच हुआ, उस के संबंद में श्री महीदर राममोहनराव जी ने तीन विख्यात उपन्यासों की रचना की। इसी समस्या के ऊपर 'श्री अन्वार स्वामीजी' ने 'प्रजल मनिषि' नामक उपन्यास लिखा था। स्वर्गवासी, तेन्नेटि सूरी का उपन्यास 'चंगिजखाँ' ऐतिहासिक उपन्यासों में खास रचना है। अंग्रेजी साहित्य में भी इसका अनुवाद किया गया है। इसीशताब्द के उपन्यासकारों मे श्री बी. काँताराव, श्री लिंगमूर्ति, श्री साँबशिवराव, श्री आर. यस. सुदर्शनम आदि मुख्य हैं। इन के द्वारा रचित उपन्यासों में मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन का वर्णन ज्यादा मिलता है। धीरे-धीरे उपन्यासों में उत्तम और कोमल भावनाएं दिखाई देने लगी।

इसप्रकार तेलुगु साहित्य में उपन्यास का उद्‌भव होकर सौ वर्ष पूरे होगये थे। उपन्यास के लिए तेलुगु में भी सही परिभाषा देने में लेखक और समीक्षकों में भिन्नमत है। इसका और एक कारण यह है कि उपन्यास के लिए अलंकार शास्त्र नहीं है। लेकिन मानव जीवन के निकट होना उचित माना जाता है। मानव का यथार्थ जीवन उपन्यास की बुनियाद है। विद्‌वान उपन्यास को काल्पनिक गद्य विधा मानते हैं, जो समकालीन यथार्थ-जीवनी पर आधारित है। उपन्यास के संघटन और पात्र यथार्थ जीवन के प्रतिनिधित्व करते हैं। उपन्यास व्यक्ति के गुण-दोषों को पाटक के सामने रखता है। पारस्परिक संबंध का विशलेषण, व्यक्ति पर समाज का प्रभाव और समाज पर व्यक्ति के प्रभाव को व्यक्त करता है। काल के अनुसार बदलनेवाले जीवन मूल्यों को प्रकट करता है। समाज के आचार-व्यवहार को भी उपन्यास बताने का प्रयास करता है। जीवन की गहराइयों को देखकर, व्यक्ति के आंतरिक व्यवहार,

स्वभाव को दिखाता है। जीवन परिस्थितियों में, व्यक्ति के व्यवहार में जो भी गलतियाँ या बुराइयाँ हैं, उनको खुलेआम से प्रकटकरना ही साहित्य का कर्तव्य है। यह काम केवल उपन्यास ही करता है।

तेलुगु उपन्यास के लक्षणों का विश्लेषण लेखकों ने स्पष्ट किया है। वे लक्षण इस प्रकार हैं। वचन प्रबन्धम का अर्थ है कल्पित कहानी। उस को पुराण, इतिहास से भी ले सकते हैं। उसके अनुकूल नूतन अंश जोडकर उसका विस्तार करसकते है या शुरू से अंत तक सुबुद्धि से ही नई कहानी की सृष्टि करके भी लिख सकते हैं। उपन्यास में समकालीन सामाजिक जीवन को वास्तविक दृष्टि से चित्रित करना है। दैनन्दिन जीवन में दिखाई देनेवाली व्यक्तियों को ही पात्र के रूप मिलना है। व्यावहारिक भाषा का प्रयोग करना है। अर्थात देश-काल परिस्थितियों के अनुसार ही भाषा का प्रयोग होना है। बोलचाल में सहजता लाना है। मानव जीनव की व्याख्या करना है। उपन्यास के शुरु से अंत तक गद्य में ही लिखना उचित है।

स्वतंत्रता आंदोलन के समय में लोगों की स्फूर्ति बढ़ाने में उपन्यास बहुत काम में आये थे। खासकर ऐतिहासिक विषयों पर आधारित रचनाएं करके उपन्यासकारों ने लोगों के मन में रष्ट्रीयधारा जगाई। एक तरफ लोगों में देशभक्ति जगाते हुए दूसरी तरफ समाज के अँधविश्वासो का खंडन किया जाता था। ऐसे उपन्यासकारों में गुरजाड अप्पाराव जी का नाम उल्लेखनीय है। ऐतिहासिक उपन्यासकारों में श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि का नाम विख्यात है। इनके उपन्यासों के पात्रों का सजीव पात्र हमारी आँखों के सामने मौजूद है। किंवदंतियों का वर्णन भी यथार्थ सँघटनों के जैसे होता है। इनकी रचनाओं में सिर्फ राजाओं की जीवनियाँ ही नहीं बल्कि साहित्यकारों की जीवनियाँ भी है। 1940 के बाद तेलुगु में जासूसी उपन्यास भी लिख जानेलगे। बाद में उपन्यासो का आरम्भ हुआ। इस प्रकार उपन्यास की प्रगति में आज तक सौ वर्ष पूरे होगये थे।

0.2. हिन्दी और तेलुगु उपन्यासों के प्रवृत्तिगत भेद :-

हिन्दी और तेलुगु साहित्य में उपन्यास का उदय एक सौ वर्ष के पहले हुआ था। आमतौर पर इन दोनों में प्रवृत्तिगत विभेद नहीं है। उपन्यास का समानार्थी तेलुगु शब्द 'नवल' है। यह शब्द देखने में उच्छरण में अँग्रेजी के 'नावल' शब्द के जैसे होता है। कुछ विद्वानों की दृष्टि में 'नावेल' से ही तेलुगु 'नवल' शब्द का उद्‌भव हुआ है। लेकिन उपन्यास शब्द का उद्‌भव बंगला साहित्य की देन है। हिन्दी का आरंभिक मध्ययुगीन गद्य तुकमय था। वस्तुत: रीतिकाल तक शुद्ध साहित्य गद्य की प्रवृत्ति बहुत मन्द रही, ललित गद्य अधिक लिखा गया। तेलुगु के आरंभिक उपन्यासों पर अंग्रेजी साहित्य का प्रभाव ज्यादा दिखाई देता है। आँध्रप्रदेश के लोगों की संस्कृति का वर्णन प्रधान अंश के रूप मे उन में होता था। हिन्दी साहित्य के उत्तर मध्यकाल में गध्य निर्माण अपेक्षाकृत अधिक हुआ। टीकात्मक अनुदित स्थानों की संख्या इस काल में अधिक है। तेलुगु के मध्यवर्गीय उपन्यासों पर आजादी आंदोलन का प्रभाव है। ऐतिहासिक विषयों के आधार पर उपन्यास लिखेजाने लगे। 19 वी शताब्दी के प्रथम चरण से पाठ्य पुस्तकों और समाचार पत्रों का प्रारम्भ हुआ। वैज्ञानिक विषयों को भी आधार बनाकर लेखक लिखने लगे। लेखक को उपन्यास में खुलकर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार से अभिव्यक्ति का पूर्ण अधिकार रहता है। उपन्यास को गद्य काव्य मानना उचित है। युगचित्र ही इसकी पृष्ठभूमि जीवन की व्यापक झाँकी रहती है। उपन्यास की प्रेरणात्मक शक्तियाँ भावुकता और संवेदना है। मानव जीवन की पूर्ण अभिव्यक्ति इस में मिलती है। इस प्रकार आधुनिक युग के अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम 'उपन्यास' के उदय के संदर्भ में, तेलुगु और हिन्दी साहित्य में अंतर ज्यादा नहीं है।

हिन्दी और तेलुगु उपन्यास साहित्य के विकास क्रम में निम्नलिखित अंश है। पहले हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास क्रम का निरूपण तीन कालों के

अन्तर्गत करते है। 1. हिन्दी उपन्यास का विकास-उदय काल अथवा प्रेमचन्दपूर्व काल. 2) प्रेमचन्द और उन का समकालीन युग. 3) प्रेमचन्द के पश्चात काल। तेलुगु के उपन्यास साहित्य का अध्ययन तीन धाराओं के अंतर्गत किया जासकता है। 1. आँध्र-उपन्यास का उदय 2) आधुनिक उपन्यास का विकास 3) स्वतंत्रता के बाद का युग। विकास क्रम की दुष्टि से हिन्दी और तेलुगु में थोड़ा अन्तर दिखाई देता है। हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास क्रम एक साहित्यकार के नाम पर और उन के साहित्य काल के आधार पर नाम निर्धारण कियागया था। इसका एक ही कारण है कि उपन्यास क्षेत्र में प्रेमचन्द 'साम्राट' मानेजाते हैं। इसलिये उन्ही के आधार पर विकास क्रम को विद्वानों ने विभाजन किया। तेलुगु साहित्य में स्वतंत्रता आँदोलन को आधार मानकर विद्वानों ने उपन्यास साहित्य का विभाजन किया। कुछ विद्वान यह भी मानते हैं कि तेलुगु-उपन्यास साहित्य की तरह हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास को भी विभाजन करसकते हैं। तेलुगु साहित्य में स्वतंत्रता के पूर्व का युग है, वह हिन्दी में प्रेमचन्द के पूर्व का युग माना जाता है। उसी प्रकार स्वतंत्रता समय का जो युग है, वह प्रेमचन्द का समकालीन समय है। स्वतंत्रोत्तर के युग ही प्रेमचन्दोत्तर युग या आधुनकि युग माना जाता है। यह सच है कि प्रेमचन्दजी की तरह तेलुगु साहित्य मे उपन्यास क्षेत्र पर असर डालने वाले एक भी खास लेखक नहीं रहा। अर्थात जितने भी उपन्यासकार थे, वे सभी अपनी शैली में महान रहे थे। इसलिए एक लेखक के नाम पर विभाजन नही हो सका। इस प्रकार विकास क्रम की दृष्टि से हिन्दी और तेलुगु के विकास क्रम में कम अंतर रहा है।

हिन्दी साहित्य में उपन्यास के जितने ही अंग हैं, उसी प्रकार तेलुगु उपन्यास के अंग भी हैं। 'बीसवीं' शताब्दी का सर्वाधिक लोकप्रिय साहित्यांग होने के कारण उस का स्वरूप अत्यन्त तीव्रगति से बदल रहा है। परिणामत: उपन्यास विधा के सम्पूर्ण तत्व को समझने के लिए उसकी तत्वगता विशेषताओं का अनुशीलन अवश्यक हो जाता है। हिन्दी में कथानक, पात्र, कथोपकथन, वातावरण और देशकाल

वातावरण, शैली और उद्देश्य आदि उपन्यास के तत्व हैं। लेकिन आज समय, कथानक, चरित्र चित्रण तथा भाषा के नये प्रयोगों ने आधुनिक उपन्यास को जो नया स्वरूप दिया हैं, उसकी तात्विक विवेचना नितान्त असंभव है। फिर भी इस विघटित औपन्यासिक स्वरूप को शास्त्रीय तात्विक-विवेचन के आधार पर खोजा जासकता है। तेलुगु साहित्य में उपन्यास के चार प्रधान अंग है। 1. कथा, (2) कथावास्तु (3) पात्र (4) (नेपथ्य) - वातावरण। ये चार अंग एक दूसरे पर आधारित है। एक के अभाव में दूसरा कमजोर होजाता है। हिन्दी और तेलुगु के उपन्यास-तत्वों के बीच भी एकता है। जैसे हिन्दी में जो कथानक है, उसका पर्याय शब्द तेलुगु में कथावास्तु है। इसे अंग्रेजी में 'प्लाट' कहते हैं। कथानक उपन्यास की रीढ़ है, जिस के सहारे उसका ढाँचा स्थिर रह सकता है। एक सूत्रता कथानक की प्रारंभिक एवं मूल विशेषता है। घटनाओं का क्रमबद्ध संचालन अच्छे कथानक में होता है। इस के लिए मौलिकता भी आवश्यक है। और एक प्रमुख तत्व 'पात्र' है। इसे तेलुगु में 'पात्रलु' कहते हैं। इन्ही पात्रों के क्रिया कलापों से कथानक या कथावस्तु का निर्माण होता है। कथा की कल्पना में ही पात्रों की विध्यमानता है। हिन्दी के वातावरण शब्द के लिए तेलुगु का शब्द नेपथ्य है। इस के अंतर्गत वेश-भाषा, रीति-रिवाज एवं सामाजिक राजनैतिक परिस्थितियाँ आदि सम्मिलित हैं।

हिन्दी के उपन्यासों को प्रवृत्ति के आधार पर सामाजिक, ऐतिहासिक, वैयक्तिक और जासूसी उपन्यासों के रूप में विभाजन कर सकते हैं। तेलुगु साहित्य मे भी इसी प्रकार उपन्यासों का विभाजन किया गया है।

1. सामाजिक उपन्यास - सामाजिक नवल्
2. वैयक्तिक उपन्यास - व्यक्ति प्रदान नवल
3. राजनैतिक उपन्यास - राजकीय नवल
4. ऐतिहासिक उपन्यास - चारित्रक नवल

इस प्रकार सुविधा के अनुसार उपन्यासों का वर्गीकरण हिन्दी और तेलुगु के विद्वानों ने किया। ऐतिहासिक उपन्यासों के अन्तर्गत जीवनीपरक उपन्यास आते हैं।

0.3. जीवनीपरक उपन्यास :

'उपन्यास' आधुनिक युग की देन है। कुछ विद्वानों के अनुसार उपन्यास का जन्म पूँजीवाद के उत्थान के साथ हुआ है। यही कारण है कि पूँजीवाद के उत्थन और पतन के साथ ही उपन्यास का स्वरूप भी परिवर्तित होता रहा है। विश्व साहित्य में सब से प्रथम जो उपन्यास लिखेगये, वे समाज के एक ऐसे वर्ग के मनोरंजन के लिए लिखे गए थे, जिन के पास समय का आधिक्य था। मनोरंजन, कल्पना और वासना से पूर्ण इन उपन्यासों में रहस्य और रोमाँचकारी दृश्यों का भी अभाव नहीं था। धीरे-धीरे इन में मध्यवर्ग ने प्रवेश किया। औद्योगीकरण तथा शिक्षा के समुचित विकास के फलस्वरूप मध्यम वर्ग की जागृती तथा जीवन के प्रति उस के सहज जिज्ञासाभाव ने उपन्यास को एकदम नये और विशाल पाठक-वर्ग समक्ष खड़ा करदिया। अब तक जो लेखक धन के लाभ में उच्छ वर्ग के मनोरंजन के लिए कल्पित घटनाओं और चरित्रों का निर्माण करता था, वही लेखक अपने आस-पास के जीवन को उपन्यास के सूत्र में पिरोने लगा। उपन्यासकारों के इसी दायित्व ने उपन्यास को जो प्रारम्भ में वस्तुवादी, स्थुल एंव मनोरंजनकारी या धीरे-धीरे आध्यात्मिकवादी सूक्ष्म एंव समाज-कल्याणकारी बना दिया है।

प्ररम्भकाल से आज तक उपन्यास ने जिन मंजिलों को पार किया, उन में से ''जीवनी परक'' मंजिल भी एक है। उपन्यास के तत्वों के आधार पर उपन्यासों को हम विभाजन कर सकते हैं। उदाहरण के रूप में ऐतिहासिक उपन्यास, जासूसी उपन्यास, आंचलिक उपन्यास आदि हैं। जीवनीपरक उपन्यास माने किसी महान व्यक्ति की जीवनी को मौलिक रूप में वर्णन करने वाला है। यहाँ ध्यान देनी की बात

यह है कि ऐतिहासिक उपन्यासों में किसी की जीवनी से संबंधित उपन्यास हो सकता है। लेकिन जीवनी को कथावस्तु माननेवाले उपन्यास ही जीवनीपरक उपन्यास कहलाते हैं। इस उपन्यास की विशेषता यह है कि उस के पात्र ऐतिहासिक होते हैं, कल्पित नहीं। ऐतिहासिक पात्रों और औपन्यासिक पात्रों में बहुत भेद होता हैं। इतिहास में पात्र लेखक की सृष्टि नही है। परन्तु उपन्यासों में सभी पात्र लेखक की उपज हैं। इतिहास के एक ही पात्र उपन्यासों में भिन्न-भिन्न रूपों में दिखते हैं। इतिहास से लिये गये पात्रों में ऐतिहासिक तत्व होते हैं, और समाज में लिये गये पात्रों में समाजिक तत्व होते हैं। शेष जो भाग बचता है, वह कल्पना-जन्य होता है। वह उपन्यास को इतिहास बनने से बचाता है। इतिहास के महान व्यक्ति माने साहित्यकार, दार्शनिक, वैज्ञानिक या राजनीतिज्ञ भी हो सकते हैं।

0.4. जीवनीपरक उपन्यासों और ऐतिहासिक उपन्यासों में अंतर :

ऐतिहासिक उपन्यासों में अतीत कालीन पात्र, वातावरण और घटनाओं, ज्ञात तथ्यों को उपन्यासकार अपनी कल्पना से माँसल और जीवन्त बनाकर रखता है। ऐतिहासिक उपन्यासकार अल्पज्ञात तथ्योंवाले सुदूर अतीत काल की घटनाओं का सूत्र मिलाने के लिए कल्पना का अधिक आश्रय लेता है और निकट अतीत का कम लेकिन वह वास्तविकता उपेक्ष नही करसकता। वह पुरातत्व, मानवतत्व और मनोविज्ञान के बिना थोथी कल्पना नहीं कर सकता। जीवनी परक उपन्यास में लेखक के जीवनी की वास्तविकता से निकट रहना पड़ेगा। इस विधान से रचित उपन्यास ही जीवनी परक उपन्यास कहलाते हैं। उपन्यास की कथावास्तु की तुलना अगर हम उसकी सामाग्री के साथ करेंगे तो अंतर कम दिखाई देता है। जहाँ-तहाँ घटनाओं का वर्णन आदर्शोन्मुख होता है। लेकिन मूल जीवनी से बिलकुल अलग नहीं रहता। उपन्यास के कथोपकथन में उपन्यासकार उत्सुकता बढ़ाने की कोशिष

करता है। [1]''हनरी जेम्स के अनुसार उपन्यास एक प्रकार का इतिहास है। किन्तु इतिहास भी जीवन का प्रतिनिधित्व कर सकता है, करने को स्वतन्त्र है। उपन्यासकार का काम ज्यादा कठिन इसलिए है कि उपन्यास की विषय-वस्तु कल्पित होती है, यह गलत है। कुछ का विचार है कि उपन्यास में केवल अच्छे पात्रों की सृष्टि होनी चाहिए, कुछ चाहते हैं कि अन्त सुखद रहना चाहिए, जैसे भोजन के अन्त में मीठी चीज। मुख्य वस्तु यह है कि उपन्यास कलात्मक हो।'' ऐतिहासिक उपन्यासों की विशेषता यह है कि उन के पात्र ऐतिहासिक होते हैं। लेकिन कहानी को आगेबढ़ाने के लिऐ काल्पनिक पात्र का होना भी जरूरी है। ऐतिहासिक उपन्यास में कुछ पात्रों मे ऐतिहासिक तत्व होते हैं। इतिहास से ऐतिहासिक उपन्यास को पृथक करने के लिऐ लेखक काल्पनिक पात्रों का सहारा लेता है।

ऐतिहासिक उपन्यासों के पात्रों के चरित्र-चित्रण में, उन की बातचीत में, उन के वस्त्रालंकारों के वर्णन में, उनकी रीति-नीति के उपस्थापन में सर्वत्र औचित्य होता है। कभी-कभी बडे-बडे सम्राटों के मुह से ऐसी बातें कहलवाई जाती है, जो न उनके पद मर्यादा के अनुकूल होती है और न चरित्र विकास के। इस औचित्य-निर्वाह के लिऐ परम आवश्यक है कि उपन्यासकार अपने देश और काल का पूरा जानकार हो। जीवनीपरक उपन्यासों में घटनाओं का गौण और जीवनी का प्रधान स्थान होता है। घटना प्रधानता के कारण उपन्यास वास्तविकता से दूर जाने की सम्भावना है। मगर जीवनीपरक उपन्यासों में जीवनी को मूल मानलिया जाता है। ऐतिहासिक उपन्यासों में दो प्रकार के उपन्यास हैं। एक प्रकार के उपन्यास में तो कथा-वस्तु और समय के साथ पात्र भी प्रधान तथा ऐतिहासिक होते हैं और देश और समय के साथ देश काल तो अवश्य ऐतिहासिक होता है। दूसरे प्रकार के उपन्यासों में वातावरण ऐतिहासिक होते हुए भी कथा कल्पित होती है, पात्र कल्पित, तथा घटनाएँ भी

---

1. हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास - डा. प्रताप नारायण टंडन - पृ-13

कल्पित होती हैं। जीवनीपरक उपन्यासों के अन्तर्गत सिर्फ वे ही उपन्यास लिये जाते हैं, जिनका आधार और अस्थित्व हो। अर्थात सूरदास की जीवनी पर आधारित खंजन नयन और तुलसी की जीवनी के आधार पर लिखित 'मानस का हंस' कुछ ऐसे उपन्यास भी हैं, जिन के पात्र सिर्फ कल्पित हैं। ऐसे उपन्यास जीवनीपरक उपन्यास नहीं कहलाते। यह बहुत ही प्रधान लक्षण है। एक ऐतिहासिक महत्व रखनेवाले महान व्यक्ति पर लिखित उपन्यास जीवनीपरक उपन्यास हो सकता है। मगर एक जीवनी-परक उपन्यास ऐतिहासिक उपन्यास कभी नही हो सकता है। क्यों कि जीवनीपरक उपन्यास में जीवनी की प्रधानता और अन्य आधारों का गौण स्थान होता है। मगर ऐतिहासिक उपन्यास में कथावस्तु ऐतिहासिक घटनाओं से जुड़ी रहती है। इस प्रकार जीवनीपरक और ऐतिहासिक उपन्यासों में अंतर है।

जीवनी प्रधान साहित्य व्यक्ति और समाज के यथार्थ से जुड़ा हुआ होता है। समाज के विकसित रूप को हम युग के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। साहित्यकार अपने मूल विधान के कारण समाज में अपना स्थान रखता है। इसलिए इस व्यक्तित्व का अध्ययन रोचक एंव आकर्षक होता है। सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानव ही तो है। जीवनी साहित्य का मूल विश्वास और मूल मंत्र भी तो यही है कि मानव जीवन का सही चित्र खींच जाय। जीवनी प्रधान साहित्य में हमें विशिष्ट व्यक्तियों की गूढ समस्याओं में परिचय एंव विशेषताओं से संदेश मिलता है। हिन्दी साहित्य के संबंध में यदि हम विचार करेंगे तो यही पायेंगे कि जीवनी का पक्ष उपेक्षित है। हिन्दी और तेलुगु साहित्य में जीवनी पर उतना काम नहीं हो पाया जितना विश्व के अन्य साहित्यों में हुआ है और हो रहा है।[1] "नंददुलारे वाजपेयी ने यही तर्क किया था, कि साहित्य तो एक सात्विक जीवन है, उसे कठिन तपस्या और महान यज्ञ समझना चाहिए। जहां व्यक्ति के व्यक्तित्व के कोई स्वतंत्र विषय नही रह जाते, उच्च साहित्य

1. हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास - डा. प्रताप नारायण टंडन - पृ-11

की वह भाव-भूमि है। जीवनी-प्रधान साहित्य में लेखक किसी विशेष व्यक्तित्व के सम्पूर्ण जीवन का चित्र कुछ वास्तविक घटनाओं के आधार पर प्रस्तुत करता है। व्यक्ति यहाँ मुख्य है। जीवनी साहित्य व्यक्तिवादी धारणा है और सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में वैयक्तिकता की आश्चर्यजनक उपेक्षा की गई है। सम्पूर्ण भारतीय साहित्य की उपेक्षा का मूल कारण पुर्वजन्मवाद और कर्मफलवाद में भारतीयों की अटूट आस्था है। ये दोनों वैयक्तिकता की महत्ता घटाते हैं। मनुष्य को परलोक मुखी बनाते हैं। इन्हों ने ही लेखककों को जीवनी और आत्मकथा नहीं लिखने दिया। जीवनी में लेखक वास्तविक घटनाओं के आधार पर नायक के गुण दोषों का वर्णन करता है। सरल और सहज भाषा में ही एक रोचक जीवनी प्रसादात्मकता बनाए रख सकती है। इस प्रकार जीवनीपरक और ऐतिहासिक उपन्यासों में अंतर है।''

हमारे देश में आत्मकथा लिखने की परिपाटी नहीं रही। प्रेमचंद ने 'हंस' के संपादक में 'जीवनी' की महत्ता कुछ इस प्रकार बताई है- [1]''यदि प्रत्येक युग के सभी लोग अपनी आत्मकथा लिखने में लगजाए तो उपन्यासों के काल्पनकि और झूठे अनुमानों से पाठकों को विशेष रूप से मुक्ति मिलजायेगी। आत्मकथा साधारण मजदूर से लेकर गाँधी तक सभी लोग लिख सकते हैं। उन में अलग-अलग व्यक्तित्व और जीवन मिलेंगे, दो हृदयों की भावनाएं कभी एक-सी नही हुआ करतीं। अभिनव और परिष्कृत अभिव्यक्ति का आकर्षण आत्मकथा की विध्या को संपन्न करने में समर्थ हो सकता है।'' वस्तुतः यह आवश्यक नहीं कि कोई भी दार्शिनिक या साहित्यक मनीषी ही जीवनी के विषय का पात्र हो, अपितु सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक या ऐतिहासिक महापुरुष की जीवनी भी अपने उदद्देश्य की पूर्ति करसकती है। बाबू गुलाबराय का राय है कि [2]''वास्तव में जीवनी घटनाओं का अंकन नहीं वरन् चित्रण है। वह साहित्य की वधा है और उसमें साहित्य व काव्य के सभी गुण

---

1. पत्रकार प्रेमचंद और हंस - डा. रात्नाकर पांडेय - पृ-145
2. काव्य के रूप - बाबु गुलाबराय - पृ सं - 238

है। वह एक मनुष्य के अंतरिक और बाह्य स्वरूप का कलात्मक निरूपण है। जिस प्रकार चित्रकार अपने विषय का एक ऐसा पक्ष पहचान लेता है, जो विभिन्न पक्षों में ओत-प्रोत रहता है और जिस में नायक की सभी कलाएं और घटाएं समन्वित हो जाती है, ठीक उसी प्रकार जीवनीकार अपने नायक के आपे की कुंजी समझकर उस के आलोक में सभी घटनाओं का चित्रण करता है''। जीवनी साहित्य की विधा है और काव्य भी साहित्य ही की एक विधा है बाबू गुलाबरायजी ने जीवनी में कलात्मकता के पक्ष पर बल देते हुए साहित्य और काव्य को अलग नहीं माना है।

जीवनी में गद्य जैसी तथ्यात्मकता एंव पद्य जैसी भावात्मकता का समावेश आवश्यक है। वैसे जीवनी काव्य का एक रूप है वह महाकाव्य है, मुक्तक है, नाटक भी है और रूपक भी है, जीवनी कहानी भी है और उपन्यास भी। जीवनी - मनोविज्ञान, इतिहास, दर्शन आदि शास्त्रों में स्थान प्राप्त है। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि जीवनी -साहित्य और शास्त्र का सेतु है। डा. चंद्रवती सिंह जीवनी साहित्य को एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन मानती है। उनका कहना है [1] ''जीवन चरित्र जीवन की ऐतिहासिक घटनाओं का स्थूल साहित्यक उल्लेख नहीं है, जीवनी साहित्य एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन है। मनुष्य की मुद्रा और भावना उसके मन की क्रिया - प्रतिक्रियाएं और जीवन के क्रम में उसके मस्तिष्क के विकास का अध्ययन एक अत्यंत गूढ विषय है। मनुष्य का व्यक्तित्व मानसिक क्रियाओं का परिणाम है इन मानसिक क्रियाओं का अध्ययन और उनका सफल चित्रण जीवनी साहित्य का अनिवार्य वषिय है।'' अत: जीवनीकार का यह दायित्व है कि वह उक्त व्यक्ति की मानसिक क्रियाओं से संप्रेषित होकर बोधगम्य व्यक्तित्व के क्रियाकलापों का कलात्मक चित्रण करें। जिसके द्वारा, जीवनी में सभी विशेषताओं का समावेश हो सके और वह एक उत्कृष्ट साहित्यक जीवनी निर्मित करसके। जीवनीकार जब

---

1. हिन्दी साहित्य में जीवन चरित्र का विकास - डा. चंद्रवति सिंह - पृ -11

नायक के जीवनी का चित्रण करता है तो वह उसके चरित्र की विशेषताओं का भी उल्लेख करता है। उसके व्यक्तित्व का रेखाचित्र पाठकों के सम्मुख रखता है। शारीरिक गठन, वेश-भूषा, उसकी आवाज, रूचियाँ, चारित्रिक विशेषतायें, विचार आदि भी इस में शामिल होते हैं। लेखक वास्तविक घटनाओं के आधार पर नायक के गुण-दोषों का वर्णन करता है। गुणों का कलात्मक विवरण और दोषों का सहानभूति पूर्ण वर्णन सफल जीवनीकार का परिचायक है।

जीवन चरित्र चाहे जीवनी, नाटक, कविता या फिर जीवनी प्रथान उपन्यास के माध्यम से ही क्यों नही प्रस्तुत हो रहा, उस में चरित्र नायक के समस्त व्यक्तित्व का चित्रण आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। गुणों के साथ दोषों का भी उल्लेख होना चाहिए। आचार्य सत्येन्द्र का अभिमत है कि [1]''मनुष्य का समस्त स्वरूप ही वस्तुत: उसका व्यक्तित्व है और इस व्यक्तित्व में उस के गुण, अवगुण, उस का चरित्र, उस के आचार-व्यवहार, उस का आंतरिक मन, उस की संस्कृति तथा साँस्कृतिक उपार्जन इन सब की एक रसायन प्रस्तुती होती है।'' मनुष्य तभी मनुष्य रहेगा जब उस के दोषादि भी प्रकट करदिए जाएंगे क्यों कि मनुष्य देवता नहीं है, उस में दोष रहेंगे, किसी में एक है तो किसी में कुछ और है। जीवनीकार का कर्तव्य केवल गुण-दोषों का विवेचन-विश्लेषण मात्र नहीं है। उसकी अभिरुचि व्यक्ति विशेष के जीवन के अभी करनेवाले तत्वों तक ही सीमित नहीं होनी चाहिए अपितु जीवनीकार को यह बताना चाहिए कि व्यक्ति ने अपने कर्तृत्व की गरिमा से सामाजिक जीवन को कितना आंदोलित व गतिशील बनापाया है। लेखक जब किसी व्यक्ति के जीवन से प्रभावित होता है और उस व्यक्ति के गुण-दोषों का वर्णन प्रवाहमान सामाजिक जीवन के संदर्भ में सहानुभूति पूर्ण व कलात्मक ढंग से करता है तो वह कृति व्यक्ति, समाज और युग की प्रतिनिधि बन सकती है इसी कृति को हम जीवनी का नाम देसकते हैं।

---

1. समीक्षा के सिद्धानत - प्रो. सत्येन्द्र - पृ - 34

जीवनी लेखक के अपने नायक के अस्तित्व, उसकी चेतना-संवेदना और अनुभूति तंत्र के साथ एकात्मकता स्थापित करने को कलात्मकता कह सकते हैं। जीवनी साहित्य हमारे अहम को इदम से संपृक्त करता है। वह व्यक्ति विशेष का तटस्थ मगर खुलकर कियागया अध्ययन होता है।

जीवनी, जीवनचरित्र एवं जीवनीकार पर विचार करने के पश्चात जीवनीपरक साहित्य की विधाओं एवं अंतरबंधों पर एक दृष्टि डालना आवश्यक हो जाता है। इस विधा विशेष में जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण पत्र और दैनंदिनी को प्रकाश में लायागया है। जीवनी साहित्य का हम वर्गीकरण दो धरातलों पर करसकते हैं।

1. वर्ण्य विषय 2. शैली

वर्ण्य विषय के आधार पर जीवनी - साहित्य को मुख्यत चार भागों में विभाजित किया जासकता है -

1. साहित्यक महापुरुष 2. राजनैतिक महापुरुष
3. ऐतिहासिक महापुरुष 4. धार्मिक महापुरुषों के जीवन पर आधारित

शैली के आधार पर हिन्दी का जीवनी प्रधान साहित्य निम्नलिखित शाखाओं में बाँटा जा सकता है। - जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण, पत्र एंव डायरी। वस्तुत: हिन्दी जीवनी प्रधान साहित्य विषयवस्तु की सीमा तक समृद्ध और शैली की सीमा में काफी विकसित है।

जीवनीकार जब अपने श्रद्धेय नायक के गुण-दोषों का वर्णन जीवनी के माध्यम से करता है तो सामान्य जनता में फैली अनेक भ्रांतियाँ शांत होती है। जीवनीसाहित्य की एक महत्व पूर्ण विशेषता पुनर्जागरण हैं। हम महापुरुषों की जीवनियों के माध्यम से अपने सांस्कृतिक एंव आध्यात्मिक मूल्यों का संप्रेषण कर

सकते हैं। साहित्य के क्षेत्र में भी जीवनी का अपना महत्व है। गद्य साहित्य की उपयोगिता को और प्रभावशाली बनाने के लिए जीवनीपरक उपन्यास को जीवनी साहित्य में शामिल करना उचित है। जीवनी प्रधान साहित्य के अध्ययन से हमें साहित्यकार की सृजनात्मक योग्यता का बोध होता है। वातावरण, उद्देश्य एंव जीवन से संबंधित अनेक बातों का सहज ज्ञान होता है। इस प्रकार लेखक, नायक एंव पाठक के मध्य रागात्मक संबंध साहित्य के लिए नये आयम भी उपलब्ध करता है।

इतिहास का स्थान अतीत का गर्भ है। परन्तु समस्त अतीत इतिहास नहीं। वही अतीत इतिहास है, जहाँ मानव ज्ञान-विज्ञान की तह तक पहुँचकर तथ्यों की खोज करता है। ऐतिहासिक उपन्यासकारों को इन समस्त सामग्रियों का उपयोग अपनी रचना में करना पडता है। यही कारण है कि ऐतिहासिक उपन्यासकार का कार्य कठिन होता है। प्रेमचन्द पूर्व युग में उपन्यासकारों ने ऐतिहासिक उपन्यास की रचना की। उन का मुख्य उद्देष्य इतिहास और उपन्यास-दोनों की रक्षा करना होता था। परन्तु इन्हों ने काल्पनिक या काल्पनिकता का सहारा लेना आवश्यक समझा। इसलिए उन में से जीवनीपरक उपन्यास एक भी नहीं था। उदाहरण के रूप में किशोरीलाल गोस्वामी द्वारा लिखित 'पन्नाबाई' मध्ययुगीन लोक कहानियों पर आधारित है। श्री मथुराप्रसाद द्वारा लिखित 'नूरजहाँ बेगम वा जहांगीर' में उन दोनों की प्रेमकथा का वर्णन है। बाबू जयराम की रचना 'रोशनारा' में रोशनारा, जाहनारा तथा आसमानी आदि का वर्णन है। इन में जीवनीपरक लक्षण नहीं है। मिश्रबन्धुओं द्वारा लिखित पुष्यमित्र, विक्रमादित्य तथा वीरमणि नामक ऐतिहासिक उपन्यासों में मध्यकालीन शासन का वर्णन है।[1] ''विलोचन की दृष्टि में ऐतिहासिक उपन्यास की सरल परिभाषा यह है कि उस के पात्र, पृष्टाधार और घटनाएँ अतीत से ली जाती हैं। इन उपन्यासों को सामान्य रूप से तीन श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं। पहली श्रेणी

1. हिन्दी उपन्यास - विशेषता : प्रेमचन्द - विलोचन शर्मा - पृ - 25

है युगीन उपन्यास, जिस में साधारणतः पात्र सजीव मनुष्य होने के बदले युग-विशेष के व्याख्यात्मक उदाहरण मात्र बनजाते हैं। दूसरी श्रेणी में ऐतिहासिक आख्यान परिगणनीय है, जिस में वर्तमान की एकरूपता और जटिलता से पलायन कर सुदूर अतीत के राजाओं को इतिहास प्रसिद्ध कार्य हैं। तीसरी श्रेणी में ऐतिहासिक उपन्यास आता है। इस प्रकार ऐतिहासिक और जीवनीपरक उपन्यासों में अंतर है।''

0.5. जीवनीपरक उपन्यासों के लक्षण :-

जीवनीपरक उपन्यास जीवनी और उपन्यास के मध्य की इकाई है। यथार्थ और कल्पना का भी यही सामंजस्य होता है। जीवनी तथ्यात्मक होती है तो उपन्यास मुख्यतः कल्पनात्मक परंतु जीवनीपरक उपन्यास कल्पना और तथ्य दोनों के दाव हो सहते हैं। जीवनीपरक उपन्यास इतिहास और साहित्य का मध्यवर्ती होता है, जिसका लेखक इतिहासकार की अपेक्षा अधिक स्वच्छंद किंतु उपन्यासकार की तुलना में कम उन्मुक्त होता है। वस्तुतः जीवनीपरक उपन्यासकार वस्तु सत्य एवं भाव सत्य के बीच संतुलन स्थापित करता है। वस्तुतः जीवनीपरक उपन्यास, इतिहास, जीवनी और उपन्यस का एक महान रूपाकार है। जीपनीपरक उपन्यासों के मूलतत्व कुछ इस प्रकार हैं।

0.5.1. कथानक :-

जीवनीपरक उपन्यास में कथानक-तत्व की प्रधानता अधिकांश विद्वान मानते है। यह उपन्यास का मूलतत्व है। कथानकत्व ही वस्तु होती है। जिसपर उपन्यास का भवन खडा होता हैं। कथानक को ऐतिहासिक घटनाओं का लेखा भी कहाजा सकता है। कथानक की पूर्णता उसके कथाकृति में उपस्थित कियेगये रूप पर निर्भर होती है, जिसके निर्माण केलिए उसका सुगठित होना पहली आवश्यक शर्त है। यदि उसके पारस्परिक सम्बद्धता का अभाव, अर्थात ऐतिहासिक और जीवनीपरक घटनाओं

का अभाव होता है तो कथा-श्रृड़खला टूटजाती है। घटनाक्रम के निर्धारण में विवेक से काम लेता है। किसी भी उपन्यासकार की प्रतिभा का परिचय मौलिकता से होता है। मौलिकता से उपन्यास का महत्व बढजाता है। ऐतिहासिक घटना का सीधा-सादा वर्णन या चित्रण करदेना एक बात है तथा उसमें कलात्मकता का समावेश करके उसमे निर्माण-कुशलता का परिचय देना दूसरी बात। वह कभी-कभी कल्पना को भी आधार बनाकर कथानक को आगे बढाता है। वह काल्पनिकता, वास्तविकता की छाया और सम्भावनाओं का प्रतिरूप बनकर उभरती जान पडती है। काल्पनिक घटनाएँ उपन्यास की यथार्थ घटनाओं की पूरक होती है। उपन्यासकार का यही उद्धेश्य होता है कि वह पाठकों के सामने यथार्थ जीवन के ऐसे रूप को चित्रत करसके, जिस में उन्हे जीवन-रूप की झाँकी दिखाई दे। परन्तु मात्र कल्पना की सहायता से बडे कथानक का ताना-बाना बुनना कोई अर्थ नही रखता। तब ही उपन्यास रोचक बनता है। रोचकता कथानक के अभाव में, उपन्यास पाठकों का मनोरंजन नही कर सकता । कथानक के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक रोचकता रखना बहुत समर्थ उपन्यासकारों केलिए सम्भव होता है। इस प्रकार कथानक को जीवनीपरक उपन्यास में वर्णनात्मक और पात्रात्मक शैली में प्रस्तुत किया जासकता है।

0.5.2. पात्र या चरित्र-चित्रण :-

एक श्रेष्ठ उपन्यसाकार यह दिखाने का प्रयत्न करता है कि मानव-चरित्र की वे कौन-कौन सी विशेषताँ हैं, जिनके आधार पर किसी मनुष्य की मनुष्यता को देखा-परखा जासकता है। खासकर जीवनीपरक, एतिहासिक उपन्यासों में मनुष्य का व्यक्तित्व उसके चरित्र का सब से उल्लेखनीय अंग समझा जाता है। यदि किसी उपन्यास के पात्रों में सजीवता या सशक्तता होती है, तो वे पाठक के हृदयपर भारी प्रभाव डालते हैं। ऐतिहासिक पात्रों का चरित्र-चित्रण बहुत ही सचेत होकर करना है। कल्पना के आधार पर भी पात्रों का सृजन होता, जो कथानक के आगे बढाने में

लाभदायक होता है। उपन्यासकार का पात्रोचित वर्णन करना प्रथम कर्तव्य है। हर एक पात्र की अपनी एक विशेषता होती है। इसे अभिव्यक्त करना भी उपन्यासकार का काम है। चरित्र-चित्रण विश्लेषणात्मक प्रणाली में या अभिनयात्मक विधि में होती है। ऐतिहासिक उपन्यासों में साधारणत: अभिनयात्मक विधि का प्रयोग होता है। स्वाभाविकता सप्रणता, सहृदयता और मौलिकता चरित्र-चित्रण की विशेषताएं हैं।

0.5.3. कथोपकथन :-

कथोपकथन उपन्यास का तीसरा तत्व है। यह कथा का विकास करता तथा पात्रों के चरित्र-चित्रण में सहायक होता है। इस के द्वारा उपन्यासकार अपनी कृति में वर्णित घटनाओं या दृश्यों में सजीवता लाता और उसके संगठन में कथानक का विस्तार करता है। कथोपकथन के प्रसक्षत: कथानक के सूत्र से सम्बन्धित होना चाहिए कथोपकथन के द्वारा उपन्यासकार पाठकों को अपने पात्रों के विषय में विविध जटिल परिस्थितियों का प्रत्यक्ष बोध कराता है। उपन्यासकार अपनी कृति के चरित्रों की व्याख्या करता है। और उन्हे विकास की ओर अग्रसर करता है। कथोपकथन लेखक के उद्देश्य को प्रकट और स्पष्ट करता है। उपयुक्तता, अनुकूलता, सम्बद्धता, स्वाभाविकता, संक्षिसता और उद्देश्यपूर्णता आदि कथोपकथन के गुण है।

0.5.4. देशकाल :-

इस के अन्तर्गत किसी भी देश, या समाज की सामाजिक, घार्मिक, राजनैतिक परिस्थितियाँ, आचार-वचिार, रहन-सहन, रीति-रिवाज तथा समाज की कुरीतियाँ या विशेषताएं आदि समझी जाती है। यह कथानक के स्पष्टीकरण का साधन है। आदमी जिसप्रकार के समाज में रहता है, वैसा ही वह काम भी करता है। प्रकृति और पात्रों की मानसिक स्थिति का सामंजस्य पाठक पर अच्छा प्रभाव डालता है और

उपन्यासों में काव्यत्व भी लाता है। देशकाल प्राय: वातावरण का बाह्य रूप या प्राकार कहा जाता है। इस दृष्टि से तीन भेद किये जाते हैं। वे सामाजिक, प्राकृतिक तथा एतिहासिक है। प्रथम के अंतर्गत सामाजिक दशा का यथार्थ चित्रण किया जाता है। अर्थात सामाजिक जीवन से सम्बन्ध रखनेवाले सभी वर्णन, वेश-भूशा, भाषा, रीति-रिवाज, शिक्षा, संस्कृति, व्यापार आदि इस के अंतर्गत आते हैं। द्वितीय अर्थात प्राकृतिक के अंतरर्गत कभी-कभी उपन्यासकार अपनी कथा के पात्रों के सुख-दु:ख के साथ प्रकृति की समता-विषमता को बडे नाटकीय ढंग से प्रस्तुत करता है। तृतीय अर्थात ऐतिहासिक की आवश्यकता प्राय: ऐतिहासिक उपन्यासों में होती है। इनमें देश-काल के विषय में अधिक सतर्क रहना है। यहाँ काल-दोश न होना या कोई वर्णन इतिहास-विरुद्ध भी न होना है।

0.5.5. शैली :-

शैली के द्वारा उपन्यासकार अपनी कृति को अधिक आकर्षक और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है। उपन्यासकार जिसढंग से अपने विचार और भावनाओं को अभिव्यक्ति देता है, उसी को शैली कहते है। सरलता, रोचकता और प्रवाहपूर्णता आदि शैली के गुण हैं। शैली के पाँच प्रकार हैं। वर्णनात्मक, आत्मकथात्मक, पत्रात्मक, डायरी और मिश्रित शैलियाँ है। जीवनीपरक उपन्यासों में साधारणत: वर्णनात्मक और मिश्रात शैलियों का प्रयोग होता है।

0.5.6. उद्देश्य :-

उपन्यासकार अपनी कृति में किसी विशिष्ट दृष्टिकोण का सहारा लेता है और उसके आधार पर मानव-जीवन का मूल्यांकन करते हुए अपने जीवन दर्शन का स्पष्टीकरण करता है। बहुधा ऐसा प्रतीत होता है कि कथा के नायक के माध्यम से लेखक अपने विचारों को अभिव्यकत करता है तथा अन्य पात्रों द्वारा उन्हीं के खंडन-

मंडन का प्रयत्न करता है। उपन्यास को केवल मनोरंजन का साधन मानना गलत है। आधुनिक युग में हर उपन्यास का एक उद्देश्य होता है जिस से मानव अपना जीवन सुधार सकता है।

सामान्य रूप से उपन्यास के छः मुख्य तत्व मानेजाते हैं। परन्तु कुछ विद्वान इन से अलग एक सातवाँ तत्व 'रस' अथवा 'भाव' भी मानते हैं। वास्तव में कोई उपन्यासकार अपनी रुचि और क्षमता के अनुसार ही उपन्यास में कथावस्तु को आगे बढाता है। इस सन्दर्भ में वह कही श्रृंगार, कहीं वीर या हास्य रसों का भी प्रयोग करता है। इसलिए हम यह नहीं कहसकते कि यह उपन्यास अमुक रस पर आधारित है। जीवनीपरक या ऐतिहासिक उपन्यासों में वीर रस के साथ, श्रृंगार, हास्य और भयानक 'रस' का भी प्रयोग होता है। इसलिए उपन्यास में रस का होना आवश्यक है। जिस प्रकार मानव जीवन में विभिन्न भावों की आवश्यकता है, उसी प्रकार जीवनीपरक उपन्यासों में तमाम् रसों का प्रयोग अनिवार्य है।

इस प्रकार जीवनीपरक उपन्यासों के अध्ययन के लिए उन के तत्व पर ध्यान देना हमारा कर्तव्य है। इन के अध्ययन में हमे साहित्यकार की सृजनात्मक योग्यता का बोध होता है। वातावरण, उद्धेश्य एंव जीवन से संबंधित अनेक बातों का सहज ज्ञान होना है। प्रस्तुत शेध प्रबन्ध में निम्न उपन्यासों का विश्लेषण किया गया है। जीवनीपरक उपन्यासों के लिए जिन लक्षणों की जरूरत है, उन लक्षणों को निम्न सूचि के उपन्यासों में पा सकते हैं।

0.6. हिन्दी के उपन्यास :

1.	लोई का ताना	–	डा. रांगेय राघव
2.	रत्ना की बात	–	"
3.	भारती का सपूत	–	"
4.	यशोधरा जीतगई	–	"
5.	धूनी का धुआँ	–	"
6.	मेरी भवबाधा हरो	–	"
7.	जब आवेगी काली घटा	–	"
8.	झाँसी की रानी	–	श्री बृन्दावनलाल वर्मा
9.	रानी दुर्गावती	–	"
10.	रानी अहल्याबाई	–	"
11.	सम्राट अशोक	–	श्री वाल्मीकि त्रिपाटी
12.	महाराजा हर्ष	–	"
13.	महाराणा प्रतापसिंह	–	श्री सूर्यकांत त्रिपाटी निराला
14.	शिवनेर केसरी (शिवाजी)	–	श्री यादवचंद्र जैन
15.	तात्याटोपे	–	श्री सत्य शकुन
16.	तानसेन	–	श्री महेन्द्र कुमार 'मुकुल'
17.	मानस का हँस	–	श्री अमृतलाल नगर
18.	खंजन नयन	–	"

0.7. तेलुगु के उपन्यास :

1.	कवि सार्वभौमुडु	–	श्री नोरी नरसिंह शास्त्री
2.	कवि द्वयमु	–	‘‘
3.	धूर्जटी	–	‘‘
4.	नारायण भट्टु	–	‘‘
5.	रुद्रमदेवी	–	‘‘
6.	अप्पाजी	–	श्रीप्रसाद
7.	रोशनारा	–	‘‘
8.	शाहजहाँ	–	‘‘
9.	अकबर	–	‘‘
10.	अहल्याबाई	–	श्री लक्ष्मी नरसिंह
11.	सम्राट अशोक	–	‘‘
12.	लकुमादेवी	–	श्री लल्लादेवी
13.	छत्रपति शिवाजी	–	‘‘
14.	श्री पोतनामात्युलु	–	श्री रामलिंगेश्वरराव
15.	श्री ताल्लपाक अन्नमाचार्युलु	–	‘‘
16.	तिक्कन सोमयाजी	–	‘‘
17.	आर्य चाणक्युडु	–	श्री सूर्य नारायण शर्म
18.	रुचीदेवी	–	श्री परवस्तु वेंकय्य सूरी
19.	तिप्पुसुल्तान	–	श्री शातवाहन
20.	आँध्र कविता पितामहुडु	–	श्री जि. आंजनेयुलु
21.	झाँसी लक्ष्मीबाई	–	श्री सुब्रह्मण्य शर्मा

- अध्याय एक -

हिन्दी के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण

हिन्दी साहित्य में अन्य भारतीय भाषाओं की तुलना में उपन्यास बहुत बाद में शुरू हुए हैं। इतनाही नहीं इतिहास के आधार पर लिखित मौलिक उपन्यासों की संख्या भी कम है। शोधकरने से हमें यह मालूम होता है कि हिन्दी के उपन्यासों में सामाजिक अधिक हैं। आरम्भ में ऐतिहासिक उपन्यास भी अनुदित ही अधिक मिलते हैं। मौलिक ऐतिहासिक उपन्यास लिखने का प्रयत्न न प्रेमचन्द ने किया न प्रसाद ने, न उनके पूर्ववर्ती साहित्यकारों ने। हिन्दी में श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासकार केवल चार-पाँच ही हैं। उन में से राहुल साकृत्यायन, रांगेय राघव, बृन्दावनलालवर्मा, अमृतलालनागर, यशपाल, चतुरसेन शास्त्री और हजारी प्रसाद द्विवेदी मुख्य हैं। इन ऐतिहासिक उपन्यासकारों में से सिर्फ जीवनीपरक उपन्यासों के लेखक बहुत ही कम हैं। उनमें से डा.रांगेय राघव, वृन्दावनलाल वर्मा और अमृतलाल नागर मुख्य हैं। इनकी रचनाओं में किसी एक ऐतिहासिक व्यक्ति की जीवनी का दर्शन होता है। गुण और परिमाण दोनों दृष्टियों से ये उपन्यासकार सर्वाधिक और अच्छा लिखनेवाले हैं। इनकी रचनाओं में हम अपने पूर्वजों के वास्तविक जीवन का ज्ञान प्राप्त करने तथा अपने विस्मृत अतीत के पुनर्निर्माण में ही सभ्य और अर्धसभ्य मनुष्य का सर्वाधिक अन्तर देख सकते हैं। मानवजाति के लिए नक्षत्रों का सर्वेक्षण अथवा वायुयानों जलयानों का अन्तरिक्ष एवं महासागरों में सन्तरण उतनी आश्चर्यजनक अथवा गौरवपूर्ण उपलब्धि नहीं है, जितना विगत-विस्मृत घटनाचक्रों एवं पूर्वागत नर नारियों के वास्तविक स्वभाव का ज्ञान। ऐतिहासिक अध्यन की कसौटी सत्य है किन्तु उसका प्रवर्तन कलात्मक है। उसके सत्य होने में ही उसकी कविता निहित है। यही हमें इतिहास के वैज्ञानिक एवं साहित्यक दृष्टिकोण का समन्वय मिलता है।

जीवनीपरक उपन्यासों को दो भागों में विभाजन किया जा सकता है। केवल ऐतिहासिक रूप से प्रधान व्यक्तियों पर लिखेगये उपन्यास पहले वर्ग में आते हैं। इस प्रकार के उपन्यासों में समय के साथ पात्र भी प्रधान तथा ऐतिहासिक होते हैं। देश और समय के साथ पात्र भी ऐतिहासिक होता है। दूसरे प्रकार के उपन्यासों में ऐतिहासिक भूमिका में कल्पित कहानी होती हैं। अर्थात किंवदंतियों पर आधारित विषय का साकार रूप ही दूसरे वर्ग के उपन्यास हैं। वातावरण ऐतिहासिक होते हुए भी पात्र कल्पित है, तथा घटनाएं भी कल्पित होती हैं। इतिहास रस में तल्लीन रहने की सामान्य भावना होती है। ऐसे उपन्यासों को जीवनीपरक मानने या न मानने पर विद्‌वानों में विभिन्न मत हैं।

काल के आधार पर जीवनीपरक उपन्यासों का विभाजन अति-आवश्यक है। हिन्दी साहित्य में मौलिक जीवनीपरक उपन्यासों को चार भागों में विभाजन कर सकते हैं। वास्तव में हिन्दी साहित्य में ही चार भागों में काल विभाजन हुआ है। उस विभाजन के आधार पर ही जीवनीपरक उपन्यासों का भी विभाजन होना उचित है। साहित्यक क्षेत्र में काल विभाजन चार वर्गों में हुआ है-प्राचीन काल, पूर्व मध्यकाल, उत्तर मध्यकाल और आधुनिक काल। प्राचीनकाल में घटित घटनाओं के आधार पर लिखित तमाम् ऐतिहासिक उपन्यास इस वर्ग के अन्तर्गत रखेजाते हैं। उसी प्रकार प्राचीनकाल में जीवित ऐतिहासिक-व्यक्ति की जीवनी पर आधारित जीवनीपरक उपन्यास इस वर्ग में आते हैं। ईसामसीह की जन्म सदी से आठवी शताब्दी तक प्राचीनकाल है। इस काल में जिन ऐतिहासिक व्यक्तियों की जीवनियों पर उपन्यास लिखे गये थे, वे सभी उपन्यास इस वर्ग में रखे जाते हैं। नवी सदी से 1525 तक का समय पूर्व मध्यकाल कहाजाता है। इस समय में जितने भी ऐतिहासिक व्यक्तियों की जीवनियों पर लिखित उपन्यास हैं - इस वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। प्राचीनकाल और पूर्व मध्यकाल का वितरण हम और एक दृष्टि से देखसकते हैं।

प्राचीनकाल में भारत में हिन्दु राजाओं का राज्य कायम था। जब से अन्य प्रान्तों से अन्य जातियों का आक्रमण भारत पर होनेलगा वहाँ से पूर्व मध्यकाल का आरम्भ हुआ। इसकाल की शुरूआत खासकर मुसलमानों के आक्रमणों से हुई।

उत्तर मध्यकाल का आरम्भ 1526 होता है। इसकाल की अवधि 1526 से 1857 तक है। इसबीच के संबंधित जीवनीपरक उपन्यास इसवर्ग में आजाते हैं। ध्यान से परख ने पर हमें यह मालूम होता है कि मुसलमान राज्यों के कायम करने से उत्तर मध्यकाल शुरू होता है। इसकाल का अंत भी मुसलमान राज्य के पतन से होता है। एक खास बात यह है कि अंगग्रेजों का आगमन भी इससमय में हुआ था। इसलिए हिन्दी साहित्य पर भी अंग्रेजी का असर पडा था। नई साहित्यक विधाओं का अविष्कार भी हुआ था। अंग्रेजी राज्य-स्थापन से आधुनिक काल का आरम्भ होता है। आधुनिककाल के साहित्य पर विज्ञान और औध्योगिक क्रांति का असर है। जिन विषयों के आधार पर काल विभाजन कियागया है। उन विषयों के आधार पर हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यासों का भी वर्गीकरण कियागया है। इन उपन्यासों पर पूँजीवाद, साम्यवाद आदि का भी प्रभाव रहा था। जीवनीपरक उपन्यास जिस व्यक्ति से संबंधित है, उस व्यक्ति के समय के अनुसार ही उसकाल का स्थान निर्धारित है।

काल विभाजन

1. प्राचीन काल :-

1. साम्राट अशोक
2. यशोधरा जीत गई

2. पूर्व मध्यकाल :-

1. लोई का ताना
2. धूनी की धुआँ

4. लखमा की आँखे
5. महाराज हर्ष

3. उत्तर मध्यकाल :-

1. तानसेन
2. महाराणा प्रताप सिंह
3. शिवनेर केसरी
4. मेरी भव बाधा हरो
5. रत्ना की बात
6. रानी अहल्याबाई
7. रानी दुर्गावती
8. खंजन नयन
9. मानस का हँस

4. आधुनिक काल :-

1. तांत्यटोपे
2. झांसी की रानी
3. भारती का सपूत

1.1. प्राचीनकाल :-

प्राचीनकाल के अंतर्गत दो जीवनीपरक उपन्यास प्राप्त हुए हैं। कुछ अन्य उपन्यास भी है, मगर वे सिर्फ ऐतिहासिक उपन्यास ही हैं। ऐसे उपन्यासों में

अतीत कालीन पात्र, वातावरण और घटनाओं के ज्ञात तथ्यों को कल्पना से माँसल और जीवन्त बनाकर रखने का प्रयास होता है, वे ऐतिहासिक कहे जाते हैं। ऐतिहासिक उपन्यास का लेखक अल्पज्ञात तथ्यवाले सुदूर अतीतकाल की घटनाओं का सूत्र मिलाने के लिए कल्पना का अधिक आश्रय लेता है और निकट अतीत का कम। उपन्यासकार वास्तविकता की उपेक्षा नहीं कर सकता। वह अतीत का चित्रण करते समय भी पुरातत्व, नृतत्व और मनोविज्ञान आदि की आधुनिकतम प्रगति से अनुभिज्ञ रहकर थोथी कल्पना का आश्रय ले उपहास्यास्पद बनजाता है। ऐसे उपन्यासों में डा. रांगेयराघव द्वारा लिखित 'देवकी का बेटा', चतुरसेन शास्त्री द्वारा लिखित 'आलमगीर' और 'सहयाद्री की चट्टान', गुरुदत्त जी के उपन्यास 'गंगा की धारा' और 'खंडहर बोलरहे' हैं। इन उपन्यासों में ऐतिहासिक घटनाओं का स्थान प्रधान है। इन उपन्यासों को जीवनीपरक उपन्यास मानना अनुचित है। किसी भी ऐतिहासिक व्यक्ति को अपनी रचना का विषय बनालेने पर लेखक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह ऐतिहासिक तथ्यों की सुरक्षा करें, वह उन तथ्यों से बंधा रहे और यदि वह उनकी उपेक्षा करता है तो वह उस विशिष्ट व्यक्तित्व को क्षति पहुँचाता है। यदि किसी व्यक्ति के संबंध में इतिहास मूक हो किंवदंतियों से सामग्री संकलन करना पडता है। परन्तु वे जीवनीपरक उपन्यास नहीं कहलाते।

1.2. पूर्वमध्यकाल :-

इस काल के अंतर्गत छः जीवनीपरक उपन्यास हैं। डा. राँगेय राघव द्वारा लिखित लोई का ताना, धूनी की धुआँ, लखमा की आँखे और जब आयेगी काली घटा। इन में से 'लोई का ताना' नामक उपन्यास ऐतिहासिक है, साथ ही महान कवि कबीर की जीवनी पर आधारित होने के कारण साहित्यिक है। बाकी दोनो उपन्यास ऐतिहासिक होकर भी समाज सुधारक व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित उपन्यास

है। 'धूनी का धुआँ' नामक उपन्यास महात्मा गोरखनाथ पर लिखागया है। 'जब आयेगी काली घटा' नामक उपन्यास की कहानी भी समाज सुधारक, महाभक्त चरपटनाथजी की जीवनी है। 'लखमा की आँखे' नामक उपन्यास महाकवि विद्यापति पर आधारित है। इस प्रकार इन उपन्यासों को जीवनीपरक, सामाजिक उपन्यास मानना उचित है।

1.3. उत्तर मध्यकाल :-

इस विभाग में कुल दस जीवनीपरक उपन्यास हैं। ऐतिहासिक राजवंशों से संबंधित महान व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित उपन्यास पाँच हैं। इनके नायक और नायिका ऐतिहासिक महान व्यक्ति हैं। अन्य पाँचों उपन्यास के प्रधान पात्र सामाजिक, साहित्यिक और संगीत से जुड़े व्यक्ति होने के कारण उस का विश्लेषण अगले अध्याय में किया गया है। 'तानसेन' की जीवनी पर उपन्यास का नाम 'तानसेन' है। संगीत क्षेत्र में तानसेन महान पंडित हैं। 'मेरी भव बाधा हरो' नामक उपन्यास बिहारी की जीवनी पर आधारित उपन्यास है। 'रत्ना की बात' नामक उपन्यास तुलसीदास की कहानी पर आधारित उपन्यास है। 'मानस का हंस' नामक उपन्यास भी महाकवि तुलसीदास पर आधारित है। 'खंजन नयन' नामक उपन्यास भक्त सूरदास की जीवनी पर आधारित उपन्यास है। इस प्रकार ये दस उपन्यास जीवनीपरक उपन्यास कहलाने योग्य है।

1.4. आधुनिक काल :-

आधुनिक काल में अंग्रेजों के खिलाफ आजादी के संग्राम में शहीद हुए महान नेता 'तांत्याटोपे' और 'झाँसी की रानी' की जीवनियों पर आधारित उपन्यास है। ये दोनों उपन्यास राजवंश और ऐतिहासिक व्यक्तियों पर लिखेगये थे। इसलिए इन उपन्यासो का विश्लेषण ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों के अंतर्गत

किया जाता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की जीवनी पर डा. राँगेय राघवजी द्वारा लिखागया उपन्यास 'भारती का सपूत' एक सफल जीवनीपरक उपन्यास है।

ऐतिहासिकता और काल्पनिकता के आधार पर उपन्यासों का विश्लेषण:-

1.5. यशोधरा जीतगई :-

1.5.1. ऐतिहासिकता

यह एक लघु जीवन चरितात्मक उपन्यास है। संन्यासी सिद्धार्थ की मानसिक हलचल के मध्य गत जीवन के स्मरण से इस उपन्यास का कथानक शुरू होता है, जो प्रथमा, मध्यमा, एवं उत्तरा, इन तीन भागों में विभाजित कर दिया गया है। 'प्रथमा' में सिद्धार्थ के प्रारम्भिक जीवन एवं तत्कालीन परिस्थितियों का वर्णन है। 'मध्यमा' में सिद्धार्थ की विलासता के प्रति उदासीनता, पुत्र का जन्म, गृह-त्याग, एवं गौतम की साधना-संबंधी घटनाओं का आकलन है। उत्तरा में यशोधरा का विद्रोह मुख्य रूप से अंकित है, जो इस उपन्यास का प्रमुख विषय है। सिद्धार्थ के बचपन में घटित एक घटना में ऐतिहासिक तथ्य है। [1]''सिद्धार्थ बारहवर्ष का था। न जाने क्यों सब कुछ होते हुए भी एक सूनापन मन में जाग उठता था। ज्योतिषियो ने कहा था : कुमार, संसार में महान बनने केलिए पैदा हुआ है।' वह महानता की लालसा परोक्षरूप में न जाने कहाँ भीतर ही भीतर पल रही थी। लगता था कि यह जीवन बडा सुख है और फिर अज्ञात का भय-सा होने लगता । कैसे हो जाएगा वह महान! वह एकान्त में बैठा था। उपवन की गंध ने वायु को भी चंचल कर दिया था। वह सोच रहा था। आज महाप्रजापति गौतमी के विषय में ज्ञात हुआ था कि वह उसकी माँ नहीं थी, मौसी थी। उस ने पूछा : 'तो माता कहाँ है?' माँ, महाप्रतापी गौतमी के नेत्रों में आँसू आगए थे। उन्होंने पूछा था, 'पुत्र! तुझे, मुझसे किसी प्रकार का अभाव लगता है? 'नही तो अम्ब!'फिर क्यों पूछता है, वत्स! अम्बा! दासियाँ

1. यशोधरा जीत गई -डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 10

बात करती थीं तुम रोती क्यों हो ?' मै रोती नहीं वत्स ! दोनों ओर की सोचती हूँ। तेरी माता माया देवी मेरी बहिन थीं। 'उस को यम ले गया'। कौन, दक्षिण दिशा का महाराज ? हाँ तात ! वह क्यों ले जाता है, अम्बा ? यह तो कोई नहीं जानता।' और सिद्धार्थ सोचने लगा था । .... सिद्धार्थ ने महाप्रजापती गौतमी से पूछा, माँ ! मरता हुआ आदमी कैसा होता है ? और उसका सत्य उसी दिन कुछ-कुछ स्पष्ट हुआ था, जिस दिन कुमार देवदत्त ने वन में आखेट करते हुए उड़ते हंस को बाण मारा था। .... प्रश्न था- हंस किसका ? देवदत्त कहता था: मैं ने मारा है, मेरा शिकार है। यदि मरजाता है, तब इसपर मारनेवाले का अधिकार है, कि इसे बचानेवाले का अधिकार, इसपर उचित रूप से निर्णय है।'' उपन्यास के दूसरे भाग 'मध्यमा' में सिद्धार्थ की विलासिता के प्रति उदासीनता, पुत्र का जन्म, गृहत्याग, एवं गौतम की साधना संबंधी घटनाओं का आकलन है। सिद्धार्थ के मन में बदलावन आने के पीछे अप्रत्यक्ष रूप से उस के रथ सारथी 'छंदक' का असर है।

रथ सारथी 'छंदक' और सिद्धार्थ के बीच घटित एक घटना में ऐतिहासिक तथ्य है। उदाहरण के रूप में [1]''अचानक सिद्धार्थ थर्रागया था। सामने एक जर्जर आदमी पथ के बीच खडा था। उस के मुँह में दाँत नहीं थे, सिर के बाल सफेद थे, बहुत कम थे। उस का शरीर झुक गया था। आँख धुँधली होगई थी। हाथ में लकड़ी थी, जिस के सहारे वह काँपते हुए अपने को सम्भालने की चेष्टा कर रहा था। हटना चाहकर भी वह हट नहीं पाया था, क्यों कि बहुत निर्बल था। उस के शरीर पर जैसे चमड़ा भर रह गया था। सिद्धार्थ ने देखा तो पूछा 'छंदक'। छंदक उस स्वर को सुनकर डर गया। कहा: 'आर्यपुत्र'! 'सौम्य ! यह कौन पुरुष है ?' 'देव। यही बुढ़ापा है।' बुढ़ापा क्या सारथी ? क्या यह भी दारिद्य की ही कोई यातना है ?' 'नहीं आर्य !' छंदक ने मुस्कुराकर कहा, 'देव ! जरा है, और इसके सामने दरिद्र और धनी दोनों

---

1. यशोधरा जीत गई -डा. रांगेय णराघव - पृष्ठ - 27-50

समान है।' 'छंदक!' सिद्धार्थ ने आकुल कंठ से कहा 'तो क्या सब का यही अन्त है?' 'हाँ आर्य! जब यौवन चलाजाता है, तब एक दिन सब ही इस वार्धक्य के जबडों में जा फंसते हैं। तब शरीर काम नहीं करता।' 'तो क्या धनी भी एक दिन वृद्ध बन जाने पर यही कष्ट भोगते हैं?' 'हाँ आर्य! जन्म लेनेवाले इस दशा को भी प्राप्त होते है।' हठात् सिद्धार्थ ने कहा 'छंदक!' 'आचार्य! रथ लौटा ले,' 'कहां-चलूँ देव?' 'प्रासाद।' मानो, प्रासाद उस वास्तवकिता की भयानकता के विरुद्ध एक पलायन था। 'छंदक।' सिद्धार्थ ने कहा था। 'प्रभु' 'यह क्या है? वे पुरुष कंधों पर क्या उठाए लिये जारहे हैं।' 'देव! वह मुर्दा है। मरगया है।' सिद्धार्थ ने पूछा और फिर अपने आप धीरे से दुहराया। 'मरगया है?' मृत्यु का नाम तो सुना था, परन्तु देखा नहीं था 'छंदक फिर वे स्त्रियाँ छाती पीटती, हाहाकार करती क्यों?' 'देव! वे उसकी मृत्यु से दुखी हैं। जो जन्मता है वह मरता है।' 'छंदक रथ लौटा ले।' 'प्रभु! मरना जीना तो लगा ही रहता है। परन्तु जीनेवाला उसे भूलजाता है।''

गौतम बुद्ध के समय समाज विषम था। जाति एवं वर्णगत विद्वेष अपनी चरम सीमा पर थे। सांस्कृतिक दृष्टिकोणों के कारण ब्राह्मण और क्षत्रिय परस्पर लड रहे थे। महाराज शुद्धोदन ने सिद्धार्थ से ब्राह्मण और क्षत्रियों की स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा [1] ''जब ब्राह्मण शासक थे, तब वे ऊँचे थे। फिर ब्राह्मण क्षत्रिय संघर्ष हुए, फिर मित्रता हुई, तब ब्राह्मण भिखारी बना, परन्तु धर्म का स्वामी रहा और क्षत्रिय? वह राजा था। ...... ब्राह्मण ने अपनी रक्षा के लिए जगह-जगह अनार्य देवी-देवताओं और अनार्य पुरोहित समूहों को ब्राह्मण मानलिया और रक्त शुद्धि को नष्ट करने लगा। उस समय हमने ही ब्राह्मण के वेद को नही माना। हमारे क्षत्रियों का अपना दर्शन है। हम सर्व श्रेष्ठ है, हम से ऊँचा कोई नहीं''। इसके पश्चात उन्होंने क्षत्रियों के कार्यों को स्पष्ट करते हुए कहा-[2] ''पुत्र! व्यवहार में ही हम

---

1. यशोधरा जीत गई -डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 24
2. यशोधरा जीत गई -डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 25

ऊँचे और नीचे कुल है, किन्तु यह व्यवहार संसार को अनर्गल होने से बचाने के लिए है, संस्कृति और धर्म की रक्षा केलिए आवश्यक है। यदि क्षत्रिय कुल में इस प्रकार दासों को नही रखे तो क्या हो जाता है? यह अशिक्षित बर्बर लोलुप दास हमें खाजाए। यदि हम क्षत्रिय व्यापार पर अंकुश न लगाए तो यह हमें खरीदलें। यदि हमारे क्षत्रिय दार्शनिक नियम निर्धारित न करें तो कुरु पंचाल की भांति ब्राह्मण हमारे सिर पर छाजाएँ।'' ब्राह्मण उस जमाने में अपनी रक्षा के लिए निम्नजातियों को क्षत्रिय के विरुद्ध भड़का रहे थे। इसलिए आर्य अमृतोदन ने कहा - [1]''यह ब्राह्मण तो बडे पतित हैं। तमाम अनर्थों से घुलते मिलते हैं। अपने स्वार्थ के लिए ये लोग रक्त की चिंता नहीं करते''। इन विरोधों के कारण समाज अत्यन्त ही अव्यवस्थित हो गया था। वैश्य सम्पन्न होरहे थे, किन्तु शूद्रों की स्थिति संतोषजनक नही थी।

इस उपन्यास में राजनीतिक परिस्थितियों को अत्यल्प स्थान दिया गया है। उपन्यास में पात्रों की भीड़ है। उन में से बड़े पात्र सभी ऐतिहासिक हैं। सिद्धार्थ और यशोधरा इस उपन्यास के प्रमुख पात्र हैं। मृत्यु के अन्तिम क्षण तक गौतम बुद्ध अपने असंख्य शिष्यों के साथ संसार में व्याप्त अज्ञान तम को नष्ट करने के लिए बौद्ध-धर्म का दीप जलाते रहे, जिसकी लौव आज भी विश्व में टिमटिमा रही है। इस उपन्यास की सब से बडी देन यशोधरा का अद्भुत चरित्र है। वह सदैव अपने कर्तव्य पर अडिग एवं सतर्क रही। इसलिए लेखक ने उपन्यास का शीर्षक भी 'यशोधरा जीत गई' रख दिया। इस उपन्यास में लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यों की पूर्ण रक्षा की है, कहीं-कहीं शोधपूर्ण तथ्य भी प्रस्तुत किये गए हैं। सभी मुख्य पात्र ऐतिहासिक हैं और ऐतिहासिक सीमा में ही अपने कार्यो को करते हैं। निष्कर्षतः यह कहाजासकता है कि 'यशोधरा जीतगई' सौष्ठव सम्पन्न आकर्षक जीवनीपरक उपन्यास है।

---

1. यशोधरा जीत गई -डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 108

1.5.2. काल्पनिकता :-

इस उपन्यास में जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का झलक भी है। खासकर तीसरे भाग में अधिक दार्शनिक विवेचन के कारण कथावस्तु की गति में शिथिलता आगई है। फिर भी लेखक ने कुशलता से बुद्ध और यशोधरा के माध्यम से तत्कालीन परिस्थितियों को अंकित किया है। विवाह के बाद एक दिन सिद्धार्थ ने एक ऐसा दृश्य देखा जिस से उसका मन विह्वल हो उठा। तुरन्त वह अपने मंदिर में आगया और दासी को मदिरा लाने की आज्ञा दी। तब लेखक ने दासी का नाम पिंजरिका बताया, जो काल्पनिक महसूस होता है। [1]''सिद्धार्थ भीतर चला आया था। जब विशाल प्रकोष्ट में पहुँचा था तब सिद्धार्थ ने पुकारा 'पिंजरिक'। 'देव', वह दौडकर आई, 'आज्ञा', 'मुझे प्यास लगरही है'। वह मदिरा पात्र ले आई। तीन चषक पीकर जब सिद्धार्थ ने कहा: 'अभी मेरी प्यास नहीं. बुझी'। .... 'यह यौवन की प्यास है।' .... 'पिंजरिका तू सुन्दर है। पर क्या तेरा रूप भी बुढापे से नष्ट होजाएगा''?

उल्लिखित दासी-पात्र जरूर काल्पनिक है। लेखक ने बुद्ध के महान जीवन का सापेक्ष दृष्टि से अध्ययन करने का प्रयत्न किया है और ऐसे पात्रों का वर्णन करके निश्चय ही वह इतिहास और भारतीय संस्कृति के प्रति श्रद्धावनत है। उपन्यासों में काल-विशेष का सजीव चित्रण करने के अतिरिक्त लेखक का अपना भी उद्देश्य होता है, जो प्राय: सामाजिकता से प्रभावित होता है। जीवन चरितात्मक उपन्यासों में लेखक स्वतन्त्रता से अपनी आनुमाणिक प्रेरणा का उपयोग नहीं, कर सकता, क्यों कि उसे मुख्य पात्र की रक्षा करनी होती है। डा. राघव जी ने तत्कालीन नारियों की स्थिति का चित्रण करते समय नारी-जागरण को विशेष महत्व दिया है। नारी-स्वातंत्र्य की भावन में आधुनिक चेतना सबसे प्रबल है। बुद्ध युगीन समाज में दास-प्रथा प्रचलित थी और यह प्रथा क्षत्रिय कुल गणों में ही अधिक थी। दासों को

---

1. यशोधरा जीत गई -डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 30

मारडालना सहज बात थी। बाजारों में उनका क्रय-विक्रय होता था। [1]''रोती हुई दासी किलंजा से सिद्धार्थ ने पूछा.. 'क्यों रोती है किलंजा।' स्त्री ने आँसू पोंछ लिये थे। बोली नहीं थी। उस से पूछा गया था। तब उसने बताया था उसका सद्य:जात बच्चा बेच दिया गया था और दूध ठीक से न पाकर मर गया था''। दासियाँ सेवा एवं वासना की तृप्ति के लिए ही उत्पन्न होती। न उनका अपना कोई जीवन होता या और न कोई व्यक्तित्व। [2]''एक दिन सिद्धार्थ आधीरात होने के पहले ही अचानक जाग उठा। वह क्या था। उसका स्वप्न था। वृद्ध रोगी सिद्धार्थ घूम रहा था। 'भद्रा' कापिलयिनी मृत पडी थी। प्रासाद में हाहाकार मचरहा था। कितना भयानक था वह स्वप्न। उसका जीवन भी वैसे ही एक अनिश्चय और अंधेरे में डगमग कर रहा था। यह रूप नहीं रहेगा, बुढ़ापा इन को ढीला करदेगा कि फिर लटकने लगेगे। और तब इन्हें देखकर घृणा होने लगेगी।

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने सिद्धार्थ को सांस्कृतिक सुधारक के रूप में वर्णन किया है। एक साथ इतने पात्रों का परिचय दियागया है कि पाठकों को परखना कटिन होगया है। काल्पनिक पात्रों में 'मंजरिका', 'किलंजा', 'अनुला', 'सुजाता' आदि प्रमुख हैं। इन पात्रोंका चरित्र निश्चित है, और नाम काल्पनिक हैं। शुद्धोदन और महाप्रजापती गौतम को लेखक ने अपेक्षाकृत अधिक सबल रेखाएं दी है और ये दोनों पात्र जुगनू की भाँति कभी-कभी उपन्यास में चमचम करते हैं। किन्तु ये बहिर्मुखी है। इनके कथन और व्यवहार में अन्तर नहीं। इनका चरित्र क्रिया-प्रतिक्रिया में व्यक्त है। मगध राजा बिंबसार के जमाने में बुद्ध धर्म तेजी से प्रचलित हो रहा था। इस विषय के आधार पर लेखक ने प्रस्तुत काल्पनिक घटना का विश्लेषण किया है। [3]''जीवन एक यात्रा बनगया, परन्तु उसका कोई, भी अन्त नहीं

---

1. यशोधरा जीत गई -डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 37
2. यशोधरा जीत गई -डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 61
3. यशोधरा जीत गई -डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 74

था। सिद्धार्थ, आम्र वनों में घूमता हुआ अंत में पैदल चलता राजगृह पहुँचा। लोग आश्चर्य से देखते थे। महाराज बिबंसार प्रासाद पर खडा था। सिद्धार्थ को देखा तो वह पथ पर भीख माँग रहा था। पेट के लिए इतना काफी होगा, सोचकर जो भोजन मिला वही लेकर नगरद्वार पर बैटकर खाने लगा। कितना बुरा था वह भोजन। बिंबसार ने पूछा, 'भिक्षुप्रवर।, आप कौन है?' यह वेश क्यों? किसी रमणी ने आप का तिरस्कार किया? सिद्धार्थ ने मुस्कुराते हुए कहा 'मुझे न वस्तु – कामना है, न भोग की ही कामना है। परन्तु वह सब एक भ्रम था, एक धोखा था।' 'तुम क्षत्रिय हो?' 'भिक्षु हूँ'। इस प्रकार काल्पनिकता की सहायता से लेखक ने पूरे उपन्यास को रोचक और आकर्षक बनाया है। लेखक ने सिद्धार्थ का परिचय एक असाधारण मनुष्य के रूप में ही दियाहै। यशोधरा भी अपने कर्तव्य पर सदैव अडिग एवं सतर्क रही। प्रत्येक स्थिति में गौतम को झुकना पडा और यशोधरा अपराजित रही। काल्पनिकता का प्रभाव होने पर भी उपन्यास की सफलता सिद्ध हुई है।

1.5.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

'यशोधरा जीतगई' नामक उपन्यास में लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यों की पूर्ण रक्षा की है, कहीं शोधपूर्ण तथ्य भी प्रस्तुत किये गये हैं। सभी मुख्य पात्र ऐतिहासिक हैं। और ऐतिहासिक सीमा में ही अपने कार्य करते हैं। लेखक का दृष्टिकोण सांस्कृतिक परिस्थितियों की ओर अधिक है। इसलिए लेखक ने सिद्धार्थ को उपन्यास के प्रमुख पात्र और महान व्यक्ति के रूप में वर्णन किया है। वह प्रारम्भ से ही अत्यन्त उदार था। राजकुमार को प्रजा के कष्टों के बारे में अवगत कराने का श्रेय रथवान् 'छन्न' ने किया। सौन्दर्य की ओर आकृष्ट होना मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। सिद्धार्थ में भी ये स्वाभाविक इच्छाएँ थीं। वे कुछ समय केलिए विलासिता में डूबगये। इच्छित वस्तु की प्राप्ति के पश्चात एक बार उस में रमजाना अत्यन्त मनोवैज्ञानिक है। विलासता की छाया में पले हुए सुकोमल सिद्धार्थ विपत्तियों की

कडी धूप में भी अपने साधना पथ पर अग्रसर रहे। अन्ततः ज्ञान प्राप्तकर 'गौतम' बुद्ध कहलाये। जीवनकाल में उनका यश चारोतरफ फैलने लगा। मृत्यु के अन्तिम क्षण तक गौतम बुद्ध अपने असंख्य शिष्यों के साथ संसार में व्याप्त अज्ञान-तम को नष्ट करने केलिए बौद्ध धर्म का दीप जलाते रहे, जिसकी लौ आज भी टिमटिमा रही है। अनुपात की दृष्टि से उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्यों की पूर्ण रक्षा की गई है। उपन्यास के सभी खास पात्र ऐतिहासिक है। फिरभी गौण पात्रों के संदर्भ में लेखक को काल्पनिकता का सहारा लेना पडा। नारी समस्या इस उपन्यास की मूल समस्या है। इसलिए जहाँ तहाँ उपन्यास में गौतम से भी यशोधरा का पात्र प्रधान दिखाई देता है। आमतौर पर लेखक ने पूरे उपन्यास में बुद्ध के महान जीवन का सापेक्ष दृष्टि से अध्ययन करने का सफल प्रयत्न किया और भारतीय इतिहास एवं संस्कृति का सम्मिलित प्रभाव कायम रखा।

1.6. साम्राट अशोक :-

1.6.1. ऐतिहासिकता

वाल्मीकि त्रिपाटी द्वारा लिखित उपन्यासों में 'सम्राट अशोक' एक जीवनीपरक उपन्यास है। भारतीय इतिहास के मौर्यकालीन शासक 'अशोक' एक ऐसा ही सम्राट है, जिसका एक राष्ट्रीयस्वरूप निर्धारित होचुका है। समकालीन ऐतिहासिक तथ्यों, साहित्यिक अभिव्यक्तियों और शिलाओं पर उत्कीर्ण आलेखों के विश्लेषण द्वारा सम्राट अशोक के जिस विराट व्यक्तित्व का दर्शन लेखक को हुआ, उस ने लेखक के मानस को इस सीमा तक आलोकित किया कि उस दर्शन विशेष को औपन्यासिक रूप में देने के लिए वे बाध्य हो गये। उपन्यास का ऐतिहासिक ढाँचा सत्याधारित है। लेखक ने स्वयं भूमिका में कहा कि यह ऐतिहासिक उपन्यास एक उत्कृष्ट रचना है।

जान्हवी के तट पर ईश्वराधन में लीन महामात्य चाणक्य की एकाग्रता भंग हुई। पाटलीपुत्र की ओर से उन्हे मंगल-ध्वनियाँ सुनाई दी। उनके कहने पर

आचार्य राधागुप्त ने समाचार लाने नगर की ओर प्रस्थान किया और थोडी देर में राजकुमार के जन्म की खबर दी। सम्राट बिन्दुसार महामात्य के आश्रम में उपस्थित हुए। उसने चाणक्यामात्य के सामने निवेदन किया कि रानी शुभद्राँगी ने राजकुमार को जन्मदिया है। महामात्य की भविष्यवाणी सिद्ध हुई। गुरुदेव ने उसपुत्र का नाम 'सुसीम' रखा है। अर्थात दूसरी रानी के पुत्र का नाम 'अशोक' है। दोनों को राजा ने प्रशिक्षण केलिए महामात्य के आश्रम में भेज दिया। वहाँ अशोक आचार्य चाणक्य के आदेशानुसार ही शिक्षा-दीक्षा ग्रहण कर रहा था। गुरू के सामने अशोक नतमस्तक खड़ा होता था और सुसीम युवराज की तरह व्यवहार कर रहा था। [1]"चाणक्य ने क्रमशः दोनों को दृष्टिगत किया और आदेश दिया,'सुसीम', असि को कोष्ट में स्थान दो। आदेश आप अपने शिष्य कुमार को दीजिए। मै युवराज हूँ। मैं मगध सम्राट के अतिरिक्त किसी अन्य का आदेश सुनने का अभ्यस्त नही। सुसीम का अवज्ञपूर्ण स्वर सुन आचार्य का मस्तिष्क झनझना उठा। क्रोधातिरेक से वह कांप उठा।

आग्नेय नेत्रों से उन्हों ने सुसीम को लक्ष्य किया, 'एक दिन यही अवज्ञा तुम्हारे पतन का कारण बनेगी, कुमार!' तब से ही चाणक्य के मन में सुसीम के प्रति व्यतिरेक भाव जागृत हुआ था। धीरे-धीरे दोनों राजकुमारों के बीच फासला बढता गया। सदा अशोक सब के सामने सविनय रहता था और इस के विपरीत सुसीम व्यवहार करनेलगा। इतना ही नहीं शौर्य पराक्रम में भी अशोक ही अग्रसर हो रहा था। यह विषय महारानी की नींद का अपहरण करते जा रहे थे। अनिद्ररोग ने उसे मरणोन्मुख करदिया। मरने के पहले उसने अपने पुत्र सुसीम को भावी सम्राट बनाने की वचन सम्राट से ली।

महाराज बिन्दुसार की अस्वस्थता के समाचार मिलने के बाद तक्षशिला में विद्रोह शुरु हुआ। उसे दबाने केलिए सुसीम ने राजा से आज्ञा माँगी और सेना सहित

1. साम्राट अशोक - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 35

तक्षशिला की ओर प्रस्थान किया। लेकिन वहाँ पहुँचकर युवराज रागरंग में डूबगया। परिस्थिति की गम्भीरता को ध्यान में रखकर कुमार अशोक से महामात्य ने कहा कि कुमार इसी समय सेना के साथ वहाँ जाओ और विजय से लौटकर आओ। उसीवक्त वहाँ रक्त रंजित शरीर से सुसीम आ पहुँचा। सुसीम के मुँह से पराजय की गाथा सुनकर रूग्ण महाराज के नेत्र रक्तवर्ण होगए। महामात्य ने महाराज को आश्वासन दिया कि आप निश्चित रहिए। कुमार अशोक अपने लक्ष्य में अवश्य सफल होंगे। विद्रोह के नेता कीर्तिदेव को पछाड़कर अशोक ने विद्रोहकारों को भगा दिया। मंत्रिपरिषद में 'खल्लाटक' के अलावा बाकी सभी चाणक्य से सहमत होते हैं। मगर खल्लाटक सुसीम की माँ का रिश्तेदार होने के कारण किसीभी तरह सुसीम को सम्राट बनाने की कोशिश करने लगा। तक्षशिला की भाँति उज्जैन में भी विद्रोहाग्नि को दबाकर अशोक ने सफलता प्राप्त थी। महाराज बिम्बसार के देहावसान की सूचना मिलते ही कुमार अशोक पाटलीपुत्र पहुँचे और सीधे जाकर उसने गुरुदेव की भेंट की। सेनाध्यक्ष महाबली भीमदेव कुमार अशोक का साथदेने के लिए संसिद्ध होगया।

एकदिन भयानक विस्फोट में महरानी और युवराज का प्रासाद जलगया। महामात्य द्वारा आयोजित मंत्रिपरिषद की बैटक में कुमार अशोक,सम्राट पद के सर्वाधिक उपयुक्त व्यक्ति घोषित किया गया। मन्त्रोच्चारण के साथ राजपुरोहित ने अशोक के मस्तक पर राजमुकुट रखा। [1]"राजदण्ड ग्रहण करके सम्राट ने कहा कि यह राजदण्ड मेरी दृष्टि में न्यायदण्ड है। पक्षपात रहित न्याय मेरा राजादेश होगा। बीच में आचार्य चाणक्य बोल उटे, मै अब इस महामात्य पद से विमुक्त होना चाहता हूँ। बाद में महामात्य पद पर सर्व सम्मति से राधागुप्त नियुक्त किये गए।" युवराज सुसीम और उनकी बन्धुमण्डली की समाप्ति के साथ ही राजपरिवार की परिस्थितियाँ सम्राट अशोक के सर्वथा अनुकूल होगई थीं। मगध के सीमावर्ती राज्य-अवन्ती,

---

1. साम्राट अशोक - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 210

सौराष्ट्र, तक्षशिला आदि मित्र बनगए थे। मंत्रिपरिषद की बैटक में सम्राट अशोक ने कलिंग पर आक्रमण करने का प्रस्ताव रखा। युद्ध-घोषणा से जन-जीवन सतर्क होगया। सम्राट, सैनिकों के मध्य घुलमिलगये थे। 'वीरवती' नामक नारी जिसका जन्म कलिंग में हुआ, एक शिक्षिका के रूप में एक युद्ध प्रशिक्षण केन्द्र चला रही थी। कलिंग राजा के हाथ से उसका पूरा परिवार मारा गया था। बदला लेने के लिए वह तैय्यार हो गई। [1]" युद्ध शुरू होगया। जब भी राजा अश्व पर बाहर जाते हैं, उन के साथ वीरवती को जाना पडता है। एक दिन तीन शत्रु सिपाहियों को मारडाला। राजा बहुत खुश होगया। अंत में घमासान युद्ध हुआ। कलिंगराज को वीरवती ने सामना किया। कलिंग राजा 'युगांक' और सम्राट अशोक के बीच में वह आगई। कलिंग राजा का प्रहार अचूक था। वीरवति शस्त्रहीन होचुकी थी। कलिंगराजा के दूसरे प्रहार ने वीरवती को चीरडाला। उसे देखकर अशोक ने युगांक के एक-एक अंग को काट दिया । चारों तरफ 'जय मगध' की ध्वनी प्रतिध्वनित होने लगी।" इस प्रकार उपन्यास का वर्णन एतिहासिक तथ्यों के आधार पर विस्तार से किया गया है।

1.6.2. काल्पनिकता :-

'सम्राट अशोक' नामक उपन्यास की कहानी अशोक की जीवनी के चारों ओर घूमती रहती है। लेकिन यह ईसापूर्व के इतिहास से संबंधित विषय है। अन्य विषयों की तरह निर्धारित आधार सामाग्री विस्तृत रूप से नहीं मिलती। फिर भी उपन्यास को रोचक बनाने की पूरी चेष्टा की गई है। यह काल्पनिक विषय है कि चन्द्रगुप्त के जमाने से संबंधित चाणक्य का उस के पोते के जमाने तक जीवित रहना। परन्तु लेखक ने आचार्य चाणक्य को अशोक के सम्राट बनने के समय तक जीवित रखा। उस के बाद उनका क्या हुआ, इसका कहीं जिक्र नहीं मिलता। सम्राट

---

1. साम्राट अशोक - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 410

के राज्याभिषेक के दिन आचार्य अपने शिष्य राधागुप्त को अपने स्थान में नियुक्त करके तप करने जंगल में चले जाते है। चाणक्य का चरित्र ऐतिहासिक जरूर है, मगर उस का भी वर्णन गुरु के रूप में किया गया। जिस प्रकार आर्य चाणक्य ने नंद वंश का सर्वनाश करके चन्द्रगुप्त को राजा बनाया, उसी प्रकार यहाँ भी महारानी के पुत्र सुसीम का अंत करके अशोक को सम्राट बनादिया। कल्पित होने पर भी लेखक ने इसघटना पर ऐतिहासिक रंग जमादिया। उपन्यास के अन्य काल्पनिक चरित्रों में शैलबाला, पद्मा, और वीरवती मुख्य हैं। शैलबाला और पद्मा दोनों बहनें हैं। एक गायिका और दूसरी नर्तकी है। तक्षशिलाधीश उनका बलात्कार करने को तैय्यार होता है। [1]''वह लडखडाता हुआ आगे बढरहा था। शैलबाला को घबराहट पीछे हटा रही थी। कीर्तिदेव को शैलबाला की एक-एक मुद्रा मोहक लग रही थी। शैलबाला ने डरते-डरते कटार की ओर हाथ बढाया। कीर्तिदेव ने सावधान किया, 'इस के इसफल को मतछूना'। यह विष बुझी कटार है। 'फिर तो यह बडे काम की वस्तु है।' 'तुम इसे रखकर क्या करोगी?' 'अपनी रक्षा,' कीर्तिदेव के पेट में घुसेड़ते हुए शैलबाला सक्रोध बोली। भयानक चीत्कार के साथ वह धराशायी हो गया।''

शैलबाला और पद्मा दोनों को सम्राट ने निवास में आश्रय दिया। उनदोनों की संगीत और नृत्य कलाओं का आनंद लूटने लगा। विदिशा नगर में रहनेवाली गर्भवती रानी महादेवी का कुशल समाचार लाने केलिए राजा ने पहले शैला और बाद में पद्मा को वहाँ भेजा। [2]''वह आई है।' 'विदिशा से शैला और पद्मा लौट आई?' 'हाँ।, केवल शैला लौटी है। पद्मा वहीं रुकगई है। शैला ने आकर सूचना दी है कि महारानी महादेवी मगध के भावी शासक की माँ बनने वाली है। पद्मा को उसने वही रोकलिया है। 'सम्राट सीधे विश्राम कक्षा में प्रतीक्षा करनेवाली शैला के पास लपके और बोले- शैला आज से तुम महारानी हो। महारानी के योग्य वस्त्र लाकर दो इन्हें।' क्या यह

---

1. साम्राट अशोक - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 70
2. साम्राट अशोक - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 250

सत्य है ? महाराज! आपने एक पल में दासी को महारानी का पद प्रदान करदिया' 'अच्छा वीरवती ! अब तुम दूर नही! निकट रहा करो। तुम्हारी रक्षा अनुपम है। ' इतने में एक नारी आगई। 'कौन? ओह पद्मा। तुम यहाँ कैसे?' शिबिर के अन्दर प्रवेश करते ही सम्राट ने शैला से कहा, ...'देखो तो पीछे कौन है ?', पद्मा को देखते ही शैला प्रसन्नता सूचक आश्चर्य से उठ खड़ी हुई। 'इन्हों ने उसी शर्त पर महारानी बनना स्वीकार किया था कि तुम्हें भी मै महारानी बनाऊँगा। महाराजा जी! यह मै क्या सुन रही हूँ। और विदिशा की उस महादेवी जी का क्या होगा जो एक राजकुमार और एक राजकुमारी की माँ बनी महाराज की प्रतीक्षा कर रही है।' 'सच पद्मा! सच में महादेवी जी राजकुमार और राजकुमारी की माँ बनचुकी है ?' 'जी महाराज! .... मुझे ज्ञात होता तो मैं विदिशा से आती नहीं। महाराज जी के असाधारण पौरूष के समक्ष किस नारी में क्षमता है जो टिकसके। इसलिए तो अपने को आधी महारानी ही मैं ने माना था। मेरे अधूरेपन को पद्मा ने आकर पूर्ण बनाया है।'' इस प्रकार दोनों दासियों को सम्राट ने अपनी खुशी व्यक्त करने महरानियाँ बनादिया है। लेकिन महारानी तो सिर्फ विदिशा की महादेवी ही है।

उपन्यासकार ने सम्पूर्ण उपन्यास में महादेवी नामक चरित्र को अज्ञात ही रखा। सिर्फ बातचीत के माध्यम से ही हम यह पहचान सकते हैं कि महादेवी महारानी ने एक राजकुमार और राजकुमारी को जन्म दिया। लेखक द्वारा बनाया गया और एक काल्पनिक चरित्र वीरवती है। वीरवती का जन्म कलिंग में हुआ। जब छोटी थी उसकी आँखों के सामने ही कलिंग राजा ने माता की हत्या करवायी। तब से वह मगध में रहकर युद्ध कलाओं की शिक्षा-दीक्षा प्राप्त करचुकी है। उसके मन में प्रतिशोध की भावना धधक रही है। 'वीरा' नाम से वह विख्यात होगयी है। पुरुष वेश धारण करके एक शिक्षक के रूप में नारी युद्ध प्रशिक्षण केन्द्र चला रही थी, जिसका उद्‌धाटन सम्राट अशोक ने स्वयं किया। कलिंग राजा भी जानगया कि वीरवती वही वीरा होगी। अपनी माँ के मरते समय इस ने प्रतिशोध की जो प्रतिज्ञा

की थी, उसी का पालन वह कर रही है। वह गुप्तचरी का कार्य भी करती है। उस की सतर्कता के कारण ही मगध सेना सावधान हो जाती है। एकदिन सम्राट को वीरा ने हत्या के प्रयत्न से बचाया। [1]"सचेत दृष्टि से महाराज जी! शत्रु आस-पास कहीं छुपे हैं। तीन शत्रु सिपाही सामने आये और एक ने कहा-हमें सम्राट को यमलोक पहुँचाने दो। सावधान! सामने आओ, छुपकर प्रहार करना कायरता है।' हटजा बीच मे से! सम्राट के देखते-देखते ही तीनों में से पहला धराशाई हुआ। दूसरा भी, एक भी प्रहार न झेल पाया और सदा के लिए दो टुकडे हो, धरती पर लेट गया। तीनों ने जो प्रहार किये, सब व्यर्थ होगए। तीसरे को भी धराशाई होते देर न लगी। वीरवती रक्त रंजित असि को लक्ष्य कर बोली, 'महाराज क्षमा कीजिए'। 'धन्य हो वीरवती'! सम्राट ने भी वीरवती को अपनी दोनों भुजाओं का पूर्ण आश्रय प्रदान कर दिया। लता रूप में वीरवती झूल गई सम्राट रूपी वटवृक्ष के तन से।" इस प्रकार उपन्यास को रोचक बनाने के लिए काल्पनिकता का सहारा लियागया।

1.6.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

'सम्राट अशोक' नामक उपन्यास में अनुपात की दृष्टि से ऐतिहासिकता ज्यादा है। साधारणत: काल्पनिकता के बिना उपन्यास सरस नहीं होता। खासकर ऐतिहासिक उपन्यास को बहुरंगी बनाने के लिए लेखक को अवश्य काल्पनिकता की सहायता लेनी पड़ती है। वरना वह उपन्यास नहीं इतिहास बनजाता है। लेकिन इतिहास और उपन्यास में काफी अंतर होता है। महामात्य चाणक्य ने जिसप्रकार नंदवंश का सर्वनाश करके चन्द्रगुप्त को मगध का राजा बनाया, उसी प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में घमंडी और विलासी युवराज सुसीम को खत्म करवाके राजकुमार अशोक को ही सम्राट बनाया। इसके पश्चात अशोक के जीवन में महारानी महादेवी प्रवेश करती है। विजययात्रा के लिए निकलते वक्त समाचार मिलता है कि महादेवी ने एक पुत्र और एक पुत्री को जन्म दिया। भारत के इतिहास में कलिंग युद्ध अनोखी

---

1. साम्राट अशोक - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 270

घटना है। उल्लिखित ऐतिहासिक तथ्यों का वर्णन करना बहुत ही आसान कार्य है। मगर उपन्यास को सरस और रंगीन बनाने केलिए लेखक को काल्पनिकता का सहारा लेना पडा। इसी सिलसिले में शैलबाला, पद्मा और वीरवती जैसे चरित्रों को उपन्यास में स्थान दिया गया। इन तीनों पात्रों के माध्यम से लेखक ने तीन कलाओं का वर्णन किया। एक संगीत, दूसरा नृत्य और तीसरा युद्ध कला। शैलबाला अनुपम संगीतज्ञा और पद्मा अनमोल नर्तकी के रूप में राजदरबार की शोभा बढाती है। वीरवती राज के साथ युद्ध कलाओं में प्रवीण होकर राजा के शत्रुओं के प्रहार से बचाकर वीरगति प्राप्त करती है। इस प्रकार लेखक ने समूचे उपन्यास को एक सफल ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास बना दिया।

1.7. महाराज :-

1.7.1. ऐतिहासिकता

वस्तुत: उपन्यास निर्वैयक्तिक अनुभूति का ऐसा वैयक्तिक प्रयास है, जो रचनाधार्मिकता को सरसता ही प्रदान नहीं करता है, बल्कि सम्प्रेरक शक्ति से उसे समन्वित भी बनाता है। 'महाराज' ऐसी एक सरस और सम्प्रेरक शक्ति से समन्वित एक कथात्मक प्रयास है जो आत्मकथन शैली में अभिव्यक्त है। 'महाराज' की कथा ऐतिहासिक है और इतिहास के केन्द्रीय चरित्र हैं "महाराज हर्ष"। थानेश्वर सम्राज्य के सम्राट पुष्यभूति वंश के यशस्वी सम्राट प्रभाकर वर्धन और महारानी यशोवती के दो बेटे हैं। और एक बेटी है। उनके बड़े बेटे का नाम राजवर्धन, और दूसरे का नाम हर्षवर्धन और तीसरी का नाम राजश्री है। बारह-तेरह वर्ष की उम्र में ही दोनों राजकुमारों ने विभिन्न युद्ध कलाओं का अध्ययन किया। खासकर हर्ष तेरह वर्ष की आयु में बीस के जैसे दिखाई देने लगा है। राजवर्धन सदा अकेले ही ध्यानमुद्रा में रहना पसन्द करता है। राजदरबारी जीवन उसे प्राय: पसन्द नहीं रहता। राजकुमारी राजश्री अपूर्व सौंदर्यराशि और प्यारी गुड़िया भी है। हर्ष, कब और कहाँ होगें और क्या करते किसी को ज्ञात न होता। उसे सहसा परिवर्तन विशेष रुचिकर था। उसकी देखरेख और उसे सुव्यवस्थित करने के लिए 'शान्ति' नामक दासी को महारानी ने

नियुक्त किया। उसकी बहन 'कुन्ती' को रानिवास में राजकुमार राजश्री के पास नियुक्त किया। 'आदित्य भगवान' पुष्यभूमी वंश का कुल-देवता है। [1]''मेरे भाई! भाव और विचार, कर्तव्य - बोध और आचरण दण्ड और पुरस्कार, उत्सर्ग और उपलब्धि का जो सम्यक संतुलन तुम्हारे अन्दर उपस्थित है, उसी सुखानुभूति की आवश्यकता है भारतीय जनमानस को। उस से चिरअभिलाषी जनों को वंचित नकर, मेरे भाई' ....मैं जानता हूँ कि मैं थानेश्वर के जनमानस को वह सुख-संतोष न दे सकूंगा जिसकी उन्हे अपेक्षा है''। यह दोनों भाईयों के बीच संवाद है। युवराज राजवर्धन की विचारधारा राजोचित नहीं थी।

एकदिन क्रीडा-प्रांगण में लक्ष्य-संधान-प्रतियोगिता का आयोजन कियागया है। महाराज प्रभाकरवर्धन सपरिवार वहाँ उपस्थित हैं। गुरूजी मंगलदेव के आमन्त्रण पर पहले राजवर्धन ने लक्ष्य साधना का प्रदर्शन किया। उसके बाद हर्षवर्धन ने भी लक्ष्यभेद का प्रदर्शन किया। दोनों में अधिक अन्तर नहीं है। महाराज सन्तुष्ट होगए। थानेश्वर राज्य का सबसे बडा शत्रुराज्य मालव राज्य है। मालव राजकुमार देवगुप्त ने राजश्री को एक प्रेमपत्र भेजा, जिसे हर्ष को देखना पडा। क्रोधित हर्ष उसे मारने के लिए तैय्यार होता है। मगर महाराज ने उसे रोकलिया। कनौज नरेश गृहवर्मा के साथ धूमधाम से राजश्री का विवाह सम्पन्न होता है। [2]''एकदिन महामन्त्री शत्रुमर्दन ने निवेदन किया कि उत्तर- पश्चिमी सीमा पर हूण पुनः एकत्र होगए हैं। सूचना मिली है कि पिछली पराजय का प्रतिशोध लेने की दृष्टि से वे विशेष युद्ध की तैय्यारी करके आए हैं। हूणों की संख्या भी कई गुणा अधिक है। राजाज्ञा के अनुसार सेनापति सिंहनाद युद्ध की तैय्यारी में व्यस्त होगया। राजा ने फिर से कहा-आप इन दोनों राजकुमारों को अपने साथ लेजाइए और कम- से-कम दस सहस्त्र सुव्यवस्थित सेना भी साथ होनी चाहिए। महारानी ने निवेदन किया-हूणों को मार भगाने के लिए हमारे सेनापतिजी ही यथेष्ट हैं। राजकुमारों को युद्धक्षेत्र मे भेजना मेरी समझ में उचित

1. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 95
2. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 65

न होगा। अभी अवस्था ही क्या है इनकी? लेकिन हर्ष ने अकेले ही जाने की अनुमति माँगी। बीच में राजवर्धन ने टोका और कहा- 'नही हर्ष'! शत्रुओं के छक्के छुडाने के लिए मैं भी सीमा पर चलूँगा। युद्ध तो शासक का अनिवार्य धर्म है। इस से शासक में आत्मविश्वास जाग्रत होता है। ......'सिंहनाद के साथ हूणों को मार भगाने के लिए राज्य की उत्तर पश्चिमी सीमा तक जारहा हूँ' .... शान्ति एक थाल में मंगलदीप लाई और मस्तक पर विजय तिलक लगाया।''

महासेनापति सिंहनाद सहित दोनों राजकुमार बडी सेना सहित हूणों को पराजित करने सीमाप्राँत की ओर चलेगए। यह युद्ध हर्ष के जीवन में पहला युद्ध होने के कारण बहुत उत्साह के साथ उसने शत्रु संहार किया। हूण बडे धूर्त और मक्कार होते हैं। वे किस पहाडी की किस कन्दरा से निकल आक्रमण करते, जानना बडा कठिन होता है। इसलिए राजवर्धन कुछ समय तक वहीं ठहरना चाहता है। हर्ष को उसने वापस राजधानी भेजदिया। विजयश्री की सूचना मिलते ही महाराज बहुत ही खुश हूए। जैसे समय बीतता जारहा था वैसे ही महाराज का स्वास्थ्य बिगडता गया। महाराज से हर्ष ने इस प्रकार कहा - [1]''आप के आशीर्वाद से पिताजी, विजयश्री ने हमें वरण किया है। हूणों को उनके दुस्साहस पूर्ण आक्रमण का जो मजा चखाया गया है, वह उन्हें सदा-सदा के लिए अशक्त बने रहने केलिए यथेष्ट है। अधिकतर हूण मारडाले गए हैं। शेष आहत अवस्था में भागगए। इधर-उधर दो-चार शेष पडे हैं। उन्हें भाई यमलोक पहुँचाकर वापस आरहे हैं।'' महाराज की अनुपस्थिति में बिगडनेवाली प्रशासन व्यवस्था को राजकुमार हर्ष ने संभाल लिया। लेकिन एक दिन महाराजा पर लोक सिधर गए और उन के साथ रानी ने आत्माहुति करली। राजवर्धन ने हर्ष से कहा - [2]''प्रिय व्यक्ति नहीं, उनके कर्म होते हैं। कर्म ही व्यक्ति को जन्मदेते हैं, जीवित रखते हैं, और मारते भी हैं। मानव कर्म केन्द्रित प्राणी है। फिर राजवर्धन ने

---

1. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 80
2. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 120

कहा नहीं भाई। थानेश्वर के राजसिंहासन पर आप विराजमान होकर, निर्विघ्न शासन कीजिए। हर संकट का सामना अब मुझे करने दीजिए। त्याग कभी भार नहीं होता। अधिकार का त्याग सदा हर्षजनक होता है और कर्तव्य-त्याग पीड़ा दायक। राजसत्ता अधिकार केलिए तो रक्तपात तक होता है। मै सहर्ष यह अधिकार भार तुम्हे सौंपता हूँ। ......मैं ने झुककर माइया के चरण स्पर्श किया है। वे बोले, हर्ष! आज से थानेश्वर राज्य का शासक है। सहस्त्रों मस्तक तेरे सम्मान में झुकेंगे।'' इस प्रकार बडे भाई ने छोटे भाई को राजसिंहासन पर बिठाया।

एक दिन एक सैनिक वेषधारी नारी ने एक पत्र लाकर दरबार में प्रस्तुत किया।[1] ''पत्र पढते ही उन के मुँह से निकला, 'ओह! देवगुप्त ने बहिन राजश्री को विधवा बनादिया। कनौज पर अधिकार करलिया। गुप्त को राजा शशांक ने इस कुकृत्य में सहायता की। हर्ष ! थानेश्वर के सैनिकों को युद्ध के लिए तैय्यार होने का आदेश दो। मालवाधिपति को जब तक यमलोक न पहुँचालूँगा, सन्यास ग्रहण न करूँगा। थानेश्वर द्वारा पराजय के अपमान का प्रतिशोध देवगुप्त ने मेरे बहनोइ कनौज के महाराज ग्रहवर्मा की हत्या से लिया है। मेरी विधवा बहिन के आँसू से लिखा पत्र है यह। राजश्री अब कारागार में बंधी है।'' प्रात:काल ही राजवर्धन के नेतृत्व में थानेश्वर में जितनी उपल्बध सैन्य शक्ति थी, सब प्रस्थान करगई। राज्य प्रशासन कार्य हर्षवर्धन को सौंप दियागया है। इसीबीच राजकुमार हर्ष की प्रियदासी शान्ति आत्महत्या करलेती है। जैसे दिन बीतने लगे शान्ति की बहिन कुन्ती और ऊर्वशी राजकुमार की सेवा करने लगी। समाचार मिलता है कि कनौज पर राजवर्धन ने विजयपताक पहराया। लेकिन राजश्री का पता नहीं मिलसका। वापस् लौटते वक्त राजवर्धन ने वीरगति प्राप्त की। हर्ष का हृदय प्रतिरोध की ज्वाला धधक उटी। नए सेनापति 'भांडी', अंगरक्षक 'श्रीधर' और बडी सेनासहित राजा युद्ध के लिए संसिद्ध हो गये। शत्रुसंहार करते हुए जंगलों में वह बहुत दूर निकलगया। वन में उसे

---

1. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 250

'दिवाकर' मुनि से भेट होती है।[1] "पधारिए महाराज! महर्षि दिवाकर मुनि के आश्रम में आपका स्वागत है। महर्षि! आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। महर्षि - बोले क्या अभिलाषा है ? बहिन राजश्री की खोज में निकला हूँ। किसी भी मूल्य में उसे जीवित देखना चाहता हूँ। राजा ने कहा। महर्षी ने एक ओर देखने को कहा। मैं ने उसी दिशा में देखा तो सामने राजश्री आती हुई दिखाई दी। वह चितारोहण करने के लिए तैय्यार हो रही है। मैने कहा-बहिन! देवगुप्त का शरीर तो नष्ट भी किया जाचुका है। केवल शेष रहा गौड-देश नरेश-शशांक। उसे भी, यहाँ लौटते ही जीवित नहीं छोडूँगा।" इस प्रकार हर्ष ने एक योग्य भाई के रूप में बहन का जीवन बचाकर शत्रु से बदला लिया। भाई हर्ष की बात मानकर राजकुमारी राजश्री अपने भाई के साथ राजधानी लौटआई।

हर्ष ने दिग्विजय-अभियान की घोषणा की। कनौज को शशांक से मुक्ति मिलगई। विजयपरम्परा के साथ आगे बढनेवाले हर्ष को कामरूप के राजा ने अपनी बेटी 'रानी लक्ष्मी' को तोफे के रूप में दिया, जिसे राजा हर्ष ने अपनी पत्नी बनादिया। शशांक द्वारा नियुक्त सुन्दरी नामक दासी राजा हर्ष की हत्या का प्रयत्न करती है। लेकिन महारानी की चेतावनी से राजा सचेत होकर अपने आप को बचाता है। पश्चाताप से सुन्दरी शत्रुसेना की जानकारी देती है। शशांक का वध किया जाता है। इस प्रकार अनेक कटु अनुभवों के साथ राजा हर्ष आगे बढने लगता है। इसी बीच 'शशीदेवी' और 'दमयन्ती' नामक दो राजकुमारियों को राजा ने रानियों के रूप में अपनाया। कनौज लौटते ही धूम-धाम से राजा का स्वागत बहिन राजश्री द्वारा आयोजित कियागया। चीनी तीर्थयात्री बौद्ध धर्म विशारद 'ह्वेनसांग' वहाँ पहुँचता है। राजा के निमन्त्रण पर धर्म सम्मेलन आयोजित कियाजाता है। उसने विभिन्न धर्मों के भक्त भाग लेते हैं। उन में बोधिसत्व नामक संत भी है। उन से राजा हर्ष बहुत आकर्षित हो जाता है। इस प्रकार अंत में बुद्ध-भगवान की भक्ति में तल्लीन होने के लिए महाराज तैय्यार होजाता है।

---

1. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 251

1.7.2. काल्पनिकताः-

इतिहास निर्वैयक्तिक होता है। और उपन्यास वैयक्तिक। इसलिए हर एक ऐतिहासिक उपन्यासकार को कभी-कभी काल्पनिकता की शरण लेनी पड़ती है। 'महाराज़' नामक उपन्यास में भी लेखक ने तीन काल्पनिक चरित्रों का सृजन किया। इन चरित्रों के माध्यम से उन्हों ने नायक हर्षवर्धन को महान दिखाया। उन तीन चरित्रों में से एक है, परिचारिका 'शान्ती'। वह सदा राजा की देखरेख करती है। अंत में राजकुमार के लिए प्राण त्याग भी करती है। इसके बारे में आत्मकथात्मक शैली में स्वयं राजा हर्ष ने इस प्रकार बताया - [1]"मेरी देखभाल का उत्तरदायित्व जिस परिचारिका पर था, वह मुझे एक पल के लिए भी ओझल न होने देती थी। अपने बडप्पन की धाक वह मुझ पर सदा जमाया करती थी। थी भी मुझ से वह बडी। उन की अवस्था, उन दिनों अटारह-बीस वर्ष के करीब होगी और मैं होऊँगा लगभग बारह-तेरह वर्ष का। मगर कठोर व्यायाम ने मेरे शरीर को ड्योढा-दुगना भारी भरकम बना दिया था। बीस-पच्चीस वर्ष के नवयुवक से मैं किसी भी तरह कम न दिखता था। एक सबेरे तड़के ही मै घोड़े पर सवार हुआ आखेट के लिए निकल गया जंगल की ओर। दिन भर जंगल में तरह-तरह के पशुओं का शिकार करता रहा। लौटते रात हो गई। अपने कक्ष में पैर रखा ही था कि द्वार की ओट से आवाज सुनाई दी, दिग्विजय करके लौट आए? शान्ति तुम रो रही हो? मेरे मुँह से निकला। आप से मतलब। कोई रोये या मरे आपकी बला से, मै ने कहा, तुम्हें मेरी बहुत चिन्ता रहती है।? महारानीजी ने सौंपा ही आप को मुझे इसलिए है। पर तुम माँ से भी अधिक चिन्ता करने लगी हो। महारानी जी को चिन्ता करने के लिए महराजा जी है। मगर मेरेलिए आपके अलावा और कौन है जिस की मैं चिन्ता करूँ। तो मेरे अलावा तुम्हारा और कोई नहीं है? नहीं, आपसे बढकर और कोई नही। और मुझ से घटकर? घटकर भी कोई नहीं। एक मात्र आप हैं, राजकुमार जिसे ये आँखे दिन-रात देखा करती है।"

---

1. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 10

मालव राज्य के युवराज देवगुप्त को प्रतिनायक के रूप में दिखाने के लिए लेखक ने एक काल्पनिक घटना का वर्णन किया है। वह हर्ष की बहिन राजश्री को प्रेमपत्र लिखता है। उसे देखकर राजश्री बहुत ही व्यथित हो उठती है। यह दृश्य हर्ष से देखा नहीं जाता। तुरन्त उसने सेनापति को आदेश दिया कि [1]''सेनापतिजी ! आप अविलम्ब राज प्रासाद के बाहर दक्षण में जाकर मालव के युवराज देवगुप्त को पकडिए। उस ने राज्यसत्ता को चुनौती दी है। थानेश्वर की सीमा में ही नहीं राज प्रासाद के परिसर में एक शत्रु की उपस्थिति कलंक की बात है। इस में विशेष सतर्कता की आवश्यकता हैं। वह बहुत चालाक शत्रु है। 'मुझे विशेष प्रतीक्षा नहीं करनी पडी। दोनों गुप्तकुमार पकडे गए। हर्ष ने उन को मारना चाहा। लेकिन बीच में महाराज ने रोक दिया और देवगुप्त से कहा-हाँ देवगुप्त! अपराध तो तुमने ऐसा किया है कि एक क्षण भी जीवित रहने का अधिकार ही नहीं। किन्तु रक्क़पात बचाने के लिए छोडदेता हूँ। जाओ, अपने साथियों के साथ थानेश्वर राज्य से इतनी दूर चलेजाओ कि फिर कभी दिखाई न दो। और याद रखो, अगर फिर कभी आँख उठाकर देखने का भी साहस किया तो मालव राज्य के विनाश के कारण बनोगे। जाओ।' पिताजी अंत में शक्ति भर गरजे। किन्तु पिताजी को न जाने क्या हो गया कि वह खडे-खडे ही धराशई हो गए।''

पिताजी कुछ दिन के उपचार से उठ बैठे और ऊपर से सामान्य भी लगने लगे, किन्तु अन्दर की दुर्बलता उन का पीछा न छोड रही थी। राजश्री की शादी की चिन्ता ही प्रधान कारण है। रोग के इलाज के लिए हर्ष हिमालय में स्थित एक आश्रम के पास जाना चाहता है, जहाँ के संत में रोग नाशक शक्ति है। [2]''हर्ष ने अपनी माँ से कहा-माँ! हिमालय की तलहटी में बसे एक गाँव तक जा रहा हूँ। वहाँ एक वैद्यजी रहते हैं। वह बहुत चमत्कारी हैं। उनके हाथ में महिमा है। जिस रोगी को भी वह

---

1. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 50
2. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 80

छू देते हैं, वह उठ बैठता है। उन की लडकी की दृष्टि में आश्चर्यजनक शक्ति है। किसी भी आहत अंग पर उसकी दृष्टि पड़ भरजाय, वह टीक हुए बिना नहीं रहता। एक दिन जंगल में मेरा घुटना आहत हुआ। मुझे इलाज के लिए वहाँ दो दिन रहना पडा। तब मैने अपनी आँखों से अनेक रोगियों को स्वस्थ होते देखा। वे दोनों बडे गरीब हैं। बडी कठिनाई से एकबार दिन में रोटी मिलता है। वह लडकी सुनयनी बहुत परिश्रमी है। उन दोनों की खोज में हर्ष निकल पडता है। मगर उसे यह मालूम होगया कि हुणों की प्रतिशोधाग्नि में भस्म हो गए।''

'श्रीधर' नामक चरित्र भी लेखक द्वार कल्पित है। एक दिन महाराज हर्ष घूमते-फिरते वहाँ जा पहुँचे जहाँ नये सैनिकों की भर्ती की जारही थी। उन सभी में से एक नव युवक हर्ष की दृष्टि का केन्द्र बिन्दु बनगया। उस का नाम है 'श्रीधर'। राजा ने उस की कडी परीक्षा की और अपने अंगरक्षक का पद का प्रदान किया। उसकी प्रेयसी 'सुहासिनी' भी काल्पनिक चरित्र है, जिसका वर्णन लेखक ने ठीक से किया। 'शान्ती' नामक दासी की आत्म हत्या भी काल्पनिक घटना है। जिसे लेखक ने हर्ष में बदलाव लाने के लिए वर्णन किया। [1]''शान्ति मेरी शारीरिक आवश्यक्ताओं का ही ध्यान न रखती थी, परन्तु मन: स्थितियों को भी भली-भाँति समझाती थी। किन्तु उस दिन न जाने क्यों मुझे उसकी उपस्थिति तक असह्य हो उठी थी। मैं नेत्र बन्द किये हुए लेटा था। विचारों की आँधी मस्तिष्क के झकझोर डाल रही थी। अपने तन-मन की मुझे तनिक भी सुधि न थी। शान्ति निकट आ बोली, लीजिये, इस पेय को ग्रहण करलीजिये। और फिर भी जब मै ने उस के आग्रह पर ध्यान न दिया तो उसने कुछ तेज स्वरसे मुझे सचेत करना चाहा। 'महाराज! सोगये क्या?' 'नेत्र बन्द करने का अर्थ सोना तो नहीं होता?' 'फिर क्या होता?' 'शान्ति मुँह लगी। तेरे पास शान्ति भी रहेगी। न जाने किसने शान्ति नाम रखदिया।' 'तो बदल डालिये न, ये नाम।' 'कोई नया नाम रकदीजिये।' 'मुझे नया और भी प्रिय लगेगा।' 'तू

---

1. महाराज - वाल्मीकि त्रिपाठी - पृष्ठ - 147

शान्ति रहेगी या नहीं।' 'नहीं', 'यह कैसे सम्भव है कि महाराज जी अशान्त होऔर मै शान्ती बनी रह सकूं।' 'देख शान्ति!''मेरी शान्ति में बाधक न बन। इस समय मुझे शान्त लेटा रहने दो।' मैं ने पूरी शक्ति से उसे ढकेल दिया। वह लुढकती हुई दूर जागिरी। मैं ने उसे सावधान किया कि भविष्य मे फिर कभी ऐसा आचरण किया तो प्राणों से हाथ धोना पडेगा। मैं बाहर चलगया। जब मै लौटा, बाहर भीड दिखाई दी। शान्ति ने सर्वोच्च शिखर से कूदकर आत्महत्या करली। प्रायः वह मुझे देखने सदा वहाँ जाया करती थी।'' इस प्रकार लेखक ने काल्पनिक घटनाओं को इसलिए अपनाया ताकि उपन्यास रोचक लगे। प्रस्तुत घटना से यह साबित होता है कि हर महान व्यक्ति के पीछे एक स्त्री का त्याग होता है।

1.7.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

इतिहास तो वह रचना है जिस में ऐतिहासिक तथ्यों की परम्परा होती है, लेकिन यह ऐतिहासिक उपन्यास है। इसलिए लेखक ने काल्पनिक घटनाओं का भी सरस चित्रण किया। 'महाराज' की कथा ऐतिहासिक है और इतिहास के केन्द्रीय चरित्र है 'महाराज हर्ष'। परिस्थिति वश हो या संयोगवश, जीवन में कुछ न कुछ ऐसा अवश्य घटित होता है जो स्मृति के रूप मे संरक्षित रहता है। स्मृतियों का यही संरक्षण मन को मन से जोड़ना है। यह जोड़ जब श्रृंखला का रूप धारण करलेता है तब इतिहास की सृष्टि होती है। इस इतिहास के प्रति मानव-मन में सहज आकर्षण होता है। यह आकर्षण जब मन को स्पर्श कर उठता है तब मानव को अतीत वर्तमान की अपेक्षा अधिक मोहक लगने लगता है। और यह मोहकता जब सघनतर हो उठती है, तब अतीत वर्तमान रूप से जीवंत हो उठता है और ऐसा प्रतीत होने लगता है - जैसे वह उसका प्रत्यक्ष दर्शी हो। प्रत्यक्षदर्शी ही नहीं, कभी-कभी तो उसमें अभिन्नता की अनुभूति भी होने लगती है। कुछ ऐसी ही अनुभूति का प्रतिफल है यह महाराज इतिहास निर्वैयक्तिक होता है, और उपन्यास वैयक्तिक। बाह्य दृष्टि से दोनों पृथक प्रतीत होते हैं, किन्तु वस्तुतः एक दूसरे के अनुपूरक, और दोनों एक ही सत्य

के दो रूप है। वस्तुतः लेखक ने यह साबित किया है कि राजा हर्ष को ही महाराज क्यों मानना है। ऐतिहासिक तथ्यों को ही लेखक ने आधार मानलिया। और जहाँ-तहाँ काल्पनिक चरित्र और घटनाओं का अंकन किया। कल्पित चरित्रों का भी सजीव रूप में वर्णन किया है। ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन रोचक ढंग से किया गया है। ध्यान देने की बात यह भी है कि यह आत्मकथन शैली में है। निश्कर्षतः यह मानना उचित है कि यह आत्मकथात्मक शैली में लिखित रोचक जीवनीपरक उपन्यास है।

1.8. महाराणाप्रतापसिंह :-

1.8.1. ऐतिहासिकता

भारतवर्ष में जितने माननीय क्षत्रियवंश थे, उनमें 'सिसोदिया' वंश विशेष सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था, आज भी इस वंश की इज्जत वैसी ही की जाती है। इस वंश में किसी प्रकार से कलंक की कालिमा नहीं लगपाई। प्रायः सम्पूर्ण राजपूताना मुगल बादशाह अकबर के अधीन होगया। उस समय जिस वीर महापुरुष ने अकबर का सामना किया, हिन्दुओं की कीर्ति-पताका मुगलों के हाथ नहीं जाने दी, उसी लोकोज्वल-चरित्र महावीर 'महाराणाप्रतापसिंह' की जीवनीपर आधारित प्रस्तुत उपन्यास 'त्रिपाटी जी' की रचनाओं में उत्कृष्ट है। महाराणा प्रतापसिंह के पिताजी उदयसिंह अपनी छोटी रानी को अन्य रानियों से ज्यादा प्यार करते थे। इसका फल यह हुआ कि उन्हें सन्तुष्ट करने के लिए मृत्यु के समय उदयसिंह ने उन्हीं के लडके को राजगद्दी दी। उसका नाम जगबल है। उदयसिंह का यह कार्य नीति के खिलाफ हुआ। क्यों कि राजगद्दी के हकदार प्रताप सिंह थे। वह जगबल से बडा था। लडाई के नाम से घबडानेवाले महामूर्ख जंगल के लोगों को और अन्य सरदारों को सन्तुष्ट न कर सकता था। जगमल और प्रताप के बीच देश और प्रजा की रक्षा के संबंध में झगड़ा होता है। जगमल राज्य छोडकर जंगलों में चलाजाता है और वही उसकी मृत्यु हो जाती है। तमाम् लोगों की और सरदारों की सहमति से प्रतापसिंह सिंहासन अपनाकर राजा बनता है। यह ऐतिहासिक तथ्य पर आधारित है। प्रताप

का छोटा भाई 'शक्ति सिंह' लेखक द्वारा कल्पित चरित्र है जिसे राजा ने पहले ही राज्य से बाहर करदिया। प्रताप के पिताजी उदयसिंह के जमाने में ही चितौड को मुगलराजाओं ने अपने राज्य में मिलादिया। जिस प्रकार चितौड पर मुगलों ने आक्रमण किया, उसका वर्णन इस प्रकार है। [1] " रात के वक्त आक्रमण हुआ है। एक ओर मुगलों की हर्ष-ध्वनि होरही थी, दूसरी ओर राजपूत वीरांगनाओं का जौहर। चितौड़गढ़ के दूटने पर बडा कोलाहल करते हुए सिपाहियो के घर विधवा राजपूत रमणियों से आबाद होगे। ..... अकबर चितौड के अन्दर गए, तब उनकी सम्पूर्ण आशा धूलि में मिलगई, कुछ भी हाथ न लगा। एकमात्र चतुर्भुज के मन्दिर का जलता हुआ दीपक और निज भवन।" यह एक ऐतिहासिक घटना है। एक दिन खबर मिली कि प्रताप का आतिथ्य ग्रहण करने अम्बर पति मानसिहं आये थे। दोनों के बीच बात बिगड़ती है। इसलिए क्रोधित होकर मानसिंह दिल्ली चलाजाता है। प्रताप के मन में विधर्मी के रिश्तेदार मानसिंह के प्रति सदभाव नहीं है।

चित्तौड दुर्ग को फिर से अपने राज्याधिकार की अधीनता में लाने के लिए प्रताप वीर-व्रत ग्रहण करता है। लोगों का साहस और हौसला बढ़ाने के लिए राजा ने जोरदार भाषण दिया: [2] "हम ने निश्चय किया है कि जबतक चितौड़ की यह अवस्था दूर न होगी, तबतक हम भी शोक-चिह्न धारण करेंगे, हमारा ब्रह्मचर्य व्रत रहेगा, नख और बाल न कटवायेंगे, पत्तल पर भोजन किया करेंगे। राजमहल राजवेश छोडकर मामूली पोशाक, साधारण रहन-सहनके साथ कुटिया में जीवन बितायेंगे। लोगों पर इसका वशीकरण मन्त्र का प्रभाव पडा।" इस प्रकार राजा ने अपनी प्रतिज्ञा का पालन करने के उद्देश्य से राजसुखों का तिरस्कार करदिया। अपमानित राजा मानसिंह को अकबर बादशाह ने अपने दरबार में आश्रय दिया। सही समय पर प्रताप से लडने की तैय्यारी करने लगा। आखिर एकदिन अकबर बडी सेना लेकर

---

1. महाराणा प्रताप - पं. चन्द्रशेकर पाठक - पृष्ठ - 95
2. महाराणा प्रताप - पं. चन्द्रशेकर पाठक - पृष्ठ - 35

प्रताप पर आक्रमण करने के लिए तैय्यार होगया। समाचार मिलते ही प्रताप की सेना भी तैयार हो गई। मुगलों की सेना प्रताप की सेना से कई गुना अधिक है। हल्दी घाटी नामक प्राँत में जो महासमर हुआ वह संसार के इतिहास में चिरप्रसिद्ध है। ऐतिहासिक तथ्यों में हल्दीघाटी का विनाश एक है। [1]''एक ओर असंख्य मुगल और राजपूतों की सम्मिलित शक्ति और दूसरी ओर महाराणा के केवल बाईस हजार वीर मुगलों की सेना त्रिकोणाकार से बढ रही थी। राजा मानसिंह, महबतखाँ और स्वयं युवराज सलीम भी सेना के आगे है। मुगलों की सेना अधिकाँश तोपों के सहारे युद्ध करने वाली है। राजपूतों के पास तोप नहीं थी। प्रताप की सेना ने रणकौशल के साथ महबतखाँ की फौज पर आक्रमण किया। विवश होकर वह अपनी सेना सहित पीछे हट गया। उसीवक्त सलीम की तोप-सेना आगेबढ़ी। राजपूतों के सामने काल की प्रत्यक्ष मूर्ति आखडी हुई। पीछे से मानसिंह की तोपों से अविराम वर्षा होनेलगी। इस भयानक युद्ध में मानसिंह हारकर भागगया। महबतखाँ और सलीम भी घायल होगए थे। महाराणा ने अपनी सेना को पहाड़ के पीछे से वापस जाने की आज्ञा देकर, स्वयं वहाँ से प्रस्थान किया। भारत के इतिहास में ही हल्दीघाटी के महासमर का विनाश चिरस्मरणीय रहा।''

हल्दीघाटी के महासमर के पश्चात, महाराणा का जीवन एक दूसरे ही रूप में बदल गया। उनके अन्तरंग मित्र अब हल्दीघाटी के महासमर में उन्हें छोडकर स्वर्ग का रास्ता ले चुके थे। जीवन में महाराणा को सुख कभी प्राप्त नहीं हुआ। मुगलों को दबाने का मौका नहीं मिला। मानसिंह और अकबर ने यह मौका चूकना अनुचित समझा। नई-नई मुगल सेना आकर महाराणा पर आक्रमण करने लगी। ऐसी भयानक परिस्थिति में पड़कर शत्रु को आत्म समर्पण जिस ने न किया हो, इस तरह का उदाहरण संसार के इतिहास में नहीं मिलता। अकबर के आक्रमण से नष्ट-भ्रष्ट हुए राज्य का संचालन-भार उन पर आया था। उन दिनों में न सेना थी, न अर्थ। लोगों

---

1. महाराणा प्रताप - पं. चन्द्रशेकर पाठक - पृष्ठ - 35

का उत्साह भी बार-बार हार खाकर नष्ट होरहा था। हल्दी घाटी के महायुद्ध में सर्वस्व से रहित होकर भी महाराणा हिम्मत नही हारे। उनका लक्ष्य वही रहा जो पहले था। वे फिर उद्योग करने लगे। वीर राजपुतों को देश की रक्षा के लिए जगाना, युद्ध के लिए मैदान में शत्रु के सामने डटकर अस्त्र चलाने की शिक्षा देना। मुगलों के हजारों जासूस प्रताप का पता लगाने के लिए लगे हुए थे। जब मुगलों को मालूम होगया कि इस समय यहाँ डेरा डालेहुए हैं, तब उन्होंने उस स्थान को भी आकर धेर लिया। वहाँ मुगलों के साथ प्रताप का घनघोर युद्ध हुआ। यहाँ भी राजपूतों की लडाई बडी भयानक, आश्चर्यचकित कर देनेवाली है। परन्तु प्रताप कहीं भी जमकर युद्ध करने का समय न पाते थे। कहीं क्षणभर आराम करने का समय नहीं मिलता। सब को यह मालूम होचुका था कि अब प्रताप के पास सेना या सहायक नही है, अब उनको पकड़लेना आसान है। उसी जंगल में 'भीलो' की बस्ती थी। भील महाराणा को बहुत मानते थे। जब अपने सब किले महाराणा हारगए। तब भीलों के साथ रहना ही उन्होंने अपने बच्चों के लिए निरापद समझा। कुछ भीलों को लेकर प्रताप ने चौथादुर्ग पर फिर आक्रमण किया। फरीदखाँ भीलों की कठोर मार न सहसका। शीघ्र ही अपने सहायकों के साथ चौथ छोडकर भागगए। अब बारिश के कारण आक्रमण का भार भी न था। इस से कुछ दिनों के लिए महाराण को शान्ति से रहने का सुयोग मिलगया। फिरभी सैकडों जासूस उन के पीछेलगे रहते, क्षण-भर का विश्राम भी उन्हें हराम हो गया।

अकबर के पास महाराण की दैनिक खबर पहुँचती थी। महाराणा की सहिष्णुता से उनका हृदय द्रवीभूत होने लगा। उन्होंने अपने एक दूत के द्वारा महाराणा के पास संवाद भेजा कि यदि एक बार मुख से भी महाराणा पराजय स्वीकार करले, तो उनकी सम्पूर्ण जागीर फेरदी जायगी। लेकिन उन्हों ने घृणा से मुख फेरलिया। पराजय स्वीकार करने से मृत्यु को ही उन्हों ने अपनेलिए श्रेयस्कर समझा। अंतिम युद्ध की तैय्यारियाँ होने लगी। वीरों की सेना फिर उसी प्रकार जलधारा की तरह प्रताप के हृदय के सागर से मिलने के लिए मेवाड़ के स्थान-स्थान से आने लगी।

तूफान की तरह राजपूत-सेना अपने छूटे हुए किलों में घुसकर अधिकार जमाने लगी। हल्दीघाटी के महासमर में जितने राजपूतों का नाश हुआ था, उस से अधिक मुगलों के प्राण इन राजपूतों ने अपनी विजय में लिए। अकबर के पास मुगलों की पराजय का समाचार पहुँचा। चारों ओर राजपूतों की विजय का हर्षोत्साह छाया हुआ था। अक्बर ने उसी वक्त फिर से महाराणा पर आक्रमण करना उचित नहीं समझा। महाराणा का शरीर क्रमशः टूटता गया। उन्हें क्षीण होते हुए देखकर सामन्त-सरदार भी चिन्तित होने लगे। अखिर उन्होंने शय्या की शरण ली। अब उठने की शक्ति भी उन में न रहगई। एक रोज सन्ध्या के बाद प्रदीप के प्रकाश में महाराणा ने अपने चारों ओर बैठे सामन्त सरदारों से कहा, कि अमरसिहं बिलासी है। इसलिए मेवाड का उध्दार तुम्हारे कंधों पर ही है। आखिर उन्होंने सरदारों से वचन लिया कि स्वदेश की रक्षा में पीछे न हटे और स्वतन्त्रता की पूजा में कोई त्रुटि न हो पाय। धीरे-धीरे हिन्दुओं के मुकुटमणि प्रताप, नश्वर संसार को छोडकर स्वर्गधाम को प्रयाण कर गये। मुसलमान हिन्दू आदि सब वर्ण और सब सम्प्रदाय के लोग जिसकी प्रशंसा करें, ऐसे प्रताप ही एक आदर्श पुरुष थे, शत्रुओं को भी जिनकी मृत्यु से दुःख हुआ। इस प्रकार उपन्यासकार ने ऐतिहासिक तथ्थों को आधार बनाकर वीर और करुण रसों को मिलाकर, प्रतापसिहं की जीवनी का वर्णन किया है।

1.8.2. काल्पनिकता :-

उपन्यासकार ने 'महाराणा प्रतापसिंह' नामक उपन्यास का लेखन ऐतिहासिक तथ्यों पर ही किया है। लेकिन काल्पनिकता का सहारा भी लेना पडा। कल्पनिक चरित्रों में शक्तिसिंह एक है। शक्तिसिहं प्रताप का ही छोटा भाई था। परन्तु शक्तिसिंह और प्रतापसिंह की प्रकृति में जमीन, आसमान का ही अन्तर था। दोनों एक ही वायुमण्डल में फूले-पले और एक ही पिता के पुत्र थे, फिर भी अलक्ष्य, अदृष्ट की माया से दोनों स्वभाव में एक-दूसरे के बिलकुल विपरीत थे। प्रताप का सजीव पुतला इन्हें कहिए तो अतिशयोक्ति न होगी। शक्तिसिंह उद्धण्डी, हठी, खूनी

स्वभाव के मनुष्य थे, अन्यथा वीर वे प्रताप की ही तरह थे। भय किस चिड़िया का नाम है, वे यह न जानते थे। कठिन से कठिन संकट में भी उन्हें कभी घबराहट नही हुई। जब ये भूमिष्ट हुए तब इनकी जन्म कुण्डली तैय्यार करने वाले पण्डित ने इनके स्वभाव में एक बहुत बड़ा दोष बतलाया। कहा कि इनमें स्वजन-घात आ लगा है। विजयदशमी के दिन राजपूत वीर शिकार खेलकर अपने भाग्य की परीक्षा करते हैं। जिन्हे शिकार मिलजाता है, वे समझते है कि उनका वह साल बडी प्रसन्नता से बीतेगा, जिन्हे नही मिलता वे अपने भविष्य को अन्धकार में ढका हुआ समझकर विशेष चिन्ता से युक्त रहते हैं। शिकार का यह घटना काल्पनिक है। [1]''देखते-देखते एक 'वराह' कुछ दूर पर दिखाई दिया। महाराण और शक्तिसिहं दोनों ने उसके पीछे घोडे बढाए। सुअर भी जानलेकर भागा। परन्तु ये छोड़नेवाले कब थे, ये पीछा करते गए। कुछ नजदीक पहुँचकर दोनों ने अपने-अपने बर्छों से वार किया। एक निशाना अचूक बैठा। और उसी से वराह का दम निकल गया। वराह को गिरते देखकर दोनों भाई घोडे बढाकर उसके पास पहुँचे। इस संदर्भ में दोनों के बीच बात बिगडती है। पुरोहित उदाहरण द्वारा यह बन्धु-विरोध न देखागया। उस ने शक्तिसिंह से कहा, कुमार! तुम आगे बडे भाई का विरोध करके अपने मार्ग को कण्टकाकीर्ण कर रहे हो, शक्ति, तुम शान्त होजाओ, बडे भाई से दबजाना ही तुमहारा धर्म है'। लेकिन शक्तिसिंह ने उसकी बात नही मानी। कुछ देर के लिए ब्राह्मण तो विस्मित हो गया कि प्रताप और शक्ति में समर छिडा हुआ है, एवं स्तब्ध होकर एक दृष्टि से सब लोग ब्राह्मण की ओर देखरहे थे। ब्राह्मण ने अपनी आत्मबलि का निश्चय करलिया। झट उन्हों ने एक छोटी सी छूरी निकाली और हृदय में चुभाली। ब्रह्म हत्या हो गई। ब्रह्म हत्या हो गई॥''

उपन्यास में लेखक द्वारा वर्णित अकबर का मीना बाजार नामक परिच्छेद काल्पनिक है। किंवदंतियों के आधार पर उपन्यासकार ने इस घटना का

---

1. महाराणा प्रताप - पं. चन्द्रशेकर पाठक - पृष्ठ - 95

वर्णन बहुत सुन्दर ढंग से किया है। यह औरतों का मेला है। इसे ही 'नौरौज' भी कहते हैं। इस में बेगम, शाहजादियाँ, राजपूतानियाँ, और हिन्दुस्तान के हर प्रान्त के प्रतिष्ठित घराने की हिन्दू और मुसलमान स्त्रियाँ अपने रोब-दाब पर इतराती हुई सौदा खरीद रही हैं। यहाँ महिलाओं को पूरी स्वतन्त्रता है। इस स्वतन्तत्रता के एक छत्र सम्राट हैं अक्बर। बाहरी संसार के भी वे सम्राट है और यहाँ लोगों की गृह - स्वतन्त्रता पर भी अपने अधिकार का सिक्का जमाना चाहते हैं। बाहर भी जिसके फले-फूले राज्य चाहते हैं, हडप लेते हैं। और यहाँ भीतर भी लोगों के कलेजे काटकर उन की प्रेम-प्रतिमाओं पर बलात्कार कर अपनी विषय वासना चरितार्थ करने के लिए इस नौरोज का इन्तजाम होता है। नौरोज का मेला हर महीने लगता है। प्रधान उत्सव समाप्त होजाने पर नवे दिन आनन्द का दिन है। उसी दिन एक जगह बादशाही औरतों का मेला लगाते हैं। उस में बादशाह के साम्राज्य के बडे-बडे व्यवसाइयों की बहू-बेटियाँ चीजे बेचने आतीं और शाही-महल की बेगमें अपनी पसन्द के मुताबिक चीजें खरीदती है। वहाँ बादशाह स्त्री वेष धारण करके मेले में भागलेते हैं।

अकबर, चरित्र के बडे दुर्बल है। अपनी विषय-वासना को चरितार्थ करने के लिए यह जाल उन्हों ने फैलाया है। इस में एक से एक खूबसूरत चिडियाँ फँसाते हैं। जो औरत उनकी नजर में चढ जाती है, उसका छुटकारा होना मुश्किल हो जाता है। छल से, बल से या कौशल से उस के सतीत्व को ये अवश्य नष्ट कर देते हैं। परन्तु यह शिकार अधिक दिनों तक छिपा नही रहा। दरबार में यह बात मशहूर हो गई। मगर अकबर के डर से कोई खुलकर न कहसकता था। अकबर को बदलनेवाली एक घटना का वर्णन कियागया जो काल्पनिक है। [1]'' चन्द्रमुखी पालकी पर बैठगई। चित्त पति के पास रखा था। इसी समय पास ही से किसी के आने की आहट मालूम हुई। उसने सम्बोधन किया 'सुन्दरी!' सती का हृदय काँपने लगा। फिर एक बार

1. महाराणा प्रताप - पं. चन्द्रशेकर पाठक - पृष्ठ - 90

नजदीक से आवाज आई, 'माँ, तुम्हें प्यार करता हूँ, सुन्दरी।' जैसे एक बच्चा अपनी माँ, को सुन्दरी ने तुरन्त उत्तर दिया। आगन्तुक ने फिर से कहा कि तुम्हें दिलोजान से प्यार करने वाला अकबर। सुन्दरी को उस के ताऊ वीरवर महाराणा प्रतापसिंह की याद आई। उसने दृढ कण्ठ से फिर पूछा। कौन अकबर मै भारत का बादशाह अकबर हूँ। लेकिन तुम्हारे गुलामों का गुलाम। हिन्दुस्थान के बादशाह की नीचता। जरा सोचो तो कि तुम करोडों मनुष्यों को कितना बडा धोखा दे रहे हो। हिन्दु स्त्रीयों का सतीत्व तुम नही जानते हो ? तो यहाँ तुम कैसे सती हो सकोगी अकबर ने पूछा। 'मुर्ख है तू जलजाना ही सतीत्व नही है, समय आनेपर वह तुम्हे भी जलासकती है। प्यारी ! अब देर न करो, हिन्दुस्थान का बादशाह हाथ फैलाये हुए खडा है। खबरदार ! स्पर्श मत करना, पापी भस्म हो जाएगा, ले तू एक परीक्षा देख, कमर से कटार निकालकर देवीमाँ से बिनती करने लगी। बादशाह विस्मय-विमुग्ध की तरह देखते रहे। उषा के उदय से अन्धकार दूर होजाय, उसी तरह वासना का विष निकल गया। उस की देह फूल की तरह हलकी हो गई। आँखों में ठंडक आई, हृदय की आँख खुली और उसने कहा हे माँ ! मैं ने ऐसी महिमा कभी नहीं देखी। मेरा अपराध क्षमा करो, इस तरह का अपराध न होगा। सती पालकी पर बैटगई। हिन्दोस्थान के बादशाह ने माथा झुका दिया।''

इस प्रकार लेखक ने शक्तिसिंह के बलिदान का भी वर्णन आकर्षक ढंग से किया है। हल्दीघाटी के पश्चात, मुगल सरदारों में भी युद्ध की चर्चा होने लगी। वे पराजित शत्रुदल प्रताप की शूरता की प्रशंसा करने लगे। शक्तिसिंह का मन बदल गया। तुरन्त अपने भाई से मिलने वह चलागया। उसके पीछे-पीछे दो जासूस भी गए। दोनों भाई एक-दूसरे से मिलकर कुशल पूछते देखकर जासूस-मुगलों ने शक्तिसिंह पर अस्त्र चलाए। अपने भाई के गोद में घायल शक्तिसिंह ने पश्चातापी मन से प्राणत्याग दिया। इस घटना का वर्णन लेखक ने करुण रस से भरदिया। इस प्रकार बहुत कम चरित्रों में घटनाओं के लिए लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया है। इसलिए यह सफल जीवनीपरक उपन्यास है।

1.8.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

'महाराणप्रताप' नामक उपन्यास ऐतिहासिक तथ्यों पर ज्यादा और काल्पनिकता पर बहुत कम आधारित है। वास्तव में महाराणा प्रताप उस महान वीर की जीवनी है जिस के सामने हर एक हिन्दुस्तानी को नतमस्तक होना है। मुसलमानों के शासनकाल में जिन वीरों ने अपने सर्वस्व का बलिदान करके अपनी जाति, धर्म, वेश और स्वतन्त्रता की रक्षा की, उन में अधिक संख्या राजपूतों की ही देख पडती है। भारत के सम्राट अकबर के पहले जितने भी मुसलमान सम्राट थे, वे सिर्फ हिन्दुओं के प्रति, खासकर राजपूतों के प्रति प्रत्यक्ष विरोध करनेवाले थी। परन्तु सूक्ष्मदर्शी अकबर ने उस नीति को ग्रहण नही किया। इनकी नीति थी शत्र को अपने वशीभूत करना। इस नीति के बलपर इनको सफलता भी खूब मिली। प्राय: सम्पूर्ण राजपूताना इनके अधीन होगया। उस समय जिस वीर महापुरुष ने अकबर का सामना किया वह महाराणा प्रताप सिहं था। उसकी कीर्ति-गाथा इतिहास में अमर हो गई है। महाराणा के जन्म से लेकर मृत्युतक एक एक घटना को ऐतिहासिक तथ्य के आधार पर ही लेखक ने वर्णन किया। मगर शक्तिसिंह नामक चरित्र इतिहास में कही नही नजर आता। फिर भी लेखक ने उसे एक विपरीत मनोभावों से भरे चरित्र के रूप में वर्णन किया है। मीना बाजार नामक परिच्छेद अकबर के व्यक्तित्व के लिए एक कलंक है। इस परिछेद के द्वारा लेखक ने अकबर की कमजोरियों को पाठकों के सामने रखा। लेकिन इतिहास में यह कहीं दिखाई नहीं देता। 'चन्द्रमुखी' नामक सुन्दरी भी लेखक द्वारा बनाया गया काल्पनिक चरित्र है, जिसके लिए कोई ऐतिहासिक भूमिका नही है। आमतौर पर उपन्यास में महाराणा की जीवनी तक ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर वर्णन किया गया है। साधारणत: यह भी मानना है कि उपन्यास को रोचक बनाने के लिए लेखक को कभी कभी काल्पनिकता की शरण लेना अनिवार्य है। इस प्रकार यह एक सफल जीवनी परक उपन्यास है।

1.9. महारानी दुर्गावती :-

1.9.1. ऐतिहासिकता

बृन्दावनलाल वर्मा द्वारा लिखित ऐतिहासिक उपन्यास 'महारानी दुर्गावती' एक सफल जीवनीपरक उपन्यास है।'दुर्गावती' सम्बन्धी ऐतिहासिक सामाग्री बिखरी हुई थी। फिर भी लेखक उसे संग्रहित करने में सफल हुए। कई विषयों पर भिन्न मत हैं। लेकिन एक विषय तो सत्य है कि रानी का शौर्य, पराक्रम, जनहित चिन्ता, कठिनाइयों के सामने सिर न झुकाना, सशक्त मनोबल आदि उस के विशेष लक्षण है। वे अकबर की बडी सेना से लडी थीं। सभी योद्धाओं का नेतृत्व उन्हों ने स्वयं किया था। अकबर की सेना के भी कई बार दाँत खट्टे किये और अन्त तक लडते हुए प्राण त्याग किया। स्वाभिमान और अपनी संस्कृति पर छींटा नहीं पडने दिया। रानी दुर्गावती का जन्म 'महोबा' नामक गाँव मेंहुआ था। उन के पिता कीर्तिसिंह 'कालन्जर' दुर्ग के राजा है। ऐतिहासिक तथ्य यह है कि कीर्तिसिंहने बडी बहादुरी के साथ शेरशाह सूरी का सामना महीनों तक किया था। यह भी सच है कि शेरशाह कालन्जर के युद्ध में ही मरा था। एक देशद्रोही, जो मध्यकालीन इतिहास में होते रहे हैं, कीर्तिसिंह की हार और कालन्जर के पतन का कारण हुआ। उस देश द्रोही का नाम या वर्णन इतिहास में नही है। परन्तु परम्परा में लेखक ने उसे सुधारसिंह नाम दिया। मनियागढ और कालन्जर के अन्तिम नरेश कीर्तिसिंह की दुर्गावती एक मात्र सन्तान थी, न कोई पुत्र या और कोई पुत्री। 'रामचेरी' रानी की सहेली और परिचारिका भी है। एक दिन वह देवीमंदिर में पूजा करने जाती है। और राजा दलपतिसिंह को देखकर रानी के लिए सही जोडी मानती है। रानी के पास आकर दलपतिसिंह के बारे में खूब वर्णन करती है। उसी वक्त राजा कीर्तिसिंह इन दोनों को अपने मंदिर में बुलाता है। राजा को यह समाचार मिलता है कि निकट भविष्य में शेरशाह छोटे-बडे राज्यों पर आक्रमण करने वाला है। इसी संबंध में वह अपनी बेटी से भी सुझाव लेना चाहता है। रानी सलाह देती है कि आसपास के राजाओं के साथ मैत्री बढाके शेरशाह से निपट सकते है। कीर्तिसिंह के मन में दलपति सिंह की याद आजाती है। उन तीनों

के बीच हुआ वार्तालाप ऐतिहासिक घटना है।[1] " कीर्तिसिंह ने कहा–हम चाहते हैं कि दलपतिशाह जैसे शक्तिशाली राजा के साथ हमारी मैत्री स्थापित होजाय और बढे। इनका राज्य सुरक्षित है क्यों कि गांडवाने के सुदूर और पश्चिम में विजयनगर सम्राट और अहमद नगर, बीजापूर, गोलकुण्डा, बीदर और बरार के मुसलमान सुल्तानों में झगडा मचा रहता है। उधर उत्तर में मुसलमान और राजपूत लडते रहते है। संकट की शंका शेरशाह से है। कालन्जर और गोंडवाना मिलजुलकर चलें तो शेरशाह कुछ नहीं कर सकता। 'पिताजी! आपने क्या उपाय सोचा है?' दुर्गावती ने प्रश्न किया और रामचेरी की ओर देखने लगी। ...... कीर्तिसिहं ने कहा, हमने सुना है कि, शेर की शिकार में दलपतिशाह की बहुत रुचि है। हम ने सोचा है कि, राजा दलपतिशाह को यहाँ शिकार करने का न्योता भेजे। कैसा होगा? बहुत ठीक। उन दोनों ने एक साथ कहा। वह यहाँ आकर माँ दुर्गादेवी का पूजन् करें और भैरव देवता का भी, जो उनके इष्ट देवता और उनके पिता संग्रामशाह के भी थे। हमारे भैरव की मूर्ति का दर्शन करके वह भक्ति, भावना से भर जाय–कीर्तिसिंह ने बात पूरी की। 'मैं भी चलूँगी शिकार में पिताजी'। बच्चों के जैसे अल्हडपन के साथ दुर्गावती ने हट किया। 'हाँ-हाँ वह भी तो देखें हमारा, तुम्हारा पराक्रम'–कीर्तिसिंह ने स्वीकार किया। फिर बोले–मै तो कल ही निमन्त्रण भेजना चाहता हूँ। उसकी व्यवस्था रामचेरी ने की। राजकुमारी को अपना लक्ष्यवेध प्रदर्शन करने का पूरा अवसर मिलेगा। बाहर निकल कर रामचेरी दुर्गावती से लिपटगई।"

भोर होते ही, कीर्तिसिंह ने पत्र लिखा और घुडसवारों के हाथ मनियागढ भेजदिया। दलपतिशाह ने पत्र पढकर अपने मित्र मोहनदास से सोचविचार किया और उत्तर में उनको देवी मंदिर मे पूजा करने और जंगल मे शिकार खेलने मनियागढ में आह्वान भेजा। कीर्तिसिंह ने पत्र पढा और आनंद के साथ अपनी बेटी को बताया। आह्वान स्वीकार करके मनियागढ के पासवाले जंगलों में शिकार खेलने कीर्तिसिंह,

---

1. महारानी दुर्गावती - बृन्दावनलाल वर्मा - पृष्ठ - 40

समय पर मुनियागढ पहुँचगए। साथ में थोडी सेना थी। दुर्गावती, रामचेरी और कम परिचारिकाओं को भी ले गऐ। दलपतिशाह ने बडी धूमधाम के साथ उनका आह्वान किया। राजा और राजकुमारी के लिए महल में ही एक भाग मे विशेष प्रबन्ध किया गया। दूर से ही रानी ने दलपतिशाह को देखा- रामचेरी ने अपने चित्र में दलपतिशाह के जिस स्वरूप को उतारने का प्रयत्न किया था, उस से कम वह नही है। भोजन के बाद कीर्तिसिंह और दलपतिशाह के बीच बातचीत हुई और दोनों ने यह निर्णय लिया कि मैत्री जारी रखें। क्यों कि दोनों का शत्रु भी एक ही है 'शेरशाह'। मनियागढ के पश्चिम में कोस भर से भी कम दूरी पर घनी पहाडी जंगल है। मचान बैटक तैय्यार है। हकाई करने वाले बाट देखरहे हैं। जंगल में अपने अपने स्थानों पर और पहुँचने के लिए सभी को पैदल चलना पडा। जो स्थान जिस के लिए तै होगया था, उसे वहाँ पर बिठला दिया गया। पेडों पर मचान थे। चढ़ाने के लिए मोटे रस्सों की गाँठ गठीली नसेनियों का आयोजन कर लिया गया था। दलपति का स्थान दुर्गावती के मचान से बहुत दूर नही था। [1]''अन्धकार छागया। उसी वक्त मचान के नीचे से कोई जानवर भागा। दुर्गावती ने कमान पर तीर चढाया। पूरी शक्ति के साथ कमान की डोरी खींची और तीर छोड दिया। .... वह बडा जंगली सुअर है। कुछ समय के पश्चात हिलता, डुलता ढेर-सा जान पडा। यही होगा वह शेर। दूसरा तीर छूटा, उधर किसी के सर फोडने का शब्द हुआ ओर साथ ही विकट गर्जन, काल फोड, गर्जन। वह शेर का था। दुर्गावती ने पूरी शक्ति के साथ दूसरा तीर भी चलाया। वह भी जा लगा। क्यो कि शेर और भी बुरी तरह गरजा। जंगल में गूंजउठा।'' शिकार हो जाने के बाद समाचार यह मिला है, कि शेरशाह आक्रमण की तैय्यारियाँ कर रहा है। इसलिए दूसरे दिन कीर्तिसिंह अपने परिवार सहित कालन्जर चलाजाना चाहता है।

मोहनदास और रामचेरी के द्वारा दलपतिशाह और दुर्गावती के बीच प्रेम पत्र व्यवहार चलने लगता है। पहलेपत्र रानी की ओर से ही मिला है। पत्र में इसप्रकार

---

1. महारानी दुर्गावती - बृन्दावनलाल वर्मा - पृष्ठ - 90

है।[1]''प्राणनाथ- आप की ख्याति हमारे यहाँ बहुत समय से फैली हुई थी। मैं ने आपका चित्र रामचेरी से बनवाया और सुरक्षित रखा है। क्या मुझे आपकी जीवन सहचरी बनने का सौभाग्य प्राप्त होसकेगा? यदि न हुआ तो मैं आजीवन कुमारी रहूँगी। हम दोनों क्षत्रिय है। परन्तु मेरे पिताजी दूसरे विचारों के हैं। मै यहाँ मुनियागढ से आपकी अर्ध्दांगिनी बनने के लिए नहीं चलसकती। पाणीग्रह्ण संस्कार आप के यहाँ ही होगा। कालन्जर आप को आना होगा। अर्थात आप यदि मेरा जीवन सफलकरना चाहते हैं तो वहाँ मैं अपनी फुलवाडी में आप से मिलूँगी। उस फुलवाडी के लिए हमारे महल के मेरे कक्ष से सुरंग है। किले के बाहर जाने के लिए भी एक सुरंग है जो दक्षिण पूर्व की एक पहाडी गुफा मे खुलती है। नियुक्त समय पर मै आप के साथ गोंडवाने के लिए चलूँगी। रामचेरी मेरी सखी भी मेरे साथ चलेगी। लाज, संकोच छोडकर सीधे शब्दों में यह पत्र लिखा है। लाज मेरी आपके हाथ है। थोडे से मे ही उत्तर देने की कृपा कीजिए। चिन्ताग्रस्त दुर्गावती।''

उत्साह मग्न होकर दलपतिशाह ने स्वीकृति देते हुए उत्तर भेजा कि राजा और मोहनदास की शादियाँ रानी और रामचेरी के साथ होगी। सूचना देकर वचन के अनुसार दलपतिशाह आगए और जातेवक्त किले के बाहर जंगल में इन्तजार करनेवाली रानी और रामचेरी को भी लेगए। मन ही मन महाराज खुश है। मगर क्रोध का अभिनय करके दोनों देशों के बीच के रिश्ते को काटदिया। निश्चित तिथि के अनुसार दोनों की शादियाँ हो गई। दोनों नव विवाहित दम्पति खुशी से दिन बिताने लगे। इसी बीच कलन्जर के निकट शेरशाह के बढ़ते आने की सूचना आगई।

सीमाप्राँत में युद्ध शुरू होगया। कीर्तिसिंह धीरज के साथ शेरशाह का सामना करने लगा। कीर्तिसिंह का साथ देने के लिए सुधारसिंह भी आ गया। सुधारसिंह के मन में दुर्गावति को अपनाने की इच्छा थी। परन्तु वह विफल हो गया। लेकिन उस

---

1. महारानी दुर्गावती - बृन्दावनलाल वर्मा - पृष्ठ - 75

के मन में तो जलन है। फिर भी उसे बाहर व्यक्त न करते हुए कीर्तिसिंह के साथ मिलकर शेरशाह का सामना किया। जब घमासान युद्ध हो रहा था तब कीर्तिसिंह को अकेले छोडकर अपनी सेना सहित सुधारसिंह अपने गढ चलागया। शेरशाह के सेनापति इसलामशाह के हाथों में कीर्तिसिंह मारागया। उसी वक्त राजमहल में दुर्गावती ने एक पुत्र को जन्म दिया। इतने में मुगल बादशाह की सेना ने शेरशाह पर आक्रमण किया। उस युद्ध में शेरशाह मारा गया और मुगल वंशज हुमायूँ राजा बनगया। दुर्गावती का बच्चा वीर नारायण तीन साल का था, तब राजा दलपतिशाह रोग ग्रस्त होकर मर गया। बच्चे की रक्षा के लिए धीरज बाँधकर महारानी ने राज्याधिकार संभाला। पहले महारानी ने राज्य के सीमाओं को सदृढ बनादिया। बाद में उस ने किसानों की सेवा में बडे-बडे तालाब खुदवाए। इससे खेतीबारी में वृद्धि होगी। हुमायूँ की मृत्यु के पश्चात अकबर बादशाह बनगया। दुर्गावति को शंका थी कि अकबर गोंडक पर आक्रमण करेगा। ठीक उसी प्रकार एक दिन यह समाचार मिला है कि मुगलों की सेना गोंडवाने की ओर आगे बढ़रही है। महरानी की वीरता के सामने मुगल-फौज तितर-बितर होकर भाग निकली। लेकिन एकदिन जवान वीर नारायण घायल होगया। परन्तु दुर्गावति का धैर्य और साहस अडिग था। हाथ भी घायल हुआ। उसे हार निश्चित सूझी। इसलिए उस ने अपने वज्र कटार को छाती मे भोंकलिया। किले के बाहर वीरनारायण भी मारा गया। महारानी वीर नारी ही नहीं बल्कि गरीब लोगों की सेविका है। उसने किसानों और शिल्पियों की उन्नति की और पूरा ध्यान दिया।

1.9.2. काल्पनिकता :-

'महारानी दुर्गावति' नामक उपन्यास की भूमिका में स्वयं लेखक वर्माजी ऐतिहासिकता और काल्पनिकता के बारे मे बताते है। दुर्गावती सम्बन्धी ऐतिहासिक सामग्री बिखरी थी और कई विषयों पर भिन्नमत है। एक विषय पर मत-भिन्नता नहीं रही है। वह है उस का शौर्य, पराक्रम, जनहित चिन्तन, कटिनाइयों के सामने सर न

झुकाना, सशक्त, मनोबल। रानी दुर्गावती के पिताजी कालन्जर दुर्ग के राजा कीर्तिसिंह ने बडी बहादुरी के साथ शेरशाह सूरी का सामना महीनों तक किया था। लेकिन एक देशद्रोही के कारण उसका पराजय होता है। यह चरित्र लेखक द्वारा कल्पित है, जिस का नाम सुधरसिंह है। दुर्गावति की शिकारी प्रवृत्ति के बारे में वर्णन करते हुए लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। लेखक ने दुर्गावती की शूरता वीरता, दूर दर्शिता इत्यादि की बहुत ही प्रशंसा की है। इस संदर्भ में रानी की सहेली रामचेरी की बात काल्पनिकता से भरी है। [1] ''राजा ने पूछा तुम्हारा नाम? 'जी मेरा, रामचेरी है।' क्या कालन्जर से अकेली आई हो? कौन लोग हो? वहाँ क्या होता है तुम्हारे घर? उस लडकी - रामचेरी - का सिर जरा ऊँचा हुआ। उसने बारीकी के साथ राजा को देखा। रामचेरी ने गला साफ करके उत्तर दिया। - 'मैं चन्देल वंश की हूँ। महाराज की ओर से हमारे कुटुम्ब को गाँव में कुछ खेत है। राजकुमारी दुर्गावती की सेवा में रहती हूँ-उन की सहेली हूँ। ....बोली-सुना कि बारह हाथ लम्बा बाध मारागया है। अचरज हुआ। हमारी राजकुमारी ने भी कई बाध मारे है। परन्तु आट हाथ से अधिक लम्बा एक भी नहीं था इसलिए देखने दौड़ आई। हमारी राजकुमारी ने बहुत से मारे है। एक ही तीर से।''

दलपतीशाह के पिता संग्रामसिंह ने दिल्ली के लोदी बादशाह की सहायता एक युद्ध में की। फलत: उसे शाह की पदवी मिली। इसके बारे में एक किवंदंती प्रचलित है। उस ने एक नृशंस तान्त्रिक सन्यासी का वध किया। यह भी लेखक द्वारा वर्णित काल्पनिक घटना है। [2] ''कीर्तिसिंह ने कहा-इस संग्राम सागर ताल के किनारे संग्रामशाह ने बाजना मठ नाम का एक मन्दिर बनवाया था। एक दिन उस मठ में एक तान्त्रिक गुसाई तपस्या करने के लिए आया। घोर व्रत, तीव्र तपस्या और विकट योगक्रियाओं का करनेवाला। संग्राम पर उसका प्रभाव पडा और वह उसके भक्त हो

---

1. महारानी दुर्गावती - बृन्दावनलाल वर्मा - पृष्ठ - 4
2. महारानी दुर्गावती - बृन्दावनलाल वर्मा - पृष्ठ - 40

गये। एकदिन संन्यासी ने राजा से कहा कि आज मेरी पूजा साधना सफल होनेवाली है। भैरव देवता के दर्शन आधी रात के समय होंगे, उस समय तुम भी आ जाओ और भैरव देवता के प्रत्यक्ष दर्शन करके वरदान प्राप्त करलो। लेकिन एक राज-सेवक ने राजा को सावधान किया-महाराज छल है, धोखा है। वह आप का बलिदान करके भैरव को प्रसन्न करना चाहता है। इसलिए राजा ने एक छोटा सा खड्ग अपने कपडों के पीछे छिपा लिया। तांत्रिक ने राजा को देवता के सामने साष्टागं प्रणाम करने को कहा। राजा ने प्रणाम करने की तरीका बताने को कहा। तांत्रिक ने परिक्रमा करके देवता के सामने साष्टांग प्रणाम किया। तुरंत राजा ने खड्ग निकालकर उसका सिर काटकर उबलते कढाव मे डालदिया।''

रानी दुर्गावती के मन में गरीब लोगों के प्रति जितनी सहानुभूति है उसका वर्णन करते हुए लेखक ने एक काल्पनिक घटना का वर्णन किया। इस घटना के द्वारा लेखक ने रानी की सहानुभूति और तैरने की कला का जिक्र किया। इस घटना से और एक कल्पित चरित्र का उद्भव भी होता है जिसका नाम 'गनुआ' है। यह घटना काल्पनिक लेकिन वीर रस प्रधान है। [1]''एक दिन सबेरे बड़ा गहरा कुहरा छाया हुआ था। राजा को सपरिवार एक नदी का पार करना अनिवार्य था। एक हाथी पर दुर्गावती, रामचेरी और दो परिचारिकायें थीं। महावत गोंड था। उसके साथ उसका पुत्र भी हाथी पर बैठा था। दूसरे हाथी पर दलपतिशाह और दीवान आधारसिंह और भी कई हाथी थे जिन पर परिचारिकायें थीं। कुछ पर राज्य के अन्य कर्मचारी थे। सबसे आगे दलपतिशाह ही हाथी थी। हिचकते हाथियों को महावतों ने अंकुश लगाकर नदी की धारा में उतारा , चीखते-चिल्लाते नदी की गहराई और प्रवाह का सामना करने लगे। हाथी आगे पीछे हो गए। जब बीच धारा में हाथी पहुँचा। दुर्गावती के हौदे में पानी कुछ अधिक आने लगा। परिचारिकायें घबरा उठीं। महावत का इकलौता पुत्र, अपने पिता के साथ रहकर महावती का काम सीखरहा था। मझधार

---

1. महारानी दुर्गावती - बृन्दावनलाल वर्मा - पृष्ठ - 180

से हाथी काफी आगे निकल गये होंगे कि एकाएक पानी और बढ़ा प्रवाह और तेज होगया था। लडके ने अपने पिता की कमर का पूरा सहारा लेने का प्रयत्न किया। उसी क्षण प्रवाह के ज़ोर से लडके के हाथ ढीले पडगये। प्रवाह के जोर का उसे धक्का लगा और वह पानी में आ गिरा। तुरन्त दुर्गावती हौदे में से कूद पडी। दुर्गावती तैरती हुई चली गई और तुरन्त उसे जा साधा। भरी गोरी बाहें सोने की जड़ाऊ चूडियों से पानी को वेग से पछाड़ती हुई उस लडके के पास पहुँच ही नहीं गई थी बल्कि उसे संभालकर किनारे लगाने का प्रयास कररही थी। लोग व्याकुल होकर चिल्लारहे थे। त्राहि-त्राहि मच उठी थी। दुर्गावती उस लडके को साधे हुए प्रचण्डवेग से युद्ध करती हुई धीरे-धीरे किनारे की ओर बढ़ती जारही थी। अन्त में दुर्गावती उस लडके को लेकर किनारे लग गई। लडके के पेट में पानी भरगया था। दुर्गावती उसे उल्टी करवाना चाहती थी। रामचेरी उन से लिपट गई। उन्होंने निवारण किया-छोड़ो, छोड़ो पहले इस के प्राण बचाओ, जब उसका पिता वहाँ पहुँचा तब लड़के ने आँखे खोली थी।''

इस प्रकार उपन्यासकार ने जहाँ-तहाँ काल्पनिक घटनाओं का वर्णन किया। उपन्यास के ज्यादा चरित्र ऐतिहासिक है। लेकिन सुधारसिंह, गोपानन्द आदि चरित्र काल्पनिक हैं। इन काल्पनिक चरित्रों के बारे में स्वयं लेखक ने उपन्यास की भूमिका में ही जिक्र किया है। दलपतिशाह के भाई चन्द्रसिंह के बारे में विस्तृत वर्णन उपन्यास मे नही है। उपन्यास का अधिक भाग राजा और रानी की शिकार प्रक्रिया के वर्णन से भरा है। इस में वीररस का प्रधान स्थान रहा।

1.9.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

महारानी दुर्गावती एक ऐतिहासिक चरित्र जरूर है, लेकिन उस की सामग्री बिखरी हुई है। इसकी जीवनी से संबंधित कई विषयों पर भिन्नमत भी हैं। लेखक के मन में पराक्रमी और वीर नारी-व्यक्तित्व के प्रति श्रद्धा है। इसलिए साहस

करके लेखक ने ऐतिहासिक सामग्री इकट्ठा की। अकबर के प्रसिद्ध मन्त्री अबुल फजल ने उसके सम्बन्ध में अपनी कृति 'अकबर नामा' में सबसे अधिक लिखा है। लेखक के पास 'अकबर नामा' का अंग्रेजी अनुवाद है। उस में बहुत सी बातें सही और ऐतिहासिक तथ्य हैं। महारानी का जन्म कालन्जर दुर्गाधीश कीर्तिसिंह के यहाँ हुआ है। ऐतिहासिक तथ्यों की परम्परा में यह भी सत्य है कि कीर्तिसिंह ने शेरशाह का सामना किया और अंत में मारा गया। इसके बाद शेरशाह की मृत्यु भी हुई। लेखक ने इस संदर्भ में एक काल्पनिक चरित्र का सृजन किया, जिसका नाम सुधारसिंह है। रिश्तेदार होकर भी, दुर्गावति न मिलने के कारण, उसने युद्ध में धोखा दिया। उस देशद्रोही का वर्णन इतिहास में नहीं रहा। परन्तु परम्परा में यह है । सभी इतिहासकार कहते हैं कि दुर्गावती अतीव सुंदरी थी। और गोडवाने का दलपतिशाह भी अपनी शक्ति, सम्पन्नता और सुन्दरता के लिए विख्यात था। दुर्गावति की शिकारी प्रवृत्ति की अबुल फजल ने बडी सराहना की है। 'अकबर नामा' में लिखा है कि दुर्गावती के तीर और बन्दूक का निशाना अचूक था और शेर के शिकार की तो इतनी विकट शौकीन थी कि शेर का पता मिलते ही पानी-वानी छोडकर चलदेती थी। पति की मृत्यु के पश्चात रानी ने पर्दा करना बिलकुल छोड़ दिया। उसने मालवा के बहादुर को कई बार हरादिया। यह भी काल्पनिक है कि अकबर ने रानी का अपमान करने के लिए सोने का पिंजड़ा भेजा। युद्ध में धोका देने के लिए 'गोपानंद' नामक कल्पित चरित्र का लेखक ने सृजन किया। इस प्रकार लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यों को आधार बनाकर उपन्यास लिखने में कामयाबी प्राप्त की। यह एक सफल जीवनीपरक उपन्यास है।

1.10. शिवनेर केसरी :-

1.10.1. ऐतिहासिकता

मूलत: शिवाजी के जीवन-वृत्त को लेकर ही 'श्री यादव चन्द्रजैन' ने इस उपन्यास की सर्जना की है। यों भारतीय इतिहास में नजाने कितने व्यक्तित्व है जिनकी गरिमा की होड़ सरलता से नहीं की जासकती किन्तु छत्रपति शिवाजी का उनमें एक

पृथक स्थान व व्यक्तित्व है। उपन्यास का आरम्भ 'शिवनेर' किले से पूजा की जानेवाली सेना के वर्णन से होता है। किले में दादाजी कोणदेव, मोरोतानदेव और गर्भवती जिजियाबाई पधारे हैं। सभी प्रसन्न थे कि सेना के नेता शिवाजी का प्रभुत्व बढरहा था। शिवनेर के किले में तैय्यारियाँ होरही थी। शाहज़ी का बुलावा आया था। शाहजी ने पूना जागीर संभाली थी और उस की रक्षार्थ शिवनेर में रहनेवाले उस सैनिक समूह को उन्हों ने बुलाया था जो एक प्रकार से उनकी व्यक्तिगत धरोहर थे। वे उन के विश्वास-पात्र योद्धा थे। शिवनेर का किला बहुत सुरक्षित जगह है, जहाँ पर कदम रखने के लिए शत्रु डरते हैं। [1]" इसलिए शाहजी ने अपनी गर्भवती पत्नी जीजाबाई की सुरक्षा के ध्यान से यह भार सौंपा था कि जीजाबाई को शिवनेर के किले में पहुँचाकर वे उन से, तत्काल पूना में जा मिलें। साध्वी जीजाबाई ने शिवाभवानी के मन्दिर में प्रथम प्रवेश किया। उनके अन्तर्मन ने माँगा-मेरी आराध्य देवी! मुझे वरदान दे। मुझे एक पुत्र दे। ऐसा पुत्र दे जो जाति, समाज और देश का गौरव हो। जो तेरा पुत्र हो। जो शिवाभवानी का पुत्र हो। शिवाभवानी के दर्शन करते-करते जीजाबाई पीड़ा से बेहोश होगई। पल भर में दासियों की भाग-दौड प्रारम्भ होगई।....... और नवजात शिशु अपनी माता के पलंग पर लेटकर हाथ -पैर पटकने लगा। जीजाबाई ने पुत्र को वक्ष से लगाया तथा शिवा भवानी की स्मृति कर उन्हों ने पलक में पलक मूँदलिए।" उस बच्चे का नाम 'शिवा' रखदिया गय है। सिंहासन के लिए लडनेवाले मुगल युवराजाओं में 'शाहजहाँ' को पुनादीश 'शाहज़ी' ने सेना की सहायता की और शाहजहाँ के सम्राट बनने के बाद स्वयं जागीरदार बन गया है। पूना के साथ साथ नासिक और अहमदनगर पर भी शाहजहाँ ने ही अधिकार प्राप्त किया। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि शिवाजी का जन्म शिवनेर किले के एक मन्दिर में हुआ था।

शाहजी राज्य प्रशासन में उलझकर जीजाबाई और बालक शिवाजी को भी भूलगया था। हरदिन माँ जीजाबाई अपने पुत्र को रामायण, महाभारत और गीता जैसे

---

1. शिवनेर केसरी - यादवचन्द्र जैन - पृष्ठ - 15

महान ग्रंथों की कहानियाँ सुनाती है। बचपन में माता ही उस की जन्मदात्री, शिक्षिका, सहयोगिनी, मित्र और सबकुछ थी। शिवाजी ने समर्थ बाबा रामदास से देशभक्ति सीखी। कोणदेव से युद्धकला में प्रवीण हो गया। राजेश्वर मन्दिर के पास आयोजित चयन में तानाजी से दोस्ती होजाती है। तमाम सेना के अध्यक्ष पद पर तानाजी की नियुक्ति हुई है। शिवाजी की वाणी में ओज और जोश है। उसके भाषण से सेना के नस-नस में देश भक्ति भरजाती है। सेना की दृष्टि में शिवाजी एक केसरी के समान है। रत्नगिरि नरेश की पुत्री 'रत्न' के साथ शिवाजी का विवाह होता है। पिताजी और शिवाजी के बीच देशभक्ति अंदोलन में हिन्दू स्वराज्य स्थापना में विवाद उत्पन्न होता है। पिताजी से अलग होकर अपनी माँ और पत्नी के साथ शिवनेर किले मे ही रहकर हिन्दू स्वराज्य कायम करने के प्रयत्न करने लगता है। निश्चित तिथि को शिवाजी की सेना स्वराज्य के लिए तैय्यार होगई। शिवा ने अपनी सेना को भिन्न भागों में बाँटकर अलग प्राँतों पर आक्रमण का आदेश दिया। [1]"सेना बढाओ। सेना बढाकर स्वतन्त्र साम्राज्य की स्थापना करो। यह उस कथन में छिपा था कि शत्रु का संहार करो। वह रूप या जिस में माँ-पुत्र को प्रोत्साहन देरही थी। जीजाबाई और दादाजी कोणदेव का वैसा ही आन्तरिक सहयोग शिवाजी को प्राप्त था। शिवाजी के प्रत्येक कार्य में दादाजी की सहमति उन्हें प्राप्त होती थी। दादाजी भी आन्दोलन के उस रूप को देखरहे थे जो सफलता की सीढियों पर चढरहा था। शिवाजी उसके मुखिया थे। संत तुकाराम उसके सास्कृतिक चेतना प्रदायक थे। समर्थ बाबा रामदास धार्मिक एवं राजनीतिक प्रेरक के रूप में समर्थ सम्बल प्रदान कर रहे थे। शक्ति के रूप में मालन के रणबाँकुरों ने पूजा के मराठे शेरों का साथ कर लिया था और दूसरे प्रकार की शक्ति के रूप में तोरण की तरह शिवाभवानी कृपाकर रही थी तथा अटूट धनराशि इस प्रकार प्राप्त हो रही थी। शनै:शनै महाराष्ट्रीय स्वराज्य निर्माण और शिवाजी स्वराज्य की स्थापना में अग्रसर थे।"

---

1. शिवनेर केसरी - यादवचन्द्र जैन - पृष्ठ - 158

तोरण दुर्ग को हस्तगत करने के पश्चात एक दिन शुभ मुहूर्त में शिवाजी की सेना ने सिंहगढ के प्रसिद्ध दुर्ग को अपने अधिकार में करलिया। 'साई बाई' से विवाह के अनन्तर फिर शिवाजी ने सैनिक कार्यक्रम शुरू किया। एकओर शिवाजी के दल इधर-उधर कार्य कर रहे थे, दूसरी ओर शिवाजी कुछ समय के लिए राजनीतिक बल के स्थान पर छल का उपयोग करने की तरकीब लडारहे थे। अपनी कार्यवाहियों से शिवाजी समझ रहे थे कि बीजापूरी सुल्तान कभी भी उस पर हमला कर सकता है। लेकिन छल से ही पुरन्दर दुर्ग को भी शिवाजी ने अपने कब्जे में कर लिया है। दुर्भाग्यत: उसी वक्त दादाजी कोणदेव ने अपनी यह संसारी लीला समाप्त की। शिवाजी का एक बडा सहारा समाप्त हो गया। बीजापूर सुलतान ने शाहजी को पहले बन्दी करके बाद में अपने देश से तड़ीपार करदिया। शाहजी, शिवाजी के पास पहुँचगया। विवश होकर समझौता करने के लिए बीजापूर सुल्तान ने अफजलखाँ को दूत के रूप में भेजा। नियम के अनुसार एक टीले पर स्थित मन्दिर में अफजलखाँ और शिवाजी बिना हथियार लिये अकेले समझौता करलेंगे। शिवाजी ने सहमति देदी। [1]"शिवाजी, अफजलखाँ से मिलने आगे बढ़े। तख्त से भूमिपर उतरकर अफजलखाँ ने बड़े तपाक से शिवा को गले से लगा लिया। शिवा ने अनुभव किया - अफजल ने उन के फाँस डालदी है और वह उन्हें कसता जारहा है। कसता जारहा है। तब अनायास ही एक आवाज हुई 'खन्न'। यह आवाज उस कटार की आवाज थी जो अफजल ने शिवा के पेट में घुसेड़ी थी परन्तु लोहे के कोट पर खन्न की आवाज करके रहगई थी। बस - शिवा ने अपने बिछुवा को पलक मारते अफजलखाँ के पेट में घुसेड़दिया। पलभर में अफजलखाँ लाश बन गया। उसका कटा हुआ सर लिए शिवा आगे बढा।" यह ऐतिहासिक घटना है। शिवाजी के हाथों में अफजलखाँ की मृत्यु ऐतिहासिक सत्य है। फलस्वरूप शिवाजी से बीजापूर का सुल्तान समझौता करलेता है।

---

1. शिवनेर केसरी - यादवचन्द्र जैन - पृष्ठ - 202

किले में पहुँचकर विजयतोप दागीगई। यह एक पूर्व निश्चित संकेत भी था कि उसे सुनते ही मराठे बीजापुरी सेना से जूझ पडे। अफजलखाँ के अभाव में बीजापुर सेना तितर-बितर होगई। प्रतापगढ शिवाजी के हाथ में आगया। इसी प्रकार औरंगजेब द्वारा दक्षिण भारत के राजप्रतिनिधि शायस्ताखाँ को भी छल से हराकर वापस दिल्ली भगादिया। शिवाजी के आक्रमणों से तंग आकर औरंगजेब ने उसे आमंत्रण भेजा कि बादशाह उसे मराठा राजा के रूप में स्वीकृति देकर अपने ही दरबार में समझौता कर लेंगे। पहले उसके दरबार में जाने के लिए शिवाजी डरता था। फिर भी धैर्य समेटकर अपने पुत्र शंभूजी को साथ लेकर मुगलदरबार में पहुँचता है। लेकिन वहाँ उनको बराबर का पद नहीं मिला। इस के विपरीत वे दोनों बन्दी बनाए गये थे। 'शिवाराजा एवं शम्भूजी इस समय दोहरे कैदखाने में थे। बहुत गहराई में रामसिंह के सिपाही शिवाजी के जीवन की रक्षा कर रहे थे कि किसी गुप्त षडयंत्र के द्वारा उनकी हत्या न करदी जावे। क्यों कि उसके वचन पर ही आगरा आये थे। शिवा की कडी नजरबन्दी के बाहर हथियार बन्द पुलिस पड़ी हुई थी जो शिवा को भागने से रोक रही थी। औरंगजेब ने तै करलिया कि या तो आगरे में ही शिवा का काम तमाम कर दिया जाय या कैदखाने में सड़ा डाला जाय।' यह ऐतिहासिक सत्य है कि शिवाजी और शम्भूजी दोनों को समझौते के लिए बुलाकर भरे दरबार में ही औरंगजेब अपमान करता है। उन्हे बैठने का उचित आसन तक नहीं देता। इस घटना से शिवाजी और औरंगजेब के बीच बात बिगड़ती है। तुरन्त औरंगजेब ने उन दोनों को बन्दी बनाने की आज्ञा दी। उनदोनों पर कडी नजर रखने का हुक्म भी वह देता है।

शिवाजी को देखकर शहजादी जीनतुन्नीसा मोहित हो जाती है। किसी भी तरह उसे कैदखाने से छुडवाना चाहती है। यह बात रामसिंह द्वारा शिवाजी तक पहुँचती है। इसे आधार बनाकर शिवाजी अपने पुत्र सहित कैदखाना से भागजाता है। यह एक ऐतिहासिक घटना है। 'समूचे किले में चर्चा फैलगई कि शिवा राजा सख्त बीमार है। उनके पैरों में 'सूजन' आगई है। उनका पुत्र शम्भूजी रात-दिन पूजा पाठ करता रहता है। शिवाजी के वैद्य का इलाज चलरहा है। जैसा शिवाजी का सदा का

नियम रहता था ब्राह्मणों के दान-दक्षिणा बन्दकर देने से उनको इधर यह शारीरिक कष्ट हुआ है। अत: उन्हें फिर दान वगैरह देने की इजाजत शहंशाह ने दे दी। सब खर्चा शाही खजाने से हो रहा है। रोज शाम के वक्त बहंगियों में मिठाई शहर में बाँट दी जाती है। एक दिन दो बहंगियों में छिपकर शिवाजी और शम्भूजी दोनों शाहजादी की सहायता से शहर के बाहर तक पहुँचाये गये। वहाँ दो घोडे भी तैय्यार हैं।' इस प्रकार शिवाजी अपने बेटे के साथ भाग जाता है। वहाँ पहुँचने के बाद शिवाजी को बुरी खबर मिलती है कि सिंहगढ की रक्षा में महावीर, धीरोदात्त सेनाधीश तानाजी शहीद हो गये। इस से शिवाजी के मन पर धक्का लगा। इस प्रकार छत्रपति नामक उपनाम से शिवाजी ने राजपद ग्रहण करके हिंदू राज्य की स्थापना की। यह एक सफल ऐतिहासिक जीवनी परक उपन्यास सिद्ध होता है।

1.10.2. काल्पनिकता :-

शिवनेर केसरी उपन्यास में जन्म से लेकर छत्रपती बनकर राज्य करने के अंत तक की जीवनी का वर्णन है। लेकिन जहाँ-तहाँ लेखक ने काल्पनिकता की भी शरण ली। शिवाजी के पिता शाहजी बीजापूर के रान्य में जागीरदार के रूप में काम करते हैं। एक तरह से वह सामन्त राजा के समान है। नवजात शिसु की सूचना मिलते ही शाहजी बहुत ही खुश होता है। लेकिन काम में व्यस्त होने के कारण वह नहीं आ सका। पुत्र-लाभ की सूचना पाक़र किसी पिता का हृदय कितना प्रफुल्लित हो सकता था किन्तु कर्तव्य की निष्ठा एवं परिस्थितियों की जटिलता ने शाहजी को शिवनेर की ओर लौटने के बदले 'दर्याखाँ' के पीछे जाने के लिए विवश किया है। लेकिन दर्याखाँ नामक चरित्र काल्पनिक है। लेखक ने इसे सजीव चरित्र बनाया था। [1] ''आदिलशाह के सरदार दर्याखाँ और खाँजहाँ बागी होगये थे। पहले तो ये निजाम शाही से जा मिले और तब इन्होंने अलग ही बगावत का झंडा खडा किया। आदिलशाह की ओर से शाहजी इन्हे दबाने के लिए भेजेगए। शाहजी ने बहुत समय तक इनका

1. शिवनेर केसरी - यादवचन्द्र जैन - पृष्ठ - 20

पीछा किया। बहुत संघर्ष भी किया और अन्त में दर्याखाँ मारा गया। खाँजहाँ भाग गया। दर्याखाँ को कुचलने के उपरांत शाहजी ने घोड़े को शिवनेरकी ओर मोड़ा।''

पुत्र लाभ के समय पति का अभाव पुत्र की माता को भी हो रहा था। किन्तु जीजाबाई का समस्त प्रेमानुराग ममत्व, कर्तव्य अब पुत्र पर केन्द्रित होगये थे। शिवा भवानी से वरदान स्वरूप पाप्त पुत्र का नामकरण जीजाबाई ने भवानी के नाम पर ही 'शिवा' किया। सन्त तुकाराम पर उनकी अपार भक्ति थी। वे देश भ्रमण करते- करते आजकल जुनूर आये थे। उनके दर्शन केलिए दोनों पति-पत्नी अपने पुत्र को लेकर कृष्ण मंदिर गए। 'सन्त ने अनेक प्रकार के आशीर्वाद शिशु को दिया। शाहजी से बोले: 'शाहजी तुम्हारा पुत्र शिवा दिक्दिशाओं में प्रसिद्ध पायेगा।' 'समाचार मिला जहाँगीर मारा गया, और शाहजी यहीं कहीं जुनूर में छिपाहुआ है। शाहजहाँ की मदद के लिए मराठों की सेना लेकर शाहजी ने प्रस्थान किया।' शाहजहाँ और शाहजी की मित्रता काल्पनिक है। जिसका वर्णन लेखक ने बहुरंगी बनादिया। शाहजी और शाजहाँ के बीच होने वाला यह संवाद भी काल्पनिक है।'दोनों और के घुडसवार ठिठककर यथास्थान खड़े होगये। 'शाहे मुगलिया! मेरा भी आदाब कुबूल करें। मैं अभी शाहे मुगलिया नहीं, जो आप हैं।' शाहजी ने कुछ व्यंग्यात्मक मुद्रा में कहा। सामने के घुड़सवारों में शोर मचगया। 'शाहे मुगलिया जिन्दाबाद शहंशाह शाहजहाँ जिन्दाबाद। सल्तनते मुगलिया जिन्दाबाद अल्लाह अकबर'

'शाहजी के साथ मराठा घुडसवारों में जैसे जोश भरगया। उनकी भुजायें फडकने लगीं। उनके वक्ष फूलने लगे। उनकी साँस के चलने की तेजी साफ सुनाई देने लगी। शाहजी ने अपने घुड़सवारों की नब्ज को पहचाना और तीखे स्वर में बोले 'शाहजहाँ' यह सब क्या है ?, 'एक खुशी', 'एक जोश'। कैसा ?... यह कैसी खुशी है ? यह कैसा जोश है ? मराठा सरदार। यह बात नहीं, आप पहले आदमी हैं जिसने मुझे शहंशाह मुगलिया कहकर पुकारा है।' ....यह बताइये किधर कूच किया ? आगरा। मराठा सेनापति। हालात तो आप सब जानते ही हैं। क्या मैं आप की कुछ

मदद कर सकता हूँ? मैं जानता हूँ। जरूरत होगी तो मदद क्या? .....अपने साथ रखूँगा। मराठा सेनापति की दोस्ती की मैं हमेशा ख्वाहिश करूँगा। जरूर-जरूर सफर खुशनुमा हो, कहते हुए शाहजी ने अपने घोड़े को ऐंडदी। शाहजी और शाहजहाँ दोनों के सैनिक-दल बराबर से निकल गये।' यह एक काल्पनिक घटना है। क्यों कि इतिहास में इस घटना का जिक्र कहीं नहीं कियागया। लेखक ने इस काल्पनिक घटना का वर्णन बहुत सुन्दर ढंग से किया। दोनों के भाषण में वीररस की प्रधानता दिखाई देती है।

मुहम्मद आदिलशाह शाहजी का अत्यन्त सम्मान करता था। वह तुकाबाई से शादी करने के बाद शाहजी बीजापुर छोड़ना नहीं चाहता। तुकाबाई ने भी एक पुत्र को जन्म दिया था जिस का नाम सम्भाजी है। लखजीयादवराव की हत्या निजामशाही द्वारा की गई है। यादवराव और शाहजी निकट दोस्त हैं। निजामशाही से बदला चुकाने के लिए शाहजी ने उसके राज्य में लूटपाट किया है। वास्तव में यादवराव नामक चरित्र लेखक द्वारा कल्पित है। शाहजी के द्वारा कियेगये लूटपाट को वीरोचित कार्य बनाने के लिए लेखक ने इसपर प्रतिशोध का रंग जमाया। वास्तव में पूना पर अधिकार जमाने के लिए शाहजी ने इस प्रकार निजामशाही पर आक्रमण किया है। अत: विपत्तियों में व्यस्त निजामशाही ने इसे चुप-चाप सहनकरलिया।

शाहजी के उत्तराधिकार के लिए सम्भाजी और शिवाजी के बीच विवाद उत्पन्न होता है। उसके बाद विलासी सम्भाजी की मृत्यु हो जाती है। लेकिन उस घटना का जिक्र उपन्यास में नहीं मिलता। दिन-ब-दिन शिवाजी की कीर्ति बढ़ने लगती है। शिवाजी स्वराज्य की स्थापना में अग्रसर होता है। तोरन दुर्ग में उसे बहुत धन मिला। स्वराज्य कायम करने के लिए जितना धन चाहिए उसका समीकरण इस प्रकार किया।[1] ''कारवाँ धीरे-धीरे समुद्र की ओर बढचला। ऊपर सूर्य तप रहा था।

1. शिवनेर केसरी - यादवचन्द्र जैन - पृष्ठ - 170

कारवाँ का सरदार अपने समूचे प्रांत की एक साल की मालगुजारी खच्चरों,गधों और घोडों पर लादकर आदिलशाही सुल्तान के यहाँ जमाकरने केलिए जारहा था। कल्यान प्रांत में मौलाना अहमद का केवल यही धन्धा था। अपने महल में मौज करना और बस साल में एकबार बीजापूर जाकर माल गुजारी जमाकर आना। कल्यान बाजारों के बीच उसका एक बडा सा खूबसूरत महल था। जिसके आगे का हिस्सा समूचा संगमरमर का बना हुआ था। तो कारवाँ के साथ बहुत नकद, रूपये, अर्शफियाँ, सोना, जवाहरात चलरहा था। चार पहियों वाली गाडियों पर कुछ चाँदी भी लदी हुई थी, दर्रे से मैदान में आनेपर शिवाजी के तीन सौ जवानों ने कारवाँ पर हमला करदिया। कारवाँ देखते-देखते सब तरफ से घिरगया। समूची बीजापूरी मालगुजारी पर मराठा सरदारों का कब्जा होगया। कारवाँ के सिपाही भागगए।''

वास्तव में 'मौलाना अहमद' एक काल्पनिक चरित्र है। फिर भी लेखक ने शिवाजी के व्यक्तित्व को वीरोचित, निडर, धीरोदात्त बनाने के लिए उसका सृजन किया है। इस प्रकार पूरे उपन्यास में बहुत कम काल्पनिक चरित्र हैं। उपन्यास में वर्णित अनेक घटनायें ऐतिहासिक सिद्ध हुये हैं। मगर एक, एक घटना के बीच कडी जोडने के लिए लेखक ने काल्पनिक घटनाओं का भी वर्णन किया है। इतना ही नहीं काल्पनिक चरित्रों का सृजन भी हुआ है। इसलिए कुछ कल्पित नाम या चरित्र कहानी को आगे बढाने में सहायक हैं। साधारणत: उपन्यास को आकर्षक बनाने के लिए या पाटकों में उत्सुकता जगाने के लिए हर एक लेखक काल्पनिकता का सहारा लेता है। मगर वह यह ध्यान में रखता है कि कहीं भी उसका असर ऐतिहासिक तथ्यों पर पडे। प्रस्तुत उपन्यास में भी लेखक ने उपन्यास को सफल बनाने के लिए उत्तम जीवनीपरक रचना बनाने का प्रयत्न किया है। निष्कर्षत: यह कहना उचित है वीर रस प्रधान यह उपन्यास एक सफल जीवनीपरक उपन्यास है।

1.10.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

अनुपात की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास शिवनेर केसरी में ऐतिहासिक तथ्यों की संख्या अधिक है। शाहजी के बारे में ज्यादा वर्णन कियागया है। इतिहास में शाहजी का स्थान बहुत ही कम है। सम्भाजी को लेखक ने अप्रधान बनादिया। पूरे उपन्यास में एक-दो बार ही उस का नाम आया, मगर उसके बाद उसे क्या हुआ? इसका कोई परिचय या आधार नहीं रहा। शिवाजी के दो पत्नियाँ है। एक रत्नाबाई और दूसरा साईबाई। लेकिन इतिहास में कहीं भी दो पत्नियों के नाम नहीं रहे। सिर्फ रत्नाबाई का नाम मौजूद है। यह सच है कि लूटपाट करके शिवाजी ने धन-दौलत हाजिर करके स्वराज्य कायम किया। अफजलखाँ को जिस प्रकार शिवाजी ने मारा, उसका सही चित्रण लेखक ने सफल ढंग से किया है। उसी प्रकार सईस्तखाँ का अपमान शिवाजी ने किया, यह भी ऐतिहासिक है। शिवाजी पर मोहित होकर उसे कैद खाने से छुडानेवाली शहजादी के बारे में भी विभिन्न मत हैं। कुछ विद्वान मानते हैं कि रोशनारा ने मदद की और कुछ मानते हैं कि शहजादी जीनतुन्नीसा ने की। फिर भी लेखक ने जीनतुन्नीसा को मदद करनेवाले चरित्र के रूप में वर्णन किया है। लेखक ने ऐसा करके विद्वानों के मत में से, किसी एक को आधार मान लिया है। इस प्रकार आमतौर पर छत्रपति शिवाजी के समूचा जीवन के वर्णन ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित है। अधूरापन यह है कि शिवाजी की मृत्यु का वर्णन। आमतौर पर सम्पूर्ण उपन्यास को वीर रस प्रधान ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास बनादिया है।

1.11. झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई :-

1.11.1. ऐतिहासिकता

डा. वृन्दावनलाल वर्माजी की ऐतिहासिक रचनाओं में झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई महत्वपूर्ण जीवनीपरक उपन्यास है। दीवान आनन्दराय, जो रानी लक्ष्मी बाई की ओर से अंग्रेजों के खिलाफ लडे थे, हमारे लेखक वर्माजी के परदादा थे। जब वर्माजी आठ वर्ष के थे तब वे अपनी परदादी से रानी के विषय में बहुत सी कहानियाँ सुनाकरते थे। रानी लक्ष्मीबाई की विलक्षणता और तत्कालीन समाज की प्रगति और

रहन–सहन का भी पता चला था। एक बार रानी का भतीजा लेखक से मिला और रानी के बारे में उपन्यास लिखने का अनुरोध किया है। इन सभी विषयों के बारे में स्वयं लेखक ने उपन्यास की भूमिका में ही लिखा था। लक्ष्मीबाई के बचपन का नाम मनूबाई था। इस के माता, पिता मोरोपन्त और भगीरथी बाई है। इस के पिता पेशवा बाजीराव के पास ईमानदार सेवक है। कोई सन्तान न होने के कारण पेशवा ने नाना-फड्डूपन्त नामक लडके को गोद लिया और उत्तराधिकारी धोषित करदिया। पेशवा प्यार से मनु को अपनी पुत्री के समान देखा करता है। मनू को छेडते हुए नानासाहब उसे छबीली कहा करता है। मनू के मन में बचपन से वीर कलाओं के प्रति विशेष रुचि है। स्वतंत्र-भावनाएं रखनेवाली मनू के बचपन में घटित यह घटना उस में उभरनेवाली स्वतंत्रता और देश भक्ति की भावनाओं को पुष्टि देती है।

[1]''मंदिर में राव साहब अपने बेटे के साथ बैठा था। उसी वक्त मनू उसके पास गई और तीनों मिलकर बाते कररहे हैं। इसी समय पहरेवाले ने बाजीराव को सूचना दी, झांसी से एक सज्जन आयें हैं। नाम तात्या दीक्षित बतलाते हैं। मनु ने कहा, झाँसी वाला कुश्ती लडता होगा। नाना-बडा राज्य होगा झांसी। बाजीराव- बडा तो नहीं पर खास है। मनु-ग्वालियर इन्दौर, बरोदा, नागपूर, सतारा इत्यादि के होते हुए भी थोडे से अंग्रेजों ने आप सब को दबालिया। बाजीराव - यह मानना पडेगा कि वे लोग हम से ज्यादा चालक हैं। हथियार उन के पास अधिक अच्छे हैं। शूर - वीर भी है। और भाग्य उनके साथ है। और आपसी फूट हमारे साथ.....। मनू-'दादा क्या भाग्य में शूर वीर होना भी लिखा रहता है? यदि ऐसा है तो अनेक सिंह स्थार होते होंगे और अनेक स्थार सिंह।' बाजीराव-'जब स्थार पागल हो जाता है, तब सिंह भी उससे डरने लगता है।' मनू-'वह भाग्य से पागल होता है अथवा और किसी कारण से?' बाजीराव हंसने लगे। इसी समय मोरे पान्त वहाँ आया। और बाजीराव ने कहा - 'तात्या मुझ को एक बार काशी में मिले थे। यात्रा के लिए गये थे। विधा-विग्धध

1. झाँसी की रानी - बृन्दावनलाल वर्मा- पृष्ठ - 25

है, सज्जन हैं। राजा के यहाँ उनका मान है।' मनू ने हँसकर पूछा- 'कुस्ती लडते हैं?' तलवार-'बन्दूक मोरो पन्त ने कहा' - 'इस लडकी जैसी वाचाल तो शायद ही कोई हुई हो।' मनू ने होटों की समेद में मुस्कान को दबाकर गर्दन मुडी, फिर विशाल नेत्र संकुचित करके बोली, 'आप ही कहा करते हैं, ताराबाई ऐसी थी जीजाबाई ऐसी थी, अहल्या बाई ऐसी, मीरा ऐसी। मै पूछती हूँ, क्या, ये सब मुँह पर मुहर लगाये रहती थी?''

इस घटना से यह मालूम होता है कि बचपन से मनू के अन्दर उत्तम लक्ष्ण जागृत हुए हैं। वह बजपन में नाना के साथ वीर कलाऐं सीखती हैं। हर रोज व्यायाम करती है। सयान होने के पश्चात झाँसी के राजा गंगाधरराव के साथ इस की शादी होती है। तब से उसका नाम लक्ष्मीबाई हो गया है। कुछ समय के पश्चात उनको एक पुत्र भी हुआ। मगर दुर्भाग्यत: यह बच्चा तीन महीने की आयु पाकर मरगया। राजा के तन-मन पर इस दुर्घटना का स्थाई कुप्रभाव पडा। लगभग दो वर्ष राजा रानी के काफी कष्ट में बीते। राजा को संग्रहणी रोग ने ग्रस लिया। बहुत दवा-दारू की गई, कुछ न हुआ। मर्ज बढता ही चलागया। अखिर एकदिन राजा की इच्छा के अनुसार पाँच वर्ष के बच्चे आनन्दराव को योजना के अनुसार अंग्रेजी अधिकारियों के सामने गोद लिया और उसका नाम बदलकर दामोदरराव रखा। लेकिन 'मेजर एसि' और 'कप्तान मार्टिन' के मन में सहमत नही हैं। वे जानते है कि 'लार्ड डल्होजी' झाँसी को अंग्रेजी इलाके में मिलालेंगे। फिर भी राजा के द्वारा दियागया खरीता प्रधानाधिकारी को भेजदिया गया। लेकिन निर्णय लियागया है कि राज्य को अंग्रेजी अपने हाथ में लेना, रानी को पाँच सहस्त्र मासिक वृत्ति निजी सम्पत्ति और नगर का महल दे दिया जाया। लेकिन लोगों का विश्वास था कि दत्तक पुत्र के नाम पर राज्य चलेगा। और वे दामोदरराव के नाम पर शासन प्रबन्ध करने लगे। कम समय मे ही राजा की मृत्यु होगई। अविचलित मन से रानी हर रोज महल के बाग में ही घुड सवार, खड्ग चलान, आदि व्यायाम करती रही।

[1]'लार्ड डलहौजी ने झाँसी की मिसिल पर 27 नवम्बर सन् ,1845 को हुकुम चढाया - झाँसी राज्य पेशवा का आश्रित राज्य था। 1804 की संधि में 'शिवराव भाऊ' ने इस बात को कबूल किया था। हमे ऐसे आश्रित राज्यों में गोद मानने का अधिकार है। रामचन्द्रराव ने 1835 में जिनको हम ने सन 1832 में राजा की उपाधि दी थी, मरने से एक दिन पहले किसी को गोद लिया था। वह गोद ब्रिटिश सरकार ने नहीं मानी थी। हम दमोदरराव की गोद को मानने के लिए बाद्य नही है। इसलिए झाँसी राज्य खालसा किया जाता है। और अन्ग्रेजी राज्य में मिलाया जाता है। पोलिटिकल ऐजेण्डा की सिफारिश के अनुसार रानी को मासिक वृत्ति दी जाएगी। ...... दत्ता को गवर्नर जनरल ने न मन्जूर किया है। ......आज्ञा के अनुसार झाँसी का राज्य ब्रिटीश इलाके में मिलाया जाता है। इश्तिहार के जरिए सब लोगों को सूचना दी जाती है। इस प्रदेश की सब प्रजा अपने को ब्रिटीश सरकार के अधीन समझे और मेजर ऐलिस को कर दियाकर सुख तथा सन्तोष के साथ जीवन निर्वाह करे।''

इसका तो रानी ने पहले से ही अन्दाजा लगाया। रानी वीर नारियों की एक टोली बनाकर उन्हें युद्ध कलाए सिखाने लगी। अपनी तीन सहेलियों को टोली का अधिकार सौंपदिया। छदम वेष धारण करके अपने पास आनेवाले तांत्याटोपे के द्वारा देशकाल वातावरण और राजनैतिक परिस्थितियों की जानकारी रानी प्रासकरती है। रानी की युद्ध नीति योजना के संदर्भ में प्रस्तुत उद्धार उचित उदाहरण है। - [2]''रानी बोली - तात्या, अभी कुछ विलम्ब और है। तब तक महत्वपूर्ण स्थानों के भूगोल का बारीकी के साथ अध्ययन करलो। कहाँ , किस प्रकार सेनाओं को लेजाना पडेगा, कहाँ, आसनी के साथ युद्ध किया जासकता है। और अपने अभीष्ट स्थान पर किस प्रकार शत्रु को एकत्र करके लडाई के लिए विवश किया जासकता है। इन विषयों पर काफी समय और परिश्रम खर्च करने की आवश्यकता है। इसके सिवाय

---

1. झाँसी की रानी - बृन्दावनलाल वर्मा- पृष्ठ - 158
2. झाँसी की रानी - बृन्दावनलाल वर्मा- पृष्ठ - 185

बारबरदरी के जानवरों और अच्छे घोडों को इकट्ठा करने की योजना पर विचार करते रहने को भी मन में बहुत स्थान मिलना चाहिए। तोंपे, बन्दूकों, बारूद, गोला, गोली इत्यादी युद्ध-सामाग्री के बनानेवाले कारीगारों को भी हाथ मे ले लो। अंग्रेजी कारखानों में अपने आदमियों को नौकर रखवाओ। वे लगन के साथ सब क्रिया सीखें। अपनी पुरानी बारगी-युद्ध परिपाटी को तो गांट ही में बांध लो। हमारा देश उस परिपाटी को छोडकर अंग्रेजों से लडा और हारा। ...... लडाई के नकशों का भी अध्ययन करना जरूरी है।

योजनाओं के अनुसार पूरी तैय्यारी होने में कुछ समय बाकी है। छः मई को मेरट में एक दुर्घटना हो गई। अस्पृश्य 'चर्मीवाले' 'कार तुसों' के प्रयोग करने के लिए मंगलपांडे नामक सिपाही ने इनकार किया और गुस्से में आकर एक अंग्रेजी अफसर को गोली चलाकर मारदिया। तुरंत क्राँती का शुरुवात होगया। मेरठ और दिल्ली की सम्मिलित फौज ने दिल्ली के किले पर अधिकार करलिया। विवश होकर झाँसी की रानी, तात्या और नाना भी क्रांती में शामिल हो गये। बादशाह बहादूरशाह को भारत का सम्राट घोषित किया और इक्कीस तोंपों की सलामी दी। इस प्रकार विजय के पथ पर चलने वाली क्रांति सेना को रोकने में जनरल गार्डन विफल हो गया। जनरल रोज की नियुक्ति के बाद अंग्रेजी सेना में जोश आगया। क्राँती सेना के पास युद्ध सामाग्री कम होगयी। सही वक्त पर जनरल रोज ने झाँसी पर आक्रमण किया। ग्वालियर की सेना सहित रानी भी झूझ पडी। हिन्दुस्थानी सिपाही वीरोचित लडने लगे। फिर भी एक-एक होकर मरने लगे। रानी के रण कौशल के मारे अंग्रेजी जनरल पर्श गए। इस प्रकार लक्ष्मीबाई ने अंत तक लडती हुई दम तोड दी। झाँसी का सूर्यास्त होगया। झाँसी की रानी शहीद होगई। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास का लेखन उपन्यासकार ने ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर करके इस रचना को एक सफल जीवनीपरक उपन्यास बनाया है। झाँसी की रानी भारत के इतिहास में शेरनी के रूप में विख्यात है।

1.11.2. काल्पनिकता :-

वृन्दावनलालजी द्वारा लिखित 'झाँसी की रानी' उपन्यास ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है। कुछ चरित्रों के अलावा सभी ऐतिहासिक हैं। लेखक ने ऐतिहासिक घटनाओं के वर्णन में काल्पनिकता का शरण लिया। काल्पनिक चरित्रों की श्रेणी में रानी की तीन सहेलियाँ मन्दर, सुन्दर, काशी और मोतीभाई आती हैं। ध्यान देने की बात यह है कि लेखक ने उपन्यास की भूमिका में यह घोषित किया है कि 'मोतीबाई' ऐतिहासिक है। मोतीबाई नाटकशालवाली। गन्गाधरराव को नाटक खेलने और खिलवाने का शौक था। स्त्रियों का अभिनय स्त्रियाँ ही करती थी। इनमें मोईबाई भी थी। गन्गाधरराव स्वयं अभिनय करते थे। पुरुष के अभिनय से सन्तोष नहीं होता था, इसलिए स्तत्री की भूमिका में भी आजाते थे। स्त्रीयों का अभिनय करने के लिए उन्होंने बहुत सुन्दर नाचनेवाली नियुक्त करसखी थी। इनमें मोतीबाई बहुत प्रसिद्ध थी। उसका सौन्दर्य अप्सरा सा था। फूलों जैसी कोमलाक्षी। स्वरलहरी सी मोहक और चंचल, परन्तु वेश्यापात्री होने पर भी वह कुमारी थी, नाट्यशाला के बाहर पर्दे में रही थी। वह कुशाल अभिनेत्री थी परन्तु इसके भी गन्गाराव अपने उदाहरण से यथावत अभिनय सिखलाते थे। जो अलोग गन्गाराव की नाटकशाला में खेल देखने जायाकरते थे वे बाहर आकर उसके रूप की नृत्य और संगीत की, उसके हावभाव की तथा अभिनय की प्रशंसा करते आते थे। नाटक शाला में नृत्य करनेवाले अनेक नर्तकगण होती हैं। पर लेखक ने उन में तीन को लेकर जूही, दुर्गा और मुगलखाँ नाम देकर उपन्यास में वर्णन किया है, जो काल्पनिक चरित्र मानेजाते हैं। इन तीनों चरित्रों को लेखक ने कहानी की कडियों के रूप में उपयोग किया है।

तांत्या दीक्षित नामक चरित्र भी लेखक ने काल्पनिक स्थर पर ही किया है। यह सच है कि कोई एक दीक्षित था। मगर उसे लेखक ने तात्या दीक्षित नाम दिया और गन्नाधरराव एंव मनु की शादी के विषय मे प्रधानपात्र बनाया। तात्या दीक्षित और तांत्यातोपे दोनों अलग-अलग चरित्र हैं। इस संदर्भ में यह उदाहरण आवश्य

है। – [1]"भोजोपरान्त तात्या दीक्षित से बाजीराव और मोरोपन्ती मिले। तात्या दीक्षित ज्योतिष और तन्त्र के शास्त्री थे। मोरा पन्त ने अवसर निकालकर तात्या दीक्षित से प्रार्थना की दीक्षितजी! अपनी कन्या मनूबाई के विवाह की बडी चिन्ता लगरही है। मै ने बहुत खोज की है परन्तु कोई योग्य वरनही मिला। अब भी खोज कर रहा हूँ। आप का, संसार मे बहुत परिचय है। आप इस कन्या केलिए योग्य वर ढूढ लीजिए। बडा अनुग्रह होगा। बाजीराव ने भी कहा- कन्या बहुत सुन्दर है। बडी कुशाग्र बुद्धि और होनहार। उनके लिए अच्छा वर ढूँढना चाहिए। मोरोपन्त बोले – सब हथियार चलाना बहुत अच्छी तरह जानती है घोडे की सवारी में पुरुषों के कान पकडती है। जब चारवर्ष की थी, इस की माँ का देहान्त होगया था। इसलिए मै ने उसकी लालन-पालन किया है। मराठी, संस्कृत और हिन्दी पढाई है। शास्त्रों में उसकी रूचि है। बाजीराव ने कहा – 'बालिका है, इसलिए इस आयु में जितना पढ सकती थी, उतना ही पढा है। परन्तु तेज बहुत है। पूजा-पाट मन लगाकर करती है'। तात्या दीक्षित ने जन्मपत्री माँगी। मोरोपन्त ने ला दी। दीक्षित ने उनकी परीक्षा करके कहा, 'ऐसी जन्म पत्री मे ने कदाचित ही पहले कभी देखी हो। इसको कही रानी होना चाहिए'। मोरापन्त फूलगये। बाजीराव को भी सन्तोष हुआ। बोले, 'जब आप जावें साथ में जन्मपत्री लेते जावें। योग्यवर से मेल खानेपर हमको सूचित करें'। दीक्षित ने स्वीकार किया।" तात्या दीक्षित नामक चरित्र तो ऐतिहासिक हो सकता है। परन्तु उसे काल्पनिक नाम दिया गया।

उपन्यास में तात्याटोपे का प्रवेश एक काल्पनिक संघटना के साथ होता है। झाँसी में ब्राह्मण काफी संख्या में हैं। आन्दोलन उठा की शूद्र जनेऊ के अधिकारी नहीं है। अधिकांश पण्डित इसमत के थे। नारायण शास्त्री और पन्नेशशास्त्री के बीच सदाभिप्राय नही है। एकदिन भरे दरबार में राजा के सामने दो अपराधियाँ लायेगये।

---

1. झाँसी की रानी – बृन्दावनलाल वर्मा- पृष्ठ – 25

वे दोनों अस्पृश्य हैं। [1]'' राजा ने अपराधियों से पूछा, क्या ब्राह्मण बनना चाहते हो? अपराधियों में एक साहसवान था। उस ने अत्तरदिया, नही तो सरकार। फिर यह उनुचित काम (जनेऊ पहनना) क्यों किया? अनुचित काम तो नही सरकार। क्यों रे अनुचित नहीं।? सरकार! ब्राह्मणों के अलावा और अनेक जातियाँ भी तो जनेऊ पहनती हैं। अबे बदमाश! उन जातियों की बराबरी करता है? वह चुपरहा। ......बोले, जनेऊ तोडकर फेंक दे और फिर कभी आगे न पहनना। उसने उत्तर दिया- अपने हाथों तो हम लोग जनेऊ नही तोडेंगे! छोटे प्राण भले ही निकल जावें। आप राजा हैं। चाहे जोकरें। सभा में से युवक तात्यां ने विनय की, महाराज! धर्म की रक्षा कीजिए। यह ठीक नही है। धर्म अपने-अपने विश्वास की बात है। इसमे राज्य को तटस्थ रहना चाहिए। तुरन्त युवक की बात मानकर अपराधियों को छोडदिया गया। राजा की दृष्टि उस युवक के 'टोप' पर जाटिकी। कुतुहलतावश पूछा, यह टोप क्यों लगाते हो? युवक ने उत्तर दिया - मै सिपाही हूँ। राजा को इस उत्तर पर हँसी आई। बोले-हमारे यहाँ तात्या दीक्षित एक शास्त्रज्ञ ब्राह्मण है, सो जानते हो। तुम सिपाई ब्राह्मण हो परन्तु नाम से बुलाने में कभी गडबड हो सकती है। इसलिए तुम को तात्याटोपी या सीधे टोपे कहें तो कैसा? हँसकर युवक ने जवाब दिया, श्रीमन् सरकार! मुझे इसी छोटे नाम से लोग पुकारते है। राज ने कहा- मुझे भी पसन्द है।'' यह एक काल्पनिक घटना है। इस से लेखक का कहना है कि उस जमाने में अस्पृस्यता का प्रभाव किस प्रकार है।

गन्गाधरराव जी की मृत्यु के पश्चात रानी ने धीरज के साथ वीर नारियों की एक टोली तैय्यार की। लेकिन यह काल्पनिक सिद्ध होता है। क्यों कि इस के लिए कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। रानी ने युद्ध की तैय्यारी के लिए तात्या, नाना, आदि लोगों से गुप्त समावेश करती है। उसने गुप्तचरभी रखली जो जासूसी काम किया करते हैं। उन गुप्त चरों में से लेकक ने सुन्दर, मुन्दर, काशी और मोतीबाई आदि चरित्रों का

---

1. झाँसी की रानी - बृन्दावनलाल वर्मा- पृष्ठ - 47

वर्णन किया। गुप्तचार होना सहज है, मगर अमुक चार होना अस्वाभाविक दिखता है। आमतौर पर उपन्यास ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर ही लिखा गया है।

1.11.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

'झाँसी की रानी' – वर्मा की सफल ऐतिहासिक रचना है। उपन्यास लिखने के लिए लेखक ने परिश्रम किया। सही सामाग्री इकटा करने के लिए उन्हों ने काफी समय व्यतीत किया है। दीवान आनन्दराय लेखक के परदादा थे। वे रानी लक्ष्मीभाई की ओर लडते-लडते मारेगये थे। परदादी बालक वर्माजी को रानी की कहानियाँ सुनाती थी। उन कहानियों की धरो हर उसकी दादी के पास ही रहीथी। अस्पष्ट धरोहर में सत्य निकालने की लेखक ने की और बहुत कुछ सफल भी हूए। पारसानी भाषा में लिखित 'रानी लक्ष्मी भाई' का चरित्र को भी लेखक ने अपना लिया। रानी के शौर्य की पुष्टि देनेवाले, रानी द्वारा लिखित पत्र भी लेखक को मिले थे। उन चिट्ठीयों में 'स्वराज्य' शब्द का जिक्रकिया गया है। इसका मतलब यह है कि रानी स्वराज्य के लिए लडीं। लेकिन उपन्यास के चरित्रों में मोतीबाई, सुन्दर, मुन्दर का भी आदि पात्र काल्पनिक दिखते हैं। लेकिन लेखक ने यह स्पष्ट किया कि नाम काल्पनिक है। मगर ऐसे ही काम करनेवाले उस जमाने में रानी के पास थीं। लेखक ने एक-दो जगहों मे हद से ज्यादा ही रानी की वीरता के बारे में वर्णन किया। वीर महिलाओं को संबोधित करती हुई रानी ने जो भाषण दिया, वह वीर रस प्रधान जरूर है, लेकिन काल्पनिक लगता है। युद्ध घटनाओं के वर्णन में भी लेखक में दो-तीन जगहों में रानी को ही ऊँचा दिखाना चाहा। ऐसे जगहों में रानी को ही ऊँचा दिखाने से तात्याटोपे, नानासाहब आदि के चरित्रों पर उदासीनता छागई है।' आमतौर पर यह कहना उचित होता है कि लेखक ने झाँसी की रानी के चरित्र को सफल बनाया। ऐतिहासिक तथ्यों की पुष्टि के लिए लेखक ने अंग्रेजी सरकार द्वारा दीगई आज्ञाओं को जैसे के तैसे उपन्यास में रखलिया। मीरठ में घटित घटना का वर्णन सफलढंग से लेखक ने तिथियों के सहित किया। क्यों कि यह सच है कि सिपाहियों में से हिन्दु

और मुसलमान ने उन अस्त्रों का प्रयोग करने से इनकार करदिया जो गाय और वराह के चमडे से बने हैं। यह सच है कि गाय हिन्दुओं का आराध्य जानवर है। वराह तो मुसलमान के अस्पृश्य है। लेकिन क्रांति की असफलता के कारणों के बारे में विस्तार रूप से वर्णन करने में लेखक विफल होगया था। फिर भी उपन्यास की दृष्टि से यह एक सफल ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है, लेखक ने इस ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास को सफल और उत्तम उपन्यास साबित किया है।

1.12. तात्याटोपे (स्वतन्त्र सेनानी) :-

1.12.1. ऐतिहासिकता

इस नश्वर शरीर से प्रत्येक प्राणी को मोह होता है, किन्तु कभी-कभी इस भूमण्डल में ऐसे मानव भी उत्पन्न हो जाते हैं, जो अपनी जीवन-डोर यम को सौंपकर निर्भीकता से अपने मनोवांछित कर्म-पूर्ति होते जुट जाते हैं । किसी भी प्रकार का मोह स्नेह, आसक्ति, प्रेम उन्हें भावुक बनाकर कर्तव्ययुक्त नहीं करसकता और इन सब के पीछे उनकी कोई स्वार्थ भावना नही होती । दूसरों के हितार्थ जीना और मरना उनके जीवन का उध्देश्य बनजाता है। ऐसे मानव कालजई, युग पुरुष हो जाते हैं। भारतीय इतिहास में ऐसा ही एक मानव 'तात्याटोपे' है। 'श्री सत्यशकुन' द्वारा लिखित यह उप्न्यास सफल जीवनीपरक देशभक्ति रचना है।

श्रीमंत पेशवा बाजीराव इस समय ब्रह्मावर्त में स्थायी निवास कररहे थे। अंग्रेजों की दासता स्वीकार करके पुरस्कार स्वरूप वे आठ लाख रूपए वार्षिक पेंशन प्राप्त कर रहे थे। उनके प्रासाद के पाकशाला के प्रधान नीरीक्षक के रूप में रामचन्द्र के पिताजी काम कर रहे हैं। तात्याटोपे का असली नाम 'रामचन्द्र' है। हट्टा-कट्टा सदृढ शरीरवाले रामचन्द्र के हृदय में बचपन से अंग्रेजों के प्रति विद्रोह भावना है।

पेशवा के बारे में अपने पिताजी ने एकबार इस प्रकार बताया– [1]"प्रारम्भ में तो पेशवा का हृदय भी अपने पुरतेनी राज्य छिनजाने से व्यथित था..... तडपा था...... विद्रोह के लिए व्याकुल हो उठा था। किन्तु आत्मा की चीख सुनलेने का अर्थ था- अपना पतन। धीरे-धीरे आत्मा के स्वर मृत होते गए और उस पर भोगविलास की परत चढती गई। उन्हों ने सोचा था कि यह संसार एक रंगमंच है और उसपर कुशल अभिनेता ही टिक सकता है। ...... तुरंत बालक तात्या ने कहा- मै भी अभिनय करूँगा...... अंग्रेजों को मूर्ख बनाऊँगा और अन्दर ही अन्दर अपने राज्य की पुनः प्राप्त हेतु संधर्ष करूँगा। यह घटना ऐतिहासिक है। क्यों कि पेशवा जब असहाय स्थिति में पहुँचगया तब तात्या ने उसे धीरज बाँधा और स्वयं कार्यसाधन के लिए संसिद्ध होगया था।"

पेशवा के घर में संतान नही हुई। इसलिए अपने रिश्तेदारों के सन्तान 'नानासाहब' को गोदलिया और अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। उसके घर में नाना के साथ 'मनु' नामक लडकी भी रहती थी। मनू ही झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई है। उन के साथ बचपन से ही रामचन्द्र मित्रता करता है। यह ऐतिहासिक सत्य है कि ये तीनों मित्र है। [2]"रामचन्द्र अपने पिता की मदद करके पाकशाला से बाहर निकला। प्रासाद के द्वारा से अश्तारोही बाहर निकलते उसे दिखाई दिए। नाना और रावसाहब होंगे। नाना! कितनी सुन्दर और सुडौल देहपुष्टि बाला है। उससे मित्रता करने को दिल चाहता है। उसने ठुकरा दिया तो? कहाँ राजा और कहाँ गंगतोली। फिर भी मेरा आराध्य रहेगा।" एक बार गंगानदी में बाढ आई। उसे देखने तात्या वहाँ पर गया था। [3]"रामचन्द्र के आह्वान पर नव युवकों की टोली बाढ पीडितों के यहाँ यतार्थ जुटगई। सम्पूर्ण गाँव पानी से घिरा हुआ था। लोगों को सहारा देकर सुरक्षित स्थान पर लाया जारहा था। रक्षा कार्य-करते हुए रामचन्द्र अपना आवेदन भूल गया।

---

1. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 7
2. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 8
3. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 10

एक वृद्ध दहाडें मारता हुआ उस के निकट आया। बाबा- क्या बात है ? मेरा बच्चा। उसने एक झोंपडी की ओर इशारा किया। चारों ओर जल - ही -जल दृष्टिगत हो रहा है। लगता प्रलय होगई। रामचन्द्र पुनः पानी में कूद पडा। कुछ ही समयोपरान्त वह एक बालक को सहारा देकर वृद्ध के पास ले आया। वृद्ध ने बालक को छाती से लगालिया। जुग-जुग जियों बेट!'' तुम्हारा नाम अमर हौ। यह तात्या के साहस और करूणा का एक सफल उदाहरण है। इसलिए लेखक ने प्रस्तुत घटना के माध्यम से यह साबित किया कि तात्या के मन में दीन और पीडित लोगों की रक्षा या सहायता करने की भावना है। एक ऐतिहासिक घटना है।

रामचन्द्र की पत्नी का नाम रोहिणी है। रामचन्द्र के मित्र हैं, जिन के मन में भी अंग्रेजों के बारे में असह्य भावना है। उन के नाम 'भाऊ' और 'लालपुरी' है। एकनारी भी है, जिसका नाम चम्पा है। वह विवाहित तात्या को तन-मन से प्यार करती हुई, इनके कामकाज में भागलेती रहती है। इन के मन की एक अभिलाशा यह है कि किसी भी तरह घुड सवार करना और बन्दूक चलाना सीखें। आखिर एक दिन राज प्रसाद से तात्या के मित्र एक अश्व और बन्दूक चुराकर लाते हैं। लेकिन उनको पकडने सिपाही वहाँ पहुँचते है। उन को देखते ही तात्या को छोडकर दोनों मित्र भागजाते हैं। तात्या की निडरता से प्रभावित होकर स्वयं नानासाहब उसे छोडदेने को कहते हैं। [1]''माँग के हमें कौन देता। घुडसवारी सीखकर हम इसे अस्वबल में वापस बाँध आएंगे, फिर चोरी कैसी ? तुम्हारी बुद्धी की प्रशंसा करनी पडेगी। देखों यह बन्दूक भी है। तुम भी तो निशाना लागना सीखोगे ? अच्छे मूखों से बाला पडा है। मुझे कुछ नही सीखना है। घोडे को पकडकर अस्तबल में बाँध आओ। इतने में मशाले लिए लोग निकट आते जारहे थे। वहाँ से दोनों भागगये। प्रातः उसे श्रीमंत के सम्मुख उपस्थित कियागया। वही नानासाहब, रावसाहब आदि बैटे हुए थे। 'तुम ने चोरी की है ?' अगर मै चोरी करता तो वहाँ खडा नही रहता

---

1. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 20

इसके स्वर में सच्चाई झलक रही है।...... यह रहा तुम्हारा घोडा और बन्दूक....... मेरी तरफ से उपहार, दास कृतार्थ हुआ- श्रीमानजी!, रामचन्द्र विनीतभाव से बोला। कल से प्रासाद के पीछे खुले मैदान में हम मिल-जुलकर अस्त्र-शस्त्र चलाने का अभ्यास करेंगे। नानासाहब बोले।'' खड्गचालना, घोडसवारी, बन्दूक चलाना आदि तमाम वीरकलाओं में वे प्रवीण हो जाते हैं। सब में रामचन्द्र तेज और होशियार ठहरता है। उस प्राँत में पादरी के काम करने 'जोजेफ' नामक धर्म प्रचारक नियुक्त होता है। उसकी लडकी का नाम 'शेरी' है जिसका जन्म भारत मे ही हुआ। उसके पति 'हेनरी' भी भारत के प्रती उदार और गौरव भाव रखते हैं। वे भी इनके मित्र बनजाते हैं।

युवराज नाना के सलाहदार के रूप में 'रामचन्द्र' नियुक्त होता है। कर्तव्य निभाने में होशियारी दिखाने के कारण पीशवाजी ने उसे 'रत्न जडित टोपी' पहनाकर 'तात्याटोपे' नामक उपनाम दिया। तब से वह तात्याटोपे के रूप में विख्यात होने लगा। मित्र मंडली मे दिन-ब-दिन विद्रोह करने की इच्छा बडने लगती है। तोप चलाने में प्रशिक्षित होने के लिए नाना के साथ तात्या भी अंग्रेजी-सेने में भर्ति होकर प्रशिक्षित हो जाते हैं। [1]''प्रातः रामचन्द्र के जीवन के लिए शुभसन्देश लेकर आया। नानासाहब ने कहा - रामचन्द्र पहली शुभ सूचना तो तुम्हें मै ही दे दूँ। हम कानपूर चलेंगे तुम मेरे सहयोगी और सचित के रूप मे मेरे साथ रहोगे। 'रामचन्द्र' का रोम-रोम पुलकित हो उठा चलो दूसरी स्त्रीमंत दे।..... स्त्रीमंत ने एक सुन्दर रत्न जडित टोपी उसे पहना दी। तालियों की आवाज से उसका स्वागत किया गया। आज से हम सबी रामचन्द्र को 'तात्याटोपे' नाम से पुकारेंगे। ...... समय व्यतीत होता चलाजा रहा था। नाना साहब प्रशिक्षण प्राप्त कररहे थे। शाम को युद्धकला पर विशद् चर्चा होती है। इस प्रकार तात्या का ज्ञान बडता चला जारहा था। कभी-कभी वह स्वर्य नाना के साथ प्रशिक्षण स्थल पर जाकर मोर्चाबन्दी करता, सैनिक टुकडियों को देखता। ''

---

1. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 72

इसीबीच मनु की शादी झाँसी के राजा से होजाती है। वह झाँसी की रानी बनकर वहाँ रहनेलगी। एक दिन नाना के पास समाचार आया कि श्रीमन्त गम्भीर दशा में मृत्यु शय्या पर पडे हैं। नाना को उत्तराधिकारी घोषित करके वे चलबसे। राज्य के लोग दुःख सागर में डूबगये। नाना का मन वेदना से भरगया। लेकिन तात्या ने उसे स्वांतना दी और राज्याधिकार संभालने का उपदेश दिया। ऐसे समय में अंग्रेजी सरकार ने एक पत्र भेजा। उस पत्र में जो विषय चर्चित है, वह ऐतिहासिक सत्य है। उस पत्र में राजा को दियेजानेवाले पेंशान के बारे में विवरण दिया गया है ।[1]"इस प्रकार के वातावरण को देखते हुए इस बात की कल्पना भी नही की जासकती थी कि 'डलहौजी', नानासाहब पर इस प्रकार घातक प्रहार करेगा। पेंशान के कागज चलरहे थे कि उत्तर आया - आप को बाजीराव का दत्तक पुत्र नही माना जासकता, अस्तु आपकी पेंशन बन्द की जाती है।" उसी तरह झाँसी की रानी के पति के निधन के पश्चात दत्तक-पुत्र को उत्तराधिकारी के रूप में सरकार अस्वीकार करती है। तात्या ने विद्रोह की योजना तैय्यार की। उस योजना को विभिन्न प्रांतों में अपने मित्रों तक पहुचाने लगे। [2]"इसी विषय को लेकर रात गए तक बहस चलती रही। सैनिकों पर उसके आकाट्य तर्कों का बहुत प्रभाव पडा। उसके ओजस्वी विचारों से वे प्रभावित हुए। मानसिंह नामक सेना नायक उसका धर्मभाई बनगया। यहाँ से वह मुरेना पहूँचा। यहाँ की छावनी में सैनिकों से उसकी बडी मित्रता हो गई। यहाँ की घाटियों और पहाडियों में उसने युद्धकला से सम्बन्धित खेल खूब खेले। इस प्रकार उस ने दो प्रकार के लाभ आर्जित किये। एक तो लडने और बचने की चालों का प्रायोगिक ज्ञान और दूसरा सैनिको से घनिष्ट मित्रता स्थापित करना।" ब्रह्मार्त पहुँचकर उसे पहली सूचना मिली कि विद्रोह का समय निकट आगया। ज्वाला प्रसाद, अजीमुल्ला, टीकासिंह, लालपूरी और भाऊ आदि मित्रों के साथ विद्रोह की तैय्यारी में तात्या व्यस्थ हो गया। वह जानता है कि किसी भी वक्त विद्रोह शुरू होगा। लेकिन ऐन मौके का इन्तजार में तमाम वीर समय बिताने लगे। यह ऐतिहासिक सत्य

---

1. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 83
2. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 90

है कि एक-एक प्राँत में विद्रोह की तैय्यारियाँ होनेलगी। परन्तु एक-दूसरे के बीच सही समझोता और आदान-प्रदान की कमी है।

1857 में सैनिक विद्रोह शुरू होगया था। उस का वर्णन प्रस्तुत अंश में है। [1]'' बैरकपुर छवनी में मंगलपांडे नामक सिपाही ने एक अंग्रेजी अफसर को गोली से उडा दिया। इस कत्ल के आरोष में उसे फाँसी चढादिया गया। उसके बलिदान ने अपना रंग दिखाया। जगह - जगह पर विद्रोह की ज्वालाएं भडक उटी। कानपुर में भी अंग्रेज अधिकारी सजग होगए। नाना साहब को अपनी सेना लेकर अंग्रेजों की मदद के लिए पहुँचने की प्रार्थना की गई। लेकिन नाना ने आज्ञा दी, अपनी मित्र मण्डली के साथ सेना सहित क्रांति में भाग लेना। लालपुरी, बाऊ आदि को साथ लेकर तात्या भी नाना के साथ कानपूर पहुँचा और धर्म भ्रष्ट करनेवालें गोरों को खत्मकरदिया। लेकिन ये सभी एक-एक करके शहीद होजाते हैं। एक दिन आग की तरह खबर फैलगई कि तांत्या पकडा गया। ......मुकदमें में 'जनरल मींड' ने प्रश्न किया कि क्या तुम राजद्रोही हो? मै भारतीय हूँ। मैं अपने को अंग्रेजों की प्रभुता नहीं मानता। मैं ने पेशवा की ओर से युद्ध किया-आजादी के लिए । इस प्रकार काफी बहस होती है। लगभग सम्पूर्ण वक्तव्य पूर्ण होचुका था। मींड ने पूरा फैसला पढकर सुनायाँ और निर्णय रहा-फाँसी।' .... तांत्या मुस्कुराया - चलो नाटक समाप्त हो गया। कल ही फाँसी दीजाएगी। वध स्थल पर अपार जन समूह था। तात्या शान्त और अविचल था। तुम्हारी अन्तिम इच्छा, मेरे परिवार को सताया ना जाय। और कुछ, बस धन्यवाद। मींड - मैं मौत को मौत नहीं समझता- हमारी 'गीता' में लिखा है कि आत्मा अमर है। मैं फिर आऊँगा। तात्या फाँसी के तक्त पर चढा। अन्तिम बार उसने जनता का अभिवादन, हाथ जोडकर की। उसके मुख पर अद्भुत शाँती व्याप्त थी, लोग रो रहे थे। वधिक के हाथ काँप रहे थे। तांत्या ने रस्सी को हँसते-हँसते गले में डालदिया। मींड ने इशारा किया।'' इस प्रकार वीर और करुण रस घटना के साथ तात्या शहीद हो जाता है। उपन्यासकार ने इसका वर्णन रोचक ढंग से किया।

1. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 180

1.12.2. काल्पनिकता :-

युग पुरुष 'तात्याटोपे' पर कई मसि जीवियों ने अपनी लेखनी चलाई है। भिन्न-भिन्न रंगों में उस के चरित्र को चित्रित किया है। सत्यशकुनजी ने भी काल्पनिकता के सहारे ऐतिहासिक उपन्यास को बहुत ही रोचक बनाया है। स्वयं लेखक ने कहा कि यह एक कल्पना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास है। लेकिन उन्हों ने यह स्वीकार किया कि जहाँ तक तात्या की जीवनी के ऐतिहासिक तथ्य उपल्बध हैं, उन सभी को उपन्यास में स्थान दिया गया है। परन्तु कहीं-कहीं काल्पनिकता का भी प्रयोग हुआ है। तात्या के मित्रों में चम्पा एक काल्पनिक चरित्र है जिसका सरस चित्रण हुआ है। [1]"भाऊ का घर आचुका था। विदा लेकर रामचन्द्र अपने घर की ओर चला। चारों तरफ अंधेरा फैला हुआ था। एक वृक्ष के निकट से वह गुजर रहा था। किसी ने उस का हाथ पकडकर रोक लिया। 'चम्पा! राम! ' आज निर्णय होजाना चाहिए। मेरा वही पुराना उत्तर होगा। तुम पुरुष हो या पत्थर? भाऊ तुम से प्रेम करता है। वह मेरा मित्र है, दूसरी बात मैं विवाहित हूँ। भाऊ जैसे पुरुष से कोई स्त्री प्यार कर सकती है? अगर तुम प्यार में से वासना निकाल दो, तो तुम्हें भाऊ, देवता नजर आएगा। वासना ही तो प्यार का आधार है। मैं इसे गलत मानता हूँ। मैं तुम्हें प्यार करती हूँ......तुम्हें किसी भी दशा में प्राप्त करना चाहती हूँ।"

चम्पा एक गवारू नारी है। वह पादरी की पुत्री शेरी के पास घर के कामकाज करती रहती है। उसके अंदर तात्या के प्रति बेहद प्यार है। लेकिन दुर्भाग्यत: एक दिन दो अंग्रेजी युवकों ने उसे बरबाद किया। [2]"आधी रात गए चम्पा को होश आया। अपनी ही बगल में उसने दो गोरों को शराब के नशे में बेसुध पाया, वह तडप कर रो उठीं। प्रतिहिंसा की आग से उसका तन-बदन जलरहा था। आँसू बहाते हुए वह इधर-उधर पागल सी घूमरही थी और उसे अपनी इच्छित वस्तु मिल ही गई। चाकू हाथ में लिए हुए वह मन्त्र मुग्ध सी उन अंग्रेजों के पास आई.....चाकू उटा......दोनों

---

1. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 12
2. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 36

की इहलीला समाप्त कर उसने घृणा से तडपते शरीरों पर थूक दिया।'' इस संदर्भ में उपन्यासकार ने चम्पा को वीर नारी के रूप में वर्णन किया। नाना, तात्या आदि मित्रों ने दिनभर भोजन किये बिना चम्पा के तलाश में इधर-उधर भठकते रहे। चम्पा को मानो धरती निगलगई। उपन्यास के अंत में 'अजीनन' नाम के रूप में फिर चम्पा प्रत्यक्ष होती है। उसने भी क्रांती में भागलिया। मर्दों के पोशा में उसने तात्या की सहायता की। जब तात्या को फाँसी की सजा हुई, तब उसका मन धधक उटता है। वह जनरल मींड को मारने के लिए संसिद्ध होती है। [1]''जनरल अपनी काटों पर आराम कर रहा था। रात का अंधेरा चारों ओर छाया हुआ था। मीडं की नींद नहीं आरही थी। उसके कक्षा का द्वार बजा। पहले तो उसने उसे अपना भ्रम समझा। किन्तु पुनः दर्वाजा धीरे से खटखटाया गया। वह उटा दरवाजा खोला। दरवाजा खुलते ही उसपर चाकू का प्रहार हुआ। अगर वह नींद में से उटा होता तो.....फिर भी उसका कंथा छिलगया था। कौन है ? छाया ने दूसरा प्रहार करना चाहा कि मींड उससे लिपटगया। किन्तु अगले पल ही छिटक कर दूर हो गया। छाया बाहर की भागी। मींड चिल्लाया। पकडो।........ एक सैनिक छाया के सामने आया। छाया ने अपना हाथ सामने करलिया। चाकू सैनिक के पेट में उतर गया। भागने न पाया। मींड चिल्लाया। पकडो, और एक सैनिक के पेट मे उतर गया। छाया द्वार की ओर भागी। द्वार पर खडे सैनिक ने गोली चलादी। गोली पैरों पर मारी गई थी। छाया ने अपने हाथ में पकडा चाकू अपनी छाती में उतार लिया।....... ठीक समय पर मीडं तात्या के कक्षा में गया। तात्या ने दृष्टि उठाकर देखा। जनरल आज तुम्हारी चाल में सुस्ती क्यों है ? तात्या मुस्कुराया। रात को एक पगली ने आक्रमण करके घायल करदिया। पगली। हाँ, कोई चम्पा थी। चाम्पा।'' इस प्रकार लेखक ने चम्पा नामक काल्पनिक चरित्र का वर्णन वीररस पूर्ण सिद्ध किया।

अन्य काल्पनिक चरितत्रों में 'जोजेफ' नामक फादरी और उसकी बेटी शेरी भी है। शेरी के पति हेनरी भी लेखक द्वारा कल्पित चरित्र है। ये तीन भारत के प्रति

---

1. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ - 82

आदर और गौरव भाव रखते हैं। [1]"एक सेवक ने आकर सूचित किया-हुजूर श्रीमन्त ने याद फरमाया है। नाना साहब सीधा श्रीमान के कक्षा में पहुँचा। अभिवादन के उपरान्त वे एक रिक्त पीठिका पर बैटगए। बेटे! तुम्हें इसलिए बुलाया है कि शैरी तुम से मिलना चाहती है। वह और उस के पति यहीं रहेंगे। दो दिन से वह तुमसे परिचय करने हेतु चक्कर काट रही है। मुझसे? हाँ। मगर क्यों? वह - तुम्हारे साथ भ्रमणार्थ जाना चाहती है। यह कार्य तो कोई सेवक या सेविका भी करसकती है। तुम्हारे और अनेक व्यवहार में आकाश-पाताल का अन्तर होगा। हम नहीं चाहते कि उसे कोई असुविधा हो। उसका पिता प्रभावशाली व्यक्ति है। नाना साहब ने अधिक तर्क करना उचित ना समझा। आओ-आओ-तुम्हे अपने पुत्र से मिला दूँ। नाना की दृष्टि उठी। शेरी की दृष्टि से टकराई। नख से शिख तक सौन्दर्य की प्रतिमर्ति...... गुलाब सी खिली मुस्कान नीली आँखे ......हाथ जोडकर उसने नानासाहब का अभिवादन किया। ओह! भारतीय सभ्यता से परिचित हो। जी हाँ। श्रीमन्त ने उनका परिचय करवाया। शाम से तुम नानासाहब के साथ घूमने जासकती हो। धन्यवाद । अब मै जा सकता हूँ। नानासाहब ने आज्ञा माँगी। कुछ ही क्षणोपरान्त शेरी भी चली गई। ...... शाम को नानासाहब तैयार होकर बाहर निकलते । उन्हों ने सेवक को, शेरी को बुलालाने को भेजा। साधारण वेश-भूषा में सज्जित शेरी कुछ समयोपरांत आगई। नानासाहब को देखकर वह मुस्कुराई। प्रत्यत्तर न मिलने पर वह कुछ झंप-सी गई। आप को शायद मेरा साथ पसन्द नही है? नानासाहब ने कोई उत्तर नही दिया। आप के लिए पालकी तैय्यार है। मगर मैं पैदल ही जाना पसन्द करूँगी। पैदल? मै यहाँ के लोगों को निकट से देखना चाहती हूँ। इस से क्या लाभ होगा? मेरे एक प्रश्न का उत्तर मिलजाएगा। कैसा प्रश्न? मेरा जन्म भारत मे ही हुआ है। यहीं मेरा लालन-पालन हुआ है। मुझे भी इस देश से उतना ही प्रेम है, जितना कि आप को। मै भारत और अंग्रेजी नामक एक पुस्तक लिखरही हूँ। मै जानना चाहती हूँ कि भारतीय अंग्रेजों में क्यों घृणा करते हैं? मानवीय संवेदनाओं का मूल्यांकन कौन नही कर

---

1. तात्याटोपे - सत्य शकुन - पृष्ठ -30

पारहा है ? भारतीय या अंग्रेज ? नानासाहब शेरी के विचारों से प्रभावित होए। अन्य गोरो की तरह शेरी में दर्प भावना नहीं थी। घूमते-घूमते वे अभ्यास-स्थली पर पहूँचे। नाना साहब ने क्रमशः रोरी का परिचय सभी मित्रों से करवाया। अभ्यासोपरांत नाना ने शेरी से प्रश्न किया- आप को हम सब से हथियार चलाने में कुशल कौन लगा ? रामचन्द्र उसने संक्षिप्त उत्तर दिया क्षण-भर के लिए रामचन्द की दृष्टि शेरी के मुख पर टिकी'' यह जरूर काल्पनिक घटना हो सकता है। क्यों कि किसी एक के श्रेष्ठ वीर या योद्ध कहना काफी मुश्किल है। एक सफल और युद्धकला-प्रवीण ही यह बता सकता है कि एक ही तरह युद्ध कला प्रदर्शन करनेवालों में श्रेष्ठ कौन है। इसी प्रकार फादरी जोजफ ने ही नाना और तात्या को सैनिक प्रशिक्षण केलिए कानपूर भेजने में शिफारिश करता है। इस चरित्र का सृजन लेखक ने इसलिए किया कि तमाम अंग्रेजी धूर्त और चालाक नही है। अंत में भी शेरी अंग्रेजी स्त्रीयों की टोली को साथ लेकर मींड से फाँसी रोकने की बेहस करती है। आखिर वह महराणी को भी तात्या के पक्ष क्षमाभिक्षा माँगने के लिए तैय्यार होती है। वह अंत में फाँसी पर लटकनेवाले तात्या की तुलना महाप्रभु ईसामसीह से करती है। इस प्रकार काल्पनिक चरित्रों का वर्णन भी लेखक ने रोचक ढंग से किया है।

1.12.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

तात्याटोपे नामक उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्यों का जिक्र कियागया है। लेकिन उपन्यास को रोचक बनाने के लिए हर एक लेखक को काल्पनिकता का शरण लेना ही पडता है। देश की आजादी के लिए जिस प्रकार उस से निस्वार्थ जीवन बिताया उसका सहज वर्णन लेखक ने किया। पिताजी के काम-काज में भागलेते हुये भी उसके मन में युद्ध कलाओं के प्रति रुचि दिन-ब-दिन अधिक होती रही। अंत में वह रुचि नाना साहब की सहायता से पूरी होती है। अंग्रेजों की कूटनीति और युद्धकलाओं में प्रशिक्षण लेने के लिए जब कानपूर जाते, तब से वह मन लगाकर प्रशिक्षित होता है। उसकी ख्वाइश है कि अंग्रेजों पर बन्दूक और तोप चलाये।

आखिर यह सच निकलता भी है। इतिहास में यह साफ-साफ लिखा है कि अंग्रेजों पर तोप चलानेवाला साधारण सिपाही तात्याटोपे ही है। उपन्यास में कथोपकयन को आकर्शिक बनाने के वास्ते लेखक को काल्पनिक चरित्रों का सृजन करना पडा। उन में से भाऊ, चम्पा, शेरी फादरी आदि मुख्य हैं। फिर भी इनके माध्यम से लेखक ने यह साबित किया कि अंग्रेजों के खिलाफ लडने के लिए एक-एक ने किस प्रकार योगदान दिया है, उसका सरस चित्रण करने में लेखक ने कामयाब हो गये। अनुपात की दृष्टि से काल्पनिकता कम और ऐतिहासिकता का ही प्रधान स्थान उपन्यास में है। जिस प्रकार अंग्रेजों के खिलाफ भारतीय सेना ने विजय हाजिल की और नेतृत्व की कमी से अंत में विफल हुई, उसका साफ वर्णन लेखक ने किया हँसते-हँसते फाँसी के तखते पर खडे होकर गले में रस्सी लगानेवाले तात्या के चित्रण में लेखक ने वीर रस की प्रधानता दिखाई। अंतिम दृश्य का वर्णन करने में लेखक सचमुच सफल होगया था। इस प्रकार यह सफल जीवनीपरक उपन्यास है।

1.9. निष्कर्ष :

जीवनी प्रधान साहित्य में उपन्यास का स्थान अनोखा है। हिन्दी साहित्य में मौलिक जीवनीपरक उपन्यासों की संख्या कम है। लेकिन अनुदित उपन्यास अनेक हैं। साहित्य क्षेत्र में 'जीवनी' एक विधा है। परन्तु जीवनीपरक या जीवनी पर आधारित उपन्यास लिखना विशिष्ट काम कहलाता है। उपन्यास विधा के माध्यम से सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक या ऐतिहासिक महापुरुष की जीवनी अपनी उद्देश्य की पूर्ति कर सकती है। वास्तव में जीवनी घटनाओं का अंकन नहीं वरन् चित्रण है। जीवनीपरक उपन्यास में काव्य के सभी गुण है। एक मनुष्य के अंतरिक और बाह्य स्वरूप का कलात्मक निरूपण है। जिस प्रकार चित्रकार अपने विषय का एक ऐसा पक्ष पहचानलेता है जो विभिन्न पक्षों में ओत-प्रोत रहता है और जिसमें नायक की सभी कलाएं और घटाएं समन्वित होजाती है, ठीक उसी प्रकार उपन्यासकार अपने नायक का वर्णन करता है। जीवनीपरक उपन्यास तो व्यक्ति-जीवन की ऐतिहासिक

घटनाओं का स्थूल साहित्यक उल्लेख नहीं है। यह उपन्यास नायक के जीवन का चित्रण करता है तो वह उसके चरित्र की विशेषताओं का भी उल्लेख करता है। नायक के व्यक्तित्व का रेखाचित्र पाठकों के सम्मुख रकना का प्रयत्न किया जाता है। इस व्यक्तित्व में उसके गुण, अवगुण, उसका चरित्र उसके आचार-व्यवहार उसका आंतरिक मन, उसकी संस्कृति तथा सांस्कृतिक उपार्जन इन सब की एक रसायन प्रस्तुती होती है। हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यासकारों ने यह साबित किया है। विश्लेषित उपन्यासों में हर नायक या नाइका का वर्णन इसी प्रकार कियागया है। जीवनीपरक उपन्यासों में नायक के समस्त व्यक्तित्व का चित्रण आवश्यक है। इसलिए व्यक्ति-गुणों के साथ दोषों का भी उल्लेख होना चाहिए। इस अध्याय में एक-एक व्यक्ति के व्यक्तित्व का सफल वर्णन किया गया है।

- अध्याय दो -

हिन्दी के साहित्यिक और सामाजिक जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण

हिन्दी साहित्यि में आज उपन्यास सर्वाधिक लोकप्रिय आधुनिक विधा के रूप में विख्यात है। आधुनिक युग में उपन्यास, मानव के सामाजिक अथवा वैयक्तिक दोनों प्रकार के जीवन का रोचक गद्य साहित्यिक प्रतिरूप है। हिन्दी के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों का विभाजन सुविधा के अनुसार दो भागों में किया गया है। पहले अध्याय में हिन्दी के ऐतिहासिक राज श राजों की और राजवंशजों से संबंधित महान व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित जीवनीपरक उपन्यासों का समुचित विश्लेषण किया गया है। राजवंशजों के अलावा अनेक अन्य ऐतिहासिक महान व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित जीवनीपरक उपन्यास भी हैं। ऐसे महान व्यक्तियों को सामाजिक और साहित्यिक दृष्टि से महान व्यक्ति कह सकते हैं। इस अध्याय में जितने भी ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास लियेगये हैं, वे सभी सामाजिक और साहित्यिक महान व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित हैं। उदाहरण के रूप में महाकवि तुलसीदास की जीवनी पर आधारित अमृतलालनागर द्‌वारा लिखित उपन्यास और डा. रांगेय राघव द्‌वारा लिखित रत्ना की बात आदि मुख्य व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित उपन्यास हैं। हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने भी सांस्कृतिक विरासत को अपनाकर मानवीय संदर्भों में उपन्यास की रचना करने का प्रयास किया है। सांस्कृतिक दृष्टि से वैज्ञानिकता, बौद्‌धिकता एवं तार्किकता के विस्तार के आलोक में मानव-इतिहास एवं जातीय मूल्य-महत्ता के पुनर्नवीकरण का प्रयास हुआ। सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यक दृष्टि से ऐतिहासिक उपन्यासों का लेखन स्वातंत्रोत्तर के बाद हुआ है। ऐसे उपन्यासकारों में डा. रांगेय राघव, अमृतलाल नागर, बृंदावनलाल वर्मा आदि मुख्य हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों में कल्पना-प्रधान उपन्यास भी हैं। कल्पना-प्रधान उपन्यासों में ऐतिहासिक तत्व के रूप में केवल वातावरण को अधिकाधिक जीवंत एवं प्रामाणिक बनाने के प्रतिबन्ध को सफलता से

स्वीकार कियागया है। ऐसे उपन्यासों में लेखक का प्रगतिवादी आशय भी सन्तुलति रूप में अभिव्यक्त कियेगये है। ऐसे उपन्यासों के पात्रों एवं घटनाओं के समन्वित विधान का बल मिलसकता है। ऐतिहासिक काल विभाजन के अनुसार सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यक महान व्यक्तियों की जीवनीयों पर उपन्यासों का विश्लेषण इस अध्याय में किया गया है। उदाहरण के रूप में पूर्व मध्य काल के महान व्यक्तियों की जीवनियों में कबीर, एक हैं। उनकी जीवनी पर आधारित उपन्यास 'लोई का ताना' का विश्लेषण पूर्व मध्यकाल के अंतर्गत किया गया है।

2.1. काल के आधार पर उपन्यासों का विभाजन :-

ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर इतिहास का विभाजन चार भागों में किया गया है। प्राचीनकाल, पूर्व मध्यकाल, उत्तर-मध्यकाल और आधुनिक काल। प्राचीनकाल के बारे में ऐतिहासिक सामग्री बहुत कम मिलती है। फिर भी राजवंशीय राजाओं की जानकारी के आधार पर साम्राट अशोक, आचार्य चाणक्य आदि उपन्यास लिखेगये थे, जिन के बारे में प्रथम और द्वितीय अध्यायों में विश्लेषण किया गया है। सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यक व्यक्तियों की जीवनी पर आधारित प्राचीनकाल से संबंधित उपन्यास एक भी नहीं रहा। अन्य भागों में कुल मिलाकर नौ जीवनीपरक उपन्यास हैं। इन उपन्यासों में महान व्यक्तियों की जीवनियों से संबंधित विषयों का विस्तृत वर्णन हैं।

1. *प्राचीन काल :-*

   कोई उपन्यास नहीं रहा।

2. *पूर्व मध्यकाल :-*

   1. लोई का ताना
   2. लखिमा की आँखे

3. धूनी का धुआँ

3. *उत्तर मध्यकाल :-*

4. तानसेन
5. खंजन नयन
6. रत्ना की बात
7. मेरी भव बाधा हरो
8. मानस का हँस

4. *आधुनिक काल :-*

9. भारती का सपूत

सामाजिक और साहित्यक व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित हिन्दी उपन्यास मुख्यत: नौ हैं। इसके अलावा और भी जीवनीपरक उपन्यास हैं। लेकिन वे सभी ऐतिहासिक घटनाओं से संबंधित काल्पनिक पात्रों पर केंद्रित हैं। ऐसे उपन्यास सिर्फ ऐतिहासिक काल्पनिक उपन्यास ही कहलाते हैं। ध्यान देने की बात यह है कि उपन्यास का सृजन जिस व्यक्ति की जीवन पर आधारित होकर कियागया है, उस व्यक्ति को ऐतिहासिक व्यक्ति होना अति आवश्यक है। ऐसी स्थिति में ही वह उपन्यास ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास कहलाने योग्य है। यदि इस प्रकार की कथावस्तु नही होती तो वह उपन्यास काल्पनिक उपन्यास की श्रेणी के अंतर्गत आता है। साहित्यक, सामाजिक और ऐतिहासिक व्यक्तियों की जीवनियों पर उपन्यास लिखनेवाले लेखकों में डा. रागेय राघव, अमृतलाल नागर आदि विख्यात हैं।

2.2. चरित्र, कथावस्तु, ऐतिहासिकता और काल्पनिकता के आधार पर उपन्यासों का विश्लेषण :-

साहित्यकार वास्तविक घटनाओं के आधार पर किसी महान व्यक्ति का जीवन चरित लिखता है, तो वह जीवनचरित साहित्य में जीवनी कहलाता है। इन्हीं

जीवनी के तत्वों के आधार पर जब कोई लेखक किसी श्रद्धेय व्यक्ति की जीवन-गाथा रोचक ढंग से कल्पना की सहायता व उपन्यास के तत्वों का समावेश करता है तो वह जीवनीपरक उपन्यास कहलाता है। ऐतिहासिक या जीवनीपरक उपन्यासों के अंतर्गत सर्वप्रथम विषयवस्तु, ऐतिहासिक तथ्य और काल्पनिक विषयों पर विचार और विश्लेषण करना उत्तम लक्षण है। यह जीवनी साहित्य का महत्वपूर्ण तत्व है। जीवनीप्रधान उपन्यासों में लेखक नायक का विश्लेषण करते हुए विषय वस्तु को आगे बढ़ाता है।

जीवनीपरक उपन्यास के नायक के चरित्र की वास्तविक घटनाओं का कलात्मक संश्लेषण, विवेचन एवं विश्लेषण आवश्यक होता है। हिन्दी के उपन्यासों में जीवन पर आधारित रचननाओं की विषय वस्तु भी ठीक इसी प्रकार का कलात्मक प्रस्तुतीकरण है। उपन्यासकारों ने इतना अवश्य ध्यान रखा है कि नायक ऐसे व्यक्ति हो जिनकी जीवनी पर आधारित उपन्यास द्वारा पाठक प्रेरणा अथवा विशिष्ट ज्ञान ग्रहण करसके। विषयवस्तु को प्रभोधात्मक बनाने के लिए उसमें कुछ गुणों का होना आवश्यक है। जीवनी प्रधान उपन्यासों की विषयवस्तु का सर्व प्रथम गुण वास्तविकता या सत्य एवं ऐतिहासिकता है। इन से ही रोचकता एवं प्रसादात्मकता का समावेश होता है। विशेष व्यक्ति के चरित्र में वैज्ञानिक्ता होना जीवनीप्रधान उपन्यासों में अनिवार्य है। इनके साथ विषयवस्तु में संक्षिप्तता एवं सुसंगठिता अत्यंत आवश्यक है। यहाँ पर उपन्यासकार जितना चाहे, उतना कल्पनाशील बन सकता है। जितना वह कल्पनाशील होगा, उतने ही अच्छे ढंग से वह सामग्री को एकत्रित कर सकता है। जीवनीकार को भूतकाल का अवश्य अध्ययन करना चाहिए। जिस के आधार पर वह कल्पना करके विषय वस्तु को आगे बढ़ाकर, उपन्यास को सफल बना सकता है। इस प्रकार उपन्यास में ऐतिहासिकता और काल्पनिकता दोनों अन्योन्याश्रित है।

जीवनी परक साहित्य के सर्जक को जीवन की ऊँचाइयों तक उठाना पड़ता है और गहराइयों तक डूबना भी पड़ता है। जीवन को समझना तभी संभव है जब

उसके साथ नजदीक-संचारण कियाजाय। लेखक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह ऐसा सांस्कृतिक, साहित्यक, वीर और पराक्रमी मानव प्रस्तुत कर सके जो मानव समाज के लिए शिक्षाप्रद, नवीन, अद्‌भुत, रूचिकर, आकर्षक, आदर्श तथा लाभकर हो। ये समस्त विषय युग चेतना के माध्यम से प्रस्तुत की जाती है। अत: साहित्य का केंद्र बिन्दु मानव जीवन है। प्रत्येक उपन्यास के संदर्भ में उसकी विषयवस्तु का निरीक्षण वा विश्लेषण अधिक प्रदान है। उपन्यासकारों ने महान व्यक्तियों की जीवनी को एक उपन्यास के रूप में डाला है, जो घटनाओं का मात्र अंकन नही करना चित्रण है। प्रत्येक उपन्यस के संदर्भ में विषयवस्तु का मूल्यांकन इतिहास, प्रामाणिकता, कल्पना, रोचकता और विशिष्टता आदि पर आधारित है। इस अध्याय में हिन्दी के साहित्यक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र के महान व्यक्तियों के जीवन पर आधारित जीवनीपरक उपन्यासों का विश्‌लेषण किया गया है।

2.3. लोई का ताना

2.3.1. ऐतिहासिकता :-

'लोई का ताना', डा. रंगेय राघव का एक सफल जीवन चरितात्मक उपन्यास है। लेखक ने कबीर को एक विशिष्ट पुरुष एंव लोकनायक के रूप में चित्रित कर उनके माध्यम से उस युग की समस्त परिस्थितियों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। युग की सीमाओं के बीच उनके संघर्ष को दिखते हुए मानवता के विकास का उन के साहित्यक - सांस्कृतिक अवदान का मौलिक मूल्यांकन भी लेखक ने किया है। आद्योपान्त इस उपन्यास का आधार है कबीर का साहस, अदम्य, उत्साह, निर्भीकता एवं सांस्कृतिक जनजागरण से भरा जीवन। किन्तु व्यक्ति पर दृष्टि रखते हुए भी लेखक का आग्रह तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक परिस्थितियों पर है। कबीर के समय का समाज अपने आन्तरिक विरोधों के कारण टूट रहा था। वर्ण-विभाजन के बीच की खाई इतनी गहरी होचुकी थी, कि उच्च वर्ण के लोग निम्नवर्ण के साथ पशुवत् व्यवहार करते थे। उच्च वर्ण की निरंकुशता के कारण अनेक निम्नवर्णीय हिन्दु मुसलमान होरहे थे। मुसलमानों ने ऐसे हिन्दुओं का आदर

किया। [1]''हरिद्वार के पण्डा को जब मालूम हुआ कि कमाल जुलाहा है तो वह कह उठा - अरे तुम जुलाहे हो। तुम्हारी बयणजीव की जातियाँ पंजाब से लेकर बंगाल तक धीरे-धीरे मुसलमान होगई है।' 'उस समय जुलाहे हिन्दू के अंग थे, इसलिए कमाल ने कहा - मैं जो जुलाहा हूँ, हिन्दु में नीच माना जाता हुँ। अगर मैं मुसलमान होजाता हूँ तो हिन्दु मुझे बात-बात में दबा नहीं सकते, लेकिन फिर भी आदमी-आदमी के बीच दरार बढ़ती चली जाती है। कबीर ने सामाजिक बिखराव को रोकने के लिए वर्णव्यवस्था निराधार माना''

तत्कालीन समाज में नारियों की सामाजिक स्थिति संतोषप्रद नहीं थी। 'नारी' शब्द माया का पर्याय था। कबीर की नारी जननी है। कबीर ने धर्म में व्याप्त समस्त भ्रान्तियों को दूर करने के लिए प्रशंसनीय प्रयास किया। [2]''उन्हों ने कमाल से अपनी धर्मों-विषयक मान्यताओं को व्यक्त करते हुए कहा - मैं इस देश के सब धर्म को एक करना चाहता था। इस्लाम की गोदी में अनेक नीच जातियाँ ब्राह्मणों की कट्टरता से चलीगई है। परन्तु मैं ब्राह्मण और इस्लाम दोनों को ही अमीरों और उच्चकुलों का धर्म मानता हूँ। हम गरीबों के तो यह दोनों धर्म नहीं है।'' यह प्रयत्न कबीर को अनेक संघर्षों का सामना करना पड़ा। [3]''कबीर ने जो राह दिखाई वह मानवता को कल्याण की ओर लेजानेवाली थी। वह भारतीय संस्कृति के नाम पर भेद भाव वाले ब्राह्मणवाद को नहीं मानते थे। वे इस्लाम का विरोध करके भी उससे घृणा नहीं करते थे, और उसे मुक्ति का पथ भी नहीं समझते थे।'' कबीर ने भारतीय संस्कृति का स्वर था। [4] ''उपन्यासकार ने कहा-कबीर ने तो भारत के सांस्कृतिक जन-जागरण की नींव डाली है। उस युग के बंधनों की छाप कबीर पर है।

---

1. लोई का ताना - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 2
2. लोई का ताना - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 214
3. लोई का ताना - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 5
4. लोई का ताना - डा. रांगेय राघव - भूमिका

इस उपन्यास के कथानक का आधार कबीर का अक्खड़ व्यक्तित्व है । कबीर, लोई और कमाल उपन्यास के प्रधान पात्र हैं। वास्तव में उपन्यास की सबसे महत्वपूर्ण सृष्टि कबीर का अद्‌भुत व्यक्तित्व ही है। विधवा अथवा कुमारी के गर्भ से उत्पनन्न यह अनाथ बालक नी:सन्तान नीरू और नीमा दंपति की गोद में पला। सात वर्ष की अवस्था में ही कबीर के पिता नीरू का देहान्त होगया, जिस के कारण इनके पालन-पोषण का भार माता-नीमा पर ही पड़ा। निम्न वर्ग के कबीर ने बचपन से अपनी जाति का शोषण तथा अपमान देखा था। ब्राह्मणों के रुढ़िवाद तथा कट्टरता एवं मुल्लाओं की स्वार्थ नीति को इन्हों ने अच्छी तरह से परखा था। कबीर की धार्मिक मान्यताओं के क्रमिक परिवर्तन को 'कमाल' ने व्यक्त किया। [1] "पिता पहले सगुण मानते थे। फिर वे रहस्य की ओर झुके। रहस्य ने शून्य पर पहुँचाया। शून्य ने साधु बनाया। साधु बनकर भीख मांगनी पड़ी तो घृणा होगई। पेट केलिए इज्जत ने पुकारा। इज्जत ने कहा-मेहनत कर। मेहनत ने इज्जत की ओर भेजा। ईमान ने उन्हे ठोस तार्किक बनादिया।" तत्पश्चात उन्हों ने अपनी विलक्षण प्रतिभा से धर्म की संकीर्णता की परिधि में जकड़े हिन्दु, मुसलमानों को फटकारा, जिस के कारण सभी उनके शत्रु होगये। उसे सुलतान लोदी ने रोका, मुल्लाओं ने रोका, महन्तों मठाधीशों और पंडितों ने रोका, उसे नाथ जोगियों ने घेरकर समाप्त करदेने की कोशिश की, लेकिन वह नहीं मिटा। मानवतावादी कबीर को जनता का पूर्ण समर्थन मिला। सिकिन्दरलोदी भी उस विद्रोही को नहीं दबा सका। क्यों कि वह जनता का प्रतिनिधि था।

कबीर पढ़े-लिखे न थे। कविता लिखते नहीं, वे तो फौरन सुनानेवालों में थे। लोग लिखा करें, उन्हें इससे बहस नहीं थी। किन्तु गहरा आघात लगा और अल्प समय में ही ये स्वर्गवासी होगए थे। कमाल ने अपने पिता के अद्‌भुत व्यक्तित्व को स्पष्ट करते हुए [2] "कबीर जैसे मनुष्य तब तक इसदेश में हुआ ही नही था, वह

---

1. लोई का ताना - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 117
2. लोई का ताना - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 151

कैसा नया मनुष्य था, अपराजित अनिंद्य, महान, निष्कलंक........'' कबीर के अतिरिक्त अन्य पुरुष-पात्रों में कमाल, सिकन्दर लोदी, उज्झकनाथ, हरनाथ, रामा देवीलाल, आदि मुख्य हैं। सिकिन्दरलोदी इतिहास सम्मत पात्र है। नारी पात्रों में लोई का स्थान सर्वोच्च है। लेखक की सहानुभूति कबीर की अपेक्षा लोई के साथ अधिक है। कहीं-कहीं तो उसका चरित्र कबीर के चरित्र की अपेक्षा अधिक सबल रेखाओं से खींचा गया है। पत्नी की सार्थकता पति-प्रेम में निहित है, जिसे प्राप्त करने का पूर्ण गौरव लोई को मिला था। जिस समय सिकन्दरलोदी ने कबीर को प्राण-दण्ड की आज्ञा दी, लोई ने कबीर के चरणों में ही अपना प्राण त्याग दिया। इस प्रकार लेखक ने अपनी प्रतिभा से महत्वपूर्ण ऐतिहासिक पात्र कबीर को युग-निर्माता लोक नायक एवं साहित्यकार के रूप में चित्रित करने में पूर्ण सफलता पाई है।

2.3.2. काल्पनिकता :-

लोई का ताना नामक उपनन्यास में लेखक ने कबीर को एक विशिष्ट पुरुष एवं लोकनायक के रूप में चित्रित किया है। इस में लेखक ने साहित्यक-सांस्कृतिक अवदान का मौलिक मूल्यांकन भी किया है। अन्त:साक्ष्य एवं जनश्रुतियों के आधार पर ही इस उपन्यास का कथानक निर्मित किया गया है। कथानक को प्रभावकारी बनाने के लिए कबीर के पदों को बहुलता से उद्धृत किया गया है। इस उपन्यास में लेखक ने अलौकिक आत्मविश्वास के साथ अपने मौलिक मतों को रखा है और नायक की साहित्यक स्थिति को सही रूप में प्रतिष्ठापित करने के लिए दूसरों का विरोध भी किया है। उन्हों ने लिखा है - [1]''कबीर को लोगों ने गलत समझा है। कबीर में सूफी मत, वेदान्त, हस्थवाद, नारी-निंदा तथा अनेक बातें हैं जैसे संसार की असारता पर जोर, मायावाद आदि का वर्णन पर यह अनेक विकास की मंजिले हैं। ....कबीर इतिहास में एक उलझन बनगया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ब्राह्मणवादी आलोचक थे। उन्होंने कबीर को नीरस निरगुनिया कह दिया। वे कहगये है कि

---

1. लोई का ताना - डा. रांगेय राघव - भूमिका

कबीर ने कोई राह नहीं दिखाई। ....यह सब ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण है, अत: त्याज्य है। अवैज्ञानिक है।'' व्यक्ति पर दृष्टि रखते हुए भी लेखक का आग्रह तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक परिस्थितियों पर है।

कबीर का जीवन जनजागरण से भरा है। कबीर के समय का समाज अपने आन्तरिक विरोधों के कारण टूट रहा था। वर्ण-विभाजन के बारे में यह उदाहरण शायद काल्पनिक हो सकता है। [1] ''कबीर ने काका देवीलाल से कहा : मैं देखता आया हूँ, आज दावत होरही थी। बाहर भंगी बैठे थे और वहाँ ठाकुर ऐसे जूठन फें कता था कि कुत्तों और भंगी के बच्चे साथ साथ झपटते थे।'' लेखक ने कबीर के द्वारा यह साबित किया कि उच्च वर्ण की निरंकुशता के कारण अनेक निम्नवर्गीय हिन्दु-मुसलमान हो गये थे। मुसलमानों ने ऐसे हिन्दुओं का आदर किया। इसीप्रकार हिन्दु-धर्म को अंग्रेजों के समय में भी गहरा आघात लगाया। समाज में नारी शब्द माया का पर्याय था। कबीर भी इतिहास के अनुसार नारी विरोध करते थे। लेखक ने काल्पनिकता के सहारे यह साबित किया कि कबीर नारी विरोधी नहीं था। एक संदर्भ में कबीर ने लोई से कहा , [2] ''वे जो नारी को विषय की ही वस्तु समझते हैं, उनके लिए क्यों ऐसा नहीं कहा जाया? अगर मैं ने सब नारियों के लिए ऐसा कहा होता, तो तुझ सी घरवाली के साथ घर रहता? कहीं अकेला भटकता नहीं।' कबीर की नारी विषयक मान्यता थी कि कौन कहता है स्त्री माया है, पाप है। वह जननी है, वह आधा सृष्टि है। वही पूर्ण है। पुरुष उसका अंश है स्वयं अनन्त भगवान् भी स्त्री हीन नहीं है। ....वह पुरुष की विकृत वासना ही है जो इसे देखकर केवल कामिनी देखता है। वह इसकी आत्मा के पूर्णत्व को नहीं देखता।''

लेखक ने इस जीवन चरितात्मक उपन्यास में धार्मिक एंव सांस्कृतिक परिस्थितियों का सम्यक् विवेचन किया है। इतनाही नहीं उसने धर्म के अस्तित्व-

---

1. लोई का ताना - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 2
2. लोई का ताना - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 86

विश्वासों एवं प्रचारकों की स्वार्थपरक नीतियों का खंडन भी किया। उपन्यास में राजनीतिक परिस्थिति का मात्र आभास होता है। लेखक ने राजनीति को सामाजिक कल्याण के रूप में स्वीकार किया है। उपन्यास के कथानक का आधार कबीर के रूप में स्वीकार किया है। उपन्यास के कथानक का आधार कबीर का व्यक्तित्व है। कबीर, लोई और कमाल के अतिरिक्त अन्य पात्र निरर्थक से ही है। यह भी काल्पनिक घटना हो सकती है कि सोलह वर्षोय कबीर की विलक्षण प्रतिभा से आकर्षित होकर पन्द्रह वर्षेय लोई इनसे प्रेम करने लगी जिसका परिणाम विवाह था। कमाल, और कबीर के अतिरिक्त अन्य पुरुषपात्र भरती के लगते हैं। सिकिन्दर लोदी इतिहास सम्मत पात्र है, जो इस उपन्यास में नृशंस और अविवेकी के रूप में चित्रित किया गया है। अंत में यह कहना उचित होगा कि लेखक ने कबीर को युग-निर्माता या लोक नायक का रूप दिया था। इस उपन्यास में लेखक ने उस समय की परिस्थितियों के साथ-साथ कबीर व तुलसी के संपर्क को दिखाया है। हिन्दी साहित्य में कबीरदास प्रथम भक्त कवि मानेजाते हैं। भक्तिकाल में ही आधुनिक हिन्दी का आरम्भ हुआ है। इसलिए कबीर को आधुनिक हिन्दी का प्रथम कवि मानना उचित है।

2.3.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

अनुपात की दृष्टि से हम यह कह सकते हैं कि इस जीवन चरितात्मक उपन्यास में चरित्र एवं देशकाल के सुन्दर एवं सजीव चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। लेखक ने अपनी प्रतिभा से महत्वपूर्ण ऐतिहासिक पात्र कबीर को युगनिर्माता लोक नायक एवं साहित्यकार के रूप में चित्रित करने में पूर्ण सफलता पाई है। कबीर और लोई की शादी के संबंध में यह सच है कि आज भी उत्तर भारत में जहाँ-तहाँ जुलाहे के धर्म-परिवर्तन की बात और वर्णांतर विवाह भी तर्क-सम्मत है। नारी पात्रों में लोई का स्थान सर्वोच्च हैं। उपन्यासकार की सहानुभूति कबीर की अपेक्षा लोई के साथ अधिक है। कहीं-कहीं उसका चरित्र कबीर के चरित्र की अपेक्षा अधिक

सबल रेखाओं से खीचागया है। उपन्यास की सबसे महत्वपूर्ण सृष्टि कबीर का अद्‌भुत व्यक्तित्व ही है। अंध-विश्वासों और स्वार्थपरक नीतियों से धर्मस्थान भ्रष्टाचार के अड्डे बनचुके थे। नारी शब्द माया का पर्याय और वासना की चीज बनगया था। कबीर ने सामाजिक विकार को रोकने के लिए वर्ण-व्यवस्था को निराधार माना। मध्ययुग की सीमाओं के बीच उनके संघर्ष के देखते हुए मानवता के विकास का उनके साहित्यक-सांस्कृतिक अवदान का मौलिक मूल्यांकन उपन्यासकार ने किया है। अनुपात की दृष्टि से अंत: साक्ष्य एवं जनश्रुतियों के आधार पर ही इस उपन्यास का कथानक निर्मित कियागया है। डा. रांगेय राघव ने इस साहित्यक, धार्मिक व सांस्कृतिक समाज सुधारक के जीवन का परिवेश भारत का मध्यकाल माना है। राष्ट्र के हित में कबीर प्रथम कवि हुए जिन्हों ने हिन्दु-मुस्लिम एकता का नारा लगाया। कबीर का पुनर्मूल्यांकन करने में डा. रांगेय राघव ने कल्पना की सहायता अवश्य ली है, जैसे कमाल का कबीर के द्वारा चलायेगये आंदोलन का विरोध, क्यों कि वह आंदोलन कबीर के अवसरवादी शिष्यों की राजनीति का शिकार होरहा था। तथा लोई के साथ कबीर का विवाह, उस समय की सामाजिक परिस्थितियों आदि का वर्णन कल्पना के ताने से ही बुना गया है। उपन्यासकार ने इस रचना में प्रगतिशील दृष्टि से कबीर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का पूनर्मूल्यांकन किया है। वैचारिक पक्ष पर अतिरिक्त होने के कारण इस से रोचकता का अभाव है। विषयवस्तु संक्षिप्त है परंतु वैचारिक स्तर पर सुसंगठित है। कबीरदास के जीवन से संबंधित तथ्य अनुपलब्ध है। प्रामाणिक तथ्यों का संकलन पाना तो असंभव ही है। कबीरदास एक प्राचीन कवि थे और उनका जीवन भी साधारण स्तर का था। लोकोक्तियों और दंत कथाओं में जो प्रचलित सामग्री लेखक को मिलगई, उसका प्रयोग कर उसने कबीर के व्यक्तिगत जीवन को उजागर करने का प्रयास किया है। कबीर की जीवनी वर्तमान काल तक हिन्दी साहित्य में अनुपलब्ध थी। डा. रांगेय राघव हिन्दी के प्रथम साहित्यकार है जिन्होंने कबीर के जीवन पर लेखनी उठाई। यही इसकृति की विशिष्टता है। इस में महात्मा कबीर की झाँकी है। इतिहास में कबीर के जीवन के सम्बन्धी तथ्य अधिक नहीं मिलते। कबीर के साहित्य के आधार पर लेखक जिन

निष्कर्षों पर पहुँचा, उन्ही को उसने जीवन का आधार बनाया। कबीर पहले निम्नजातीय हिन्दु बनकर रहना चाहते थे। पर आचार्य रामानन्द की दीक्षा के बाद वे जातपांत की ओर से संदिग्ध हो गये। वे पहले अवतारवाद मानते थे। फिर वे निर्गुण की ओर झुके। फिर योगियों को रहस्यवाद और षट्चक्र साधना आदि की ओर झुके। बाद में वें सहज साधना में चमत्कारवाद से आगे बढ़गये जिसका वर्णन यहाँ लेखक ने किया है। कबीर को लोगों ने गलत समझा है। कबीर में सुफीमत, वेदांत, रहस्यवाद, नारी निंदा तथा अनेक बातें हैं, जैसे संसार की असारता पर जोर, मायावाद आदि का वर्णन पर यहाँ अनेक विकास की मंजिलों है। कबीर निर्गुण के परे था। कबीर ने जो राह दिखाई वह मानवता के कल्याण की ओर लेजानेवाली थी। वह भारतीय संस्कृति के नाम पर ब्राह्मणवाद को नहीं मानते। वे इस्लाम का विरोध करके भी उससे घृणा नहीं करते। कबीर ने जनता का दलित जीवन देखा था। एक जुलाहे की भाँति, घर में पत्नी थी, पुत्र था। पर पत्नी और पुत्र के ही लिये दुबे रहकर दूसरों का गला काटना, वे माया कहते थे। कबीर ने दूसरों के बल पर खानेवाले साधुओं का घोर विरोध किया था। वे मेहनत का खाना चाहते थे। उसने हिन्दू, मुसलमानों दोनों को नितांत निम्नजाति के आदमी की आँख से देखा था। कबीर के अनुयाई भी दलित थे। उस समय कबीर पंथ हिन्दु धर्म का हिस्सा बनगया था। कबीर ने तो भारत के सांस्कृतिक जन जागरण की नींव डाली है। भाषा में उसने क्राँती की। बिलकुल जनसाधारण भाषा में कबीर ने प्रेम का संदेश दिया था। कबीर पढ़े-लिखे न थे। कविता लिखते नहीं। वे तो फौरन सुननेवाले थे। लोग लिखाकरते थे। लेखक ने कबीर के पुत्र कमाल के द्वारा कहानी कहलवाया। कबीर की पत्नी का नाम लोई था। कमाल के बारे में किंवदंती है कि कबीर के बाद जब उसने पिता के नाम पर पंथ चालू करने से इनकार करदिया तो कबीर के चेलों ने उसे ऐसा नाम देदिया। कबीर की मृत्यु के बाद गुरु की कविताओं को सुनाकर आपस में लड़नेवाले चेलों का वर्णन है। कबीर निस्संदेह अपने जमाने के क्रांतिकारी थे। इसे उपन्यासकार ने प्रस्तुत उपन्यास 'लोई का ताना' के माध्यम साबित करने का सफल प्रयत्न किया था। इसलिए प्रस्तुत उपन्यास को सफल जीवनीपरक उपन्यास मानसकते हैं।

2.4. लखिमा की आँखें :-

2.4.1. ऐतिहासिकता :-

प्रसिद्ध कवि विद्यापति के व्यक्तित्व पर आधारित डा. रंगेय राघव का अत्यन्त अनूठा जीवनचरितात्मक उपन्यास है। इस उपन्यास का सम्पूर्ण कथानक एक ब्राह्मण यात्री की स्मृतियों पर आधारित है। इस उपन्यास में लेखक ने बड़ी ही सूक्ष्मता-विशदता, किन्तु बहुत ही संयम के साथ विद्यापति और उनके परिवेश के समग्र चित्र अंकित किया है। इस उपन्यास का आकर्षक मण्डप ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर बनाया गया है, जिस में दिल्ली के सुलतान महमूद से लेकर सम्राट अकबर के समयतक की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का चित्र अंकित है। [1]''राजनीतिक स्थित अवगत कराने के लिए यह एक उदाहरण है कि हम सब साथ ही चले। उस परिवार के लोग सहजयानी थे, किन्तु मुसलमानों के आतंक के कारण बौद्ध सदा ही अपने को छिपाते हैं। ...... 'दिल्ली के सुलतान तो यहाँ से एक बार स्वयं निकल चुके है न?' 'हाँ प्रभु, वृद्ध ने कहा, किन्तु हमारा कोई अपराध नहीं है। हम तो गरीब लोग हैं। ब्राह्मणों से हमारा विरोध नहीं। हम तो अपने प्रजापालक ठाकुरों की ही शरण को सदा से अपना आश्रय स्थल समझते आ रहे हैं। हमारें राजपूतों ने सुलतान के कर वसूलने वालों को मारडालता था। जब खबर पहुँची तो सुलतान ने फौज भेजी। ठाकुर पकड़े गये। फिर भी सुलतान के लोगों ने हम गरीबों को खूब चूसा''

सामाजिक चित्रों पर वर्णन का हल्का रंग चढ़ागया है। समाज वर्ण-व्यवस्था के बन्धन में बंधकर छटपटा रहा था। उच्च वर्ण की नृशंसता की अग्नि में निम्न-वर्ण की जातियाँ तड़फड़ा रही थी। [2]''भीषण जंगल में एक वृद्ध ने ब्राह्मण से कहा- चमारों के पास कुआँ नहीं है, क्योंकि उन्हें अधिकार नहीं, वे उसी हौज में से पानी ले जाते हैं, जिस में से बैलों को पानी पिलाया जाता है, लेकिन कोरियों ने अपना

1. लखिमा की आँखें - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 10
2. लखिमा की आँखें - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 11

कुआं बनालिया है और उसके बनाते समय छः कोरी जान से मान गये थे। .... आज उसी कुएँ में किसी ठाकुर ने विषडाल दिया था। क्यों कि वह उन्हें गाँव से भागना चाहता था।' सामाजिक और राजनैतिक स्थिति के बारें में एक वृद्ध ने इस प्रकार कहा- .... 'हम तो गरीब लोग है। ब्राह्मणों से हमारा विरोध नहीं। हम तो अपने प्रजापालक ठाकुरों की ही शरण को सदा से अपना आश्रय स्थल समझते आरहे हैं। हमारे राजपूतों ने सुलतान के कर वसूलनेवालों को मारडाला था। जब खबर पहूँची तो सुलतान ने फौज भेजी। हमारे कुछ कोरी जो बौद्ध थे वे सुलतान की फौज में पहूँच गए और ठाकुरों के नाम बता आए। ठाकुर पकड़ेगये। फिर भी सुलतान के लोगों ने हम गरीबों को खूब चूसा। वे चले गये तो बचे हुए ठाकुरों ने हम से बदला लिया।''

प्रस्तुत उपन्यास का नायक विद्यपति तत्कालीन सामाजिक स्थिति के बारे में विश्लेषण करता है। तत्कालीन समाज बाल-विवाह के कुचक्र फँसकर जर्जर हो रहा था। सामाजिक मर्यादा की वेदी पर लड़के-लड़कियों के भविष्य का बलिदान किया जा रहा था। विसपी ग्राम के निवासी जगन्नाथ मिश्र की तेरह वर्षीय कन्या का विवाह पाँच वर्षीय बालक से तय हुआ, इस समाचार के श्रवण मात्र से ही कवि विद्यापति को गहरी मानसिक वेदना हुई उन्होंने विवाह में गतिरोध उत्पन्न करने के लिए एक कविता लिखकर मिश्र के घर के सामने ही लड़कों से उच्चरित करायी - [1]''हे सखी, मै पिया को गोदी में लेकर बाजार जाती हूँ तो हाट के लोग पूछते हैं कि यह तेरा कौन है? मै कहती हूँ कि न मेरा देवर है, न छोटा भाई, पूर्व जन्म के पापों का फल मेरा बालम है। लोग गोदी में चढ़े मेरे पति को देख के पूछते हैं कि 'बच्चे!, तू क्या, स्त्री का भाई है, जो मायके से समाचार लेने आया है? किसी का पिता धनी होता है, उसके पास अनेक गायें होती है, वह तो दूध पिला के जमाई, को झट से पुष्ट करलेता है, परन्तु सखी! मेरे पिता तो निर्धन है, न उसके पास टका है, न दूध

---

1. लखिमा की आँखें- डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 53

देनेवाली गायें है। ....कविता गाने की देर थीं कि सब हँसने लगे। वह विवाह रुक गया।''

सामाजिक परिवेश में लेखक ने सबसे अधिक सजग चित्रण नारियों का किया है, जो अत्यन्त मनोवैज्ञानिक है। नारी स्वभावत: समस्त ऐश्वर्य की अपेक्षा मांसल-सुख एवं व्यक्तिगत स्वतन्तत्रता को अधिक महत्व देती है।, राजा शिव सिंह की उदासीनता को देखकर रानी लखिमा कराह कर कहने लगी : [1]'' मैं केवल देह ही तो नहीं हूँ । आत्मा भी तो हूँ। मेरी भी तो कुछ लालसाएँ हैं। इस वैभव में न होकर एक दरिद्र की स्त्री होती तो कम से कम मैं स्वतन्तत्र तो होती। यहाँ चारों ओर मेरी आत्मा घुटती है। किसी से बात तक नही कर सकती। आज भी अत्यन्त संपन्न परिवार में उत्पन्न अनेक नारियाँ मांसल-सुख एंव व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के लिए किसी स्वस्थ पुरुष के साथ अपने देह का सम्बन्ध जोडती है।''

डा. रांगेय राघव ने इस जीवन चरितात्मक उपन्यास में राजनीतिक पहलुओं को अधिक सबल रेखाओं में अंकित किया हैं। मध्यकालीन राजनीतिक दुर्दशा को व्यक्त करने का मोह लेखक के रग-रग में समाया हुआ है। इस मोह से आभूषित होकर उसने इस उपन्यास में तुर्कों एवं मुगलों के अमानवीय कृत्यों को व्यक्त किया है। इनका भीषण आक्रमण जनजीवन से लेकर यात्रियों तक, गाँवों से लेकर नगरों तक रहा। लेखक को इस लघु उपन्यास में पूर्ण सफलता मिली है। यह उपन्यास जीवन चरितात्मक है। आद्यान्त विद्यापति के जीवन संबंधी घटनाओं को आकलित किया गया है, जिस के कारण इनका चरित्र अधिक प्रखर होगया है। लखिमा के चरित्र में अत्यन्त उतार-चढ़ाव परिलक्षित होता है। लेखक ने अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढंग से रानी के चरित्र को उकेरा है।

---

1. लखिमा की आँखें- डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 100

2.4.2. काल्पनिकता :-

'लखिमा की आँखें' महाकवि विद्यापति के जीवन पर आधारित विलक्षण उपन्यास है। यात्र के पथ पर अग्रसर होने वाले एक ब्राह्मण की स्मृतियों के माध्यम से लेखक ने जीवन की घटनाओं का विश्लेषण किया है। विद्यापति के जीवन संबंधी घटनाओं को आकलित करके उपन्यास का आधार बनाया गया है। इसलिए विद्यापति के जीवन की घटनाओं का क्रमिक वर्णन नहीं हो पाया है। इस के जीवन में माता, पिता, गुरु, पत्नी शिवसिंह, विदूषक आदि कितने ही व्यक्ति चाहे स्थाई रूप से, चाहे थोडी देर केलिए, आते हैं, वे उसी सीमातक अपने निजी व्यक्तित्व की भी बड़ी सुनिश्चित और सुस्पष्ट छाप हमारे मन पर छोड़ जाते हैं। सामाजिक परिवेश में लेखक ने सब से अधिक सजग चित्रण नारियों का किया है। राजनैतिक विप्लव के अन्तराल में तत्कालीन संस्कुति की एक हल्की रेखा खींच पाई है। राजनैतिक थपेड़ों के कारण धर्म राजनीति का खिलौना बनगया था। ब्राह्मण, शक्त, बौद्ध, वैष्णव आदि दलगत स्वार्थों की जंजीरों में बंधकर पंगु हो गये थे। बहुत से लोग सामाजिक प्रतिष्ठा के कारण हिन्दू मुसलमान हो रहे थे, अंग्रेजों के समय में इसाई भी हुए। लेकिन उपन्यासकार ने एक काल्पनिक चरित्र के माध्यम से सर्वधर्म समानता का अभिवर्णन किया [1]''महाप्रभु गौरंग के शिष्यों में मुसलमान भी थे और भक्ति के क्षेत्र में हिन्दु-मूसलमान का प्रश्न ही नहीं था। ईश्वर सब के लिए एक था।'' हिन्दु हो या मूसलमान सब के लिए परमात्मा एक था। सब मनुष्य तो एक-सा थे। किन्तु 'हरिबोल' दरिद्रों का सहायक या नीच जातियों का उद्धारक था ब्राह्मणों की अहम्मन्यता को प्रेम का पाठ था। यह तो इस्लाम की आड़ में पलनेवाली अरबी और इरानी संस्कृती को भारतीय संस्कृती की मानवीयता की चुनौती थीं। मानों भारत की आत्मा अपने ऊपर से विदेशी जुए को उठाकर फेंकदेना चाहती थी। और मैं ने गाँव-गाँव में उस विद्रोह स्वर को फैलते देखा ।

---

1. लखिमा की आँखें- डा. रांगेय राघव - पृष्ठ -26

हिन्दु और मुसलमानों के बीच वैषम्य वैषम्य दिन-ब-दिन बढ़रहे थे। बहुत-से लोग सामाजिक प्रतिष्ठा के कारण हिन्दु से मुसलमान हो रहे थे, जैसे अंग्रेजों के समय में इसाई हुए हैं। यात्री ब्राह्मण को घायल देखते ही एक साधू ने पूछा - [1]"किस ने मारा? डाकुओं ने ! नहीं तुर्कोंने! तुर्कों ने। साधू शंख फूँकता है। फिर जोर की आवाज आने लगती है, कई घोड़े दौड़ रहे हो। मेरे देखते ही, न हो तो कम से कम पाँच हजार नागांबाओं के घोड़ों पर चढी सेना आपहुँची। उन के हाथ में त्रिशूल है। और शरीरों पर भस्म लगी है। वे नंगे बदन हैं, नितांग नंगें। दाढियाँ, सिर पर जटाएँ। और साधू भी दृढांग। ....वे नागा थे, ... तुर्कों का भीषण आक्रमण जनजीवन से लेकर यात्रियों तक, गाँवों से लेकर नगर तक रहा। एकदिन तुर्कों का एक समूह जंगल जाते हुए उड़िया परिवार पर आक्रमण करके सभी को मारडाला एवं एक युवती को पकड़ लिया। युवती की वीरता देखकर सरदार ने उसे दण्ड देने की आज्ञा दी। ....एक तुर्क ने आगे बढ़कर स्त्री के वक्ष का वस्त्र फाडडाला और एक भयानक चीत्कार गूँजउठा। उसने स्त्री के दोनों स्तन को काट दिया। रक्त के पनाले बह निकले। स्त्री मूर्छित होकर गिर पड़ी। एक अट्टहास प्रतिध्वनित हुआ।" यह तो काल्पनिक घटना है।

तुर्कों के पश्चात मुगलों के समय में भी राजनीतिक बाद तक बनी रही। इस राजनीतिक ऊहापोह में जनता ने घुटकर जीवन यापन किया। गृहस्वामी ने ब्राह्मण यात्रों को रोकते हुए कहा : [2]"भारत भूमि तो लुटेरों की हड्डी हो गयी। हुमायूँ का बेटा अकबर बड़ा प्रतापी है। जगह-जगह विप्लव हो रहे है। कौन जाने क्या होगा? इधर सूरी भी बदला लेने की चिन्ता में है। ऐसे में आप कहाँ जायेंगे? काजियों के बहकावें में आकर जगह-जगह धर्मान्ध मुसलमानों के दल-के-दल लूटते फिर रहें है।" उपन्यास में अकबर और सूरी जैसे ऐतिहासिक चरित्र होने पर भी घटनाएँ काल्पनिक है।

---

1. लखिमा की आँखें- डा. रांगेय राघव - पृष्ठ -177
2. लखिमा की आँखें- डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 81

2.4.3. अनुपात :-

डा. रांगेय राघव को इस उपन्यास में लगभग दो सौ वर्षों की राजनैतिक अव्यवस्था को व्यक्त करने में पूर्ण सफलता मिली है। इस उपन्यास के लिए 'गागर में सागर' की कहावत पूर्ण चरितार्थ होती है। इस उपन्यास में विद्यापति के जीवन संबंधी घटनाओं को आकलित किया गया है। जिस के कारण इन का चरित्र अधिक प्रखर हो गया है। यह विषय काल्पनिक हो सकता है कि विद्यापति का सम्बन्ध मिथिला के शासकों से अधिक रहा था। अपनी दीर्घायु के कारण इनका सम्बन्ध राजा गणेश्वर से लेखर रूद्र नारायण सिंह तक था। किन्तु ये राजा कीर्तिसिंह और शिवसिंह के अधिक निकट थे। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि राजाओं के नाम और उनके संबंध वर्णित घटनायें काल्पनिक है। फिर भी ऐतिहासिक दृष्टिकोण में राजाश्रित कवि होने के कारण विद्यापति के जीवन से इन घटनाओं को जोडागया था। विद्यापति राजा के साथ दरबार में और युद्ध क्षेत्र में भी रहते थे। नारी पात्रों में लखिमा, कवि पत्नी अनूभा, दुल्लाहि का विशेष महत्व है। अन्य पात्र ऐतिहासिक होने पर भी काल्पनिक है। इन सभी नारी पात्रों मे कवि की सहानुभूति केवल रानी लखिमा के साथ हो पायी है। अनुपात की दृष्टि से समूचा उपन्यास में ऐतिहासिकता स्पष्ट है। लखिमा की आँखे रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि विद्यापति के जीवन पर आधारित उपन्यास है। इस तथ्य के लिए अनेक आधार हैं। विद्यापति मूलत: संयोग श्रृंगार के कवि है। उपन्यासकार ने विद्यापति की रचनाओं व इतिहास तथा लोक प्रचलित तथ्यों की सहायता से विद्यापति के चरित्र को चित्रित किया है। राजा शिवसिंह विद्यपति के आश्रयदात और मित्र भी थे। लखिमा राजा शिवसिंह की पत्नी थी। रानी होने के साथ-साथ वह कवयित्री, सुंदरी भी थी। उसकी आँखें बहुत सुन्दर थी, इन्हीं आँखों के प्रति आकर्षित विद्यापति राधा की अनेक भंगिमाओं को अपने काव्य में अभिव्यक्त करते रहे। उपन्यासकार ने शीर्षक को प्रतीकात्मक बनाते हुए उपन्यास का नामकरण 'लखिमा की आँखें' रखा। विद्याति का जन्म काल अत्यंत विवादास्पद है। इनके जीवनवृत्त के संबंध में अनेक किंवदंतिया मिथिला में

प्रचलित हैं। विद्यापति के काव्य एवं जनश्रुतियों के आधार पर उपन्यास की रचना हुई है। उपन्यास की कथावस्तु अत्यंत संक्षिप्त है। लेखक ने रीतिकालीन परिस्थितियों को अपने उपन्यास का परिवेश बनाया है। यह क्या इतिहास सम्मत है पर वह कोई ऐतिहासिक प्रमाण प्रस्तुत नहीं करती।

संयोग - श्रृंगार के अत्यंत मधुर गीतों में विद्यापति ने लखिमा को साक्षी के रूप में प्रस्तुत किया है। यह संभव है कि इस उपन्यास की सम्पूर्ण कहानी ही कपोल कल्पित है यह भी संभव है कि इस कहानी में कुछ सत्य भी हो। विद्यापति के पदावली के सभी गीत लखिमा और उनके पति शिवसिंह को समर्पित है। इसमें इतिहास के साथ-साथ कल्पना का भी अपना स्थान है। विद्यापति के पद तथा राजा शिवसिंह का वैभवपूर्ण युग उपन्यास में रोचकता के क्षण छोड़ जाते हैं। मूलत: यह उपन्यास प्रचलित किंवदंतियों व जनुतियों पर आधारित है अत: इसमें रोचकता का समावेश स्वाभाविक है। हिन्दी साहित्य में अब तक विद्यापति का जीवनचरित्र नहीं लिखागया। यह उपन्यास एक रोचक जीवनचरित्र होने के साथ-साथ विद्यापति के जीवन पर लिखा प्रथम जीवनी प्रधान उपन्यास है। कथावस्तु संक्षिप्त है पर सुसंगठित कथावस्तु को प्रभावोत्पादक बनाती है।

2.5. धूनी का धुआँ :-

2.5.1. ऐतिहासिकता :-

'धूनी का धुआँ' महान योगी गोरखनाथ के व्यक्तित्व पर आधारित डा. रांगेय रागव जी का एक अनुपम जीवन चरितात्मक रचना है । कथानक की दृष्टि से इस उपन्यास की महत्ता इसबात में निहित है कि लेखक ने नायक के रूप में ऐसे व्यक्ति को चुना है जिस के जीवन में प्रारम्भ से ही महत्वपूर्ण घटनाओं की कमी नहीं रही। लेखक ने उस काल की अन्य विचारधाराओं - वैष्णव, शैव, बौद्ध, जैन, इसलाम की तुलना की है। गोरखनाथ जब जन्मे थे, भारत में घोर योनि पूजा प्रचलित थी, तभी वे इतने स्त्री विरोधी लगते हैं। वस्तुत: वे स्त्री विरोधी नहीं थे। वे स्त्री के महत्व को

फिर से स्थापित करना चाहते थे, क्यों कि स्त्री को तब बौद्ध और तांत्रिकों ने साधना के लिए केवल योनिधारिणी के रूप में लिया था। वैसे योगी और साधक के लिए तो स्त्री का निषेध, गोरख का विशेष स्वर था। उपन्यास में पहले गोरख का नाम अनंगवज्र था। गोरखनाथ पहले वज्रयानी थे। बाद में वे नाय-मत में आये। पहले वे सिद्धामृत कौल-सम्प्रदाय में मत्सेन्द्र द्वारा दीक्षित हुए और अंत तक उसी का उन्हों ने निर्वाह किया। मत्सेंद्र जालंधरनाथ के गुरुभाई थे। नर-बलि काला मुख देते थे। बाद में कापालिक मत पर यह नर-बलि आ पड़ी। परन्तु जालंदर और कण्हपा जैसे बौद्ध तांत्रिक वज्रयानी प्रभाव में थे। मत्सेंद्र पर भी बौद्ध प्रभाव था। बाद में मत्सेंद्र योगिनी कौल-संप्रदाय की वाममार्गी साधना में चले गये, जिस में से गोरख उन्हें उबारकर पुराने रास्ते पर लाये। गोरख को बौद्ध लोग घृणा की दृष्टि से देखते हैं। गोरख के साथ वज्रयान का सम्बन्ध रह चुका था, गोरख से पहले यहाँ वज्रयानी, पाशुपत, सौर, गाणपत्य, दत्तात्रेय मत तथा कौल आदि अनेक मत थे जिन पर लेखक डा. रांगेय राघव जी ने कथा में ही प्रकाश डाला है।

पच्चीस वर्ष का श्याम रंगवाले युवक अनंगवज्र ने गुरु के अन्वेषण में निकलपडा। नेपाल की पथरीली भूमी में योगी अनंगवज्र को गुरु मिलगया था। गुरु का नाम था मत्स्येन्द्रनाथ। वे जाति के ब्राह्मण थे। उन का नाम था विष्णुशर्मा। उन्हों ने समय-समय पर अनेक सिद्धि दिखाई थी। उनका नाम मत्स्येंद्रनाथ के रूप में दूर-दूर तक फैलगया। मत्स्येंद्रनाथ ने कामरूप के चंद्रद्वीप में पहली सिद्धि प्राप्त की थी और वे नेपाल में अत्यन्त ही सम्मानित थे। जब अनंगवज्र को उन्हों ने देखा कि शिष्य होने के योग्य यह तरुण अवश्य ही नाथ-मार्ग को प्रशस्त करेगा। गुरू ने उसका नाम गोरखनाथ रखा था। गुरु और शिष्य गोरख की पहली मुलाकात ऐतिहासिक घटना है। [1]''जिस समय अनंगवज्र व्याकुल - सा पहुँचाया, गुरुदेव समाधि में बैठे थे। गुरु ने पूछा - वत्स। व्याकुल हो? अनंगवज्र ने कहा पथ नहीं सूझता। कारण।

1. धूनी का धुआँ - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 33

वासना , काम। तो सिद्धामृत पथ में आ, वत्स। पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन कर। शक्ति इस मार्ग में प्रतिद्वन्दिनी। उस का संग पूर्णरूप से वर्जित करना होगा। पालन करूँगा, गुरुदेव। यह तंत्र, मंत्र। नही वत्स। तो क्या लोक कल्याण इसी में है? हाँ वत्स, इसी में पिण्ड का कल्याण है। किन्तु गुरुदेव। चारों ओर अंधकार। प्रजा अंधविश्वासों में डूबरही है। वत्सा! साधना कर। धैर्य रखकर सफलता प्राप्तकर। सब को पवित्र करना होगा। और इस के उपरान्त साधना का प्रारम्भ हो गया।'' गोरख़ अपने दोनों शिष्य लंग और महालंग के साथ आर्य मत्स्येंद्र को प्रारम्भ किया और उस गुफा से बिदा लेली। वे देश भ्रमण करते हुए अंधविश्वासों का खंडन करने लगे। गोरखनाथ लोगों को संदेश देने लगे। [1] ''लंग और महालंग ध्यान से सुनते रहे। गुरुदेव का एक-एक शब्द वे रटते थे। गुरुदेव ने फिर कहा - चित्त से भव-निर्माण होता है। भव तो शक्ति का ही रूप है। यह संसार भ्रांति तो है। परन्तु संसार अपने आप से अंत नहीं है। साधना से मानव शिवत्व ग्रहण करता है। शिव और शक्ति का मिलन देह के भीतर ही है। धूनी जलरही थी और महायोगी गोरखनाथ शिष्यों को समझरहा था।''

तिब्बत में मत्स्येन्द्र पूज्य है, गोरख नहीं, बौद्ध चिन्तन से गोरख का विरोध होने के कारण एक संदर्भ में गोरख ने बौद्ध साधनों की कड़ी निंदा की। [2] ''गोरख ने कहा बौद्धों में बच्चे दानदिये जाते। बहुत-से साधु बच्चे चुरा ले जाते हैं ताकि उनके सम्प्रदाय बने रहें, परन्तु जोगी अकेला रहता है साधना में। वहाँ तो दो के होते ही समाधि हुई, तीसरे के आते ही खटपट, और चौथे के आते ही होता है विवाद। परन्तु मुझे योगी-सम्पद्राय चाहिए। लोक कल्पयाण के लिए वे सब कुछ-छोड़कर आयें। ....लोग हँस पड़े। किन्तु गोरख ने फिर से कहा-जो अफीम खाकर पति से प्रेम नहीं रखती वह स्त्री नहीं। ऐसे ही, वैद्य है तो वह रोगी नहीं। रसायनी जो सोना

---

1. धूनी का धुआँ - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 40
2. धूनी का धुआँ - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 51

बनाता है वह भिक्षा नहीं माँगता, और शूर कभी पीठ पर घाव नहीं खाता। सब मनुष्य ज्ञानी नहीं हो सकते, योगी हो सकता है। योगी ही लोक कल्याण कर सकता है, क्यों कि वह स्वार्थ के परे होता है। वह तो सब को मार्ग दिखाता है।'' इस प्रकार योगी और साधु में अंतर के बारे में और योगी की योग्यता के बारे में गोरख ने साफ-साफ बतादिया। गोरख की दृष्टि में हमें अपने हृदयों को पसीजना है। पत्थर के पूजते हुए हम पत्थर बनजाते हैं। फूल-पत्ते तोड़कर पत्थर की पूजा करने से लाभ नहीं है । तीर्थ-तीर्थ में स्नान करने से, बाहर धोने से आत्मा निर्मल नहीं हो सकता। वेदों, शास्त्रों, किताबी धर्मों की पुस्तकों और कुरान में जहाँ का वर्णन नहीं है, योगी वहाँ पहुचता है। यह सब सीमित ग्रन्थ है। इसलिए ब्रह्मचर्य के माध्य में योग सिद्धि से वह ज्ञानी बनना चाहता है।

गोरख के गुरु मत्स्येंद्र, जालंधर नाथ के गुरु भाई थे। जालंधर के शिष्यों में कण्हपा मुख्य है। वे दोनों नर-बलि और तांत्रिक वज्रयानी के प्रभाव में थे। देशभ्रमण करते हुए अपने शिष्यों के साथ गोरख देशवासियों को योग सिद्धी के बारे में समझाते हुये जीवन बिताने लगा। एकदिन गोरख की मुलाकात कण्हपा से हुई। दोनों के बीच सिद्धांतों पर चर्चा होती है। [1]''कण्हपा कहता है, योगी गोरख स्त्री, महामुद्रा। गोरख कहता है, नहीं सिद्ध। स्त्री से सम्भोग वासना है। पवन है। भोग से मोक्ष मिलता है। तुम आध्यात्मिक विषय का स्थूल अर्थ कर रहे हो। वह दमन और घुटन का पथ है, योगी। सिद्ध! वह सहज है!, प्रमाण कौन है? तुम? मै बालक अनुभिज्ञ हूँ। प्रमाण है, परमगुरु मत्स्येंन्द्र। कण्हपा हँसता है....... विदूप का हास्य...... भीड़ चौंकती है .... 'हँसते हैं, सिद्ध। कारण? कण्हपा कहता है, योगी तुम्हारा गुरु स्त्री-देश में योगिनी कौन धर्म आगया है और उसने वामाशक्ति को स्वीकार किया है। स्त्री देश की रानी से उसने विवाह किया है और सुन्दरियों के बीच यह भोग और योग साधरहा है। गोरख को लगता है आँखे के नीचे अंधेरा छागया है।'' गोरख के समय

---

1. धूनी का धूआँ - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 108

में भारत में एक स्त्री-देश या जहाँ मातृ सत्तात्मक समाज का प्रभाव अधिक था। पहले मत्स्येंद्र पर बौद्ध प्रभाव था। मगर बादमें योगिनी-वाममार्गीय साधना में चले गये। बहुत कोशिश करके गोरख उस मार्ग में से अपने गुरु मत्स्येंद्र को उबार कर पुराने रास्ते पर लाते हैं। अंत में अपने गुरु के साथ स्त्री-देश से गोरख वापस बाहर आजाता है। इस प्रकार गोरख के चरित्र चित्रण में लेखक कामयाब हो गया है। जो महान काम गोरख ने किया उसका परिचय इतिहास में ही स्पष्ट नहीं है। फिर भी इसे सफल जीवनीचरितात्मक उपन्यास बनाने का प्रयत्न कियागया है। जो सामाग्री लेखक ने प्राप्तकिया उसे आधार बनाकर एक रोचक जीवनीपरक उपन्यास लिखा है।

2.5.2. काल्पनिकता :-

धूनी का धुआँ नामक जीवनचरितात्मक उपन्यास में धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थिति को रेखांकित कियागया है। और उनकी वैज्ञानिक व्याख्या भी प्रस्तुत की गयी है। उस काल में योगतंत्र, वज्रयान, कालचक्र यान, शैव मत के विभिन्न भेद, कापालिक आदि अनेक धार्मिक संप्रदाय प्रचलित थे। बौद्ध मत अपने हीनयान, महायान, मंत्रयान जैसे स्वरूपों को बदलता, अनन्त में यहाँ आकर शक्ति प्रभाव में पूर्ण तथा डूब गया था। बौद्ध मठ व्यभिचार, जादू टोने और जड़ता के अड्डे बनचुके थे। बौद्ध धर्म के अतिरिक्त अन्य धार्मिक संप्रदायों के अनुयाई भी योनि पूजा में ही रत थे। एक काल्पनिक घटना के माध्यम से लेखक ने यह बात साफ-साफ बतादी। [1] ''जोगी कोरंटक ने कहा-'मार्ग यही है। दीक्षा लेगा? परन्तु पहले मुझे पथ का इंगित दे। अनंगवज ने कहा। गोरख ने फिर पूछा- ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ है कि, योग श्रेष्ठ है कि अन्य कुछ? स्वच्छन्द मुक्ति का मार्ग कौन-सा है? कोरंटक ने कहा, इन में कोई भी पंथ उतना श्रेष्ठ नहीं जितना आत्मरमण। ....इतने में एक स्त्री वहाँ आई। कोरंटक के कठोर हाथ ने स्त्री की कलाई पकड़ली और अपनी ओर खींचा। स्त्री बिलबिल उठी। उसने कहा छोड दो मुझे। अनंगवज्र स्तब्ध सा देखता रहा। स्त्री ने

1. धूनी का धुआँ - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 25

उससे कहा, मुझे बचा निर्दयी। यह हिस्त्र पशु है। अनंगवज्र ने कहा - वह जननी है, कोरंटक! उसे जाने दे। कोरंटक ने चिल्लाया, तू मूर्ख है, मेरा क्रोध नहीं जानता, अन्यथा......। कोरंटक ने त्रिशूल उठाया। अनंगवज्र ने हाथ उठाकर कहा, रखदो! त्रिशूल कोरंटक के हाथ से गिरगया। ....उन दिनों स्त्रियों को उठा लाना सिद्धों के लिए आश्चर्यजनक बात नही थी। फिर भी ग्रामवासी सिद्धों से डरते थे।'' इस प्रकार आश्रम और धार्मिक स्थानों में वेश्याओं का विशेष आदर होता था। साधु दर्शन से ही पाप धुलते हैं। वेश्यागमन में वाममार्गियों को बहुत पुण्य मिलता है। इस प्रकार योनि पूजा का आदर दिन-ब-दिन बढ़ने लगा। स्त्री एक वासना की चीज बनगई है। समाज में स्त्री को वासना भरी दृष्टि से ही लोग देखने लगे।

इस उपन्यास में राजनीतिक परिस्थितियों पर अत्यन्त हल्का प्रकाश पड़ सका है, क्यों कि गोरखनाथ की अधिकांश गतिविधियाँ धार्मिक संप्रदायों से ही संबंधित रहीं। ईसा की नवीं सदी के अंतिम वर्ष और दसवीं सदी के पूर्वार्द्ध का समय इस उपन्यास का युग है। इस समय राजनीतिक दृष्टि से कोई सशक्त साम्राज्य नही था, छोटे, छोटे राज्य थे, जो आंतरिक संघर्षों के कारण टूट रहे थे। इसलिए तुर्कों के भीषण आक्रमण को रोकने में प्राय: रहे। लेखक ने इस उपन्यास में भर्तृहरि के अतिरिक्त अन्य किसी भी शासक का नाम नहीं गिनाया हैं। गोरखनाथ ने भरथरी नामक एक राजा को शिष्य बनाया था। रानी पिंगला से सम्बन्धित 'भर्तृहरिशतक' प्रणेता भरथरी गोरखनाथ से काफी पहले होगये थे। एक चौरंगनाथ का निवासी गोरख का शिष्य था। दूसरा एक चौरंगीय या, जो पूरन भक्त कहलाता है। यह गोरखनाथ से पहले हो गया था। बाद में दोनों चौरंगियों का भेद मिटगया और उन्हें एक कर दिया।

भारतीय इतिहास में गोरख का युग वर्ग संघर्ष का युग था। समाज अपने आन्तरिक संघर्षों के कारण टूट रहा था। उच्च वर्ण की नृशंसता की अग्नि में निम्न जातियाँ छटपटा रहीं थीं। भूत-प्रेत, जादू-टोना, अन्धविश्वास पुरानी परम्पराओं के

प्रचलन में धीरे-धीरे बौद्ध, अवैदिक शैव और अवैदिक योगी मार्ग वाम-मार्ग में डूबे। हर्षवर्द्धन के बाद भारत के राजा विदेशियों से लड़ते थे। उनका प्रगतिशील कार्य समाप्त होगया और वे जनता पर बोझ बनगये। उस समय की एक काल्पनिक राजनैतिक घटना का उदाहरण देना आवश्यक है। [1]"सिंहल की राजकुमारी सामदेई अनोखा सुन्दरी थी। भर्तृहरि उसका पति था। वह स्वयं पण्डित था और जब वह खंग उठाता था तब शत्रुओं के हृदय काँपने लगते थे। जब सामदेई उसकी ओर देखती तब राजा भर्तृहरि विभोर होकर कहता: देवी! सिंहल में विधाता ने जब लोक का सारा सौंदर्य एकत्र किया, तब तुम्हारी देह यष्ठि सामने आयी। लज्जा से चपल हुई सामदेई दूध से धोयी-सी बंकिम नयनों से देखती और तब लगता कि अनन्तकाल से रति इसी प्रकार अपनी भुवनमोहिनी छवी फैल रही है। राजा कहता है : सामदेई। तुम मेरे लिए अमृत हो। मुझे राज्य, वैभव नहीं चाहिए, प्रिये! मैं तुम्हें चाहता हूँ। सिंहल की सुन्दरी कहती, देव! मैं तो ऐसी सुन्दरी नहीं हूँ। पुरुष को तो सहस्त्रबाहु कहा गया है। वह तो चाहे जितनी पत्नियाँ रख सकता है। राजा लज्जित हो जाता। फिर मदिरा की गन्ध उठती और सुगन्धित मांस आते, किन्तु राजा की तृष्णा का कहीं अन्त ही नहीं होता। वह मानों खेल रहा था। प्रजा की उसे नहीं थी।.......एक दिन वह शिकार खेलने निकलता है। उस वक्त गोरख अपने शिष्यों को संदेश दे रहा था। उन के उपदेश से प्रभावित राजा ने योगी को प्रणाम किया। योगी ने उसे आशीर्वाद दिया। एक विचित्र भाव उसके मुख पर उजागर हुआ। राजा ने कहा योगी हो ना? इस मरे मृग को जीवित कर दो। वत्स! काल उसे ले गया। तू न मरता तब भी वह मरता। मृग मरा नहीं वत्स। देख जीवित है। राजा ने आश्चर्य से देखा।" इस घटना में राजा और रानी तो ऐतिहासिक चरित्र हैं। परन्तु घटना तो काल्पनिक है। इसका ऐतिहासिक आधार नहीं रहा। इस प्रकार लेखक ने नायक गोरख का चरित्र चित्रण उत्तम ढंग से किया। गोरख का योग मार्ग एक भूमि थी जिस पर असंख्य निम्न जातियों ने त्राण पाया था। समाज में जितने भी दलित या निम्न जाति लोग है, उन के

---

1. धूनी का धुआँ - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 60

लिए गोरख ने एक रास्ता दिखाया। उन में हौसला बढ़ाया। सिर्फ निम्नवर्ग के लोगों के लिए ही नहीं तमाम लोग उस के प्रति आकर्षित होगये। इस प्रकार गोरख ने विकास का एक ऐसा नया मार्ग समाज के सामने रखा जिस से लोग प्रभावित होकर उसकी तरफ आकृष्ट होने लगे थे। कालान्तर में कबीर ने गोरख की धारणाओं से प्रभावित होकर जाति-पात का विरोध किया। गोरख का नाथ-सम्प्रदाय आज भी प्रचलित है, किन्तु उस का रूप अत्यन्त विकृत हो गया है।

2.5.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

गोरख के जीवन पर लिखा गाया जीवनी प्रधान उपन्यास 'धूनी का धुआँ' योग प्रचार का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है, जहाँ पर उपन्यासकार ने योग विद्या और योगियों के विषय में प्रचलित भ्रमों को दूर करने का भरसक प्रयत्न किया है। राजनौतिक, सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में विच्छृंखलता और विघटन के उस युग में वज्रयानी सिद्ध नामदेव और नाथ पंथी योगियों ने सबसे पहले सम्मिलन की भावना का प्रचार करना प्रारंभ किया था। इतिहास सम्मत इस तथ्य और नाथ पंथ योगियों के इस अविस्मरणीय योगदान का सफल चित्रण कियागया है। माता के रूप में स्त्री का स्थान गोरख ने पुनः स्थापित किया। गोरखनाथ एक महान योगी-नेता थे कि उनका असर 500 वर्ष बाद तक रहा। गोरखनाथ पहले वज्रयानी थे, बाद में वे नाथ-मत में आये। वे कौर सम्प्रदाय में मत्स्येन्द्र द्वारा दीक्षित हुए। एक मनुष्य के इतिहास में कई नाथ पंथ योगियों ने कई प्रयोग कर, नई दिशा की ओर इशारा किया। उपन्यास के ये कुछ प्रामाणिक तथ्य है। इस रचना में लेखक ने केवल एक ही शासक का वर्णन किया है और वे हैं-भर्तृहरि और रानी सामदेई। विलासपूर्ण वर्णन में भर्तृहरि और महारानी समादेई की चर्चायें सामान्य हैं उपन्यासकार ने स्त्री-पुरुष से संबंधित कुछ सामान्य प्रश्नों के उदाहरण ढूंढ़ने का प्रयास किया है।

गोरकनाथ के जीवन पर लिखा यह प्रथम उपनन्यास है। लेखक ने उन्हें इस उपन्यास में कवि का जीवन दर्शाते हुए, एक योगी के रूप में भी चित्रित किया है। लेखक ने योग के विषय कुछ नवीन बातों को भी प्रकाश में लाया है। योग का अर्थ वैज्ञानिक सत्यों का अन्वेषण नहीं है। योग है मनुष्य के जीवन में संयम का महत्व और उसी से मिलनेवाली अनेक विचित्र शक्तियां। गोरख ने मस्तिष्क के विकास को सर्वोपरी माना है। रांगेय राघव इस उपन्यास के माध्यम से कई महत्वपूर्ण बातें कहते हैं। उनका कहना है कि-शासन करनेवाले, पूजाकरने वाले समाज के योग्य सेवक नहीं है, नेता नहीं है। समाज का नेता वास्तव में वह होना चाहिए, जो योगी हो, स्वार्थ से परे हो।

जीवन चरितात्मक उपन्यास होने का कारण गोरखनाथ को छोडकर अन्य किसी पात्र का सम्यक चित्रण नहीं हो पाया है। कितने ही पात्र अपनी झलक दिखाकर चले गये हैं, मानो उन का कार्य पूरा होचुका। गोरखनाथ के ऐतिहासिक पात्र होने के कारण लेखक को उनको गतिविधियों का चित्रण करते समय विशेष सतर्कता रखनी पड़ी है। लेखक ने गोरखनाथ पर ही शोध-कार्य किया था। इसलिए उपन्यास की अधिकांश घटनाएं प्रामाणिक है। सभी पात्र गोरखनाथ की छाया में ही अपना दुर्बल व्यक्तित्व लेकर आने जीवित होने का प्रमाण उपस्थित रखते हैं। उपन्यास में राजनीतिक परिस्थितियों पर अत्यन्त हल्का प्रकाश पड़ा सका है। क्योंकि गोरखनाथ की अधिकांश गतिविधियाँ धार्मिक संप्रदायों से संबंधित रहीं। उपन्यास में एतिहासिक परिवेश की नवीनता तथा मूल कथा-सूत्र की चमत्कारिक मौलिकता है, उसमें निहित आधुनिक संभावनाओं में सार्थकता व्यक्त है। गोरख ने योग को लोक के पास लाना चाहा, तभी एकान्त साधना न करके सम्प्रदायों को करते रहे। वे योग को पूर्ण रूप से लोक के लिए स्थापित नहीं करसकते, परन्तु उन्हों ने एक इंगित किया। योग है मनुष्य का संयम और उसी से उसे अनेक विचित्र शक्तियाँ मिलती हैं। इस प्रकार गोरख में मनुष्य के भावी विकास की ओर एक बड़ा इशारा किया। गोरख के चरित्र चित्रण से लेखक ने योग साधना का एक संदेश दिया।

2.6. तानसेन :-

2.6.1. ऐतिहासिकता :-

हिन्दी साहित्य प्रेमी महेन्द्र कुमार मुकुल द्वारा लिखित प्रस्तुत उपन्यास संगीत सम्राट 'तानसेन' का स्थान भारत के इतिहास में अद्वितीय है। उनकी संगीत प्रतिभा से सम्राट अकबर का इतिहास भी अलोकित हुआ है। अमर गायक तानसेन का जन्म ग्वालियर में सन 1531 में हुआ। उन का बचपन का नाम तन्ना या त्रिलोचन अथवा तनसुख था। आप के पिता का नाम मरूरन्द था मुकुन्द पाण्डे था। वह शिव मन्दिर में गायन करके पुजारी का काम किया करता है। अमर गायक तानसेन के विषय में जो कहा जाता है, वह बिलकुल सत्य है। उनकी वाणी में मधुरता, मादकता और तन्मयता थी। ओज और आकर्षण था। तानसेन को ऐसा व्यापक प्रभाव प्रदान करने का श्रेय बृन्दावन के स्वामी हरिदासजी को है। स्वामी की कृतियों में संगीत की विध्या में प्रवीण और पारंगत होने के पश्चात तानसेन बृन्दावन से दिल्ली-चलेगये। जहाँ वे शेरशाह सूरी के पुत्र दौलतखां के पास कुछ समय तक रहे। सूर साम्राज्य जब मुगल फौजोंसे पदाक्रान्त होने लगा तब वे दिल्ली से बांघरगढ़ के राजा रामचन्द्र बवेला के दरबार में राजगायक बने। यहाँ तानसेन को विपुलमान सम्मान प्राप्त हुआ। जब तानसेन के संगीत की प्रसिद्धि बादशाह अकबर के कानों में पड़ी तो उन्हों ने अपने दो दरबारी अधिकारियों को बांघवगढ भेजकर तानसेन को आगरा बुला लिया। इस प्रकार तानसेन ने 1562 में बादशाह के दरबार में हाजिर होकर सर झुकाया।

अकबर के दरबार में तानसेन को ले जाने जब दो अधिकारी आये तब महाराज रामचन्द्र के दरबार में यह दृष्य था - [1] "तानसेन ने द्रुपद के बोल के साथ गायकी शुरू की। वीणा, मृदंग और तानपूरे की मधुर ध्वनि के साथ ही राज नर्तकी चन्द्रमोहनी के नुपुर झंकृत हो उठे। कुछ क्षण बाद नृत्य और संगीत का समा बंध गया। राज गायक तानसेन के एक-एक बोल पर नर्तकी का अंग संचालन अद्वितीय था। उस की ग्रीवा, कटि और भृकुटि कटाक्ष तथा चंचल-चपल चरणों की दुति-

1. तानसेन - महेंद्र कुमार- पृष्ठ - 39

गति पर सामन्त एक स्वर से वाह-वाह कर उठते थे। तानसेन तानपूरे पर थिरकती उंगलियों के साथ मधुर राग आलाप रहा था।

गोरे मुख गोदना ठोडी सो है, और लिलाट जराई की विंदुरी।
और जो दसन विराजत तापैं, कजरानी अंखियान,
तापर सौंधे मीजी लटें लटक रहीं सो हैं चीकनी चीपुरी॥''

तानसेन केवल एक सुर-साधक ही नहीं बल्कि वह एक स्वर रचनाकर भी थे। गायक और कवि के रूप में उनकी प्रतिभा अभूतपूर्व थी। तानसेन ने संगीतसार, सुरसागर और रागमाला तीन संगीत ग्रंथ लिखे हैं। अधिकांश हिन्दू देवी-देवताओं की वन्दन में लिखे गये हैं। कुछ पद मुगल सम्राट अकबर की प्रशंसा में लिखे। तानसेन सम्राट अकबर के दरबार में 27 वर्ष तक रहे। कई बार मथुरा, वृन्दावन और गोकुल के दरबार में तानसेन ने एक ऐसा गीत गाया, जिसे सुनकर बादशाह फूले न समा सके। [1] ''अकबर का हुक्म पाते ही दरबारे आम संगीत से गूँज उटा। पखाबज पर थाप पड़ते ही तानसेन की कोमल उंगलियाँ तानपूरे के तारों पर द्रुत गति से दौड़ने लगती। तानसेन तानपूरे पर आरोह-अवरोह के साथ स्वर रथ थे। उनकी स्वर लहरी पावस में उमड़ती सरिता की गरजती लहरों सी वर्तन कर रही थी। तानपूरे के तारों पर दुति गति से भिरकती उंगलियों के साथ तानसेन ने अपने मधुर स्वर से हृदय स्पर्शी राग आलापना शुरू किया। तानसेन के मुख से गुर्जर तोड़ी मुखरित हो रही।

तेरो वल प्रताप ऐसों जैसो उडुगान मे भुनु।
हे तुर कब समान अलवली महाबली॥
प्रकट प्रबल रब निसान
वायु जल आकाश परवत अग्नि भूम,
सब मे रेरी घूम सप्त दीप नव खंड में तेरा बखान,

---

1. तानसेन - महेंद्र कुमार- पृष्ठ - 55

सबदीप सब भूत सकल सोजन-जन अनूप,
तेरी सरनागत कर प्रनाम तज गुमान,
तानसेन सत अजान तू है अतमेरकान,
जल थल में निशान मुनि जन करत गान॥

.... तान के मुख से गुर्जरी तोड़ी को सुनकर शंहशाह अकबर का रोम-रोम पुलकित हो गया। तानसेन के संगीत की प्रशंसा करते हुए शहंशाह ने कहा- वाह-वाह तानसेन, तुम शहंशाह मौसकी हो। हमने अपनी शमशीर से हिन्दुस्थान के बडे-बडे राजाओं को जंग के मैदान में शिकस्त कर दी है। लेकिन तुम्हारी बेमिसाल आवाज ने हमारे दिल को फतह कर लिया है। दुनिया में तुम्हारा कोई सानी नहीं। तुम्हारी कला की कद्र करते हुए हम तुम्हें अपने दरबार के नौरत्नों में स्थान देते हैं। और हम हुकम देते हैं तुम खाश महल के सामने अंगूरी बाग में हवेली है, उस में मुकीम हो। फिर बादशाह अकबर ने बकील उल सल्तनत मुंशिफ ए दीवान अमीर उल उमरा की ओर देखते हुए कहा 'मुंशिफ एक शाही फरमान आज ही शहर में चरण करवा दिया जाय। कोई भी शहर में गाता हुआ। निकलेगा वह संगीत कला में तानसेन का प्रतिद्वन्द्वी समझा जावेगा। उसे या तो तानसेन को संगीत में पराजित करना होगा अथवा वह तलवार से हलाल कर दिया जावेगा। तानसेन शाही गवैया बनगया। उस ने कदम आगे बढाकर अकबर को झुक कर सलाम किया।''

शहजादी मेहरुन्निसा को तानसेन से प्यार हो जाता है। लेकिन भय यह रहता है कि अकबर बादशाह का राय क्या होगा? लेकिन सौभाग्यत: अकबर ने अपनी ओर से सहमती दे दी। इस प्रकार मेहरुन्निसा तानसेन की पत्नी बनती है। वे बहुत खुशी से समय बिताने लगते है। इसी बीच हल्दीघाटी के समर में राणा प्रताप शहीद हो जाता है। अकबर शत्रुसंहार से बहुत प्रसन्न हो जाता है।

एक दिन दरबार में सिपाहियों द्वारा एक नौ जवान लायागया। सिपाही ने कहा कि यह नवजवान तानसेन से मुकाबला करना चाहता है। बादशाह अकबर अपने अपलक नेत्रों से उस नौजवान गवैया की भव्य आकृति को निहारता रहा। गौर वर्ण, चाँद सा चमकता चेहरा, उन्नत ललाट, घुँघराले केश, बड़ी-बड़ी विहंसती आँखे। काली घनी भौहें, शुका जैसी नासिका, कमल पादव से कोमल अरुण अधर दीर्घ बांहे और सडौल शरीर। [1]"दीवान-ए-खास में सन्नाटा छाया रहा। नौजवान तुम्हारा नाम? हुजूर मेरा नाम बैजू है। क्या तुम मुकाबला करना चाहते हो। आलमपनाह, मैं यह जानता हूँ कि शाही गवैया तानसेन संसार का एक अच्छा संगीतज्ञ है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि जब तक तानसेन है, तब तक आगरा शहर में कोई दूसरा गा नही सकेगा। आप की कठोर राजाज्ञा से आगरा शहर के संगीतज्ञ अपनी कला का विकास नहीं कर पारहे हैं। आप की इस क्रूर राजाज्ञा के कारण वे निरपराध होते हुए भी तलवार के घाट उतार दिये हैं। इसलिए वे सब डर के मारे अपने गले दबा रखे थे। मुझ से यह सहा नही जाता। चाहे मुझे भी मौत के मुह में धकेल दिया जाय'। बैजू-तुम तानसेन से पराजित हुए तो तुम्हें भी मौत की सजा दी जायेगी। क्योंकि जो कोई आगरा शहर में गायेगा, उसे मौत की सजा दी जाती है। उसे, अपने आप को बजाने के लिए तानसेन का मुकाबला करके संगीतालापन करना है। शर्त मंजूर है? आलीशाह, मुझे आपकी शर्त स्वीकार है। किन्तु मैं संगीत की प्रतिद्वान्द में विजयी हुआ तो, आप को यह क्रूर राजाज्ञा समाप्त करनी होगी।" यह एक ऐतिहासिक घटना है जिसका जिक्र इतिहास में मिलता है।

दूसरे दिन प्रतिद्वन्द प्रारम्भ हुआ। तानसेन ने अपना तानपूरा उठाया। राग पर मोहित मृगों का दुर्ग के द्वार से निकल दीवान-ए-आम में आ गया। तानसेन ने रुद्राक्ष की माला गलें में पहना दी। फिर वे चले गये। हुकुम दिया गया कि मृगों को दरबार में बुलाया जाय। बैजू ने अपना सितार संभाला और एक मधुर स्वर लहरी निकली।

1. तानसेन - महेंन्द्र कुमार- पृष्ठ - 120

मृग झण्ड फिर आगये और बैजु ने रूद्राक्ष की माला उतार दी। तानसेन ने दीपक रागालापना किया। बैजू ने मल्हर राग आलाप किया। बादशाह सलामत के मस्तिष्क में एक उक्ति सूझी-जो भी फनकार अपने संगीत से पत्थर का हृदय पिघला देगा वही विजयी घोषित किया जायेगा। बैजू की अदभुत संगीत शक्ति से पत्थर शिला द्रवित होगई। बैजू द्वारा पिघली पत्थर शिला को तानसेन परिवर्तित करने में निष्फल रहा। तानसेन के जीवन में पहली पराजय। संगीत पर लगा प्रतिबन्ध उठा लिया गया है। प्रतिहिंस की अग्नि से प्रज्वलित बैजू का मन शान्त हो गया। पराजय के आघात से तेनसेन का हृदय टूटगया था। वह ज्वर से पीड़ित था । उस के पलंग के पास मेहरून्निसा उदास बैठी थी। सुबह यह समाचार बिजली की तरह शहर में फैल गया कि इस दुनिया में नहीं रहा। इस प्रकार ऐतिहासिक तथ्यों पर लिखित यह उपन्यास संगीत साम्राट तानसेन की जीवनी को प्रतिबिंबित करता है। लेखक ने ऐतिहासिक घटनाओं की सिलसिला कहीं नही टूटने दिया। क्यों कि आधार सामग्री भी ऐसी मिली, जिसे लेखक ने सहीं ढंग से उपयोग किया। इस प्रकार यह एक सफल ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है।

2.6.2. काल्पनिकता :-

अमर गायक 'तानसेन' की जीवन के ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित तेनसेन नामक उपन्यास में जहाँ-तहाँ काल्पनिकता दिखाई देती है। उपन्यासकार महेन्द्र कुमारजी ने काल्पनिकता को बहुत ही आकर्षणीय बनाया है। तानसेन को कुछ विद्वान ब्राह्मण मानते हैं। कुछ विद्वान उसे मुसलमान मानते हैं। तानसेन हिन्दु थे या मुसलमान, यह एक विचारणीय प्रश्न है। उच्च ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर वे बाद में मुसलमान होकर मरे। लेखक ने यह साबित किया है। ग्वालियर में प्रसिद्ध सूफी सन्त मुहम्मद गौस के मकबरे के निकट तानसेन की मजार को देखकर यह विचार लेखक के मस्तिष्क में उठा था कि मुगल दरबार में मुसलमानों के साथ अधिक सम्पर्क होजाने के कारण सम्भवत: तानसेन ने मुसलमान धर्म स्वीकार कर लिया है।

किन्तु यह धर्म परिवर्तन तानसेन ने कब और कहाँ, किन परिस्थितियों में किया, इसका निश्चित आधार नहीं मिलता। मध्य युग के किसी मुस्लिम इतिहासकार ने तेनसेन के धर्म परिवर्तन के सम्बन्ध में एक शब्द भी नहीं लिखा। इसलिए लेखक ने ही इसका जिक्र कही नहीं किया।

राजकुमारी मेहरुन्निसा के मन में तानसेन के प्रति प्रेम जागृत होना और उसे शादी करना भी किंवदंती है। कुछ विद्वान यह भी मानते हैं कि शहजादी से शादी के लिए ही तानसेन को धर्म परिवर्तन करना पड़ा। तानसेन मुसलमान क्यों हुए, यह एक विचारणीय प्रश्न है। धन का प्रलोभन इन्हें नहीं था। क्योंकि संगीत कला के सम्मान कर्ताओं की उस समय कमी नहीं थी। रीवा नरेश रामचन्द्र के दरबार में उन्हें किसी प्रकार का अभाव नहीं था। फिर अकबरी दरबार तो गुणियों के राजाश्रय के लिए प्रसिद्ध ही था। तानसेन की जितनी भी रचनाऐं प्राप्त हैं, उन में हिन्दू धर्म की पूरी झलक देखने को मिलती है। अत: इस्लाम धर्म की श्रेष्ठता से प्रभावित होकर उन्होंने अपने मूलधर्म का परित्याग कर दिया हो, इसे स्वीकार नही किया जासकता। किंवदंती रूप में तानसेन का एक शाही राजकुमारी से प्रेम और फिर उसे अपनाने के लिए धर्म परिवर्तन की घटना प्रचलित है। साथ ही तानसेन का अकबर की पुत्री मेहरुन्निसा से प्रेम फिर विवाह आदि किंवदंतियों का उल्लेख मिलता है। यह आश्चर्यजनिक है कि तानसेन के मुसलमान होने का विवरण उसकाल के किसी कवि अथवा इतिहासिकार ने नहीं दिया। शहजादी और तानसेन के रिश्ते के बारे में लेखक ने सरस चित्रण किया है। [1] "कुछ दिन हुए, मेहरून्निसा काबुल से एक शाही काफिले के साथ आगरा आई थी। दूर के रिश्ते में वह सम्राट की बेटी लगती थी। शहजादी जबसे संगीत की महफिल से लौटी है, तब से वह मसनद पर अलसाई सी पड़ी है। वासना से उत्तेजित आँखों में एक खुमार सा छाया हुआ है। तानसेन का मधुर संगीत शहजादी के हृदय में जीवन की अनगिन मनोवांचित कल्पनाएँ भरने लगा है। कभी-

1. तानसेन - महेंन्द्र कुमार- पृष्ठ - 56

कभी जब भावनाओं का आवेग सागर की उत्ताल, तरंगों की तरह शहजादी के हृदय में उमड़ने लगता है, तब वह तानसेन की मधुसिक्त, लय और उसके स्वरों के प्रत्येक आरोह-अवरोह को अपने मधुर कण्ठ से पुलक-पुलक कर गुन-गुनाने लगती है। उस की आयु बीस वर्ष की थी। वह दूसरे बदन की सुन्दर, अत्यन्त सुकोमल और सुडौल गोरवर्ण की थी। मुख पर यौवन की लालिमा, मधुपूरित अरुण अधर, मद भरे नयन, लम्बी ग्रीवा, दाड़िम जैसे चमकीले दांत। पतली कटि, भरे नितम्ब और उन्नत उरोज। ...... शहजादी ने अपनी परिचारिका को पुकारा रेशमा! रेशमा! मैं बडी बेचैन हूँ। फरमाइये, शहजादी, मन का ऐसा कौन सा प्रश्न है जो तुम्हें तंग किए हुए है। रेशमा! विवाह नारी के लिए क्यों आवश्यक है? क्या विवाह के बिना नारी संसार में जीवित नही रह सकती । शहजादी, विवाह नारी जीवन का एक अनिवार्य नियम है। रेशमा! स्त्री जिस से प्रेम करती है क्या वह उससे विवाह नहीं कर सकती? वह कौन खुशनसीब शहजादा है जिसने तुम्हारी मदभरी आंखों के डोरे सूख गुलाबी करदिये हैं। वह तो एक हिन्दु गायक है। मेरा दिल तानसेन को चाहने लगा। बादशाह सलामत ने भी हिन्दु राजकुमारी से विवाह किया है। मगर रेश्मा! मेरा मुकम्मिल इरादा है। मैं तानसेन से विवाह करूँगी।''

इस प्रकार शहजादी दिन-रात तानसेन के ख्यालों में डूब जाती है। उसका स्वास्थ्य भी बिगडने लगती है। उसकी आँखे में नींद पक्षी की तरह उडगई है। भोजन की ओर दृष्टि नही रही। एकदिन उसने तानसेन को अपने मंदिर में आह्वान किया। कुछ देरबाद परिचारिका ने मंदिर में आकर कहा कि तानसेन तशरीफ लाये हैं। मेहरन्निसा का मोहब्बत की किरणों से चेमकता चेहरा फूल सा खिलउठी। - [1]''शहजादी ने कहा- यहाँ मसनद के पास आकर बैठिये। तानसेन ने झुककर सलाम किया और मसनद में आकर बैटते हुये कहा-शहजादी साहिबा, आपने मुझे याद किया है। हाँ। तानसेन। बारिश के मौसम नें आज तुम्हारे संगीत को सुनने की

---

1. तानसेन - महेंन्द्र कुमार- पृष्ठ - 90

बेहद इच्छा हुई है। और हकीकत यह है कि इस बहाने हम तुम्हारा दीदार भी करलेते हैं। तानसेन निरूत्तर रहा। मेघ-मल्हार के मधुर आलाप से मेहरून्निसा के हृदय में प्रेम की धारा पावस कालीन सरिता की तरह प्रवाहित उठी। .... उसी वक्त मसनद में हुस्सेन कुलीखाँ क्रोध से प्रवेश करता है। उसने शहजादे से कहा कि, जहांपनाह ने मुझ से एक वादा किया है। हम जहांपनाह के वादे जानना चाहते हैं। मुगल सल्तनत के इस उजवेग सिपहसालार को शहजादी से निकाह करने का हक मिला है। यह गैर मुमकिन है। हम आलमपनाह से अर्ज करेंगे। मै तानसेन से मुहब्बत करती हूँ। '' अकबर तक यह समाचार पहुँच गया। बादशाह अकबर ने बहुत समय तक सोच-विचार किया। अंत में सोचते-सोचते बादशाह अकबर ने नारी जीवन की उस कठिन और उलझी हुई पहेली को सुलझा दिया। तानसेन के साथ शहजादी मेहरुन्निसा के निकाह की इजाजत दिया गया है। लेकिन कुछ विद्वानों का कहना है यह काल्पनिक घटना है। लेकिन इसे लेखक ने बहु रंगीन बना दिया।

तानसेन ने अकबर के दरबार में पहुँचने के पश्चात गोस्वामी विट्ठलनाथजी के शिष्य गोविन्द स्वामी से संगीत की शिक्षा ग्रहण की। यह भी काल्पनिक है। कुछ विद्वानों का मत है कि तानसेन के प्रारम्भिक संगीत गुरु ग्वालियर के सूफी सन्त मुहम्मद गौस थे। किन्तु यह आश्चर्यजनक है कि उस काल के किसी भी इतिहासकार ने इसका जिक्र कही नहीं किया। हो सकता है ग्वालियर में वह गौस के सम्पर्क आया है। लोग यह भी कहते हैं कि ग्वालियर के इलमिल नदी के किनारे स्थित मंदिर के दीवार तानसेन की मधुर-स्वर लहरी से टेढी पडगई थी। इस प्रकार अनहोनी काल्पनिक संघटनाओं के बारे में लेखक ने उपन्यास के प्रथम भाग में उल्लेख किया फिर भी लेखक इन से सहमत नहीं हैं।

2.6.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

'तानसेन' नामक उपन्यास ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित एक सफल जीवनीपरक उपन्यास है। जन्म से लेकर मृत्यु तक जितनी भी प्रधान घटनायें हैं, उन

सबको ऐतिहासिकता के आधार पर लेखक ने वर्णन किया। दो सौ बावन वैष्णओं की वार्ता में लेखक के लिए आधार सामग्री मिली है। मीर मुन्शी अबुल फजल की 'आइने अकबरी' नामक रचना को आवश्यक तथ्य प्राप्त हैं। अकबर के नवरत्नों में से एक, महाकवि अब्दुल रहीम ने भी अपनी रचनाओं में जहाँ-तहाँ तानसेन की मधुर-वाणी का जिक्र किया है। उन की वाणी में मधुरता, मादकता और तन्मयता थी। ओज और आकर्षण था। प्रवाह और अप्रतिम भावों की गहनता थी। यही कारण था कि उनकी स्वर शक्ति से धरा, मोर पेड-पल्लव, नदी, निर्झर, वन, उपवन, पशु-पक्षी आदि सभी प्रभावित होजाते थे। तानसेन के धर्म के बारे में विभिन्न मत है। वह हिन्दु था या मुसलमान, यह विवादास्पद विषय बन गया है। लेखक ने उसे अति चतुरता से सुलझ दिया है। उच्छ ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर भी मुगल दरबार में मुसलमानों के साथ अधिक सम्पर्क हो जाने के कारण सम्भवत: तानसेन ने मुसलमान धर्म स्वीकार करलिया है। शहजादी मेहरुन्निसा से प्रेम और तानसेन के साथ शादी भी किंवदंती पर आधारित है। लेकिन उपन्यासकार ने मुहब्बत की घटना का सरस रोमांचक वर्णन किया है। लेखक ने उपन्यास में महाराणा का भी अभिवर्णन किया। खासकर हल्दीघाटी-समर का वीर रस प्रधान वर्णन किया गया है। फतहपुर सीकरी के दीवान-ए-खास के दरबारी कार्यों का भी उल्लेख किया गया है। ग्वालियर दुर्ग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का वर्णन करने में लेखक को कामयाबी मिली है। ध्यान देनेकी बात यह भी है कि तानसेन से बिलकुल अपरिचित घटनाओं का भी वर्णन किया गया है। लेकिन उपन्यास के कथोपकथन को दृष्टि में रखकर लेखक ने एक-एक ऐतिहासिक तथ्यों का उल्लेख किया है ताकि तानसेन की पूरी जीवनी का वर्णन हो जाय। इस प्रकार अनुपात की दृष्टि से समूचा उपन्यास ऐतिहासिकता का काफी नजदीक है।

2.7. रत्ना की बात :-

2.7.1. ऐतिहासिकता :-

'रत्ना की बात'-राघवजी का बहुचर्चित एक लघु जीवन चरितात्मक उपन्यास है। लेखक ने महाकवि तुलसी के महान व्यक्तित्व से उस युग की समस्त राजनीतिक,

सामाजिक धार्मिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिहक परिस्तिथों को स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है। तत्कालीन हिन्दु समाज अपने आन्तरिक संधर्षों से जर्जर होरहा था। उच्च वर्ण और निम्न वर्ण के बीच की दूरी बढ़ती जा रही थी। [1]''गंगानदी के तट संस्कृत के श्लोक सुनाई पढ़ने पर .... अन्धेरे ही पथों पर झाड़ू लगा चुकने वाले मेहतर अब वहाँ से भाग निकले, ताकि अपने दर्शन से वे उच्च जाती के पविर्त लोगों को प्रात: काल ही अशुभ के सम्मुख न ले जासके।' समाज में ब्राह्मणों का स्थान सर्वोपरी था। 'स्वामी नरहरिदास ने एक संदर्भ में लोगों से कहा - ब्राह्मण-ब्राह्मण ही है। इस में ब्रह्मा का तेज हैं। यह पृथ्वी के देवता का रूप है।....... यह मुनियों कि सन्तान है, यह साधारण मानव नही, यह ब्राह्मण है।''

तुलसीदास ने सामाजिक परिस्थिति को सुधारने के लिए वर्णगत भेदों को दूर करने का प्रयास किया। वे कबीर की भाँति वर्णश्रम के विरोधी नहीं थे, किन्तु ब्राह्मणों में व्याप्त बुराइयों के घोर निंदक थे। ब्राह्मणवादी विचार के कारण तुलसीदासजी वर्णाश्रम के दृढ समर्थक थे। इसलिए उस युग में वर्णाश्रम की दुर्दश देखकर उन का चित्त विचलित होगया था। उन्हों ने आदर्श समाज की कल्पना करते हुए कहा - [2]''वही समाज चाहिए था जहाँ ब्राह्मण पूज्य हो, पर जहाँ वे लोलुप न हो , जो रूढी में अपना अहंकार लिये न बैठे रहें, वरन् वेद, ब्राह्मण और पुराण आदि की रक्षा के लिए निम्न वर्णों को सहूलियत दें और निम्न वर्ण वेद और ब्राह्मण को पूज्य मानकर वर्णाश्रम को सिर झुका दे। वह समाज चाहिए था, जहाँ वेद को पूज्य मानने वाले सम्प्रदाय परस्पर लड़े नहीं।''

उपन्यास में नारियों की सामाजिक स्तिति के बारे में वर्णन किया गया। नारी मनुष्य के विकास -- पथ में अवरोध न होकर साहित्यक थी। इसलिए रत्ना ने तुलसी

---

1. रत्ना की बात - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 2
2. रत्ना की बात - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 37

से कहा – [1]**"मै अर्द्धांगिनी हूँ। धर्म पत्नी हूँ। मैं स्त्री हूँ। तुम पुरुष हो। इतना ही तो मेरा तुम्हारा सम्बन्ध नहीं रहा। हमारा, तुम्हारा धर्म का भी तो सम्बन्ध है। हम, तुम तो गाड़ी के दो पहिए हैं। एक पर, दूसरा अटक कर रह जायेगा तो गाड़ी चलेगी कैसे?"** समाज में वेश्यावृत्ति का प्रचलन था। गोस्वामी धर्म का सर्वतोमुखी हास देखकर अत्यन्त क्षुब्ध हुए और हिन्दु-धर्म की रक्षा के लिए उन्होंने समस्त अनैतिक कार्यों का घोर प्रतीकार किया। उन को इस पथ पर अग्रसर होने के लिए अनेक व्यवधानों का सामना करना पडा। [2]" जोगियों द्वारा जब खतरा हुआ कि वे तुलसी को मारेंगे, तब भी महाकवि विचलित नहीं हुए।"

तुलसी ब्राह्मण थे, अतः उन के लिए वह गौरव थी। तुलसी ने उसी धर्म को फिर से मर्यादा दिलाया। भारतीय भक्तिमार्ग के भीतर भी उन्हों ने बहुत-सी बढती हुई बुराइयों को रोकने का प्रयत्न किया। शैव और वैष्णओं के बीच बढ़ते हुए विद्वेष को उन्हों ने अपनी समन्वयवादी व्यवस्था द्वारा रोकने का सराहनीय प्रयास किया। [3]"तुलसी के पहले भक्ति – आंदोलन निम्नवर्णीय विद्रोह का प्रतीक था जो कहता था कि भगवान के सामने सब बराबर है। तुलसी ने उसे तो माना .... परन्तु वेद-धर्म की समाज के लिए आवश्यक माना ...... परन्तु वेद-धर्म की समाज के लिए आवश्यक माना और पुनरुत्थान की ओर समाज को रास्ता दिखाया। तुलसी की भक्ति सामाजिक रूप में वेद, धर्म और व्यक्तिपक्ष में भगवान से याचना थी।" गोस्वामी तुलसी मूलतः भक्त कवि एवं समाज-सुधारक थे, इसलिए उनकी प्रतिभा राजनीति के कीचड़ में फँस न सकी। तत्कालीन शासकों की गतिविधियों पर प्रकाश डालते हुए स्वामी नरहरिदास ने तुलसी से कहा – [4]"हिन्दु राजा अपने प्राचीन गौरव को भूलकर कुत्तों की तरह विदेशी के सामने जीभ लटकाये बैठे हैं, और पराये हाथों

---

1. रत्ना की बात – डा. रांगेय राघव – पृष्ठ – 146
2. रत्ना की बात – डा. रांगेय राघव – पृष्ठ – 86
3. रत्ना की बात – डा. रांगेय राघव – पृष्ठ – 123
4. रत्ना की बात – डा. रांगेय राघव – पृष्ठ – 7

में पड़कर अपने ही देश की प्रजा का शिकार कर रहे हैं। वे अपने स्वार्थ में पड़कर देश का गौरव भूलगये हैं।" तुर्कों की नृशंसता के कारण सामान्य जनता असहाय होकर भूखों मर रही थी। इसलिए तुलसी ने अकबर के दरबार में जाने के लिए और पद ग्रहण करने के लिए इनकार किया।

'रत्ना की बात' का मुख्य प्रतिपाद्य 'तुलसी चरित्र' ही है। जीवन के प्रारम्भ से ही माता-पिता एवं अन्य संबंधियों के प्रेम से वंचित तुलसी प्रेम के भूखे रहे, इसलिए रत्ना को पाते ही अपनी चिर पिपासा की तृप्ति के लिए उस पर टूट पड़े। पत्नी रत्ना के लिए यह एक अनहोनी घटना थी और वह पति के इस व्यवहार से क्षुब्ध होकर उनसे खिन्न रहने लगी। रत्ना के इस व्यवहार से तुलसी का हृदय भभक उटा। और उन्हों ने कहा - [1] "जन होते ही जिस अभागे को घर में माता-पिता और सम्बन्धें का प्रेम नहीं मिला, जो कुत्ते की तरह अपमान और ठोकरें सहता हुआ अपने हृदय का भार लिये डोलता रहा, उसे अब ही तो स्नेह मिला है। रत्ना! मैं बड़ा दुःखी था। रत्ना! बड़ा दुःखी था ..... हीनत्व की यह कचोट, अपने पन का वह तिरस्कार जो संसार ने मुझे दिया था, वह मैं कैसा भूलसकता था रत्ने। तू मेरी है।' इस घटना के पशचात तुलसी अनवरत गति से सत्पथ पर अग्रसर होते रहे और कालान्तर में वे एक महान कवि, समाज सुधारक, भक्त एवं संस्कृति के महान पोषक हुए। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने तुलसी को कलियुग के वाल्मीकि के रूप ने अभिवर्णन किया। राजा और प्रजा को जगाकर धर्म के याद दिलानेवाले समाज सुधारक तुलसी है।

2.7.2. काल्पनिकता :-

'रत्ना की बात', महाकवि तुलसीदास जी की जीवनी पर आधारित है। तुलसी के जीवन के सम्बन्ध में अनेक मत-मतान्तर है। लेखक ने बहिर्साक्ष्य एवं अन्तर्साक्ष्य तथा जनश्रुतियों के आधार पर ही इस उपन्यास के कथानक का निर्माण

---

1. रत्ना की बात - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 53

किया है। लेखक डा. रांगेय राघव ने महाकवि तुलसीदास के महान व्यक्तित्व के माध्यम से उस युग की समस्त राजनीतिक, सामाजिक धार्मिक, सास्कृतिक एवं साहित्यक परिस्थितियों को स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है। उपन्यास की भूमिका में स्वयं लेखक ने अत्यन्त आत्मविश्वास के साथ कहा - [1]'' तुलसी के सामाजिक कार्य, अन की भक्ति, उन के सुधार, उनके विद्रोह, उन के विचार उनका दृष्टिकोण ऐसे विष्य हैं जिन पर लोगों का भिन्न मत है। जो तुलसीदास कहते हैं हमें वह देखना चाहिए। तुलसी ने जो प्रगति की, उसे समझने के लिए केवल उन्हें देखलेना काफी नहीं है, उन के पूर्ववर्ती युगों को भी देखना आवश्यक है।''

तुलसी के युग का सम्पूर्ण समाज विश्रृंखलित, अस्तव्यस्त और छिन्न-भिन्न हो रहा था। तत्कालीन हन्दिु समाज अपने आन्तरिक संघर्षों से जर्जर होरहा था। समाज में ब्राह्मणों का स्थान सवोपरी था। लेखक ने काल्पनिकता के सहारे तुलसी को कबीर की भाँती ब्राह्मणों में व्याप्त बुराइयों के घोर निंदक के रूप में वर्णन किया। लेखक ने नारियों की सामाजिक स्थिति पर भी हल्का प्रकाश डाला, जिसमें नारी को मनुष्य की उन्नती का आधार बताया गाय था। वास्तव में वह काल्पनिक विषय है। समाज में वेश्या वृत्ति का प्रचलन था। यह भी काल्पनिक है कि तुलसी-युग में निशाचर रूपी यवन हिन्दु-धर्म को निर्मूल करने के लिए कटिब्ध थे। तुलसी के समय में तो मुगलों का राज्य चल रहा था। [2]''म्लेच्छों की दुर्नीति से क्षुब्ध होकर स्वामी नरहरिदास ने तुलसी से कहा - आज म्लेच्छों के कारण प्रजा में कलि का अट्टहास होरहा है और व्यामोह में वे ही पवित्र ब्राह्मण अपने त्रैलोक्य को कंपित करनेवाले पराक्रम को भूलकर भटकरहे हैं।......... शूद्र ब्राह्मण बन रहे हैं, म्लेच्छ धर्मनाश कर रहे हैं।''

---

1. रत्ना की बात - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 87
2. रत्ना की बात - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 31

उपन्यास का आधार तुलसी चरित है। इनके अतिरिक्त अन्य पात्र गुणना के लिए गिनाये गये हैं। नारी-चित्रण भी लेखक ने अधिक मनोवैज्ञानिक ढंग से किया। तुलसी की भाँती आज भी अनेक प्रेम पिपासु उपयुक्त अवसर पाने पर अपनी संयम की चादर फेंकते हुये दिखायी पडते हैं। तुलसी के व्यक्तित्व से परिचित होने पर काशी नरेश ने उनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हुए कहा - [1]''तुलसीदास कलियुग के वाल्मीकी हैं। महराज! राजा प्रजा को भूलगये। राजा और प्रजा धर्म को भूल गये। आपने फिर से सब को जगा दिया। आपने सोते हुये लोक को फिर से उठने को बाध्य करदिया। मैं ने सुना था आप धर्म नाश कर रहें हैं। परन्तु आप तो धर्म के एकमात्र रक्षक है।'' लेखक ने रत्ना के चरित्र को प्रधान माना था। तुलसी उस की प्रेरणा से ही जीवन में अप्रत्याशित सफलता प्राप्त करते हैं। [2]''मृत्य के समय तुलसीदास ने एक स्वप्न देखा जो काल्पनिक जरूर है, मगर उस में एक प्रन्श था कि किस ने दी यह प्रेरणा। रत्ना की बात ने। रत्ना! यदि रत्ना होती तो। स्वप्र टूट गया।'' एक संदर्भ में तुलसी श्रीराम से प्रार्थना करता है कि [3]'' क्षमा करो राम! मेरे स्वामी! मैं अपने ही अहंकार में डूब रहा। मैं जगत के अनेक व्यापारों के जंजालों में अपने को फंसाये रखा और नारी की काया में मैं ने अपने को बंदी बना लिया । मैं उस रक्त-मांस की ढेरी में अनन्त सुखों को खोजता हुआ मृग मरीचका में हाँफता हुआ भागता रहा। एक दिन भी यह नहीं समझ सका कि इस लघुता के पार एक विशाल आकाश है जिस में अनन्द का त्रिभुवन में विकीर्ण किया करता है।'' यह घटना तो ऐतिहासिक है। मगर काल्पनिक ढंग मे, लेखक ने वर्णन किया है।

2.7.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

'रत्ना की बात' लोक नायक तुलसीदास के जीवन पर लिखा उपन्यास है। इस उपन्यास में डाँ. रांगेय राघव ने तुलसीदास की पत्नी रत्नावली की कही बातों के

---

1. रत्ना की बात - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 136
2. रत्ना की बात - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 140
3. रत्ना की बात - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 107

सन्दर्भ में उपन्यास को यह प्रतीकात्मक शीर्षक दिया है । तुलसी के जीवनकाल में देश पर मुसलमानों का पूर्ण प्रभाव स्थापित हो चुका था। भारत का सांस्कृतिक सूर्य अस्त होचुका था। देश में कोई जातीय भावना नहीं रह गई थी। देश भर में मुगलों का वैभव, स्वर्ग के वैभव को चुनौती दे रहा था। विश्व का इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि शताब्दियों का आविर्भाव हुआ है। तुलसी भी हिन्दु सभ्यता और संस्कृति के ऐसे ही संक्रमण - काल में आविर्भूत हुए। इतिहास के इन्ही तथ्यों की सहायता से उपन्यास लिखा गया है। यह एक प्रामाणिक तथ्य है कि तुलसीदास भक्तिकाल की रामभक्ति धारा के श्रेष्ठ कवि है। इनकी रचनाओं में रामचरितमानस सर्वश्रेष्ठ है। यह भी प्रामाणिक हो चुका है कि तुलसीदास के जन्म के पश्चात उनके पिता ने उन्हें त्याग दिया था और माता की मृत्यु होचुकी थी। स्वामी रामानंद द्वारा उनका पालन पोषण शिक्षा-दीक्षा हुई और रत्नावली के साथ उनका विवाह हुआ।

तुलसी की रचनाएं तुलसी के व्यक्तित्व को अभिव्यक्त करती है। अपने बारे में तुलसी ने कम ही कहा है। तुलसीदास के जीवन पर 'निराला' और 'शिवनंदन सहाय' ने भी रचनाएं की है, पर तुलसी को नायक बनाकर सर्व प्रथम डा. रांगेय राघव ने जीवनी प्रधान उपन्यास लिखा और बाद में अमृतलाल नागर ने मानसका हंस। उपन्यासकार ने तुलसी के बाल्यवस्था, किशोरावस्था, युवावस्था व संतकाल का भी वर्णन किया है। जिसके कारण कथावस्तु तुलसी के जीवन की विभिनन्न अवस्थाओं में जकड़ सी गई है। तुलसीदास समाज सुधारक व ब्राह्मणवादी अधिक दिखाई पड़ते हैं। युगचेतना की पुकार उपन्यास में कुछ रोचकता जोडती है। कुल मिलकर रत्ना की बात तुलसीदास का एक सीधा-सच्चा चरित्र -चित्रण है। जो रोचकता के अति आग्रहक से बना है। तुलसी के जीवन को उपन्यास की कथावस्तु में डालने का प्रथम प्रयास डा. रांगेय राघव ने किया। उपन्यास में रत्ना को ही लेखक की साहनुभूति मिल पायी है। तुलसी की जीवन के सम्बन्ध में मत-मतान्तर होने पर भी उपन्यासकार ने जनश्रुतियों के आधार पर ही उपन्यास के कथानक का निर्माण किया। उपन्यासकार ने महाकवि तुलसीदास के महान, व्यक्तित्व के मध्यम से उस

युग की समस्त राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यक परिस्थितियों को स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है। तुलसी के समाजिक कार्य, उनकी भक्ति, उनके सुधार, उनके विद्रोह, उनके विचार, उनका दृष्टिकोण ऐसे विषयों पर लेखक ने प्रकाश डाला। समाज सुधारक के तुलसी का वर्णन हुआ था। लेकिन वह वर्णाश्रम धर्मों के समर्थक थे। यह काल्पनिक है कि लेखक ने नारी को मानव की उन्नती के आधार के रूप में वर्णन किया। वास्तव में नारी का स्थान समाज में उस वक्त बहुत ही दयनीय था। भारतीय जन समाज को स्वस्थ एवं आदर्श रूप में दिखाने के लिए लेखक ने कोशिष किया। तुलसी धर्म का सर्वतोमुखी ह्रास देखकर अत्यन्त क्षुब्ध हुए और हिन्दु-धर्म की रक्षा के लिए उन्हों ने समस्त अनैतिक कार्यों का घोर प्रतिकार किया। उन को इस पथ पर अग्रसर होने के लिए अनेक व्यवधानों का सामना करना पड़ा। आमतौर पर रत्ना की प्रेरणा से ही तुलसी की उन्नति हुई है। इसे साबित करने के लिए लेखक ने यत्न किया।

2.8. खंजन नयन :-

2.8.1. ऐतिहासिकता :-

अमृतलाल नागरजी द्वारा लिखित 'खंजन नयन' नामक उपन्यास महाकवि भक्त सूरदास की जीवनी पर आधारित है। जन्मान्ध सूरज का जन्म एक संगीत विद्वान के परिवार में हुआ था। घर में माता के अलावा प्यार करनेवाला और कोई नहीं थे। धीरे-धीरे माता के प्रोत्साहन से सूरज के मन में राधेश्याम के प्रति भक्ति भावना जागृत हो गई। इस घटना की पुष्टि के लिए यह उद्धरण आवश्यक है। [1]"बचपन में माँ ने एक बार श्री राधामाधव के विग्रह का परस करवा दिया। वह छुम्बन अब बिजली बनगई है। मेरी अनामिका के स्पर्श से वह बिजली मेरी त्रिकूटी में समाती है। हमारे सन्यासी गुरूजी डांटे कि नहीं सीधे त्रिकुटी में समाती है। आँखवालों को सधती होगी, 'मेरी तो परस बिजिलिया चमके है, उसी से ध्यान सधता है।' यह सुनकर गुरूजी पंडित सीतारामजी ने कहा - मेरे साथ चलो पुत्र। मैं तुम्हें मंत्र दूंगा। नौ दिन

1. खंजन नयन - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 15

का सरल अनुष्ठान है। सिद्ध कर लोगे तो अभागे होकर भी अनेक दृष्टियों से सौभाग्य लाभ करोगे। तुम्हारा भविष्य उज्वल है।........ मैं तुम्हारा वर्तमान नहीं भविष्य देख रहा हूँ। तुम्हारे स्वर में दिव्यत्व और आकर्षण है। आयुमान भी दीर्घ है। लगता है तुम्हारे साथ मेरा पुर बले जन्म का कुछ लेना-देना भी है। मै तुम्हे मंत्र बल से त्रिकाल के दृश्य देख लेना सिखाऊँगा।''

घर में भाइयों ने भी तिरस्कार किया। पिता ने संगीत का ज्ञान तो उत्तम दिया किन्तु मारपीट बहुत की। पिता भागवत महराज है। सात वर्ष की आयु में ही सूर भी कथा बांचने में प्रवीण होगया। सात वर्ष की उर्म में घटित यह घटना ऐतिहासिक तथ्य का आधार है। – [1]''पिता भागवत महाराज गुडगांव में कथा बांच रहे है। 'मूक करोति वाचालम' वाले श्लोक, गाकर सुनाने के बाद उसकी व्यख्या करते है। पिता का सुरा सूर्यनाथ उसके पास ही बैठा है। मधुर गायन, मधुर व्याख्या और सूर के मन में एक मधुर विश्वास भी पन रहा है। उसे आँखे मिल सकती है। उसे भी औरों की तरह ही दिखलाई देसकता है। यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्द माधवम। कैसे पाऊ यह कृपा? भजन कर, ध्यान कर उन का विश्वास प्राप्त कर। श्याम मन बोला था। उसी कथा स्थली में संयोग से पिता की वाणी ने पल-विराम लिया और असाढ़ के पहले दौंगरे की तरह बरस पडी थी सूर की काव्य प्रतिभा- बंदौ चरन कमल हरिराई। जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधे को सब कुछ दरसाई। उस दिन बडी वाह-वाही पाई थी। कथा सुनने वाले धनी जनों ने धन, वस्त्र के रूप में उसे उपहार दिये थे। पिता भी प्रसन्न थे। उस दिन उसका, पहली बार आदर, मान हुआ था। पिता का सुरा, माँ का सूरज अपने मन से ही हरिराय का सूरदास बना था। भगवान की कृपा से क्या नही हो सकता। उसे एक दिन सब कुछ दिखलाई पडेला।''

माता की मृत्यु के पश्चाय घरवालों से ऊबकर सूरज, स्वामी ब्रह्मानंदजी के पास संगीत साधन करने लगे। राजकवि सोमेस्वरजी के पास साहित्य का ज्ञन प्राप्त

---

1. खंजन नयन - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 38

किया। एक-एक वृक्ष की पत्री एक-एक फूल का स्पर्श कराके उन्होंने सूरज को अदभुत ज्ञान दिया था। रंग, धूप, छाया, सागर, नदी आदि सबकी भोद कराया। ज्योतिष पंडित शूलपाणी शास्त्रजी ने सूर को ज्योतिष विद्या के अनेक प्रयोग सिखाये। युवक सूरज को पंडित सीताराम गौड़जी ने एक अध्दुत मन्त्रोपदेश किया जिस के अंतरज्ञान से उसका भविष्य जीवन उजाला बनेगा। इस प्रकार बहुत कम उम्र में ही एक प्रमुख संत के रूप में सूरज विख्यात हो गया था। नाव चलानेवाली 'कंतो' नामक स्त्री से सूरज का परिचय होजाता है। लेकिन एक पठान के हाथों उसकी हत्या होजाती है। जमुना के तट पर केशोराम के मंदिर जब सूरज एक कीर्तना गा रहा था तब महाप्रभु वल्भाचार्यजी के साथ उनकी भेंट हुई। उस वक्त सूर इस प्रकार गा रहा था। 'कृपा अब कीजिये बलि उजाऊ। तुम कृपाल करुणानिधि केशव अधाम-उधारन नाऊँ। अशरन-शरण नाम तुमरों हैं। कामी-कुटिल सभाऊ कलंकी और मलीन बहुत मैं सेंत-मेंत हिविकाऊं। सूर पतित पावन पद अंबुज क्यों सो परिहरि जाऊं। भीड में सन्नाटा छा गया था। सूरज के स्वर में मन्दिर के बाहर भीतर का सारा कोलाहल शांत हो गया। '

इस के बाद सूर को कृष्णा भक्त टोली 'अष्ठछाप' का सदस्य बनादिया गया है। रामभक्त कवि तुलसी ने स्वयं सूरदास के पास आकर प्रणाम किया और आशीर्वाद भी लिया। इस घटना की पृष्टि के लिए यह उद्धरण आवश्यक है। [1]"अकबर बादशाह ने गोस्वामी विटठलनाथजी को आचार्य पद दिया था। आचार्य पद पर आसीन होने के बाद गोस्वामी ने बड़ा यश और द्रव्य आर्जित किया। ऐश्वर्य के विस्तार के साथ-साथ मंदिर में सेवा का विस्तार भी हो गया था। आठ दर्शनों के आठ कीर्तनियाँ नियुक्त हुए। वात्सल्य भाव के साथ साथ माधुर्य भाव भी प्रतिष्ठित हुआ। नंददास, चतुर्भुजदास, छीत स्वामी और गोविंदस्वामी की नियुक्ति से अष्टछाप की स्थापना हुई। सूरबाबा उनके सिरमौर बनाये गये। नये युवा कीर्तनाकार सूरबाबा

---

1. खंजन नयन - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 64

के प्रति बहुत आकृष्ट थे। पुरानों में परमानंदजी और कुंभनदासजी प्राय: आते-जाते रहते थे। परन्तु इन में भी नंददास का बाव्य के प्रति अत्यन्त आत्मीयभाव था। बरसों पहले जब पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए थे तभी से बाबा के पास आते थे। एक दिन जब सूरबाबा मंदिर के पास स्थित कुटी में नंददास से बातें कररहा था। तभी सूरबाबा के शिष्य गोपाल के साथ गौर वर्ण के एक जटा-दाढ़ी-मुक्त तेजस्वी संत हात में कमंडल लिए हुए एक अंगोछा पहने कुटी में आये। 'सीताराम' अरे तुलसी भैय्या ! तुम कहाँ से आए। नंद दास ने उठकर आंगुतक के पैर छुए। तुलसीदास जी मुस्कुराए और सामने बैठे। सूरदास को साष्टांग प्रणाम किया। बाबा आनंद में ठुमुकि चलत रामचन्द्र वाजत वैजनियाँ तुलसीदास गद् गद् हो उठे, कहा, आप के श्रीमुख से यह एक पंक्ति सुनकर दास कृतकृत्य हुआ। अयोध्या में मैंने आप के अनेक पद सुने थे। गोपाल गोसाईजी के भंडार से प्रसाद लेकर आया। तुलसी प्रसाद ग्रहण करते हुए भी सूरबाबा की ओर बार-बार देख रहे थे। बाद में जब आज्ञा मांगी तो बाबा ने उनके हात पकड़लिया और कहा, बैठो-बैठो रामभक्त पहले मेरे श्याम सखा का बखान करो फिर दर्शन करने जाना। अब तो तुम्हें श्याम आरती के दर्शन ही हो सकेंगे। बाबाजी आज्ञा शिरोधार्य कर श्री तुलसी ने गाया -

' देख सखि हरि बंदन इदु पर।
चिक्कान कुटिल अलक अवली छविकहि न जाय शोभा अनुपवर।
धन्य हो, तुम्से भेंट करके बहुत सुखी हुआ भक्तवर।
मेरे राम-श्यास तुम पर सदा यों कृपा करते रहे।
और करेंगे, यह मेरा आशीर्वाद हैं।' ''

दिनबीत रहे थे। ज्यों-ज्यों आयु बढती जा रही थी त्यों-त्यों सूर कृष्ण के हेतु राधानुरक्त होते जारहे थे। सूरज की वाणी के लिखावट के काम में भक्त शिष्य गोपाल व्यस्थ रहता था। गोपाल सूरज का एक परम भक्त शिष्य है। [1]'' एक बार अकबर ने मथुरा में सूरदासजी को बुलाया था। भजन सुने और कहा कि कुछ मांगिए। बाबा

1. खंजन नयन - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 227

बोले, **'अब मुझे फिर कभी न बुलाइयेगा'**। गोधूलि का समय हो रहा था। सूरबाबा बातें करते हुए भी समय का ध्यान रख रहे थे। इकतारा उठालिया, गोपाल ने कलम दवात उठाई। सूरदासजी गाने लगे :

> देखन दै पिय बैरिनि पलकैं।
> रिखत रूप नंदनंदन कौ बीच परैं
> मनु ब्रज की सलकैं।''

दिन बीत रहे थे। आठों याम श्याम को निरखते हुए सूर और श्याम में अंतर न रहा था। एक दिन सूर ने अपनी निधन के बारे में बताया था। अखिर एक दिन सूरबाबा गा रहा था और गोपाल लिखरहा था। अचानक गायन रूक गया और सूर स्वामी के अन्दर से प्राण कोकिला निकल गई। सूर के बारे में ऐतिहासिक जानकारी जितनी प्राप्त है, उसके आधार पर यह उपन्यास लिखा गया है।

2.8.2. काल्पनिकता :-

'खंजन नयन' का लेखन ऐतिहासिक आधार पर लिखा गया है। लेकिन यह भी सच है कि दो-तीन घटनाएं और एक-दो चरित्र भी काल्पनिक है। क्यों कि सूर के बारे में इतिहास में ज्यादा जानकारी उपलब्ध नहीं है। 'मानस का हंस', रचना में लेखक ने तुलसी के व्यक्तित्व को उजाला करने के लिए मोहिनी नामक चरित्र का सृजन किया। उसी प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने कंतों मल्लाहिन का सृजन किया है। सूरदासजी जन्मान्ध थे अथवा बाद में नयन हीन हुए, यह विवादास्पद है। फिर भी लेखक ने सूरबाबा को जन्मान्ध बनादिया। सूरदास जन्मस्थान के बारे में विद्वानों में मतभेद है। लेकिन लेखक ने तर्कों के साथ परासौली नामक गाँव को सूर का जन्म स्थान बताया है। जमुना के तट पर स्थित मंदिन में युवा सूरज गीतालापन कर रहा था। वहाँ नाव चलनेवाली कंतों नामक स्त्री से सूरज का परिचय हो जाता है। वह हर रोज सूरज के पास बैटकर गीत सुनने लगती है। एक दिन वहाँ मंदिर में सूरज

और कंतों के अलावा और कोई नहीं है। सूर के मन में द्वन्द्व भावना उत्पन्न हुई। [1] ''कंतों- सामीजी! श्याम - मन बोला, सावधान सूरज ने कहा - आ गई? अब क्या समय होगा? अरे अभी तो दिन चढ़ों ही है। मैं तो जल्दी भाग आई। रात भर तुम्हारे गाने की आवाज मेरे कानों में आवै, मै आवै, मैं सो नाम पाई। हाथ, तुम्हाई आवाज तो सुनने वाले को कलेजो खींच लेवे है। कंतों स्वामीजी के बदन से बदन सठाकर बैटगई। अनायास नारी स्पर्श के आक्रमण से सूरज मन की आध्यात्मक दार्शनिकता उसका काम दर्शन बनने लगी। देह गुदगुदियों का फुहारा बनगई। बाएं हाथ को दबाकर छूते हुए कंतो के स्तन को मसलने के लिए दाहिन पंजा लपका, पर पास पहुँचने तक दूसरा अर्थ-बोध चतुराई से ग्रहण करलिया। कंतों के स्तन का रस-बस हाथों से मुलायमियत के साथ ढकेल का धीरे से कहा : परे सरको कोई देख लेगा तो क्या कहेगा। बेवस सांस ढीलकर परे हुई। वैसे ही बाहर से आवाज आई: स्वामीजी ....''

सूरदास का मनोभाव का वर्णन प्रस्तुत उदाहरण से पता चलता है। [2] ''कंतों का मन टकराने और बिजलियाँ कडकाने के बाद भी बिन बरसे बादल-सा उदास मंडराता रहा, सूरज मन अभी अपनी तटस्थता की नीति पर दृढ़ था। वह असंभव को संभव करनेवाले अशरण शरण प्रभु की जन्मभूमि में उनके दर्शन करने जा रहा है। उनके प्रति अटूट श्रद्धा रखकर उसने बहुत कुछ पाया है, वह उन्हे अपनी ओर से विमुख नहीं होने देगा। और काम? वह तो हर जीव की वृत्ति है। और अभी मैं कौन बडा सयान होगया हूँ। ब्रह्मचर्य तो बडे-बडे ऋषि-मुनियों से भी नहीं सहा सका। अस्तु जो होगा देखा जाएगा। मैं अपनी ओर से तो इस समय तटस्थ ही हूँ।

'स्वामीजी'! आवाज में बड़ा सहमा-सहमापन, बडी दीनता। सूरज पिघलकर रहगया। बह न सका। बहाव में केशवराय आड़े आते थे। चुपरहा। मोसों रूढियों

1. खंजन नयन - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 56
2. खंजन नयन - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 60

मती सामी जी। या दुनियाँ में मेरो कोऊ नाय है। आँसुओं से आवाज कांप उठी। सूरज मन करुण हुआ, कहा : जिनका कोई नहीं उनके केशवराय है और मैं तुझ से रूठा भी नहीं हूँ। का करु सामीजी, मैं बडी अभागी हूँ. मै भी तेरी ही तरह अभागी हूँगी। सामीजी तुमने सब की जलमपतरिया बिचारी। मेरी नांय बिचारी। इस समय इन सब बिचारों से दूर हूँ। पैले मंदिर ले चल। बाद में और देखा जाएगा। उसका मन गा उठा।...........

मन बस दोत नाहिनै मेरे।
जिन बातनी तैं बहयों फिरता हैं सोई लेलै प्रेरै...
तुम तो दोष लगावत को सिर बैठे देखत नैरै
कहा कहौ यह चरयो बहुत दिन अंकुस बिना मुके रै ....

बहती धारा दीवार से टकराकर एकाएक थम गई। कंतों का स्वर वेदना से कराह रहा था।

'क्या हुआ कंतो ?' 'कुछ नांय!' एक सिसकी, फिर छप! छप! सूरज उस सिसकी से छूकर भी अछता रहना चाहता है। वह केशवराय के द्वार पर जा रहा है। अपने साथ वह केवल उन्हीं का ध्यान लेजाएगा। .... मंदिर आगया।''

सूरज के अंदर द्वन्द्वभाव उत्पन्न होने पर भी अंत में भगवान की ओर ही उसका मन चलता है।

उपन्यास में वर्णित सूरज की पिटाई भी एक किंवदंती है। एक दिन सूर विरोधियों की गुप्त बैठक हुई। षडयंत्र रचा गया। एक रात जमुना के किनारे एक टूटे मंदिर में कंतों और सूर स्वामी सोते पाए गए। दोनों प्राय: विवस्त्र, सूर का एक हाथ कंतो के खुले वक्ष पर। आयोजित नाटक में दर्शकों का अभिनय करके इधर गलियों में प्रचार किया। सूर, कंतों की लीला. कौतूहलवश अचानक जुटजानेवाले भीड जुडगयी। इस कुटिल लीला में मार पीठ करनेवाले भी पहले से ही नियुक्त थे। कंतों और सूर स्वामी की बुरीतरह पिटाई होचुकी थी।

कुछ समय के पश्चात, सब ने पकडकर कंतों को घसीटा नूरे पर खून सवार हो गया था। कंतों का गला पकड़कर दबाना शुरू किया। इतने जोर से दबाया कि कंतों की सफेद पुतलियाँ और जीभ बाहर निकल पडी। चारों ओर के शोर के बीच कंतों मरी पडी थी। मानस का हंस रचना में तुलसी को महान लोक नायक बनाने के लिए लेखक ने मोहिना का सहारा लिया। उसी प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में सूर बाबा के व्यक्तित्व को उजागर बनाने के लिए लेखक को कंतों की सृजन करना पडा।

2.8.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

अमृतलाल नागर जी ने सूरदास के जीवन पर खंजननयन नामक जीवनी प्रधान उपन्यास लिखा था। यह रचना अप्रतिम और अद्वितीय कृति है। जिसके भीतर जीवनीपरक हिन्दी उपन्यास ने अधूरी और अकल्पित ऊचाई, गहराई तथा विस्तार प्राप्त किया है। यह आश्चर्य का विषय नहीं है कि सूरदासजी ने अपने बारे में स्पष्ट रूप से कुछ नहीं लिखा। हिन्दी साहित्य के विभिन्न ऐतिहासिक आधार के माध्यम से हम इतना जान सकते हैं कि सूरदास भक्तिकाल सगुणधारा के श्रेष्ट कृष्ण भक्त कवि थे। वे मूलत: वात्सल्य और श्रृंगार रूप के कवि थे। इसकी रचनाओं में वात्सल्य और श्रृंगार का प्राबल्य है। सूरदास एक लोक कवि थे। सूरदास के जन्म, वंश, मृत्यु आदि विषय विवादास्पद है अत: उपन्यासकार ने मात्र युग व समाज को अपने कथानक का विषय बनाया है। जिसका नायक कृष्ण भक्त कवि सूरदास है। किसी भी कवि के जीवनकृत्त की जानकारी केलिए अंत: साक्ष्य और बहि: साक्ष्य दो माध्यम। अत: साक्ष्य के अंतर्गत कवि की स्वयं कृतियाँ भी रखी गई हैं, जिन में उनके स्वयं के कथन एवं अनायास के संकेतों से सामाग्री प्राप्त होती है। बहिसाक्ष्य के अंतर्गत वह सामाग्री आती है जिसका उल्लेख कवि के अतिरिक्त अन्य किसी ने किया हो। वस्तुत: सूरदास लोक जीवन की सहजता के कवि है। शास्त्रीय शब्दवली में वे सामाजिक है। सूरदास की भी रचना पढ़कर साधारण से साधारण पाठक भी वात्सल्य, श्रृंगार व शांत की त्रिवेणी में गोते लगते हैं। खंजन-नयन के पाठक की

यह अनुभूति है कि पाठक को सूर के अतिरिक्त कुछ भी याद नहीं रहता। लेखक द्वारा निर्मित काल्पलिक पात्रों की ऊहापोह में धिरकर, कल्पना के सागर में डूब जाता है। सूरदास के जीवन द्वारा इस उपन्यास में व्यक्तिगत साधना के लिए कांतभाव और सामाजिक साधना के लिए वात्सल्य भाव को महत्व दिया गया है। इस रचना की महत्वपूर्ण विशेषता इसका दार्शनिक पक्ष है, जहाँ पर नागरजी ने कांतभाव वा राधाभाव का विश्लेषण जीवन द्वारा पाठकों तक पहुँचाया है।

लेखक अमृतलाल जी स्वयं उपन्यास की भूमिका में तुलसी के जीवन के समान सूर की जीवनी को भी ऐतिहासिक बताया। सूर की जन्म भूमि के बारे में पंडितों की कोई निश्चित फैसला नहीं हुआ। सूरदासजी जन्मान्ध थे अथवा बाद में नयन हीन हुए, यह बहस अब तक गर्म है और शायद आगे भी रहे। जन्मतः सूर को अन्धा बनाकर उपन्यासकार ने इन विवादास्पद विषय को समाप्त कर दिया। बचपन में अपनी माता से प्रभावित सूरज के मन मे भगवान श्री कृष्ण के प्रति भक्ति भावना जागृत हुई। संगीत के प्रति रुचि होने के कारण सातवर्ष की उम्र से उस ने गायन शुरू किया। गुरुजी से साहित्यक ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात उन की भेंट पंडित सीतारामजी से हुई, जो इतिहास से दूर नजर आती है। फिर भी यह सच है कि सिद्ध पुरुष और संतलोग भविष्यवाणी जानते है। उसी प्रकार सूरजबाबा ने भविष्यवाणी सीखली। लेकिन सूरज के जीवन ने कंतों नामक स्त्री का प्रवेश बेशक काल्पनिक घटना है। उपन्यासकार ने उपन्यास में रोचकता लाने और सूर के व्यक्तित्व को उज्वल बनाने के लिए केतों नामक चरित्र का आश्रय लिया। अष्ट छाप में स्थान मिलना और गोस्वामीजी तुलसी से मुलाकात करना भी ऐतिहासिक घटना सिद्ध हुए हैं। यह सच है कि सूरबाबा ने राजाश्रय को तिरस्कार किया। इस घटना का भी उपन्यासकार ने एकबार जिक्र किया है। अंत में सूरज के देहावसान की घटना के वर्णन में उपन्यास ने बडी चतुरता दिखाई। आमतौर पर पूरा उपन्यास ऐतिहासिक तथ्यों से भरा है।

2.9. मानस का हंस :-

2.9.1. ऐतिहासिकता :-

मानस का हंस, अमृतलाल नागर का एक श्रेष्ठ उपन्यास है। हिन्दी के महत्वपूर्ण उपन्यासों में उसकी गणना की जाती है। इस उपन्यास की कथा हिन्दी के सुप्रसिद्ध भक्त कवि तुलसीदास के जीवन और उनके युग से सम्बन्धित है। उपन्यास का प्रारम्भ तुलसी के जीवन-काल के अन्तिम समय से होता है। किन्तु इस घटना-प्रसंग के बाद ही विगत-स्मरण कराते हुए लेखक तुलसी के जन्म तथा बाल्यकाल की स्थितियों को सामने ले आता है और उपन्यास की कथा के वर्तमान और अतीत के अनुसार, तुलसी जीवन क्रम निर्धारित होजाता है। उनसठ वर्ष की दीर्घ कालावधि के पश्चात वृद्ध गोस्वामी ने अपने गाँव राजापुर आकर रत्नावली का दाह-संस्कार किया। उसके साथ राजा भगत, संत बेनिमाधव, कैलाशनाथ, पंडित रामू आदि भी राजापुर आये थे। बेनिमाधव की विनती से तुलसी ने अपने प्रारम्भिक जीवन और अतीत स्मृतियों में डूबकर पूर्वदीप के रूप में अत्मकथा प्रस्तुत की। उपन्यास का अधिकांश रूप इसी रूप में ही है। मुगल सम्राट हुमायूँ के समय में गोस्वामीजी का जन्म विक्रमपुर में हुआ था। माता-पिता के नाम हुलसी और आत्माराम हैं। उनके बचपन का नाम राम बोला है। तुलसी का बचपन बहुत ही विपत्तियों में व्यतीत हुआ था। एक दिन उसकी भेंट बाबा नरहरिदासजी से हुई। बाबा ने उसे 'तुलसीदास' नाम दिया और राम-भक्ति का आशीर्वाद दिया। माता-पिता की मृत्यु के पश्चात पार्वती नामक वृद्ध महिला ने उसे बिदा किया। काशी में उसकी पढ़ाई हुई। राजा भगत के साथ उसकी मुलाकात एक दिन होजाती है। तब से विक्रमपुर गाँव का नाम 'राजापुर' बनगया । भगत के मित्र दीनबंधु पाठक ने तुलसी से अपनी पुत्री रत्नावली से शादी कराके जामाता बनाया। रत्नावली का चचेरा भाई गंगेश्वर तुलसी की बढती हुई लोक ख्याती के कारण जलने लगता है। एक दिन उसने तुलसी का अपमान किया। रत्ना ने व्यंग्य बात कही थी। घर-परिवार छोडकर तुलसी के काशी चले जाना ऐतिहासिक घटना है। उस के आधार के लिए तुलसी और रत्ना के बीच का

प्रसंग इस प्रकार है।[1] ''पहले रत्ना कहती हैं मै अभी मरी नहीं, जी रही हूँ, कविराज, केवल एक यथार्थ सत्य का निरूपण भर किया था, मै नें। मनुष्य रूप, प्रकृति की शोभा सब नश्वर है। फिर ऐसे आधार पर ऐका देने से लाभ ही क्या जो विश्वास का ठोसपन न लिए हो? तुलसी गंभीर होगये, सीधे तनकर बैठगये। क्षण-भर मौन रहकर कहा - सच है। टिकनेवाला तो सियाराम रूप ही है।....... तुलसी रत्ना के स्वभाव की इस वक्तृता से कही पर खिन्न भी है। इस हीन भाव के जगाने पर रत्नावली कभी-कभी उनके प्रति ईष्यालू भी हो जाती थी। दूसरे दिन वह फिर से कहती है - सुनते हो मैं ने प्रश्न कुण्डली बनाकर दिखा दिया। यह यात्रा तुम्हारे लिये बड़े महत्व की सिद्ध होगी। राम का नाम लेकर अपना जी कड़ा करके तुम काशी चले जाओ। सुनकर तुलसी विचार में पडते हुये बोले-हाँ-पर....। रत्ना - पर - वर कुछ नहीं। इतनी भक्ति और वैराग्य की बाते करते और थोड़े दिनों के लिए मेरे बिना संयम से नदी रहसकते? तुम्हारे जैसे व्यक्ति को यह शोभा नहीं देता। रत्नावली की बात सुनकर तुलसी को झटका लगा। लज्जा का बोध भी हुआ। वे बोले - दूसरों को उपदेश देना सरल होता है, पर स्वयं आचरण करना अति कठिन । फिर भी आत्म-संयम करना आवश्यक है। ठीक है, मैं काशी जाऊँगा।''

उपन्यासकार द्वारा वर्णित यह घटना ऐतिहासिक है। रत्ना के फटकारने के पश्चात ही तुलसी की ज्ञान नेत्र खुलती है। तुलसी की जन प्रियता से ईर्ष्यांग्रस्त पंडित वर्ग ने राजा टोढरमल के सामने ही तुलसी की निन्दा की । इस के प्रत्युत्तर में तुलसी कहते हैं -

[2] '' धूत कहाँ अवधूत कहै, राजपूत कहौ जो लहा कहौ कोऊ।
काहू की बेटी सों बेटा न भाहब काहू की जाति बिगार न सोऊ।
तुलसी सरनाम गुलामु है, राम को जाको रूचें सो कहै कछु ओऊ।
मांगि कै सैबो मसीत को सोइबो लैबे को एक न दैबे को दोऊ।'

---

1. मानस का हंस - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 238
2. मानस का हंस - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 31,32

जब इतने से भी विरोधियों को संतोष नहीं हुआ तो वे गोत्र वगैरह की समस्या ले बैठे। इस जाती पांत के आक्षेप का तुलसीदास ने खरा उत्तर दिया है। जिसे निम्न पद के अनुवाद के रूप में प्रस्तुत किया है।

मेरे जाति पांति न चाहौ काहू की जाति पांति
मेरे कोऊ काम को न हौं काहू के काम को।
लोक पर लोक राघुनाथ ही के हाथ सब
भारी है भरो सो तुलसी के एक नाम को।
आति ही अयाने उपखानों नही सूझौ लोग
साह ही को गोत गोत होत है गुलाम को।
साधुकै असाधु कै भलो कै पोच सोच कहा
का काहू द्वारा परौं जो हैं सो हौं राम को॥

इस प्रकार लेखक ने तुलसी की जाति - पांति के सम्बन्ध में जिज्ञासा को शांत करने के लिए उपयुक्त तथा अवसर के अनुकूल प्रसंग निर्मित किया है।'' कशी से तुलसी चित्रकूट पहुँचता है। राजा तोडरमल उसकी मदद करता है। 'राम चरित मानस' का समापन तुलसी ने चित्रकूट में किया है। अकबर ने मनसबदारी स्वीकार करने का आग्रह भी किया। लेकिन तुलसी ने साफ-साफ इनकार कर दिया। महाकवि रहीम तुलसी से अत्यंत प्रभावित हुये थे। उन्ही दिनों में काशी में प्लेग का प्रकोप हुआ। तुलसीदास भी इसके शिकार हो गये थे।

2.9.2. काल्पनिकता :-

'मानस का हंस', में लेखक द्वारा प्रस्तुत किये गये चरित्रों में पार्वती नामक वृद्ध भिखारिन और युवक तुलसी के आकर्षण का प्रभाव केन्द्र बननेवाली रमणी 'मोहिनी' भी काल्पनिक है। उपन्यास में वर्णित तुलसी के पार्वती माँ के आश्रय में व्यतीत किये जीवन की झांकी इन पंक्तियों में मिलता है।

[1]"जाति के सुजाति के कुजाति के पेटागि बस
खाए टूक सबके विदित बात दुनीं सो॥"

अनाथ बालक तुलसी, महावीर के मन्दिर में वानर सेना तथा हनुमान खौची के सहारे रहते नरहरी बाबा से भेंट करना उपन्यासकार आदर्श रूप से वर्णन इस प्रकार किया।

[2]" बालक बिलोकि बलिबारे तें अपनों कियों
दीनबंधु दया कीन्हीं निरूपाधि न्यारिए।
शवरों भरोसो तुलसी को शवरोई बल
आस शवरीवै दास शवरी बचारिए.॥"

निराश्रित बालक स्वयं को अपमानित, किन्तु बदला लेने में अक्षम जानकर आराध्य देव हनुमान को पुकारता हुआ हनुमान के मन्दिर में जा पहुँचता है। वहाँ बालकी बन्दरों से दोस्ती हो गई। यह लेखक की काल्पनिक घटना है। युवक तुलसी के आकर्षण का प्रथम केन्द्र बननेवाली रमणी मोहिनी की सृष्टी पर लेखक ने जन-मानस में प्रतिष्ठित तुलसी को मानवी स्वरूप प्रदान करने के लिए निश्चय ही नव आयाम उद्घाटित किये हैं। मेहिनी ने वासना की अतृप्ति को अभिव्यक्त किया है और उस अतृप्ति के द्वारा तुलसी की अन्त: दुर्बलताओं को सामने लाकर लेखक ने तुलसी के चरित्र निर्माण को अधिक निश्वस्त धरातल दिया है। मोहिनी - प्रसंग, लेखक द्वारा कल्पित है, पर वह एक विशिष्ट उद्देश्य देकर रचा गया है। उसके द्वारा नागरजी तुलसी के व्यक्तित्व की निर्माण प्रक्रिया में काम-राम-संघर्ष का वीज-वधन कर उसे पल्लवित करना और फलत: रामभक्ति की विजय दिखाना चाहते है। यह इस उपन्यास का एक विशिष्ट कथ्या है।

---

1. मानस का हंस - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 30
2. मानस का हंस - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 31

[1]''एक किवंदंती यह भी है कि काशी में कुछ समय तक तुलसी हनुमान फाटक पर रहे थे। वहाँ पर भक्तों की भीड़ होने लगी। कट्टर नव मुसलमानों को यह बात असह्य लगी। वे उपद्रव मचाने लगे। उस मन्दिर को छोडकर वे अस्सी घाट पर रहने लगे। कहते हैं कि तुलसी के मित्र टोडर अस्सी घाट पर एक मन्दिर बनवा कर आग्रहपूर्वक वहाँ लेगये थे। अत: गोसाइयों ने उस से वैर ठान लिया। एक बार तुलसी ब्रज यात्रा पर गये हुये थे। लौटने पर सुना की उन के परम मित्र टोडर को द्वेषी गोसाइयों ने मार डाला है।''

इस जनश्रुति का लेखक ने स्थान-स्थान पर प्रयोग किया है, अर्थात इसे एक साथ इस रूप में नहीं दिया किन्तु काशी में पग-पग पर हुये संघर्षों के मध्य इसका संकेत जहाँ-तहाँ दिया है।

2.9.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

तुलसी के जीवन पर अमृतलाल द्वारा लिखित उपन्यास 'मानस का हंस' है। उपन्यासकार ने इस में सभी तथ्यों की रक्षा करते हुए जनश्रुतियों, लोक कथाओं का समुचित प्रयोग किया है। ऐतिहासिक व्यक्ति को अपनी रचना का विषय बना लेने पर उपन्यासकार के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह किसी न किसी सीमा तक ऐतिहासिक तथ्यों से बंधा रहे, क्योंकि इतिहास मूक रहे और किंवदंतियां मुँह खोलती हैं तो लेखक को संकट का सामना करना पड़ता है। किन्तु नागर जी ने इस संकट को टाल पाया है और इतिहास, साहित्य और श्रद्धासिक्त अनुभूतियों के बीच से निर्विवाद और अवरोधी पर आलोच्य कृति को निकाल लाये हैं। प्रामाणिकता के विषय में यह उपन्यास तुलसी के व्यक्तित्व का अनुपम और सशक्त सोपान है। इस में युगधर्म, संस्कृति व मानवता के बारे में लिखागया है। इस उपन्यास की रोचकता का भेद नागरजी की विशिष्ट शैली है। ग्रंथ में लगभग दो दर्जन बार

---

1. मानस का हंस - अमृतलाल नागर - पृष्ठ - 37

'पूर्वदीप्त' का प्रयोग हुआ है। कहीं साक्षात्कारात्मक शैली और कहीं वृत्त-चित्र जैसा परिदृश्य है। ईर्ष्यालू, हिंसक, विशेषताओं के बीच तुलसी की सहिष्णुता बहुत भव्य लगती है। इसमें 'मोहिनी बाई' प्रसंग 'लालाजी' अन्य पात्र काल्पनिक है। तुलसी के कुछ विशिष्ट मनोभाव जैसे कामातुर होने तथा स्त्री के प्रति सहज आकर्षण आदि प्रसंग, तुलसी का ज्योतिषी रूप, आदि काल्पनिक है। तुलसी के कुछ विशिष्ट मनोभाव जैसे कामातुर होना तथा स्त्री के प्रति सहज आकर्षण आदि प्रसंग, तुलसी का ज्योतिषी रूप आदि काल्पनिक है। छोटी-छोटी लोक कथाओं वा दंत कथाओं के माध्यम से नीति का उपदेश काल्पनिक होते हुए भी पाटक के लिए उपयोगी है। दो रूपों में यह रचना विशिष्ट है। पहले नगर जी ने तुलसी को भक्त तथा ज्योतिषी कुरुपों में चित्रित किया है। महान संत, लोकनायक वा समाज सुधारक के जीवन में 'काम और राम' का द्वंद्व दिखाना, दूसरी विशेषता है। यह कार्य लेखक ने तुलसी की गरिमा को बिना ठस पहुँचाया है और तुलसी को संस्खलित होने से बचाया है।

'मानस का हंस' के लेखक ने अनेक छोटी-छोटी कहानियाँ भी बीच-बीच में प्रस्तुत की है। इन कहानियों में तुलसी की 'पार्वती' के संरक्षण में बाल्यकाल बिताना, हनुमान जी की शरण प्राप्त करना, गुरु रूप में नरहरिबाबा की प्राप्ति राम की सुन्दरता देखने के लिए राजा के बगीचे में नाली से होकर जाना और मार खाना, शेष सनातन की पाठशाला में भूत-पथ पर विजय पाने के लिए हनुमान चालीसा की रचना, युवा वस्था में मोहिनी प्रणय, मानसरोवर तक यात्रा, मुगलों की सेना द्वारा पकड़े जाना तथा ज्योतिष - ज्ञान से प्रभावित होकर स्वयं मुगलों से बचना तथा अन्य बेगारियों को बचाना, नंददास - प्रसंग, राजापुर में कथावचन तथा ज्योतिष-विद्या से प्रभावित होकर विवाह, काशी में रामाज्ञा-प्रश्न की रचना काशी से राजापूर लौटाने के बाद पत्नी के उपदेश से वैराग्य - प्राप्ति, अयोध्या में रामानुजी मठ के पद पर कार्य कथाबाँचन तथा 'रामचरित मानस' लिखने का प्रारम्भ, अयोध्या में ही लिखने में विघ्न पड़ने विरोधी धर्मवालों से संघर्ष, लोक मंगल के लिए रामलीला का प्रचार, महामारी के समय लाकों संघठन आदि घटना प्रसंग उपन्यास की कथा को विकसित

करते हैं। और साथ ही तुलसी के चरित्र का भी सामग्री बनाते हैं। इस प्रकार कथा का मूल लक्ष्य-तुलसी व्यक्तित्व प्रस्तुत करना-बिगड़ने नहीं पाया है। इन खोटी कहानियों के घटना प्रसंग लेखक की मौलिक कल्पना से अद्‌भुत है। लेखक ने तुलसी-रचित तथा तुलसी से सम्बन्धित सामाग्री का अच्छी तरह अध्ययन किया है। इसलिए उपन्यास ऐतिहासिक तथ्यों से भरा है। जहाँ-तहाँ काल्पनिकता दिखाई देती है। भाषा-शैली की दृष्टि से भी उपन्यास सफल कृति है। नागरजी ने अत: साक्ष्य और प्रभावशाली बहिस्थाक्ष्य के आधार पर तुलसी के चरित्र की बात जीवन्त और प्रभावशाली रचना की है। तुलसी के मध्यम से उन के समय की व्यापक - परिवेश भी चित्रित हुआ है। तुलसी इस प्रकार व्यापक परिवेश की विसंगतियों और अपने भीतर की कमजोरियों से निरन्तर लडते हुये तुलसी बनते है। 'राम-काम' का जो भयानक द्वन्द्व उनके भीतर चलते है उस से लहू-लुहान होते हुए भी वे राम के प्रति अपने को सर्वस्व - भाव से समर्पित करने में सफल हो जाते हैं।

2.10. मेरी भव बाधा हरो :-

2.10.1. ऐतिहासिकता :-

'मेरी भव बाधा हरो', डां. रांगेय राघव के रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि बिहारी के जीवन-चरित्र पर आधारित जीवन-चरितात्मक उपन्यास है। डा. राघव जीवन-चरितात्मक उपन्यास रचना में ज्यों-ज्यों आधुनिक समय के निकट के काल खण्ड को लेते गये हैं, त्यों-त्यों कल्पना से इतिहास की ओर बढ़ते गये हैं। इसकी कथावस्तु सुश्रृंखलित है। आध्यन्त कथानक बिहारी की ऐसी जीवनगाथा है जो तत्कालीन समस्त गतिविधियों को अपने में समेट सकी है। लेखक ने बड़ी कुशलता से कथावस्तु को पाँच भागों में विभाजित कर बिहारी के जीवन के क्रमिक विकास हो गया है। बिहारी उनके पिता केशवराय, केशवदास, स्वामी नरहरिदास, प्रवीणराय, चन्द्रकला एवं मुगल शासक सभी ऐतिहासिक पात्र हैं और उनके सम्बन्ध भी प्रामाणिक है। लेखक ने उनकी गतिविधियों का वर्णन भी ऐतिहासिक मर्यादा को स्वीकार करते हुए किया है।

बिहारी के पिता केशवराय और कवि केशवदास दोनों के बारे में विद्वानों में मतभेद हैं। लेकिन इस संदर्भ में जो विवरण दिया, वह ऐतिहासिक है। [1]''केशवदास गुणाढ्य सनाढ्य जाति के थे। वे इस समय वृद्ध हो चुके थे। वे भक्त भी थे और रसिक भी। उन की कुल परम्परा में सब लोग संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित होते आए थे। इस समय वे अपनी प्रसिद्ध कृति रामचन्द्रिका की एक नई प्रतिलिपि को सामने चौकी पर रखे बैटे थे। पिता केशवराय सामने बैठे थे। पास में बैठा था। बालक बिहारी। 'यह मेरा छोटा पुत्र है,' पिता ने कहा। वृद्ध ने स्नेह से देखा। वे जितने विद्वान थे, उतने ही सरल भी थे। ....केशवदास ने कहा, बालक का क्या नाम रखा है? इस का बिहारी लाला। वृद्ध महाकवि ने बिहारी। मैं इसे आप जैसे महापुरुष की शरण में ही छोड़ना चाहता हूँ। आज्ञा दें। तुम्हारा पुत्र मेरा पुत्र है। वृद्ध महाकवि ने कहा।....... जब वे घर पहुँचे तब माँ स्नान करके बैटी थी। देखती ही बोली, आ गया बेटा! कहाँ हो आया? माँ! महाकवि केशवदास का शिष्य बनआया हूँ, माँ। बिहारी का गर्व से भरा स्वर गूँज उठा।'' इस घटना से यह ज्ञात होता है कि पिता केशवराय और महाकवि केशवदास में अंतर स्पष्ट है। ऐतिहासिक स्थर पर यह सत्य है कि बिहारी ने महाकवि केशव को अपना गुरु मानलिया है ।

बिहारी ने स्वामी नरहरिदास से दीक्षा-प्राप्त की। यहाँ उसने विधिपूर्वक शास्त्रों तथा साहित्य का गम्भीर अध्ययन किया। बिहारी का विवाह मथुरा में हुआ है। पिता की भांति ही बिहारी भी कविता लिखने लगा था। स्वामी नरहरिदास उसकी प्रतिभा देखकर प्रसन्न रहते थे। बिहारी अपनी पत्नी 'सुशीला' के साथ अपने काकाजी के घर में रहता था। निर्धनता के कारण उसे बहुत ही अपमान सहना पड़ा। पिता की मृत्यु के बाद वह बिलकुल निराधार हो गया। भाभी और भैय्या के घर में उसे अपमान मिला था। एक दिन उन के घर एक अतिथि आया जो साहित्यकार है। काका के प्रोत्साहन से दोनों के बीच काव्य चर्चा हुई। बिहारी के पदों से वह अतिथि बहुत ही प्रसन्न होने लगा। लेकिन काका समझ नहीं पा रहे थे। तब बिहारी ने कहा

---

1. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 10

[1]"करलै सूँधि सराहि तू रहे सबै गहि मौनु।
गंधी अंध, गुलाब कौ, गँवाई गाहकु कौनु॥ "

काका ने उसकी ओर आश्चर्य से देखा। दक्खिन की लडाई खतम होचुकी थी। 'शहजादे खुर्रम' और खुद शंहशाह जहंगीर ने वहाँ जाकर सेना संचालन किया था। शहंशाह का झण्डा दक्षिण में अपराजित रूप से फहराने लगा था। किसानों पर करों का भयानक बोझ था। कारीगर गरीब हो रहे थे। लेकिन मुगल वैभव अपने सम्पूर्ण मद से छाया हुआ था। ससुराल में रहते अब बिहारी और सुशीला को छह वर्ष बीत चुके थे। बिहारी को चारों ओर अपमान दिखाई देता था। पत्नी सुशीला भी अत्यन्त खिन्न रहती थी। समाचार मिला है कि नरहरिदास से मिलकर आशीर्वाद लेने स्वयं 'शहजाद' अपनी सेना सहित आनेवाले हैं। उस वक्त स्वामीजी के पास बिहारी भी था। [2]"महात्मा के दर्शन करने स्वयं शहनशाह जहंगीर आए। चारों ओर कोलाहल हो उठा। बादशाह के तामझाम आगे बढे। स्वामी नरहरिदास से बादशाह मिले साथ में या शहजादा खुर्रम गोरा, खूबसूरत, मजबूत । दकि्खन उसने जीता था। बादशाह के विशाल लश्कर को बिहारी ने देखा, बैभव को देखता ही रह गया। सुशीला का हाथ पकड़कर बिहारी ने कहा :

दीरघ सांस न लेहुं दु:ख सुख साईहिं न भूलि।
दई-दई क्यों करतु है, दई-दई सु कुबुलि॥

तुम उसके बीच जाओगे? सुशील ने उसकी ओर देखा। बिहारी हंसी। बोला राजा और कवि की चोट तो सदा से होती आई है। तुम डरती हो?। अकबर के शाह के यहाँ भी बड़े बड़े रहते थे। किन्तु नवरत्नों का दर्जा कोई हिन्दु कवि नहीं पा सका।"

इस प्रकार शहनशाह के दरबार में स्थान प्राप्त करने बिहारी को बहुत समय लगा। अंत में उसने विजय प्राप्त की।

---

1. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 35
2. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 43

बिहारी के युग की सामाजिक स्थिति के वर्णन में लेखक को पूर्ण सफलता मिली है। यथार्थवादी वर्णन होने पर भी उपन्यास में कहीं भी नीरसता नहीं आ पायी है। वर्णाश्रम के दृढ़ समर्थक महाकवि तुलसीदास में पश्चात ब्राह्मणों का महत्व समाज में पुनः बढ़गया था। महाराजा जश्वंत सिंह के दरबार में कवि बिहारी के पहुंचने के पश्चात जब अत्यन्त सम्मानित वृद्ध व्यक्ति कल्याणसिंह को ज्ञात हुआ कि बिहारी ब्राह्मण या तो उठकर चरण स्पर्श किये और बोले – [1] "अभी धर्म तो नहीं उठगया।" हिन्दुओं के अतिरिक्त मुगलों में भी ब्राह्मणों के प्रति अत्यन्त सम्मान था। बिहारी ने [2] 'स्वामी नरहरिदास' के आश्रम में प्रवेश करते समय देखा कि स्वामी नरहरिदास अपने कुशासन पर बैठे थे। शाहजादा खुर्रम घुटने मोड़ बैठे थे एक कम्बल पर। भारत की इस परम्परा को अकबर ने जीवित रखा था। वह विद्वानों के सामने स्वयं ऐसे ही बैठता था, उनका आदर करता था। ब्राह्मण इसलिए मुगलों से प्रसन्न थे।" उस युग की विलासित की धारा में ब्राह्मण भी आगये थे, जिस के कारण उनकी विलासिता की धारा में ब्राह्मण भी आगये थे, जिस के कारण उनकी स्थिति पुनः लड़खड़ाने लगी थी। माथुर ब्राह्मण बिहारी का अधिकांश समय अनिंद्य सुन्दरी वेश्या, चन्द्रकला के साथ व्यतीत हो रहा था। खाना प्रातः काल चौके में चलता सुशीला के पास। शाम को पक्का खाना प्रातः काल चौके में चलता सुशील के पास। शाम को पक्का खाना चन्द्रकला के यहाँ खा लिया जाता। विलासिता की बाढ़ ने समाज के सामाजिक ढांचे को झकझोर दिया था। एक ओर राजा, महाराजा, नवाब, इत्यादि आमोद–प्रमोदमय जीवन व्यतीत करते थे, दूसरी ओर किसानों और मजदूरों का वर्ण श्रम से जीवको पार्जन करता था। शासक अपने सुख–साधन के लिए जिस दलित जाति पर आश्रित रहते थे, उसकी स्थिति सुधारने की ओर उनका ध्यान नहीं था।

---

1. मेरी भव बाधा हरो – डा. रांगेय राघव – पृष्ठ – 227
2. मेरी भव बाधा हरो – डा. रांगेय राघव – पृष्ठ – 54

एक बार बिहारी का मुलाकात महानकवि रहीम से हुआ। उस वक्त रहीम वृद्ध था और दरिद्र सा हो रहा था। क्यों कि, शहनशाह की आँख उसकी ओर से फिर रही थी। [1]''बिहारी ने कहा, प्रमाण करता हूँ। रहीम ने कहा, अच्छा, पहचाना! बिहारी लाल है? हाँ मैं ही हूँ। पहचानने की आप से क्या कही? रहीम ने कहा? तुम भी कवि हो। देखकर प्रसन्नता होती है, तुम्हारी उन्नति। .... वेदना से भीतर ही भीतर वृद्ध डांवडोल हो रहा था। बिहारी का मन व्याकुल होने लगा। काव्य ही तो सत्य है। सब कुछ नष्ट हो सकता है। मन व्याकुल होने लगा। काव्य तो उसका सत्य है। होंट बोल उठे।

कनक कनक ते सौगुनी मादकता अधिकाई।
इहिं खाये बौराई जग, उहिं पाँ बौराई॥''

रहीम की अवस्था देखकर बिहारी काम मन भीतर ही कांप उठा। [2]''बिहारी मुगल दरबार का कवि हो गया। सुशीला अवाक् बैठी रही। फिर वह रोपडी। हर्ष के आँसू बह निकले। बिहारी ने कहा, सुशीला बडों से ही काम बनता। छोटों से नहीं।

कवों न ओछे नरन सों, सरत बडन के काम।
मढौ दमाना जात क्यों, कहि चूष्टे के चाम॥''

बिहारी ने कहा मुझे अखण्ड साधना के लिए अवकाश चाहिए। यदि वह मुझे मिल सका तो ऐसी सुन्दरता की सृष्टि करूंगा कि लोग देखते रहजाय।

बिहारी ने अपने अंतिम दिनों में यह जान लिया कि तमाम दुनिया माया है। जब सुशीला मृत्यु शय्या पर पडी थी, बिहारी का मन खट्टा होगया। उसका बेटा, 'निरंजन कृष्ण' भी व्यथित हो उठा। अंतिम संस्कार करनें के बाद, पूरी तरह बदल

---

1. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 75
2. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 53

चुका है। बिहारी अब दिन-रात मन्दिर में ही रहता था। अंत में एक दिन बिहारी ने अपने पुत्र से कहा -[1] " बिहारी ने फिर से कहा -

मेरी भव बाधा हरो राधा नागरि सोई।
जा तन की झाई परे स्याम हरित होई॥ "

अब मैं जा रहा हूँ। महाराजा। राधा नागरी की प्रकार में सतसई पूरी हुई। 'निरंजन' रोने लगा। बिहारी नहीं रुका। और वह सब छोड़कर बाहर चला आया। प्रजाजन देखते रहे। उसे गोपाल बुला रहे थे।'' इस प्रकार पूरे उपन्यास को लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यों पर लिखने का प्रयत्न किया है।

2.10.2. काल्पनिकता :-

राघव जी की रचनाओं में 'मेरी भव बाधा हरो', एक सफल जीवन-चरितात्मक उपन्यास है। लेखक उपन्यास रचना में ज्यों-ज्यों आधुनिक समय के निकट के कालखण्ड को लेते गये है, त्यों-त्यों कल्पना से इतिहास की ओर बढ़ते गये हैं। बिहारी की जीवन गाथा के साथ तत्कालीन समस्त गतिविधियों का वर्णन भी उपन्यास में कियागया है। पूर्ण कथावस्तु पाँच भागों में विभाजित है। उपन्यास की सफलता के लिए लेखक ने जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लिया। केशवदास के बारे में वर्णन करते समय काल्पनिकता का झलक दिखाई देता है। उदाहरण के रूप में [2] "बिहारी ने आश्चर्य से देखा केशवदास के मुख पर गौरव था, एक प्रभाव डालने की शक्ति थी। पिता से उसने सुना था, 'केशवदास' बहुत बडे कवि हैं। बहुत बड़े आदमी हैं। उन के घर के तोते संस्कृत बोलते हैं। रामचन्द्रिका में उनका अगाध पाण्डित्य है। चंद के बाद केशव ही कवि है। राग अवश्य थे, परन्तु केशव है। यों सूर और तुलसी भी हुए हैं। परन्तु केशव में संस्कृत के महाकवियों का सा गौरव है। वह तो युग बदल गया। लोग अब संस्कृत समझते नहीं। अन्यथा भाषा में लिखते

1. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 143
2. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 10

ही क्यों? अरे, वे बड़े चतुर हैं। वीरसिंह जब अबुल फज़ल के विरुद्ध पकड़े गये थे तब अकबरी दरबार में जाकर उन्हें क्षमा दिलाना इन्ही का काम था। कोई साधारण बात नहीं थी। केशवदास ने रामचन्द्रिका उठाली और कहा, चंद्रिका, का अध्ययन करके, - मै कथा बता सकता हूँ, महाकवि, पिता केशवराय ने कहा, 'यह तो महा समुद्र है। उसके मोती एक से एक बड़े ही आमूल्य है। ''

इस संदर्भ में तुलसी का जिक्र किया गया है। लेखक ने केशवदास की व्यक्तिगत जीवनी के बारे में इस प्रकार लिखा है कि केशवदास एक वेश्या के साथ जीवन बिताते थे। उस वेश्या का नाम 'प्रवीणराय' था। उसका सौन्दर्य अनुपम था। [1] ''प्रवीणराय का सौन्दर्य अर्थ कम नहीं हुआ था। वह अब लगभग 35 वर्ष की थी। केशवदास की यह वेश्या उनके सम्पर्क में आकर स्वयं काव्य-रचना करने लगी थी। वह बहु मूल्य वस्त्र पहनती और उसकी ग्रीवा में अत्यन्त मूल्यवान मोती के हार झूला करते। कभी-कभी वह मुगल ढ़ंग की पगड़ी भी पहनती जिसका रिवाज ऊँचे घराने के मुगलों के अतिरिक्त हटता जा रहा था। उसकी त्वचा मक्खन सी श्वेत और स्निग्ध था। वह बड़े ही मधुर स्वर में गाती थी। ''

महाकवि केशवदास ने रहीम, सूर, तुलसी और कबीर जैसे महान कविगण के बारे में इस प्रकार बताया है। - [2] ''महाकवि के स्वर में एक हल्का सा व्यंग्य झलक आया। और वे फिर बोले, 'गंगा' को छोड़ दो। रहीम भी अच्छा है, परन्तु इनके काव्यों में अधिक ग्राम्यत्व है। मै ने काव्य लिखा है, तुलसी ने पुराण लिखा है।....... गागर में सागर भरना ही काव्य है। '' केशवदास के पास शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात बिहारी अपनी पत्नी सहित काकाजी के यहाँ रहते हुये पंडित नरहरिदास से शिक्षा ग्रहण की। स्वमी नरहरिदास ने बिहारी को श्रीकृष्ण और राधा के बारे में अवगत कराया। उन्हों ने धर्म को स्थायी माना। उनकी दृष्टि में राज्य आते हैं

1. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 11
2. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 15

मिटजाते हैं। धर्म में ही भक्ति और विश्वास होना उचित है। कृष्ण और राधा का उपासना करने के बारे में स्वामीजी ने बिहारी को समझाया है। बिहारी के युग में कृष्ण की अपेक्षा राधा की आराधना अधिक होती थी। धर्म अंधविश्वासों की जंजीर से जकडा हुआ था। महात्मा तुलसीदास आदि के द्वारा संजोथा हुई भक्ति परंपरा इस युग में पुनः लड़खड़ाने लगी थी। आराध्य कृष्ण को भी अश्लील श्रृंगार के क्षेत्र में उतारा जा रहा था, किन्तु उनके ईश्वरत्व पर आंच नहीं आ पायी थी। नाथ योगी भी अपने पुनीत कार्य से विमुख होकर लोगों की आयु घटाने-बढ़ाने के कार्य में रत हो गये थे। इस तरह उपन्यास में सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिस्थितियों पर भी अत्यन्त हल्का प्रकाश डाला गया है।

बिहारी को जब शाहजादे के दरबार में आश्रय मिला तब वह अपनी पत्नी सहित बहुत खुश हो गये। लेकिन यह काल्पनिक है कि शाहजादे ने ही वेश्या चन्द्रकला को बिहारी को सौंप दिया। [1]'' दूसरे दिन सचमुच सिपाही पालकी के साथ आया। सारा मुहल्ला बाहर आया। एक अफसर ने अदब से कहा कविराज बिराजिये। पालकी चल पड़ा। ....शहजादा रेशमी गद्दे पर बैठा था। बिहारी ने कोशिश की। आओ कविराई! शाहजादे ने प्रसन्नता से कहा। आज्ञा पाकर सामने बिहारी बैठ गया। सुन्दरी बांदी ने शहजादे को मुस्कुराकर पान दिया। बिहारी ने कहा कि सुन्दरियाँ उसे मुस्कुराकर देख रही थीं। शाहजादे ने कहा, यह जोधपुर की है। बडा अच्छा नाचती है। देखेंगे। .... शहजादा खुर्रम ने बिहारी को बुलाकर कहा कविराई! बिहारी ने कोर्निश की। शाहजादा ने ताली बजाई। पर्दा हिला। शाहजादा मुस्कुराया। बिहारी ने आँख उठाई। शाहजादा प्रसन्न था। बिहारी ने देखा-चन्द्रकला। अनुपम सुन्दरी वेश्या। वह अपने सारे श्रृंगार किए खड़ी थी। यह हम तोहफा देते हैं।'' दिल्ली के महलों में होनेवाले अकृत्यों का वर्णन करते हुए लेखक ने पांचवे भाग में एक संदर्भ में वर्णन किया। [2]''सिल्लादेवी को सिर झुकाया।

---

1. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 50-64
2. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 110

इस देवी को महाराजा मानसिंह बंगाल के समुद्र में से उद्धार करके लाये थे। यहाँ अब भी इस के लिए एक भैंसा रोज कटता। रक्त की गन्ध में से उठा करती थी। बैष्णव बिहारी ने माया झुकाया और सांस रोकता हुआ आगे बढ़ आया। उसने मन ही मन कहा, हे दयामई! मेरी समस्या का हलकर। जगदाम्बा! मेरी लाज रख। .... मुगल दरबार में यह सब भला कौन पूछता था? '' इस प्रकार उपन्यासकार ने देशकाल–वातावरण का भी सही वर्णन किया। परन्तु भैसों को काटना, स्त्रियों को विलासी चीज के रूप में वर्णन करने में लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। फिर भी काल्पनिकता के कारण भी उपन्यास को लेखक ने रोचक बना दिया।

2.10.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

'मेरी भव बाधा हरो' – नामक उपन्यास की कथा–वस्तु अनुपात की दृष्टि से श्रेष्ठ है। आद्यन्त कथानक बिहारी की ऐसी जीवन गाथा है जो तत्कालीन समस्त गति विधियों को अपने में समेट सकी है। कथानक अत्यन्त आकर्षक है। बिहारी कवि केशव, गुरु नरहरिदास, जयसिंह, अकबर, बिहारी की पत्नी सुशीला उसका पुत्र निरंजन आदि ऐतिहासिक चरित्र साबित होते हैं। काल्पनिक चरित्रों के अंतर्गत बिहारी की वेश्या चंद्रकला, राजा जयसिंह नव विवाहित पत्नी, केशवदास की वेश्या–प्रवीणराय, आदि मुख्य हैं। समाज में नारियों की परवश दयनीय स्थिति को चित्रित करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है। नारी की दुहिता, भगिनी, माता का रूप समाप्त हो गया था, वह केवल विलासित की मूर्ति बनगयी थी। गांव और नगरों की युवतियाँ महलों में गोलियाँ बनकर बरसती थी। राजा और प्रजा दोनों ही जगह स्त्रियों के कटाक्षों का मोल था। पातिव्रत की खाट में वासना की खटमलें पलरही थीं। चारित्रिक उत्थान दिखाई नही देता था। कवि मस्त थे। गृह कार्य के लिए नौकरानियाँ को देखते समय भी उनकी सुन्दरता की जांच होती थी। नारी पात्रों में सुशील का चरित्र सर्वोत्कृष्ट है। इस प्रकार ऐतिहासिकता की दृष्टि से ऐतिहासिक चरित्रों का वर्णन और तत्कालीन परिस्थितियों का भी वर्णन किया। घटनाओं के संबंध में देखा

जाय तो कुछ काल्पनिक घटनाएं भी हैं। जसवंत को बिहारी के दिये गये पत्र संबंधी घटना अवश्य संदेहास्पद है। क्यों कि अधिकांश विद्वानों ने उस पत्र का संबंध राजा जयसिंह से माना है। इस प्रकार पूरे उपन्यास में काल्पनिकता से भी ऐतिहासिकता ज्यादा है।

रीतिकालीन श्रृंगारी कवि बिहारी लाल के जीवन पर लिखा गया उपन्यास 'मेरी भव बाधा हरों' मध्य युग के पतनोन्मुख वातावरण की पहचान है। विलास में डूबे समस्त वातावरण का प्रतिनिधित्व करते बिहारी पुकार उठते हैं- 'मेरी भव बाधा हरो'। उपन्यासकार ने बिहारी लाल का सीधा सच्चा चित्र खींचा है। उन्हों ने बिहारी लाल पर लिखी विभिन्न पुस्तकों का अध्ययन कर इस उपन्यास की रचना की है। बिहारी का जन्मकाल, मृत्यु, रचनाएं, पारिवारिक तथा युगीन परिस्थितियों को लेकर अब भी विद्वानों के मत-भेद है। रचनाओं की प्रामाणिकता पर भी विद्वानों में मत भेद है। [1] ''कई विद्वान बिहारी की पत्नी को इन रचनाओं के रचियता का श्रेय प्रदान करते हैं। बिहारी के संबंध में एक और बात प्रचलित है, कि वे आचार्य केशव के पुत्र थे। बिहारी मधुरिया ब्राह्मण सिद्ध होते है। प्रेमाश्रित क्रम की एक हस्तलिपि में बिहारी को सोनी ब्राह्मण कहा गया है।'' बिहारी लाल के संबंध में जितने भी तर्क प्रस्तुत किये जायं, वे कभी इतिहास सम्मत तो कभी विवादास्पद दिखाई पड़ते हैं। उपन्यासकार ने अपने-आप को विवादों से बचाने का भरसक प्रयत्न किया है। बिहारी के जीवन से संबंधित अनेक लोक प्रचलित जनश्रुतियाँ प्रसिद्ध हैं। इसलिए कवि के चरित्र-चित्रण करते समय, पारिवारिक कलह, पत्नी का अधिकार भावना, स्वर्ण मुद्राओं का प्रसंग आदि विषयों में लेखक को कल्पना का उपयोग करना पड़ा है। उपन्यासकार ने युगीन परिस्थितियों का रोचक चित्रण किया है। ब्राह्मणों की सुधरती दशा तथा मुगल साम्राज्य का पतनावस्था का भी चित्रण तथा शहजादा खुर्रम का वशीकरण कर वैभव विलास में डूबना-उतरना आदि कथावस्तु में रोचकता भर

---

1. मेरी भव बाधा हरो - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 74

देते हैं। यह बिहारी पर लिखित प्रथम जीवनी प्रधान उपन्यास है। इस में व्यापक जन तांत्रिक उद्देश्यों का पोषण किया गया है। संश्लिष्ठ चरित्र को पूरी सहानुभूति और ईमानदारी से अभिव्यक्त किया गया है। लेखक ने घटना और पात्रों को वास्तविक जीवन का अधिकाधिक तदात्मय स्थापित किया है। बिहारी के विलासी व्यक्तित्व को भक्त का रूप देने के लिए उपन्यास का शीर्षक 'मेरी भव बाधा हरो' रखा गया है।

2.11. भारती का सपूत :-

2.11.1. ऐतिहासिकता :-

'भारती का सपूत' - डां. रांगेय राघव का एक मध्यकाय जीवन चरितात्मक उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास कथानक की दृष्टि से पूर्ण संगठित है। कथानक की सभी घटनाएँ एक दूसरे पर आधारित हैं। कथानक के कालीकदमा और तिलकधारी, विपथगामी यात्रा और आवेश एवं अन्तिम दौर इन चारों भागों में विभाजित कर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के जीवन पर क्रमश: प्रकाश डाला गया है। लेखक ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के जीवन के माध्यम से उस युग की सम्पूर्ण परिस्थितियों को अंकित करने का सफल प्रयास किया है। प्रस्तुत उपन्यास से यह स्पष्ट होजाता है कि उस काल में धन के आधार पर भी समाज का विभाजन हो चुका था। इस विभाजन का प्रभाव हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों पर पड़ा था। धनी वर्ग पहले की अपेक्षा उस युग में अधिक सुरक्षित था और उसका अधिकांश समय विलासिता में ही व्यतीत होता था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र भी उस विलासिता के कीचड़ से बच नहीं पाये थे।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हिन्दी के पिता माने जाते हैं। महाकवि रत्नाकर ने उन्हें भारती का सपूत कहा है। किन्तु उनके विषय में अनेक ऐसी बातों सुनाई देती है कि संदेह सा होता है। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने उन संदेहों को पाठकों के मन से दूर करने का सफल प्रयन्त किया है।[1] ''क्या ऐसा खर्चीला, घर फूँक व्यक्ति, जिसका

1. भारती का सपूत - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 11

सम्बन्ध वेश्याओं से जोडा जाता है, वह सचमुच भारती का सपूत हो सकता है? इसके कारण ही उन्हें तपी हो कह सके, क्योंकि ने पान बहुत खाते थे। कितने ही दिन तक तो यह ज्ञात ही नहीं हो सका कि वे खून थूकने लगे थे आलोचकों का मत है कि साहित्यक दृष्टिकोण से ही देखने पर भारतेन्दु का काव्य और नाटकादि कोई बहुत उ्च्चकोटि की रचनाएं नहीं है। परन्तु क्योंकि उन के पास धन बहुत था, वे इसी कारण इतने प्रसिद्ध हो गए थे, ऐसे लोगों का ही कथन यह भी है कि जो बड़े बड़े राजा-महराजा अंग्रेज आदि उन से मेल मुलाकात रखते थे वह इसलिए की उनकी सामाजिक स्थिति बहुत अच्छी थी।''

भारतेन्दु का जन्म 1850 में हुआ था। उस वक्त वह सात बरस का था जब 1857 का युद्ध (स्वतन्त्रता का पहला संग्राम) हुआ। इन के नाना के पूर्वज दिल्ली के राजवंश के दीवान रहचुके थे। इनके पिताजी बाबू गोपालचन्द्र हैं। भारतेन्दु उस समय पैदा हुए जब सामन्ती व्यवस्था बुरी तरह टूट रही थी और पूंजीवादी व्यवस्था राष्ट्रीयता का रूप ग्रहण कर रही थी। भारतेन्दु बड़े हुए, किताबें लिखी, पर उन के साहित्य में गदर के वीरों का कोई उल्लेख नहीं है। ठीक इसी प्रकार की चीज महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकूर में भी दिखाई देती है। ये दोनों एक विशेष प्रकार के वर्ग से आए हुए लोग थे।

बचपन में हरिश्चन्द्र की माता चल बसी थी। हरिश्चन्द्र के बड़े भाई का नाम गोकुलचन्द्र है। [1]'' बालक हरिश्चन्द्र बाहर की बैठक में आगया। देखा पिता विभोर होकर गारहे थे। उनके सिर पर उस्तरा फिरा हुआ था। लम्बा तिलक लगा हुआ था। ....उसी समय तिलक धारी रोता हुआ द्वार पर आया। उसने हरिश्चन्द्र को उठाकर छाती से लगालिया और कहा: मालिक! बात गले में अटक गई, उसने बच्चे को और कसकर अपनी आँखे को उसके कंधे के पीछे छिपा लिया। पिता मौन बेठे रहे। कहा तिलकधारी! वह सचमुच चलीगई। वह भर आया हुआ स्वर अब

---

1. भारती का सपूत - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 22

अपनी व्याकुलता प्रकट करने लगा था। .... पिता क्षणभर देखते रहे। उनकी आँखों में पानी छलक आया। गला रूंधा और उन्हों ने माथे पर हाथ धर लिये। कालीकदमा की चीख सुनाई दी। घर के नौकर बहुत उदास थे।''

रईस परिवार होने के कारण हरिश्चन्द्र के पिताजी ने फिर से शादी करली। लेकिन बालक हरिश्चन्द्र ने नई माता को अपनी माँ के रूप में स्वीकार नहीं किया। [1] ''फिर शहनाइयाँ बजी। बालक हरिश्चन्द्र ने देखा, द्वार पर एक नई स्त्री आई थी। यह तुम्हारी माँ है। एक स्त्री ने कहा था। गोकुल - जाकर - अम्मा! अम्मा! कहते उस के पांवों से लिपट गया था। उसने गोद में उठा लिया था। परन्तु हरिश्चन्द्र खड़ा रहा था। उसने कहा: यह तो माँ नही है। नहीं बेटा, माँ ही है। स्त्री ने समझाया था। माँ तो पास बुलाकर गोदी में बिठाती थी, इन्होंने तो नहीं बिठाया। उसने मुडकर मुकुन्दी से कहा- बीबी! क्या है? यह माँ है? नई माँ के नेत्रों में चुनौती सी अपनी छाती से लगा लिया था। गोकुल खेलने लगा था। और नई स्त्री का हृदय समझा कि यह बालक घमण्डी है, इसका छोटा भाई तो सीधा है और उस के पराये हृदय को छोटे बालक की सत्ता में जो संतोष मिला वही बड़े बालक को निकट आने से रोकने लगा।''

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र इस उपन्यास के नायक हैं। प्रस्तुत कथा में उनके चरित्र का चित्रण कुछ इस प्रकार से हुआ है कि उनके चरित्र की रेखाएँ एक-एक कर कथा के अन्त तक उभरती रही है। उनकी मृत्यु के साथ-साथ उपन्यास का कथानक भी समाप्त हो जाता है। पिता की मृत्यु के पश्चात हरिश्चन्द्र के कोमल कन्धों पर परिवार का सम्पूर्ण भार आ गया, जिसके कारण उन्हें विद्यालयी शिक्षा अधिक न मिल सकी किन्तु उन्होंने स्वाध्याय से पंजाबी, मारवाड़ी, गुजराती, बंगला, मराठी, अंग्रेजी, उर्दू एवं संस्कृत आदि भाषाओं का गहन अध्ययन कर लिया। भारतीय संस्कृति के प्रबल

---

1. भारती का सपूत - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 30

समर्थक हरिश्चन्द्र ने अत्यधिक धन खर्चकर हिन्दी और अंग्रेजी के विद्यालय खोलने का प्रयास किया, जिनके माध्यम से भारतीय संस्कृति की शिक्षा देने की योजना बनायी। उन्होंने अपने मन्तव्य को स्पष्ट करते हुए पत्नी मनोदेवी से कहा [1] "हम लोगों के पास धन है और देश भूखा है, गरीब है, सोचो तो अंग्रेजों के खोले हुये स्कूल है। मिशन के स्कूल हैं। पर उन में हमारी संस्कृती नहीं पढ़ाई जाती है।" इस सब कार्यो के लिए उन्हें अपने धन की टोली जलानी पड़ी। सत्य पथ पर चलनेवालों को अनेक अवरोधों का सामना करना पडता है। भारतेन्दु को भी पारिवारिक संकटों से जूझना पड़ा। गोकुलचन्द के अलग होजा ने एवं पत्नी के समस्त विरोधों के पश्चात भी हरिश्चन्द्र के हृदय मे उसके स्वाभिमान एवं निष्टा के प्रति बड़ा आदर था इसलिए मृत्यु के समय उन्हों ने मल्लिका से कहा [2] "मुझे एक ही दुःख रहगया है।' 'वह क्या है स्वामी?' 'वह दुःख मन्नो जानती है।' 'क्या जानती हूँ मैं?' 'मन्नों सदैव पति-सेव से रत रहा करती थी।" हरिश्चन्द्र की मृत्यु के पश्चात कफन न होने के कारण मन्नों ने अपना कीमती दुशाल शव को ओढ़ा दिया और आर्तनाद करके छाती-पीट-पीट रोने लगी।

उपन्यास में लगभग सभी पात्र ऐतिहासिक है। घटनाओं के विषय में किसी भी प्रकार का ऐतिहासिक मत-मतनान्त नहीं है। निष्कर्षतः 'भारती का सपूत' एक सफल जीवन चरितात्मक लघु उपन्यास है।

2.11.2. काल्पनिकता :-

'भारती का सपूत' के कथानक को आकर्षक बनाने के लिए राघवजी ने एक काल्पनिक घटना के मध्यम से उपन्यास का आरम्भ करता है। कथानक की दृष्टि से उपन्यास सम्पूर्ण संगठित है। कथानक को आकर्षक बनाने के लिए ही अध्यापक

---

1. भारती का सपूत - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 75
2. भारती का सपूत - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 155

रत्नाहास की कल्पना की गयी है जो उपन्यास के अयोजित एक सभा में अध्यापक रत्नाहास डां. रांगेय राघव की एक कृति पढ़ते हैं और बीच-बीच में अपनी मौलिक व्याख्या भी करते हैं। कथानक को कालीकदमा और तिलकधारी विपथगामी यात्रा और आवेश एवं अन्तिम दौर इन चार भागों में विभाजित कर भारतेन्दु के जीवन पर क्रमश: प्रकाश डाला गया है। शीर्षक के बारे में लेखक ने स्वयं इस प्रकार कहा [1] ''पुनश्च तुम्हें यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि मेरी इस प्रस्तक का नामकरण एक बरस की मेरी भतीजी सीता ने किया है। .... किन्तु भूमिका में लेखक ने शीर्षक का रहस्योद्घाटन किया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हिन्दी के पिता माने जाते हैं। महाकवि रत्नाकर ने उन्हें 'भारती का सपूत' कहा है। इस प्रकार महाकवि रत्नाकर की उक्ति के आधार पर ही औपन्यासिक कृति का नाम 'भारती का सपूत' पड़ा।''

बचपन से ही भारतेन्दु बहुत ही होशियार और नटखट था। बचपन की एक काल्पनिक घटना के माध्यम से लेखक ने यह साबित करके दिखाया। [2] ''बालक हरिश्चन्द्र उस समय एक टीन के डिब्बे से खेल रहा था। पास में उस से एक बालक था जो अपना टीन बजा रहा था। छोटा बालक के देखा देखी और भी अधिक जोर से अपना टीन बजाने लगा। होड़ होगई। छोटा जीतने लगा। बड़े ने उस के हाथ पर हाथ रख दिया और कहा : मत बजा। चुप रहा। हरिश्चन्द्र ने कहा क्यों नहीं बजाऊँ? तू क्यों रोकता है? बडे ने कहा, मेरी मरजी। छोटे ने क्षण भर सोचा और कहा : मेरे डिब्बे में तेरी मर्जी क्या होती है?''

कालीकदमा और तिलकदारी तो भारतेन्दु के घर के नौकर हैं। लेकिन इनके माध्यम से उपन्यासकार ने काल्पनिक घटनाओं का वर्णन किया। भारतेन्दु ने अपने पिताजी के सामने एक कविता गाकर सुनाया। हरिश्चन्द्र को इतना याद था कि कुछ

---

1. भारती का सपूत - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 7
2. भारती का सपूत - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 20

लिखते रहते थे और बहुत सा लिखते थे। [1] ''एक दिन पिता बलराम-'कथामृत' लिख रहे थे। हरिश्चन्द्र पास बैठा । बडे गौर से देख रहा था। उस ने हठात् कहा: 'बाबूजी!' 'क्या है रे?' पिता चौंके। 'बाबूजी मैं कविता बनाऊंगा। बनाऊ?' पिताने आश्चर्य से देखा और कहा: 'तुम्हें अवश्य ऐसा करना चाहिए।' आयु की मर्यादा के परे कवि ने अकस्मात ही कवि को निमन्त्रित कर दिया था। हरिश्चन्द्र की बाहें खिलगई। वह उठ खड़ा हुआ और उसने हाथ उठकर कहा :-

'लै व्योंडा ठाडे भए
श्री अनिरुद्ध सुजान।
बाणासुर की सैन को
हजन लगे भगवान्।'

पिता ने सुना तो गद्‌गद् होकर रो उठे और पुत्र को छाती से लगा लिया''। बालक हरिश्चन्द्र नौकरानी 'कालीकदामी' में माँ को देखा। नौकरानी भी बहुत वात्सल्यता दिखाती थी। [2] ''गोकुल तो तेरा ही साई है बेटा। बेटा, सुनकर वह हिल उठा। काली से चिपट गया। कहा। काली। तू मेरी माँ नहीं हो सकती? तुम तो इतने बड़े आदमी हो बबुआ मैं, तो नौकरानी हूँ। ऐसा नहीं कहते । नहीं काली तू मेरी माँ है। तू मुझे प्यार करती है। तू मुझे चाहती हो। तू मुझे बहुत प्यार करती हो। काली स्नेह की मार सह नहीं सकी। रो पड़ी। कहा। बच्चा!'' भारतेन्दु पढ़-लिखकर महान व्यक्ति बनने के पीछे नौकरानी काली का ही प्रभाव है। पिता की मृत्यु के पश्चात भी काली के वात्सल्य में भारतेन्दु पलता रहा था।

स्त्री के संबंध में भारतेन्दु को कामुक के रूप में लेखक ने दिखाया। वास्तव में स्त्री की सामाजिक स्थिति भी थी। भारतेन्दु ने मुसलमानी वेश्या को भी सहारा दिया। पूरे उपन्यास में नारी-पात्र की संख्या प्रचुर और प्रभाव में प्रबल नहीं है।

---

1. भारती का सपूत - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 27
2. भारती का सपूत - डा. रांगेय राघव - पृष्ठ - 32

कामुक बने भारतेन्दु से सचेत रहने के लिए तमाम कारोबार संभालने का भार गोकुल जी को सौंपदिया गया था। भारतेन्दु की माँ ने पन्द्रह वर्ष की आयु तक उसे धन नहीं मिलने दिया था। धन एक विचित्र वस्तु है। धन के व्यय और संचय इन दोनों में ही जीवन का भय है और आत्मरक्षा की निकृष्ट योजनाए धन को ही सर्वस्व मानकर चलती है। धन ही से संसार में सम्मान मिलता है। धन का सबसे बडा काम है लोगों में आपस में अविश्वास पैदा कर देना। परन्तु हरिश्चन्द्र ऐसा नहीं सोचते, न ऐसी बात की। इस प्रकार बाल्य स्थिति में एक-दो घटनाओं का वर्णन और वेश्याओं के बारे में लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। परन्तु आमतौर पर पूरे उपन्यास में भारतेन्दु को नायक के रूप में लेखक नें वर्णन किया है।

2.11.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

अनुपात की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास में ऐतिहासिकता का ही आधिक्य है। जीवनी प्रधान उपन्यासों में 'भारती का सपूत' हिन्दी के कर्णधार कवि, गद्यकार बाबू भारतेंदु हरिश्चन्द्रजी की जीवनी पर आधारित उपन्यास है। डां. रांगेय राघव ने इतिहास प्रसिद्ध साहित्यकार के जीवन को अपने उपन्यास सा वर्ण्य विषय बनाया है। इसमें वर्णित कथावस्तु इतिहास सम्मत है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के इतिहास की आधारशिला पर उनका जीवन चित्रित किया गया है। भारत के राजनैतिक सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास में सन् 1857 ई. का प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम महत्वपूर्ण वा क्रांतिकारी घटना है। भक्तिकालीन मानवतावादी परंपरा तथा प्राचीन सांस्कृतिक गौरव की पुनर्प्रतिष्टा कुरीतियों और अंध विश्वासों का विरोध और अनेक सामाजिक आंदोलन इतिहास सम्मत इस परिवेश में उपन्यासकार ने भरतेंदु के जीवन की कथा को आगे बढाया है। भारतेंदुजी का प्रामाणिक जन्म काल सन् 1857 इ.के. भारती स्वतंत्रता संग्राम से केवल 7 वर्ष पूर्व, भद्रपद शुक्ल 5 संवत 1907 (2-सितंबर, सन् 1850) माना जाता है। डां. रांगेय राघव ने भारतेन्दु के जीवन चरित्र में राष्ट्रीय व सामाजिक परिस्थितियों को उस समय की साहित्य परिस्थितियों से अधिक महत्व

दिया जब कि उनके सहयोगी साहित्यकारों के विषय में बहुत कम चर्चा हुई है। जीवनी प्रधान उपन्यास इतिहास और कल्पना के अंतराल को भरने का प्रयास करता है। अत: स्थूल सत्य की धरा पर खड़ा कल्पना का भवन ही जीवनी प्रधान उपन्यास है। भारतेन्दु के जीवन को चित्रित करते समय भी लेखक ने विभिन्न काल्पनिक प्रसंग जोड़े हैं। जैसे पत्नी का उन से बार-बार झगड़ना, पैसों की सुरक्षा हेतु रोना पीटना, पत्नी द्वारा दूसरी स्त्रियों से मेल-जोल के आरोप आदि। जीवन की इन छोटी-छोटी बातों में कल्पना का पुट तो है पर ये सार्वभौमिक सत्य पर आधारित है। भारतेंदु की जीवन गाथा को यदि लोक कथाओं वा किंवदंतियों के आधार पर और अधिक निखारसकते तो शायद उपन्यास रोचकता के कुछ और आयाम तय करसकता। लेखक के व्यक्तिगत जीवन से संबंधित बातें जो उनके वैभव प्रिय व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति करते हैं उनका उल्लेख भी उपन्यास को अधिक रोचकता प्रदान कर पाता। इस उपन्यास की विशिष्टता सर्वप्रथम उसका जीवनी प्रधान उपन्यास होना है। यह हिन्दी साहित्यकार का सर्वप्रथम जीवनी प्रधान उपन्यास है जो हिन्दी भाषा में लिखा गया। भारतेन्दु का जीवन और व्यक्तित्व, उनकी करूणा और विनोद-उनका व्यंग्य और दयालुपन उन की निर्भीकता और सत्यवादिता इस उपन्यास में अपने यथार्थ रूप में प्रतिफलित हुई है जो उनके साहित्य उनकी रचनाओं में भली प्रकार देखी जासकती है।

भारतेन्दु के व्यक्तित्व के बारे में रोचक ढंग से वर्णन किया गया है। उन का रिश्ता एक रंडी और एक विधवा से था। लेकिन लेखक ने नारी उद्धार और स्त्री शुद्धी के बारे में वर्णन किया और भारतेन्दु को उस स्थिति में आदर्श व्यक्ति के रूप खड़ा कर देने का प्रयास किया। लेकिन पत्नी उसे सदा अपमानित करती रहती थी। इस संदर्भ में लेखक को काल्पनिकता का सहारा लेना पड़ा। बचपन की एक-दो घटनाओं को भी लेखक ने काल्पनिक ढंग से ही वर्णन किया। भारतेन्दु उस युग के नेता थे। वे अपने युग के कला और साहित्य का नाता सीधे जनजीवन से जोड़ना

चाहते थे। उन के समय काव्य-कला तो दरबारों की चीज थी। पर वे धनी होकर भी धन की सीमा मे ही बाँधकर नहीं रह सके। संपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं को आधार मानकर लेखक ने यह उपन्यास लिखा था। सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों के साथ साथ उपन्यास में तत्कालीन धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के चित्र भी बड़े ही सजीव है। उन्होंने रूढ़ि का विरोध करके हिन्दु धर्म के प्रचार का कार्य भी किया। उन पर परिवार का भार आजाने पर भी उन्होंने स्वाध्याय से देश की भिन्न भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। प्रस्तुत उपन्यास में ऐतिहासिकता का आधार ठीक ढंग से लेखक ने उपयोग किया था।

12. निष्कर्ष :

प्रस्तुत भाग में चुने गये उपन्यासों में जीवन चरितात्मकता, उपन्यास की आवश्यक विधा है। इस में इतिहास विख्यात साहित्यकोरों या सामाज सेवियों के समग्र पहलुओं को प्रकाशित करने का आग्रह होता है, जिन के जीवन को इतिहासकारों ने करदिया है। ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने प्राय: इतिहास प्रसिद्ध राजनीतिक पुरुषों को प्रस्तुत किया है। प्रागैतिहासिक कथा-वस्तु के उपन्यास प्राय: काल्पनिक पात्रों पर आधारित होते हैं, जो जीवन चरितात्मक उपन्यास के लिए सम्भव नहीं है। जिन उपन्यासों का विश्लेषण प्रस्तुत अध्याय में किया गया है उनकी कथावस्तु, औपन्यासिकता जीवनी परक है। 'लोई का ताना' नामक उपन्यास में लोई के जीवन के माध्यम से लेखक ने कबीर की जीवनी का विश्लेषण किया। 'रत्ना की बात' में भी तुलसी को महाकवि बनानेवाली एक प्रोत्साहक चीज का वर्णन है। मध्यकवि बिहारी की जीवनी पर आधारित 'मेरी भव बाधा हरो' नामक रचना में रीतिकालीन विशेषताओं का वर्णन किया है। इस प्रकार हर उपन्यास सफल जीवनी परक उपन्यास साबित हुआ है। ऐतिहासिक उपन्यासों में काल्पनिकता ज्यादा दिखाई देता है। प्रस्तुत अध्याय में सफल जीवनी परक उपन्यासों को लिया गया है।

- अध्याय तीन -

तेलुगु के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण

तेलुगु-साहित्य के विद्वानों का कहना है कि 'नवल' नामक तेलुगु शब्द का जन्म अंग्रेजी के 'नावेल' शब्द से हुआ है। खासकर 19 वी शताब्दी के अंग्रेजी उपन्यासों के प्रभाव में आकर तेलुगु के ऐतिहासिक उपन्यासों का आरम्भ हुआ है। क्यों कि उस समय में अंग्रजी-साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यासों की परम्परा चल रही है। इतना ही नहीं संस्कृत साहित्य की कादंबरी, दशकुमार चरित्र, आदि रचनाएं भी तेलुगु-साहित्य क्षेत्र के लिए प्रोत्साहन देनेवाली है। उस वक्त बांगला-भाषा के उपन्यास साहित्य का भी असर तेलुगु साहित्य पर अत्यधिक है। ध्यान देने की बात यह है कि बंगला भाषा में लिखेगये उपन्यासों का अनुवाद तेलुगु भाषा में होने लगा। वास्तव में करीब विरेशलिंगमजी के समय से ही तेलुगु में ऐतिहासिक-जीवनीपरक उपन्यासों का लेखन शुरू हुआ है। लेकिन तेलुगु साहित्य में आज के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास क्षेत्र की उत्तम स्थिति का मूलकारण सिर्फ तीन महान उपन्यासकार है। वे हैं - श्री विश्वनाथ सत्यनारायण जी, श्री अडवि बापिराजु और नोरी नरसिंगशाश्त्री जी। इन में से श्री विश्वनाथ सत्यनारायण जी सफल ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं। उनकी रचनाओं में एक वीर, उचित ऐतिहासिक उपन्यास है। उनके ऐतिहासिक उपन्यासों में बुद्ध युग, नेपाल राजवंशजों से संबंधित ऐतिहासिक विषय हैं। विश्वनाथ जी की तरह 'बापिराजु' भी उत्तम उपन्यासकार हैं। इनकी रचनाओं में 'गोनगन्नारेड्डी' सफल ऐतिहासिक उपन्यास है। श्री नोरी नरसिंह शास्त्री जी की रचनाएं आँध्र-प्राँत के इतिहासपर आधारित है। काकतीय राजवंश की राणी रूद्रमदेवी की जीवनीपर आधारित उपन्यास एक उत्तम जीवनीपरक उपन्यास है। उल्लिखित साहित्यकारों में शास्त्रीजी बेमिसाल जीवनीपरक उपन्यासकार हैं। 'तेन्नेटिसूरी' द्वारा लिखित 'छंगिजखाँ' एक सफल ऐतिहासिक उपन्यास है। इसे जीवनीपरक उपन्यास नहीं मान सकते । इसमें ऐतिहासिक परिस्थितियों का विशाल वर्णन है। ऐतिहासिक दृष्टि से छंगिजखाँ

निर्दई और हत्यारा है। मगर उपन्यास में इसे आदर्श और महान नेता के रूप में वर्णन किया है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण में धीरे-धीरे काफी बदलापन आ गई। भाषा-शैली की दृष्टी से यदि हम देखेंगे तो कुछ ऐतिहासिक उपन्यासों में ग्रांथिक भाषा का प्रयोग और कुछ उपन्यासों में बोलचाल की भाषा की प्रयोग किया गया है। काल और ऐतिहासिक घटनाओं पर यह आधारित है। इतना ही नहीं उपन्यासकारों के चिंतन में भी भाषा-शैली का प्रयोग निर्भर है।

3.1. काल के आधार पर विभाजन :-

काल के आधार पर ऐतिहासिक व्यक्तियों के जीवनीपर उपन्यासों का विभाजन निम्न तरीके से कर सकते हैं। विद्वानों ने काल का विभाजन चार भागों में किया। जैसे-प्राचीनकाल, पूर्व मध्यमकाल, उत्तर मध्यमकाल और आधुनिक काल। प्राचीन काल की अवधि ईसा के पूर्व से लेकर ईसा के जन्म के बाद आठवी सदी तक है। पूर्व मध्यकाल का समय 1525 ईसवी तक है। इस अवधि में हिन्दू राजाओं पर मुसलमानों का दुराक्रमण होने लगा है। उत्तर मध्यकाल का आरंभ मुगलवंश के स्थापन से होता है। इसकाल का अंत भी मुगलवंश के पतन से होता है। अर्थात अंग्रेजों के आगमन से आधुनिक काल का आरम्भ होता है। तेलुगु में लिखे गए ऐतिहासिक, राजवंशजों की जीवनियों पर आधारित उपन्यासों का विभाजन निम्नलिखत विधान में कर सकते हैं।

1. ***प्राचीन काल***

    1. आर्य चाणक्य
    2. साम्राट अशोक

2. ***पूर्व मध्यकाल :-***

    3. रूद्रमदेवी
    4. अप्पाजी

3. ***उत्तर मध्यकाल :-***

5. अकबर
6. शाहजहाँ
7. छत्रपति शिवाजी
8. अहल्याबाई

4. ***आधुनिक काल :-***

9. झाँसी लक्ष्मीबाई
10. तिप्पु सुल्तान

इस विभाजन में सिर्फ ऐतिहासिक, राजवंशजों की जीवनियों पर लिखे गए उपन्यास हैं। सामाजिक और साहित्यक ऐतिहासिक व्यक्तियों की जीवनीयों पर लिखे गये उपन्यासों का विश्लेषण प्रस्तुत अध्याय में किया गया है। ऐतिहासिक काल विभाजन जिस प्रकार जीवनीपरक उपन्यासों का विभाजन किया गया है उन सभी उपन्यासों का ऐतिहासिक स्थर पर काल्पनिक और वास्तविक घटनाओं पर इस अध्याय में विश्लेषण किया गया है।

3.2. चरित्र और कथावस्तु के आधार पर ऐतिहासिक तथ्य और काल्पनिकता का विश्लेषण :-

तेलुगु में लिखे गए ऐतिहासिक व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित उपन्यासों का विश्लेषण काल विभाजन के अनुसार तथ्यात्मकता और काल्पनिकता के आधार पर किया जाता है। हिन्दी में जिस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गये हैं,उसी प्रकार तेलुगु साहित्य में भी ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गये हैं। लेकिन उन सभी उपन्यासों को जीवनीपरक उपन्यास नहीं मान सकते । क्यों कि किसी एक महान व्यक्ति की जीवनी के आधार पर लिखे गये उपन्यास को जीवनी परक या जीवन चरितात्मक उपन्यास मानते हैं। व्यक्ति से ज्यादा ऐतिहासिक घटनाओं पर और

इतिहास या देशकाल वातावरण पर लिखेगये उपन्यासों को सिर्फ ऐतिहासिक उपन्यास कहते हैं। उदाहरण के रूप में श्री तेन्नेटिसूरी द्वारा लिखित ऐतिहासिक उपन्यास 'चंगिजखाँ' एक है। यह शीर्षक की दृष्टि से जीवनीपरक उपन्यास के रूप में दिखाई देता है। लेकिन विषय और कथावस्तु की दृष्टि से उस में देशकाल वातावरण का वर्णन है। ऐसे उपन्यासों को प्रस्तुत शोध अध्ययन में स्थान नहीं दियागया । ऐतिहासिक काल विभाजन के अनुसार जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण किया गया है।

प्राचीन काल :-

ईसा पूर्व से ईसा के बाद आठवी शदी तक जो इतिहास है, उसे प्राचीन काल मानते हैं। श्रीप्रसाद द्वारा लिखित 'आर्यचाणक्य' लल्लादेवी द्वारा लिखित सम्राट अशोक प्राचीन काल से सम्बनधित उपन्यास है। 'सम्राट अशोक' दो भागों की रचना है। दोनों भाग दो प्रतियों के रूप में प्रकाशित किये गये हैं। प्रथम भाग में सम्राट अशोक के राजवंश का आरम्भ और उसकी विशेषताओं के बारे में वर्णन कियागया है। उदाहरण के रूप में मौर्यवंश को कायम करने में राजा चन्द्रगुप्त और आर्य चाणक्य के योगदान के बारे में वर्णन किया गया है। लेकिन यह सिर्फ झलक मात्र ही है। महाराज बिंदुसार के यहाँ अशोक का जन्म होना और उसे आर्य चाणक्य द्वारा 'अशोक' नाम दिया गया है। अशोक के बचपन और शिक्षाप्राप्त करने तक प्रथम भाग में वर्णन किया गया है। सम्राट अशोक के बचपन के बारे में जो ऐतिहासिक तथ्य उपलब्ध हैं, उन के अनुसार उपन्यास में अशोक का वर्णन है। उसी प्रकार दूसरे भाग में उनका राजा बनाना, प्रशासन संभालना और बुद्ध धर्म से प्रभावित होकर संत बनना आदि का वर्णन है। प्राचीन काल के अंतर्गत वर्णित इन दोनों के साथ दक्षिण भारत के चालिक्य राजवंशज तैलपविक्रमादित्य की जीवनी पर आधारित उपन्यास 'तैलपविक्रमादित्य' भी हैं।

3.3. आर्य चाणक्य :-

3.3.1. ऐतिहासिकता :-

आधुनिक उपन्यासकार श्रीप्रसाद द्वारा लिखित ऐतिहासिक उपन्यासों में 'आर्य चाणक्य' प्राचीन जीवनीपरक उपन्यास है। इसमें एक-एक ऐतिहासिक घटना को लेखक ने बहुत समयम के साथ सिलसिले में रखकर आकर्षक ढंग से चाणक्य का साकार रूप दिया। चाणक्य चरित्र के लिए मिलनेवाले एतिहासिक आधार कम हैं। फिर भी लेखक ने चाणक्य की जीवनी को रोचक ढंग से सफल ऐतिहासिक जीवनी परक उपन्यास बनाया। ईसा के पूर्व का इतिहास होने के कारण चाणक्य की जीवनी से सम्बधित विषयवस्तु कम मिलती है। फिर भी उपन्यासकार ने उपन्यास को रोचक बनाने का प्रयत्न किया है। ऐतिहासिक तथ्यों में चाणक्य द्वारा लिखित अर्थशास्त्र एक है।[1] ''उपन्यास के पहले अध्याय में लेखक ने आचार्य चाणक्य द्वारा लिखित विश्वविख्यात ग्रन्थ अर्थशास्त्र के बारे में बताया है। यह ऐतिहासिक सत्य है कि विश्वभर में कुछ गिने चुने विद्वानों के द्वारा लिखित प्रख्यात ग्रंथ है, जो आज तक है और भविष्य में भी रहेगा। उन में से सोक्रटीस, अरिस्टाटिल, पलाटो आदी के ग्रंथ और भारत के चाणक्य के द्वारा लिखित 'अर्थशास्त्र' भी है। ये ग्रंथ राज प्रशासन और मानसिक शक्ति को बढानेवाले ग्रंथ है। विश्व विख्यात विश्वविद्यालयों में से भारत के नलंदा और 'तक्षशिला' के विश्वविद्यालय भी हैं। यहाँ अर्थशास्त्र विभाग के अध्यक्ष स्थान पर विष्णुवर्धन विराजमान है, जो 'चाणक्य', 'कौटिल्य' और 'कुटिल' आदि उपनामों से भी विख्यात है। आज से करीब तेईस सौ साल पहले की बात है कि विश्वविजेता बनने 'यूनानी' देशवाली अलग्जंडर अपनी अखंड सेना सहित आगे बढ़ा था। पूरे विश्व को जीतने की परम्परा भारतदेश में आकर, सिपाहियों के अधक परिश्रम और थकान के कारण रूकगई है। भारत देश को जीतने की तमन्ना अलग्जांडर में अधूरी रहगई। यहाँ आकर उसे यह पता चला कि आर्थिक और राजनीति परिज्ञान का भंडार 'अर्थशास्त्र' नामक बृहत् ग्रंथ यहाँ मौजूद है। किसी भी कीमत पर, अखिर चुराकर भी उसे उसके लेखक के सहित अपना देश लेजाना चाहता है। परन्तु

1. आर्य चाणक्य - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 1-11

निराशा होकर ही लोटता है।'' पहले अध्याय में ही लेखक ने उल्लिखित ऐतिहासिक घटनाओं का जिक्र किया है। यह तथ्य है कि अलग्जांडर विश्व विजेता बनने की अभिलाषा के साथ विश्वभर जैत्र यात्रा करने लगा। आखिर भारत में आने के बाद विश्व विजेता बनने की इच्छा समाप्त होगई। इस घटना का वर्णन इतिहास ग्रन्थों में है।

अलग्जांडर जब भारत देश आया था, उस वक्त हमारे देश के प्रमुख राज्यों में से 'मगध साम्राज्य' वैभव वैशल्य और धन-दौलत से विराजमान है। यह ऐतिहासिक सत्य है कि प्राचीन भारतदेश के इतिहास में प्रथम 'नंदवंश' था जो मगध राज्य के तक्त पर बैठा था। उपन्यासकार ने मगध साम्राज्य का वर्णन और राजवंश का विश्लेषण तीसरे अध्याय में किया है। [1]'' उस जमाने में मगध साम्राज्य बहुत विशाल और सुभिक्ष देश है। इसका राजधानी पाटलीपुत्र है। यह बहुत ही विशाल, सुन्दर और सुशोभित नगर है। यह गंगानदी के तट पर कायम किया गया है। कुछ ही दूर पर 'शोण नदी', पवित्र गंगा में संगम होती है। इस नगर की लंबाई नौ मील और चौडाई दो मील। पूरा नगर एक मजबूत प्राकार के अंदर होता है। इस प्रकार उपन्यासकार ने अनेक ऐतिहासिक आधार को इकट्ठा करके पाठकों के सामने रखा। उस समय मगध साम्राज्य, महाराज सुकल्पनंद के प्रशंसन में है। इसके पिता महापद्मनंद के साथ मिलकर सब को नौ नंद कहते हैं। इनके पहले महानंद राज करता था। उससे महापद्मनंद ने राज्य का अपहरण करके राजा बनगया। महानंद की दूसरी पत्नी का संतान चन्द्रगुप्त है। यह प्रस्तुत कहानी का प्रधान पात्र और आर्य चाणक्य का प्रधान शिष्य है। विदेशी-यूनानी योद्धा अलग्जांडर से देश को बचाने केलिए चाणक्य ने भारतदेश के तमाम् राजाओं को एकत्रित करना चाहता है। लेकिन नौ नंद के पास आचार्य का घोर अपमान होता है। इसलिए दूसरी राणी मुरादेवी के पुत्र चन्द्रगुप्त को मगध सम्राज्य का सम्राट बनाने का महाशपथ, आचार्य करता है। इन घटनाओं का वर्णन लेखक की तीसरी और चौथे अध्यायों में किया गया।''

---

1. आर्य चाणक्य - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 18-58

चन्द्रगुप्त को तख्त पर बिठाने तक आर्य चाणक्य ने बहुत ही कुटिलता के साथ काम किया। इसका वर्णन लेखक ने रोचक ढ़ंग से किया। नंदवंश की रक्षा के लिए उनके राजगुरु 'सुबन्धु' जो राक्षसमन्त्रि नाम से विख्यात है, वह भी अधिक परिश्रम करता है। चाणक्य की अभिलाषा है कि किसी भी तरह सुबन्धु को विनाश से बचाकर चन्द्रगुप्त का महामन्त्री बनादे। क्योंकि चाणक्य की दृष्टि में सुबन्धु बहुत ही कुशल राजनीतिज्ञ और धर्मशास्त्रों का ज्ञानी भी है। आर्य चाणक्य सदा प्रशांत जीवन बिताना चाहता है। वह एक आचार्य के रूप में विश्वविद्यालय में ही छात्रों को विद्यादान करते जीवन परिसमाप्ति कर देना चाहता है। इसलिए सुबन्धु को सही व्यक्ति मानकर उसे बचाकर अंत में राजा चन्द्रगुप्त का महामन्त्री बनादेता है। राजनीति को परिज्ञान के अनुसार आर्य चाणक्य सामंत राजाओं की सहायता लेकर चन्द्रगुप्त के राजा बनाने में सफल होता है। बाद में सहायता के बदले उनको अनेक ईनाम देकर भेज देता है। लेकिन तीन राजा लोग तो आधा राज्य माँगते हैं। उनको कुटिलता के साथ अंत करके उन के राज्यों को भी मगध राज्य में मिला देता है। इस प्रकार एक-एक ऐतिहासिक घटना का सुन्दर वर्णन किया गया है। लेखक ने पूरे उपन्यास को सफल बनाने के लिए बहुत प्रयत्न किया। इस रचना में वीर रस ही नही बल्कि देश भक्ति भावना के लिए आर्य चाणक्य ने बहुत कष्ट उठाया था। सम्पूर्ण उपन्यास का मूलाधार यह घटना है। नंद राजा से अपमानित आचार्य ने यह शपथ किया कि मगध राज्य को सही सम्राट नियुक्त करना और विदेशी सेना के दुराक्रमण से देश को बचाना। इस प्रकार यह उपन्यास ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित है।

3.3.2. काल्पनिकता :-

श्रीप्रसाद द्वारा लिखित ऐतिहासिक उपन्यासों में से आर्य चाणक्य अति प्राचीन चरित्र की जीवनी पर आधारित है। विषय सामाग्री को सिलसिले में रखने के लिए और किंवदंतियों को साकार रूप देने के लिए उपन्यासकार ने काल्पनिकता का सहारा लिया। आर्य चाणक्य की जीवनी मगध साम्राज्य के राजवंश से निकट संबंध

रखती है। इसलिए लेखक ने राजवंश की परंपरा को पाठक तक पहुँचाने के लिए काल्पनिकता को आधार बनाया। ऐतिहासिक सत्य यह है कि प्राचीन इतिहास में प्रथम साम्राज्य मगध और प्रथम राजवंश नंद वंश है। महाराज महानंद ही इतिहास में प्रथम राजा है। लेकिन लेखक ने किंवदंतियों के सहारे कहानी को आगे बढ़ाया। इतिहास के अनुसार अलग्जांडर को सामना करने में नंदवंश विफल होता है। महानंद और मुरानामक दासी का संतान ही चन्द्रगुप्त है जो बहुत ही सद्गुण भण्डार है। राजा बनने के काबिल है। नंद राजकुमारों से अपमानित आर्य चाणक्य ने राजा बनने में चन्द्रगुप्त की सहायता की। यह ऐतिहासिक सत्य है। परन्तु राजवंश के बारे में लेखक ने किंवदंतियों को ही साकार रूप दिया है। [1] ''महा नंद राज की पत्नी महाराणी सुनंदादेवी बहुत ही सौन्दर्यवति है। वह बहुत ही घमंडी है। राजा और रानी की उम्र में काफी अंतर है। वैवाहिक जीवन में वे दोनों असंतुष्ट है। एक दिन समुद्रनाथ नामक वज्र व्यापारी ने राजा के दरबार में आकर बहुत कीमती रत्नों का हार दिखाया। घमंड के साथ महारानी ने उसे तिरस्कार किया। व्यापारी ने व्यंग्य करते हुए कहा – आप से भी अधिक सौन्दर्यवति 'पिपल राज्य' की राज-कुमारी मुरादेवी के यह हार सही लगेगा। यह सुनकर महारानी चिढ़गई। अगले साल ही महानंद और मुरादेवी की शादी होगई। मुरादेवी महान भक्तिन भी है। धीरे-धीरे महानंद का स्वास्थ्य बिगडने लगा। प्रशासन के कामों में भी वह ठीक तरह भाग न ले सका। उस के पास नाई के रूप मे काम करने वाला महापद्म नामक नीच जातिवाला, जो बहुत सुन्दर और जवान रहता है। उसकी ओर महारानी आकर्षित होगई। दोनों के बीच शारीरिक संबंध शुरू होगया। षडयंत्र करके उन दोनों ने मिलकर राजाज्ञा बना दिया कि राजप्रतिनिधि के रूप में महापद्म काम करेगा। अस्वस्थ राजा को किले से दूर एक आश्रम में गुप्तरूप में रखा दिया। राजा के साथ दूसरी रानी मुरादेवी भी चली गई। समय बीतने लगा। महापद्म ने तमाम् राज दरबारी कर्मचारियों को और सामंत राजाओं को अपने अधीन में लेकर राजा बनगया। तब से वह अपना नाम महापद्मनंद

---

1. आर्य चाणक्य – श्रीप्रसाद – पृष्ठ – 18-55

के रूप में बदल दिया। उसके और सुनंदा देवी के आठ संतान जन्म लिए। वे सब मिलकर नवनंद कहलाने लगे। महारानी द्वारा किये गये धोखे से महाराजा का मन विचलित होगया। वह किसी भी तरह उन के हाथों से तख्त छीनकर अपने खून से जन्मलेने वाले को तख्त पर राजा के रूप में बिठाना चाहता है। महराजा की अभिलाषा सुनकर दूसरी रानी मुरादेवी भी उस से सहमत होती है। ऐसे समय में भगवान की दया से राज के द्वारा मुरादेवी के कोक से एक सुन्दर बालक का जन्म हुआ। गुप्त रूप में मुरादेवी ने उसे अपने पिताजी पिप्पल देश-भेज दिया। यह विषय किसी को पता तक नहीं चला। ऐन मौके पर उसे अपनी बहन के बेटे के रूप में रानी ने सब को परिचय कराया। नंद राजा ने उसे अपने दरबार में ही एक नौकरी दी। मृत्यु के पहले महनंद राजा ने एक राजाज्ञपत्र बना दिया कि चन्द्रगुप्त को राजाधिकार विरासत में मिलता है। इस के अनुसार आर्य चाणक्य ने राजा बनाने में चन्द्रगुप्त की सहायता की।''

आर्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को राजा बनाने के लिए कुटिलनीति के साथ अनेक कार्य किये। यह ऐतिहासिक सत्य है कि राजा बनाने में आर्य चाणक्य ने अनेक बार सहायता की। परन्तु राज्याधिकार को सुस्थिर बनाने के लिए चाणक्य के द्वारा कियेगये अनेक कार्य काल्पनिकता से भरे है। उन में विषाहार से और विषकन्या से चन्द्रगुप्त को बचाना सम्पूर्ण रूप से काल्पनिकता के आधार पर निर्भर है। लेखक ने चन्द्रगुप्त पर किये गये विष प्रयोग का वर्णन बारहवीं अध्याय में और विषकन्या के प्रयोग का वर्णन सोलहवीं अध्याय में किया है। इन दोनों घटनाओं के साथ-साथ शत्रु लोगों से प्रेरित हत्यारे चन्द्रगुप्त को मारने के लिए तैय्यार होनेवाली घटना का भी वर्णन, उपन्यासकार ने रोचक ढंग से किया है। [1]'' नंद राजवंश के नमकहलाल राजपंडित, प्रधानमंत्री राक्षस ने एक विश्वसनीय नौकर के माध्यम से विषभरे फल भेजता है। राक्षस सोचता है कि उन्हें खाकर चन्द्रगुप्त मरजाएगा। परन्तु चाणक्य की दृष्टि से कोई नहीं बचसकता। इसलिए उन फलों को वापस राक्षसामात्य के रिश्तेदारों को

---

1. आर्य चाणक्य - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 109-111

आर्य चाणक्य ने भेज दिया। उन्हें खाकर राक्षसमन्त्री के रिश्तेदार मरगये।" [1]"राज प्रासाद में एक रात एक सुन्दर नर्तकी पर मोहित होकर चन्द्रगुप्त उस के साथ रात भर श्रृंगार करना चाहता है। लेकिन चाणक्य उसे रोककर उसी नारी के साथ रात बिताने के लिए अतिथि राजा पर्वतिक को भेजता है । दूसरे दिन यह समाचार व्याप्त होता है कि वह नर्तकी एक विष कन्या है। और उस के साध पर्वतिक राजा भी अतिथि घर में मरा पड़ा था। इस प्रकार काल्पनिक घटनाओं को भी लेखक ने रोचक ढ़ंग से वर्णन किया है। आमतौर पर उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्यों की संख्या अधिक हैं।"

3.3.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

आधुनिक उपन्यासकार श्रीप्रसाद द्वारा लिखित 'आर्य चाणक्य' बहुत प्राचीन इतिहास पर आधारित है। उपन्यास के लिए चाणक्य द्वारा लिखित अर्थशास्त्र ही प्रधान ग्रन्थ है। चाणक्य के समय मे ही विश्व विजेता अलग्जांडर ने भारतदेश पर दुराक्रमण किया। इसलिए यूनानी विद्वानों द्वारा लिखित ग्रन्थ भी आधार सामग्री बने हैं। उपन्यास के प्रधान चरित्र चाणक्य, चन्द्रगुप्त नवनंद, राक्षसमंत्री, आदि भारतीय पात्र और यूनानी देश के अलग्जांडर, शल्युकस, मेगस्थनीस आदि विदेशी चरित्र भी ऐतिहासिक चरित्र हैं। इसके साथ-साथ किंवदंतियों पर आधारित घटनाओं को साकार रूप देने के लिए लेखक ने काल्पनिक चरित्रों को साकार रूप देने के लिए लेखक ने काल्पनिक चरित्रों का सृजन किया। मगध साम्राज्य का राजधानि नगर 'पाटलीपुत्र' ही आज 'पाट्ना' नाम से प्रसिद्ध हैं। पाटना नगर के भौगोलिक परिस्थितियों की सही अभिव्यक्ति उपन्यास में की गई है। लेखक ने उपन्यास के प्रधान चरित्रों के आधार पर ही रचना को रोचक ढंग से अभिवर्णन किया। उपन्यास लेखन के पीछे दो मूल कारण निक्षिप्त हैं। विदेशी राजा अलग्जांडर के दुराक्रमणों को रोकना और भारत देश को गुलामी से बचाना चाणक्य का प्रधान और पहला कर्तव्य है। मगध साम्राज्य को नंदवंश के पागल राजाओं से विमुक्त करके सही और असली उत्तराधिकार

---

2. आर्य चाणक्य - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 120-125

राजा चन्द्रगुप्त को सम्राट बनाया। लेकिन दोनों घटनाओं का मूलधार चाणक्य का चरित्र है।

विष्णुवर्धन के वैयक्तिक जीवन के संदर्भ में जितनी सामग्री उपलब्ध है, उतना ही सामग्री को उपन्यासकार ने अपनी रचना में प्रधान स्थान दिया है। लेकिन चाणक्य के जन्मतिथि, स्थान आदि के बारे में लेखक सही विषय नहीं बता सका। इतना ही नहीं उपन्यास के अंत में चाणक्य की मृत्यु के बारे में वर्णन करने में लेखक असफल हो गया। इतिहास में चाणक्य की मृत्यु की आधार सामग्री उपलब्ध नहीं है। इसलिए लेखक ने चाणक्य नामक चरित्र का अंत तपोआश्रम में किया। लेखक ने उपन्यास के अंत में चन्द्रगुप्त के प्रशासन को मजबूत बनाने का उपाय चाणक्य के मुंह से बताया। चन्द्रगुप्त को राजपद से हटाने, उसे मारने के लिए अनेक बार षडयंत्र रचे गये हैं। उन के पीछे राक्षसमंत्री का हाथ है। राक्षस नंदवंश का नमक हलाल और विश्वसनीय मंत्री है। इसलिए वह चन्द्रगुप्त को मारने का प्रयत्न करता है। परन्तु चाणक्य के द्वारा वह बचाया गया था। विषफल, विषकन्या, आदि काल्पनिक घटनाओं का वर्णन लेखक ने संदर्भ सहित किया है। आमतौर पर पूरी कहानी एक ही प्रधान चरित्र के चारों तरफ जुड़ी है। इसलिए प्रस्तुत उपन्यास सफल ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है। अनुपात की दृष्टि से सम्पूर्ण उपन्यास में ऐतिहासिक घटनाओं का स्थान प्रधान है। इसे रोचक बनाने में लेखक ने सफलता प्राप्त की है।

3.4. साम्राट अशोक :-

3.4.1. ऐतिहासिकता :-

ईसा पूर्व से ईसा के बाद आठवीं सदी तक जो इतिहास है, उसे प्राचीनकाल मानते हैं। लल्लादेवी द्वारा लिखा गया उपन्यास 'सम्राट अशोक' दो भागों में विभाजित है। ये दोनों भाग दो अलग-अलग प्रतियों के रूप में प्रकाशित किये गये हैं। प्रथम भाग में सम्राट अशोक के राजवंश का आरम्भ और उसकी विशेषताओं के बारे में वर्णन किया गया है। उदाहरण के रूप में मौर्य वंश को कायम करने में राजा चंद्रगुप्त और आर्य चाणक्य के योगदान के बारे में वर्णन किया गया है। लेखिन यह झलक

मात्र ही है। महाराज बिंदुसार के यहाँ अशोक का जन्म होना और उसे आर्य चाणक्य द्वारा 'अशोक' नाम दिया जाता है। अशोक के बचपन और शिक्षा प्राप्त करने तक प्रथम भाग में वर्णन किया गया है। सम्राट अशोक के बचपन के बारे में जो ऐतिहासिक तथ्य उपलब्ध है, उन के अनुसार उपन्यास में अशोक का वर्णन है। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि आर्य चाणक्य की सहायता से ही चन्द्रगुप्त ने मौर्य साम्राज्य का स्थापना किया। चन्द्रगुप्त का पुत्र बिन्दुसार है। राज्य स्थापना के बारे में विष्णुगुप्त सम्राट बिन्दुसार को बताता है। [1]"आचार्य विष्णुगुप्त अपने उच्छ आसन पर विराजमान है। वे बूढ़े हो चुके हैं। उस के सामने राजा बैठा है। गुप्तजी ने राजा से कहा हे महाराज!, आज यह विशाल भारत स्वतंत्र है। सम्राट चन्द्रगुप्त के पहले इस पवित्र स्थान पर विदेश के राजा अलग्जांडर ने दुराक्रमण करने का साहस किया। उस वक्त महापद्मनंद राज्य कर रहा था। उस के वंशज कुल मिलाकर नौ थें। वे बुरी आदतों के गुलाम बनकर मदिरा में उन्मत होकर अनेक दुष्कार्य करते थे। ऐसे समय में युनानी राज्याधीश अलग्जांडर भारत पर छडाई करने आया था। परन्तु उस का सामना करना काफी मुश्किल काम है। ऐसे विपरीत समय में मै ने पंडितों की टोली बनाकर एक-एक राजा के पास जाकर भारतवर्ष को दुराक्रमण से बचाने की विनती की। अनेक राजा मुझसे सहमत होगए। लेकिन महापद्मनंद ने मेरा अपमान किया। उस वक्त मैं ने जो शपथ किया, उस के अनुसार ही मैं ने नंदवंश का नाश करके, मौर्य साम्राज्य की स्थापना करने में सम्राट चन्द्रगुप्त की सहायता की।"

सम्राट चन्द्रगुप्त ने राज्य कायम करने में अनेक समस्याओं का सामना किया। धीरे-धीरे सम्पूर्ण उत्तर भारत में मौर्य साम्राज्य का विस्तरण हो गया। प्रशासन व्यवस्था को मजबूत बनाने में भी आचार्य ने चन्द्रगुप्त की सहायता की। खेद की बात यह है कि बिन्दुसार में पिता के जैसे योग्यगुण नहीं रहे। वह बुरी आदतों की ओर आकर्षित हो गया। ऐसे समय में चन्द्रगुप्त ने बिन्दुसार को आचार्य के पास जंगल में

---

1. साम्राट अशोक - 1 लल्लादेवि - पृष्ठ - 7-17

भेज दिया। वहाँ पर आचार्यजी के उपदेश से बिन्दुसार पूरी तरह बदल जाता है। बिन्दुसार को प्रभावित करने के लिए ही आचार्यजी ने उन घटित घटनाओं का जिक्र किया जो सम्राट चन्द्रगुप्त की काबिलियत का निर्धारण करते हैं। अपने पिताजी के साहस और वीर गाथाओं से बिन्दुसार प्रभावित होता है। ऐसे समय में ही उसे समाचार मिलता है कि सुपुत्र का जन्म हुआ। तब आचार्य गुप्त जी ने जन्मपत्र तैयार किया। उसके अनुसार बच्चे का नाम अशोक रखना है। वह भविष्य में सम्पूर्ण भारत को अपने अधीन में लाकर सुव्यस्थित रूप में प्रशासन करके नेक नाम कमायेगा। इस प्रकार आचार्य चाणक्य ने ही जो भविष्यवाणी सुना दी, वह सच निकला।

आचार्य विष्णुगुप्त के चलेजाने के पश्चात राजा गुरु के रूप में उन्ही के शिष्य राधागुप्त नियुक्त हुए थे। उनके पास बालक अशोक शिक्षा प्राप्त करने लगे।[1] "यमुना नदी के तट पर आचार्य राधागुप्त अपने आश्रम में ईश्वर आराधना में तल्लीन है। सामने बैंटे शिष्यगण भी ईश्वर की प्रार्थना करने लगे। तमाम् शिष्यों में से अशोक बहुत ही होशियार और अकलमंद है। पुराण गाथाओं से वह प्रेरित होता है। वेदों का सार ग्रहण करता है। उपनिषदों का ज्ञान प्राप्त करता है। पाली भाषा ज्ञान में वह प्रवीण है। साहित्य ज्ञान के साथ-साथ उस ने साहस और युद्ध कला क्षेत्र में भी प्रथम स्थान ग्रहण किया। धनुर्विद्या में वह बेमिसाल है। खड्ग चलाने में उस का सामना करना किसी के वश की बात नहीं। शिक्षा सम्पन्न समारोह में तमाम युद्ध कलाओं में अशोक को प्रथम स्थान मिला। उसके चेहरे में विशाल भारत के भविष्य-सम्राट बनने का तेज दिखाई देने लगा। वह देखने में हट्टा-कट्टा सदृढ़ शरीरवाला बन गया। घुड़सवार में भी वह प्रथम स्थान पर है। वह घोड़ा इतनी तेजी से चलाता कि घोड़ा हवा से बातें करने लगता है। घुडसवार करने वाले युवराज अशोक को पकड़ना काफी मुश्किल है।" इस प्रकार लेखक ने राजकुमार अशोक के एक छात्र के रूप में रोचक ढंग से वर्णन किया है। छात्रवास में अन्य छात्रों के साथ रहते समय

---

1. साम्राट अशोक - 1 लल्लादेवि - पृष्ठ - 125-150

अशोक एक सीदा सादा बालक की तरह जीवन बिताया है। इसका मतलब यह है कि राजदर्प दिखाना घमंड स्वभाव से व्यवहार करना वह नहीं जानता। बुजुर्ग लोगों के साथ विनय स्वभाव से व्यवहार करता है। इस प्रकार राजकुमार अशोक का व्यावहार आदर्श और नेक है। इस विषय का वर्णन सुन्दर ढंग से किया गया है।

लल्लादेवी द्वारा लिखित उपन्यासों में सम्राट अशोक एक सफल जीवनीपरक उपन्यास है। भारतीय इतिहास के मौर्यकालीन शासक अशोक ऐसे सम्राट है जिसका नाम सोने के अक्षरों में लिखा गया है। समकालीन ऐतिहासिक तथ्यों, साहित्यक अभिव्यक्ति और शिलाओं पर उत्कीर्ण आलेख आदि के विश्लेषण द्वारा सम्राट अशोक का विराट व्यक्तित्व हमारे सामने प्रस्तुत होता है। उपन्यास के दूसरे भाग में वीर धीरोधात्त के रूप में सम्राट अशोक आदि का वर्णन किया गया है। प्रशासन कार्यों में वह अपने पिताजी की सहायता करने लगे। जब पिताजी बिन्दुसार अस्वस्त हो गये, तब अशोक ने पूरे प्रशासन व्यवस्था को अपने हाथ में लेलिया। तक्षसिला में होनेवाले विद्रोह को दबाने के लिए अशोक ने तक्षसिला की ओर प्रस्थान किया। इतने में उज्जैन प्रान्त में भी विद्रोह आरम्भ हुआ। उसे भी दबाना अशोक के भुजाओं पर आपडा। वीर और धीरोदात अशोक ने सब से पहले तक्षसिला में विजय प्राप्त किया। वहाँ के विद्रोह नेताओं को पछाड़कर उस ने उज्जैन की ओर कदम बढाया। वहाँ भी अशोक ने सफलता प्राप्त किया। इन सफलताओं से प्रभावित होकर मंत्रिपरिषद ने अशोक को राजा बनने की स्वीकृती दे रखा। राजा बनने के पश्चात अशोक ने राज्य विस्तार किया। अशोक के जीवन में कलिंग युद्ध एक महत्ववूर्ण घटना है जिस के प्रभाव से अशोक ने बुद्ध धर्म स्वीकार किया। यह ऐतिहासिक सत्य है कि सम्राट अशोक ने सन्यास ग्रहण करके बुद्ध धर्म की व्याप्ति के लिए अपने पुत्र और पुत्री दोनों को देश-विदेश भेजता है। इस प्रकार ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित प्रस्तुत उपन्यास सफल जीवनीपरक उपन्यास है।

3.4.2. काल्पनिकता :-

लल्लादेवी द्वारा लिखित सम्राट अशोक नामक उपन्यास अशोक की जीवन के चारों ओर घूमती रहती है। लेकिन यह ईसा पूर्व के इतिहास से संबंधित विषय है। इसलिए सीमित सामाग्री ही प्राप्त है। फिर भी लेखक ने अशोक का व्यक्तित्व समग्र रूप से विश्लेषण करने का प्रयास किया है। लेखक ने अशोक के जीवन से संबंधित घटनाओं के साथ साथ काल्पनिक विषयों का भी वर्णन किया है। उदाहरण के रूप में अशोक के बचपन से संबंधित विषयों का वर्णन किया है। जिन का कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। अशोक ने जिस प्रकार खड्ग चलाया, उसका वर्णन है। अशोक ने जिस प्रकार धनुर्विद्या का प्रदर्शन किया उसका भी वर्णन है। बिंबिसार के संतान में से अशोक सब से छोटा है। फिर भी होशियार होने के कारण गुरूजनों का आदर अभिमान इसके प्रति है। अन्य राजकुमार तो घमंड और अकल हीन हैं। इसलिए वे निरादारण के प्राप्त होगये हैं। यह घटना भी काल्पनिक हो सकती है। एक पेड़ के ऊपरी डाल पर बैठे पक्षी पर बाण चलाने के प्रत्योगी आयोजित किया गया है। उसमें अशोक ने प्रथम स्थान ग्रहण किया। कुएं में गिरी गेंद को बाहर निकालने में तमाम छात्र विफल होगये थे। परन्तु अशोक ने बिना रस्सी, एक एक बाण, एक के पीछे और एक लगाकर जंजीर बनाकर, गेंद को बाहर निकाला। यह घटना भी काल्पनिक है। दूसरे भाग में कलिंगयुद्ध का वर्णन लेखक ने बहुत विस्तृत ढंग से किया। मृतक सिपाहियों की संख्या पाँच हजार बताया गया है। इसका भी कोई ऐतिहासिक आधार नहीं रहा। युद्ध के पश्चात सन्यास ग्रहण करना भी एक काल्पनिक है। इतिहास में यह लिखा गया है कि कलिंगयुद्ध के विनाश से स्तब्ध अशोक ने बौद्ध धर्म ग्रहण किया। बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए अपने दो संतान, बेटा और बेटी को देश-विदेश भेजदिया है। इस प्रकार उपन्यास में काल्पनिकता का भी प्रभाव है।

3.4.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

प्रस्तुत उपन्यास में अनुपात की दृष्टि से ऐतिहासिकता का असर ज्यादा है। साधारणत: काल्पनिकता के सहारे उपन्यासकार कथा वस्तु को आगे बढ़ाता है । प्रधानत: ऐतिहासिक उपन्यास में रोचकता लाने के लिए काल्पनिकता का सहारा लेना भी लेखक का कर्तव्य है। काल्पनिकता के बिना यह रचना ऐतिहासिक किताब बन जाती है। इसलिए लेखक ने सार्थक ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास लिखने के लिए लेखक ने जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लिया।

3.5. रुद्रमदेवी :-

3.5.1. ऐतिहासिकता :-

तेलुगु के महान ऐतिहासिक साहित्यकार श्रीमान नोरी नरसिंहशास्त्री द्वारा लिखित जीवनीपरक ऐतिहासिक उपन्यासों में 'रुद्रमदेवी' एक है। आँध्र प्राँत में प्रतिष्ठित राज वंशों में से काकतीय राज वंश अत्यंत प्रसिद्ध है। वंश के इतिहास के बारे में उपन्यासकार ने आरम्भ में विवरण दिया। [1] "श्री गणपतिदेव महाराज के पिताजी महादेवराज के द्वारा काकतीय साम्राज्य कायम किया गया था। बचपन में से उन्हों ने अनेक कष्ट झेले। क्यों कि उन के पिताजी के जमाने में राज्य का राजधानी हनुमकोंढ था। जब वह बच्चा था, तब देवगिरी राज्य के यादवराज ने महादेवराज को मारकर गणपति देव को बन्दी बनाकर अपने साथ ले गये। जवान होने तक उसने कारावास में जीवन व्यतीत किया है। बहुत समय के बाद छोड़ दिया गया था। गणपतिदेव ने हनुमकोंड जाकर अपने आप को राज घोषित करके काकतीय राज्य कायम किया। जवानी से लेकर सत्रह वर्ष तक वह राज्य पालन करता रहा। दूर-दूर तक अपने राज्य को विस्तार किया। उसने राजधानी को भी हनुमकोंडा से वोरुगल्लु को बदल दिया। उनके प्रशासन में लोग सुख और चैन से जीने लगे। उन्हों ने अनेक मन्दिर बनवाये और आराम घर भी बनवाये। शत्रुलोगों का संहार करके

1. रुद्रमदेवी - नोरि नरसिंहशास्त्री- पृष्ठ - 11-12

राज्य को सुरक्षित बनाया। लेकिन राजा के लिए एक ही कमी रहगयी। वह कमी है कि वे पुत्र हीन है। उसकी एकमात्र सन्तान 'रुद्रमदेवी' है।''

ज्योतिशास्त्रज्ञों के अनुसार पुत्र का जन्म होगा। परन्तु विचित्र रूप से उसका वचन गलत होगया। रुद्रमदेवी का जन्म हुआ। फिर भी राजा ने उसे पुत्र के समान ही पालन पोषण करके बड़ा किया। वह युद्ध कलाओं में प्रवीण बन गई। राजा गणपतिदेव ने रुद्रमा की शादी का स्वयंवर घोषित किया कि रुद्रमा को युद्ध कलाओं में परास्त करने वाला, वर के रूप में चुना जायेगा। स्वयंवर में शामिल होने अनेक राजकुमार आ गये। रुद्रम के साहस कलाओं के सामने अनेक राजकुमार टिक नहीं सके। अंत में चालिक्य राजवंश के क्षत्रीय नव जवान राजा वीरभद्र ने रुद्रमा को परास्त करके उसके साथ विवाह किया। लेकिन इसके पहले वह शादीशुदा व्यक्ति है। वह सोचता है कि इस विवाह के साथ चालुक्य राज्य में आँध्र राज्य को मिला देना आसान हो जायेगा। उसकी पहली पत्नी के दो बेटे थे। पहले का नाम 'हरहर' और दूसरे का 'मुरारिदेव' है। वे दोनों राज्याधिकार अपनाना चाहते हैं। रुद्रमदेवी ने एक बेटी को जन्म दिया।[1] '' समय बीतने लगा। वह सयानी भी हो गई। उस की शादी महादेवराज नामक राजवंशज के साथ हुआ। वह भी राज्याधिकार के लिए तरसने लगा। कुछ समय के बाद एक बेटे का जन्म हुआ। सब के सब खुश होने लगे। रुद्रमदेवी और गणपतिदेव महाराज भी ऐसा सोचने लगा मानो युवराज का जन्म हुआ। राजा के सम्मुख एक शुभदिन, शुभमुहूर्त में उस बच्चे का नामकरणोत्सव धूमधाम से मनाया गया। राजा ने बहुत सोच विचार करके उसे 'प्रताप रुद्रदेव' नाम रखने का आदेश दिया। सोने की थाली में उसका नाम मोतियों के साथ लिखा गया। यह देखने लायक दृश्य है। राज्याधिकार के लिए तरसनेवाले सब के सब हताश हो गये। महाराज ने यह भी घोषित किया 'प्रतापरुद्रदेव' ही राज्य का उत्तराधिकार है।''

---

1. रुद्रमदेवी – नोरि नरसिंहशास्त्री– पृष्ठ – 17

युव राजकुमार 'प्रताप रुद्रदेव' के देख-रेख का भार रुद्रमदेवी को सौंप दिया गया। यह समाचार सुनते ही राज्याधिकार के लिए तरसनेवाले रिश्तेदार सभी एकत्रित होगये। उन्हों ने राज पंडितगण को क्राँती के लिए प्रोत्साहन दिया। यह पहले ही रुद्रमदेवी जान चुकी है। इसलिए रानी ने क्राँती को दबा दिया। विवश होकर सभी क्राँतिकारी देश छोडकर भाग गये। क्राँती करने वाले मंत्रिगण में से 'अन्नमन्त्रि' भी एक है। वास्तव में वह बहुत ही विश्वासपात्र और ईमानदार मंत्री है। लेकिन राजशासन के अनुसार उसे पकड़कर कारावास का सजा दियागया। लेकिन अंत में उसे 'छुड़ाकर' अपनी बेटी समान रहनेवाली उसकी बेटी की शादी भी करवादी। [1] ''नेल्लूर राज्य का राजा मनुमसिद्धि महाराज के दरबारी कवियों मे से तिक्कन्न सोमयाजी विख्यात हैं जिन्हों ने 'संस्कृत भारत को आँध्रीकरन करने का काम पूरा किया है। पेन्नानदी के किनारे आश्रम बनाया गया। और उस में कुशल तिक्कनन्ना के मुहसे निकलने वाले हर पद को लिपिबद्ध करने लगे। इस प्रकार 'तेलुगु महाभारत' की रचना का काम होने लगा। ऐसे समय में मनुमसिद्दि महाराज पर शत्रुराजा लोगों ने दुराक्रमण किया। यह समाचार मिलते ही तिक्कन्ना ने रुद्रमदेवी के नाम एक निवेदन पत्र लिखकर सहायता के लिए उसके एकदूत को भेजा। वास्तव में तेलुगु साहित्य के प्रति रानी के मन में श्रद्धा, और मोह है। इसलिए रानी ने शत्रु पर वीरोचित ढंग से टूट पड़ी। शत्रु सेना तिंतरबितर होगये। इस प्रकार तिक्कन के एकमात्र पत्र से प्रभावित होकर राणी रुद्रमदेवी ने मनुमसिद्धि महाराज की सहायता करके उसका राज्य, शत्रुलोगों से छुड़ाकर उसे फिर वापस कर दिया। यह ऐतिहासिक घटना है।''

अंतिम अध्याय में यह साबित किया जाता है कि अन्नमंत्री निर्दोष है। उस पर जो अपवाद लगाये गये हैं, वे निराधार हैं। इस प्रकार उसे कारावास से महारानी रुद्रमदेवी, विमुक्त करदेती है। सुमुहूरत देखकर दशमी केदिन रानी अपनी बेटी समान रुय्यम्म की शादी का प्रास्ताव, अन्नमंत्री के घर स्वयं जाकर उस की माता के

---

1. रुद्रमदेवी - नोरि नरसिंहशास्त्री- पृष्ठ - 137

समाने रखती है। वे बहुत खुश होजाते हैं। दोनों का विवाह बहुत धूमधाम से किया जाता है। राज दरबार में अन्नमंत्रि को उचित स्थान दिया जाता है। राज दरबार में आकर श्री चालुक्य वीरभद्रेश्वर यह घोषित करता है कि वह राज मोह और एहिक सुखों से विमुक्त होकर तप करने जाने की अनुमति माँगता है। उसे सचमुच अवकाश दिया जाता है। उसी वक्त यह समाचार मिलता है कि सेनाधीश जंगादेव ने युद्ध में सुंदरपाँड्य को परास्तकरके विक्रमसिंह पुर से भगा दिया है। सभा में ही उचित आसन पर बैठे श्री तिक्कन, केतना और गुरुनाथ तीनों बहुत खुश होते हैं। महारानी ने आदर के साथ विक्रमसिंहपुर राज्य को श्री तिक्कन महामंत्री को तोहफे के रूप में देने की आज्ञा देती है। वह तिक्कना से कहती है कि वह आँध्र महाभारत की रचना का काम शीघ्र ही पूरा करे। इस घटना से उपन्यास का अंत होता है।

3.5.2. काल्पनिकता :-

उपन्यास को आगे बढ़ाने के लिए लेखक ने जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लिया। महाराज गणपतिदेव ने अपनी बेटी रुद्रमदेवी को पुत्र की तरह पालन पोषण करके बड़ा किया। उसे मर्द की तरह युद्ध कलाओं में प्रशिक्षण दिया। रुद्रमदेवी के बदले रुद्रमदेव के लिए महाराज के नाम से ही वह प्रचलित है। सयानी होने के बाद उसकी शादी के राजा ने स्वयंवर घोषित किया कि उसे युद्ध कलाओं में परास्त करने वाले के साथ उसकी शादी तै की जाती है। यहाँ पर लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। [1] "राजा के द्वारा घोषित नियमों के अनुसार अनेक राजपुत्र आ पहुँचे। उन सब में से चालुक्य राजा वीरभद्रेश्वर धीर, वीर और साहसी है। वहाँ जितने भी राजालोग आ पहुँचे, उन सब के मन में एक ही विषय है कि जो स्वयंवर में राजकुमारी पर विजय प्राप्त करेगा उसे काकतीय साम्राज्य का राज-सिंहासन मिलेगा। यह बात सत्य है पर यह काल्पनिक है कि एक स्त्री को परास्त करने वाले को विजेता घोषित करना । चालुक्य राजा वीरभद्रदेव के अलावा बाकी

1. रुद्रमदेवी - नोरि नरसिंहशास्त्री- पृष्ठ - 35-37

राजकुमारों को रानी रुद्रमदेवी परास्त करती है। परन्तु वीरभद्रदेव के साथ वह पराजित होती है। एक तरफ वीरभद्रेश्वर और दूसरी तरफ रुद्रमदेवी दोनों के खड्ग एक – दूसरे से टकारते हैं। वे दोनों एक-दूसरे के मुह नहीं देखते सिर्फ खड्ग चालन देखते हैं। दो–तीन बार वीरभद्र ने खड्ग चालन में नियमों का उल्लंगन किया। परीक्षक ने उसे गलती ठीक करने का आदेश दिया। अकल के साथ रुद्रमदेवी खड्ग चला रही है। परन्तु वीरभद्र अकल के बिना बल प्रयोग करने लगा। देखने वाले लोग शंका करने लगे कि जीत किसकी होगी। कुछ समय के लिए ऐसा महसूस होने लगा कि रुद्रमा की जीत निश्चित है। परन्तु दूसरे ही पल में वहाँ का दृश्य बदलने लगा। अंत में वीरभद्र की तलवार के नोक पर लगी सिंदूर रुद्रमा के वक्षस्थल आ गिरी। सूर्य किरणों से वह सुशोभित होने लगा। यह देखकर भी रुद्रमदेवी ने भीषण प्रहार किया। इससे वीरभद्र अपने आप को संभलने में असफल होगया। उस का पैर फिसल गया। परीक्षक ने दोनों को शाँत करके, वीरभद्र को ही विजेता घोषित किया। रुद्रमा हँसती हुई वहाँ से चली गई। यह उसकी सहमति की सूचना है।'' यह काल्पनिक घटना है। शायद लेखक यह साबित करना चाहता है कि रुद्रमा किसी सुशिक्षित युद्ध प्रवीण मर्द का सामना करती है।

गणपतिदेव के राज दरबार में उपस्थित तमाम मन्त्रिगण में अन्नमन्त्री का विशेष स्थान है। लेकिन कुछ स्वार्थ कर्मचारियों के षडयंत्र के कारण, राजद्रोह के अपराध में राजा ने अन्नमंत्रि को बन्दी बना दिया। लेकिन उन का आश्रय पाकर स्वर्णमुखी नदी के किनारे आश्रम बनाकर महाभारत की रचना करने वाले महामन्त्रि श्रीमान तिक्कन सोमयाजी के प्रति राजा के मन में सम्मान और श्रद्धाभाव स्थिर रूप में है। कुछ विद्वानों के मन में यह विषय कड़कने लगा।[1] ''इसलिए एकदिन शाम के वक्त आश्रम से घर लौटने वाले तिक्कन कवि पर कुछ शराबी लोगों ने दुराक्रमण किया। कवि के साथ आनेवाले उनके शिष्यगणों में से अब सिर्फ दो ही बचे हैं। उन

1. रुद्रमदेवी – नोरि नरसिंहशास्त्री– पृष्ठ – 155

में से एक 'मारन्ना' और दूसरा 'गुरुनाथ' है। शराबी डंडे लेकर, तिक्कन्ना को मारने तैयार होगये। लेकिन तुरन्त मारन्ना ने तिक्कन्ना के सामने आकर शराबी लोगों के प्रहारों से अपने गुरुजी की रक्षा करने के लिए स्वयं उनके मार खाने लगा। धीरे-धीरे अंधेरा चारों ओर छाने लगा। इसलिए रास्ते पर लोगों का संचार भी बहुत कम है। तिक्कन्ना भी अवाक होकर देखने लगा। परन्तु दूसरा शिष्य गुरुनाथ के द्वारा यह दुश्चर्य नहीं सहा गया। वह जबरदस्त एक शराबी के हाथ से डंडा खींचकर, अति प्रताप के साथ अपने भुजाओं की शक्ति पूरी तरह लगाकर डंडा चारों तरफ घुमाने लगा। गुरुनाथ के डंडे के प्रहारों से एक-एक शराबी का सिर नारियल की भाँती फटने लगे, इतने में अचानक वहाँ राज सिपाही आ पहुँचे। उन के आगमन को न पहचानकर गुरुनाथ डंडा घुमाते हुये अपने गुरु और दोस्त की रक्षा कर रहा है। कवि के पुकार से वह अपना डंडा रोक लिया, नहीं तो सब को मार देता। सिपाहियों ने शराबी लोगों को गिरफतार किया और, कवि से माफी माँगकर उन्हें ले गये। प्रस्तुत घटना यह साबित करने के लिए लेखक ने वर्णन किया कि राज दरबार में भी राजा के विरोध में षडयंत्र करने वाले और महात्मा लोगों पर हमला करनेवाले और राज वंश पर कलांक लगाने वाले विद्रोहकारी भी हैं। यह काल्पनिक घटना है।'' इसके माध्यम से लेखक ने तिक्कन कवि और उसके दो प्रिय शिष्यों के बीच में जो अपार श्रद्धा भक्ति भाव है, उसका भी सुन्दर वर्णन किया। इस घटना के द्वारा यह साबित होता है कि उस जमाने में भी शराबी लोग अच्छे महान व्यक्तियों पर बिना कारण हमला करते हैं। इस काल्पनिक घटना के माध्यम से लेखक यह साहबित करना चाहता है कि मदिरापान से मानव अपना बद्धि बल खोकर दानव बन जाता है। इसलिए ऐसी बुरी आदतों से दूर रहने से ही मानव अपनी महानता से महात्मा बनता है।

3.5.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

उपन्यास की कथावस्तु को आगे बढ़ाने के लिए काल्पनिकता का सहारा लेना तो अनिवार्य है। खासकर ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों में यह अकसर होता

ही रहता है। प्रस्तुत उपन्यास में रुद्रमदेवी को एक आदर्श नारी के रूप में लेखक ने रुद्रमदेवी के चरित्र के माध्यम से वह अबला नहीं सबला सिद्ध किया। लेकिन ऐतिहासिक उपन्यास होने के कारण उपन्यास के बीच जहाँ तहाँ काल्पनिकता का सहारा भी लेना पड़ा। यदि ऐसा नहीं करता तो वह उपन्यास नहीं इतिहास ग्रन्थ हो जाता है। अनुपात की दृष्टि से उपन्यास में इतिहास का प्रधान और काल्पनिकता का गौण स्थान दियागया है। इसलिए यह ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास सिद्ध हुआ।

3.6. अप्पाजी :-

3.6.1. ऐतिहासिकता :-

श्रीप्रसाद द्वारा लिखित 'अप्पाजी' ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है। यह एक ऐसा ऐतिहासिक उपन्यास है, जिस में विजयनगर साम्राज्य के वैभव को पाठक को सामने सुस्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया है। अनेक ऐतिहासिक घटनाओं को इस रचना में स्थान मिला है। लेकिन कुछ ऐसी भी घटनाये हैं जिन को काल्पनिक कहना उचित होगा। फिर भी आमतौर पर यह एक सफल ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है। [1] ''सम्राट श्रीकृष्ण देवराय की प्रथम पत्नी और आँध्र साम्राज्य की महारानी तिरुमलाम्बिका है। देवराय की दूसरी पत्नी का नाम अन्नपूर्णादेवी है। दक्षिण भारत में विजयनगर साम्राज्य सुविशाल है। यह तुंगभद्रा नदी के तट पर निर्मित है। विजयनगर साम्राज्य का किला शत्रु दुर्भेद्य और बहुत मजबूत इमारत है। यह महान साम्राज्य हरिहरराय और बुक्कराय के द्वारा कायम किया गया है। उन दोनों ने दंडकारण्य में संचार करते हुये अपने गुरु विद्यारण्य स्वामी के नाम पर पवित्र तुंगभध्रा नदी के किनारे इस साम्राज्य का स्थापन किया। यह विजयनगर पहले विद्यानगर नाम से पुकारा जाता था। '' विजयनगर सम्राज्य के वैभव के बारे में समकालीन विदेशी यात्रिक 'निकोलोकोंट', 'अब्दुलरजाक', म्यूनिस आदि ने अपनी रचनाओं में वर्णन किया था।

---

1. अप्पाजी - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 7

[1]'' श्रीकृष्ण देवराय के पिताजी राजा तुडुव नरसराय के तीन पत्नियाँ थीं। उन के नाम तिप्पाँबा, नागाम्बा, ओबाम्बा हैं। इन में से महरानी तिप्पाँब का पुत्र युवराज वीरनरसिंहराय और दूसरी राणी नागांब का पुत्र श्रीकृष्ण देवराय है। बचपन में ही श्रीकृष्ण देवराय होनहार, होशियार और वीरोचित गुण सम्पन्न के रूप में दिखने लगा। कस्तूरी गंध की तरह व्याप्त होनेवाले उसके सद्‌गुणों से जलकर महरानी ने महामात्य तिम्मरुसु को रहस्य मंदिर में बुलाकर, बच्चे को मारने का काम सौंपा। लेकिन बालक देव राय के सद्‌गुणों से रीझकर महामात्य ने उसे अपने एक गुप्त मंदिर में छिपाकर रखा। सबूत के रूप में एक बकरी को मारकर उसकी आँखे लाकर महाराणी के सामने प्रस्तुत किया। गुप्त मंदिर में रहकर श्रीकृष्ण देवराय ने अप्पाजी को गुरु मानकर सकल कलाओं में ज्ञान प्राप्त किया।'' इसी प्रकार श्रीकृष्ण देवराय का तालीम गुप्त मंदिर में हुआ। इसलिए देवराय महामात्य तिम्मरुसु को प्यार और आदर से अप्पाजी कहते हैं। अप्पाजी के निरीक्षण में देवराय ने तमाम शास्त्र विज्ञान ग्रहण किया। समय बीतने लगा। बुढ़ापे के कारण पिताजी नरसराय की मौत हुई। विरासत में राज सिंहासन पर देवराय का भाई वीरनरसिंहराय बैठगया। लेकिन कम समय में ही वह रोगग्रस्त होकर मरगया। उसका बेटा छोटा बच्चा होने के कारण महामात्य तिम्मरुसु ने मंत्रि परिषद की सहमति से श्रीकृष्ण देवराय को महाराज बना दिया।

श्रीकृष्ण देवराय के स्थान को मजबूत बनाने के लिए महामात्य ने उसकी शादी तिरुमलांबिका के साथ की। वह श्री रंगपट्टण राज्य के राजा गंगाराज की एकलौती बेटी है। इसविवाह के साथ राजनीतिक क्षेत्र में देवराय का स्थान सुस्थिर हो गया। [2] ''विजय नगर साम्राज्य में सम्राट के बराबर अमात्य तिम्मरुसु भी आदरणीय और शक्तिसंपन्न है। राजनैतिक परिज्ञान में ही नहीं बल्की खड्‌गचालन,

1. अप्पाजी - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 11
2. अप्पाजी - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 17-21

घुडसवार, आदि युद्ध कलाओं मे भी अप्पाजी बेमिसाल है। वह अग्नि के समान शुद्ध और पवित्र है। उसके वंश का नाम 'सालुवारु' है। एक गरीब ब्राह्मण परिवार में उनका जन्म हुआ। पिताजी का नाम सालुवा राचराजु और उसका जन्मस्थान आँध्रप्रांत के गुण्टूर जिला के कोंडवीडुसीमा है। बचपन में ही उसके माँ-पिता चल बसे। अपने भाई के साथ गरीबी ढ़ोते हुये देश भ्रमण करने लगा। जंगल में वह अपने भाई से बिछड़कर अलग हो गया। भूखा-प्यासा बालक तिम्मरुसु एक पेड के नीचे बेहोश होगया। उसे जंगल से गुजरनेवाले साधु-सांत लोगों ने बचाया। उस लड़के के चेहरे में अखंड मेधा संपत्ति और असाधारण ब्रह्म तेज दिखाई देने लगे। एक संत ने उस बालक को अपने साथ ले जाकर तालीम दिया। कम उम्र मे ही वह तमाम शास्त्र विज्ञान में प्रवीण होगया। वेद, उपनिषदों का ज्ञान प्राप्त किया। संत ने उसे एक सामंत राजा के दरबार में लिपिक का नौकरी दिलायी। कम समय में तिम्मरुसु ने राजा के सामने अपने काम-काज से उत्तम स्थान ग्रहण किया ''

इस प्रकार तिम्मरुसु ने बहुत कम उम्र में मंत्री पद प्राप्त किया। राजनीति और प्रशासन क्षेत्र में जटिल समस्याओं को सुलझाकर महराज 'तुडुव नरसराय' के दरबार में महामात्य का स्थान ग्रहण किया। नरसराय के जमाने में ही अनेक कठोर समस्याओं का परिष्कार करके तिम्मरुसु ने एक तरफ राजा का और दूसरी तरफ तमाम देश वासियों का आदर और विश्वास प्राप्त किया। धीरे-धीरे लोगों में महामात्य के प्रति भक्ति-श्रद्ध बढने लगे। लोग पहचानने लगे कि राजा के बाद संपूर्ण राज्य को सुस्थिर बनाना और सुव्यवस्थित प्रशासन का प्रबन्ध करने का श्रेय सिर्फ महामात्य तिम्मरुसु मे ही मौजूद है। तमाम लोग जिस प्रकार उस का आदर और सम्मान करते हैं, उसी प्रकार उन से डरते भी हैं। सम्राज्य विस्तारण के लिए महामात्य ने श्रीकृष्ण देवराय के छोटे भाई अच्युतराय को सर्व सेनाधीश बना दिया। ताकि राजवंशजों में कोई भी देवराय के खिलाफ विद्रोह न कर सके। अच्युतराय की सहायता के लिए और एक भाई रामलिंगनायक नियुक्त किया गया है।

महामात्य अप्पाजी के राजनैतिक परिज्ञान के लिए एक उदाहरण श्रीकृष्ण देवराय का विवाह है। [1] "दक्षिण भारत देश में शक्ति सम्पन राज्यों में गजपति साम्राज्य और विजयनगर सम्राज्य दोनों प्रधान हैं। गजपति महाराज की बेटी बहुत ही सुन्दर और लावण्यवती एवं सुयोग्य भी हैं। इसलिए ऐसी नारी के साथ देवराय की शादी, अमात्य करना चाहता है। यह विवाह सिर्फ राजानीक और स्वार्थ भाव से किया गया है। अमात्यजी ने महसूस कि यदि बलवान राजा के साथ देवराय की दोस्ती या रिश्ता बढ़ता है तो देवराय बलवान बन जाता है। इस विवाह के पहले दोनों राज्यों के बीच छोटे मोटे वैषम्य है। लेकिन इस विवाह के बाद गजपति राज्य और विजयनगर राज्य दोनों हिन्दू राज्य के बीच स्नेह संबंध उत्पनन्न हुये। फलत: दक्षिण भारत में स्थित एक मात्र मुसलमान राज्य, बहमन राज्य कमजोर होने लगा।" महामात्य की दृष्टि में यदि दोनों हिन्दू राज्य मिलजाय तो एक मुसलमान राज्य को परास्त करना बहुत आसान है। यह अप्पाजी के राजनैतिक परिज्ञान का एक उदाहरण है। यह विवाह सिर्फ राजनैतिक विवाह है।

इस विवाह के पीछे एक कहानी है। दक्षिण भारत में तीन महान शक्तिसम्पन्न राज्य है। उन में से विजय नगर पहला राज्य है। बाकी राज्य गजपति राज्य और मुसलमान राज्य है। ये तीनों राज्य के बीच अच्छे संबंध नहीं। अप्पाजी ने बहुत सोचविचार करके धर्म के नाम पर दोनों हिन्दु राज्यों को मिलाना चाहता है। इसलिए देवराय को विजययात्रा पर भेजता है। विशाल सेना सहित आगे बढ़ने वाले देवराय के सामने अनेक छोटे राजा लोगों ने अपने हार मान लिया। उन राजाओं में गजपति राजा के रिश्तेदार और सामन्त भी हैं। इतना ही नहीं बहमन राजा के सामन्त भी हैं। अप्पाजी की योजना के अनुसार सम्पूर्ण दक्षण भारत अब देवराय के हाथों में है। सिर्फ दो राज्य उस के सामने है। एक तरफ गजपति राज्य और दूसरी तरफ बहमन राज्य इसलिए गजपति राय के पास विवाह का समाचार भेजा। विवश होकर

---

1. अप्पाजी - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 31

गजपति महराज ने शादी के लिए स्वीकृती दी। विवाह के पश्चात बहमन राजा ने संधि करली।

अप्पाजी के अंतिम दिन बहुत ही दयनीय थे। वीरेंद्र नामक गजपति राजा के रिश्तेदार के षडयंत्र के जाल में अप्पाजी फँस जाते हैं। [1]'' इसके पहले तुखा देवी का नाम अन्नपूर्ण देवी के रूप में बदल दिया गया। देवराय और अन्नपूर्ण देवी के बीच प्रणय कलह उत्पन्न हुआ। उसे सुलझाने में अप्पाजी सफल हुए थे। इस घटना के आधार महाकवि तिम्मन्नाजी ने जो 'पारिजातापहरण' नामक एक महान कृत्ति की रचना की। इस में देवराय और अन्नपूर्ण देवी के बीच में हुई प्रणय-कलह का अभिवर्णन किया गया है।'' देवराय के पुत्र को मारने के अभियोग से अप्पाजी के दोनों आँखें उखाड़ी। लेकिन अंत में सत्य जानकर देवराय परिताप से राज्य परित्याग करता है। कारावास में अप्पाजी की मृत्यु होजाती है। इस प्रकार अप्पाजी नामक उपन्यास में ऐतिहासिकता है। यह एक सफल जीवनीपरक उपन्यास है।

3.6.2. काल्पनिकता :-

श्रीप्रसाद द्वारा लिखित 'अप्पाजी' नामक उपन्यास ऐतिहासिक और जीवनीपरक उपन्यास है। इस उपन्यास में अनेक ऐतिहासिक घटनाओं के साथ-साथ कुछ काल्पनिक घटनाओं का अभिवर्णन है। उपन्यास के कथोपकथन को आगे बढ़ाने के लिए जहाँ-तहाँ लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। महामात्य तिम्मरुसु के जन्म के बारे में लेखक ने वास्तविक विषयों के साथ उस में रोचकता लाने के लिए किंवदंतियों का भी वर्णन किया। [2]''तिम्मरुसु का जन्म गरीब ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बचपन में ही उस के माँ-बाप चलबसे थे। एक दिन अनाथ बालक जंगल से गुजरते हुए, भूख के मारे बेहोश होगये। खड़ी धूप के कारण बालक का चेहरा

1. अप्पाजी - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 50-77
2. अप्पाजी - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 19

पसीने से भर रहा था। एक नागिन अपने विशाल फणि भाग फैलाकर सूरज की तीक्षणता से बालक के सिर को छाया देने लगा। बालक भी नागिन की छाया में बेहोश पड़ा था। उसी वक्त, उस रास्ते से गुजरने वाले सन्तों की टोली में से एक सन्त ने उस बालक को अपने साथ ले गया।'' लेखक ने इस घटना के माध्यम से यह साबित करना चाहता है कि 'महान व्यक्ति' बनने के लिए मानव को अथक परिश्रम करना चाहता है।

[1]''सयान श्रीकृष्ण देवराय को अपने ही मंदिर में अप्पाजी रखते हैं। अप्पाजी के महत जिस मुहल्ले में है उसी मुहल्ले में एक देवराय का भी मकान है। नौजवान देवराय उस घर में रहनेवाली 'चिन्नादेवी' नामक वेश्या के मोह में तड़पने लगा। फिर भी वह अपने गुरुदेव अप्पाजी से बहुत डरता है। एक रात जब 'अप्पाजी' अपने कार्यालय वापस घर लौटने लगा तब रात के अंधेरे में एक मानव आकार जल्दी जल्दी दीवार लांगकर मकान के अंदर घुस गया।'' यह एक काल्पनिक घटना है। राजकुमार देवराय की देखे-रेख करने वाले अप्पाजी की दृष्टि में अब भी वह बालक है। परन्तु लेखक प्रस्तुत घटना के माध्यम से यह साबित करता है कि देवराय अब बालक नहीं जवान हो चुका है। अब उसे शादी की आवश्यकता है। अप्पाजी नें इस घटना के बाद बदलाव आ जाता है। वह अपने शिष्य देवराय की शादी करने के लिए तैयार हो जाता है।

3.6.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

'अप्पाजी' नामक उपन्यास अनेक ऐतिहासिक आधारों पर लिखित है। विजयनगर साम्राज्य का वैभव दो महान व्यक्तियों के कंधों पर आधारित है। हर महान काम के लिए महान व्यक्ति का या व्यक्तियों का मेहनत ही कारण होता है। उसी प्रकार विजयनगर वैभव में पहले अप्पाजी और बाद में श्रीकृष्ण देवराय का

---

1. अप्पाजी - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 27

योगदान है। अप्पाजी के निधन के साथ ही विजयनगर सम्राज्य का कीर्ति सूरज डूब गया है। अप्पाजी के जन्म के बारे में लेखक ने ऐतिहासिक आधारों पर निर्भर होकर वंश का नाम और ब्राह्मण परिवार के बारे में सही ढंग से वर्णन किया है। परन्तु काल्पनिकता मिलाकर अनाथ-बालक के बारे में नागिन की किंवदंति का भी अभिवर्णन किया है। विजयनगर साम्राज्य स्थापन के बारे में सही ढंग से लेखक ने यह बताया कि हरिहर बुक्कराय दोनों ने मिलकर दंडकारण्य में कायम किया है। उन्हों ने अपने गुरु विद्यारण्य स्वामी के नाम पर इस राज्य का नाम विद्यानगर रखा। कालान्तर में वह विजयनगर बन गया था। यह ऐतिहासिक सत्य है कि देवराय की देखरेख अप्पाजी के द्वारा की गई थी। क्यों कि देवराय को बचपन में ही अंत करने का षडयंत्र किया गया था। लेकिन अप्पाजी ने उसे भंग करके देवराय को विजयनगर साम्राज्य का साम्राट बना दिया। वीरेन्द्र नामक गजपति महाराज के वंशज के षडयंत्र में फंस कर अप्पाजी कैद किया जाता है। देवराय के पश्चात सिंहासन, विरासत में उसके पुत्र तिरुमलराय को मिलना था। परन्तु वह बहुत ही नन्हा बच्चा है। इसलिए देवराय को अप्पाजी ने सलाह दिया की युवराज के संरक्षण के रूप में देवराय के छोटे भाई अच्युत राय को नियुक्त किया जाय। लेकिन वीरेन्द्र के मन में विजयनगर सम्राज्य को नाश करने की प्रबल इच्छा थी। सही वक्त में तिरुमलराय को मारकर हत्या अभियोग अप्पाजी पर डालता है। पुत्र-वियोग से देवराय अकल हीन बनजाता है। वीरेन्द्र की चालाकी कारण के यह आज्ञा दी जाती है कि अप्पाजी को कारावास में अंधा बनादिया जाय। अप्पाजी की आँखें उखाड़ली जाती हैं। अप्पाजी अंधा होकर तड़पते हुए मर जाता है। इसप्रकार लेखक ने उपन्यास के अंत में करुण रस से भरी इस घटना का वर्णन सही ढंग से किया है। अनुपात की दृष्टि से ऐतिहासिकता का आधिक्य है।

3.7. अकबर :-

3.7.1. ऐतिहासिकता :-

ऐतिहासिक उपन्यासकार श्रीप्रसाद द्वारा लिखित उपन्यास में से अकबर अनुपम रचना है। उपन्यास क्षेत्र में श्री प्रसाद का स्थान अद्वितीय है। प्रस्तुत उपन्यास मे चार

सदियों के ऐतिहासिक घटनाओं को उपन्यासकार ने बहुत ही रोचक और आकर्षक ढंग से पाठक गण के सामने रखा। भारत इतना विशाल देश है जिस में विभिन्न जातियों के लोग रहते है। फिर भी एक मुसलमान शासक होकर भी अक्बर ने भारत में लौकिक भावना के साथ धर्म समानत्व का प्रहार किया। बचपन से ही अकबर अनेक कष्ट झेलते हुए राज्य का संरक्षण और विस्तरण करके महान राजा बना है। उपन्यासकार ने अकबर के व्यक्तित्व के साथ समकालीन ऐतिहासिक घटनाओं के सिलसिले के रूप में रखकर कहानी को आगे बढ़ाया। [1]''तीसरे अध्याय में उपन्यासकार ने अकबर के बाल्य जीवन, साम्राज्य स्थापन, बाबर और हुमायूं के साथ घटित घटनाओं का जिक्र करके इतिहास संबंधी विषयों का बुनियाद बनाया। क्यों कि ऐतिहासिक उपन्यास के लिए यह बुनियाद अति आवश्यक है। अकबर का साम्राज्य काबुल से लेकर अस्साम तक कश्मीर से लेकर अहमदाबाद तक व्याप्त है। सम्राट अशोक के बाद इतने विशाल राज्य का सम्राट बननेवाला बादशाह अकबर ही है। विरासत में उन्हें जो छोटा राज्य मिला, वह काँटों की शय्य के समान है। उसे अथक परिश्रम करके अकबर ने बहुत विस्तार और सुरक्षित राज्य बना दिया है। ग्यारह बरस के उम्र में ही राजा बनने वाला अकबर अपने पिता हुमायूं के लाश पर सर रखकर बिलख बिलख कर खूब रोये। अकबर के दादाजी बाबार ने मुगल राज्य कायम किया। वे अपने आंतरिक दुशमनों से लड़ते हुये, राज्य की रक्षा करते हुए ही चलबसे। जब हुमायूँ राजा बना तब आंतरिक दुशमनों के साथ साथ बाह्य शत्रु भी अधिक हो गये । उन से निपटते वह भी मर गया। जब वह मरा था, तब अकबर ग्यारह साल का बच्चा था। अपने दादा बाबर की तरह अकबर भी बहुत साहसी और धीर वीर था। बाबर भी अपनी पिता की मृत्यु के बाद ग्यारह साल की उम्र में ही अपने परदादा तैमूरखाँ का सिंहासन पर बैठा था। लेकिन बाबर का बेटा, अकबर के पिताजी, हुमायूँ बहुत सौम्य स्वभाव वाला, कलाभिमान, कवि, पंडित पोषक है। उस के जमाने में राज्य पर दुराक्रमण हुये थे। उन्हें सामना करने में हुमायुँ

---

1. अकबर- श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 17-37

अपना तमाम जीवन व्यस्थ रहा। आखिर जब मर गया तब अकबर ग्यारह साल का बच्चा था। फिर भी अकबर का अभिभावक बैरमखाँ ने उसे पालन पोषण करके बडा किया। वह अकबर का गुरु, मार्गदर्शक और संरक्षक भी है। अकबर का सारा बचपन अनेक कष्टों के बीच व्यतीत हुआ। एक जगह में वे नहीं रहते, इसलिए उनकी पढाई में रूकावट आगई। इसलिए घर गुरुजानों से वह अनेक ज्ञान संबंध विषय सुनकर ज्ञानार्जन करता था। इसलिए यह ऐतिहासिक सत्य है कि वह अनपढ़ ज्ञानी है।''

भारत को एक राज के आधीन में लाने के लिए अकबर बादशाह ने अधिक परिश्रम किया। मुगल वंश के राजाओं में अकबर के मनोभाव विलक्षण हैं। उनके दादा-परदादा मुसलमान धर्म की व्यक्ति के लिए अनेक युद्ध करते रहे और धन कमाने में व्यस्त रहे थे। दिग्विजय के पश्चात सामंत राज्य के लोगों के प्रति कुछ राजा लोग ध्यान नही रखते। परन्तु अकबर का मनोभाव पूरी तरह भिन्न है। अकबर की दृष्टि में हर युद्ध के पीछे एक लक्ष्य होता है। बिना कारण या सिर्फ धन के लिए वह दुराक्रमण नही करता। सामंत राज्य के लोगों को भी वह अपनी जनता मानकर वह उनकी रक्षा केलिए व्यस्थित विधान तैय्यार करता है। धर्म संबंधी विषयों में वह इतना विशाल मनवाला है कि उसने, गुलामों के रूप में लोगों के क्रय-विक्रय को रद्द करदिया। मुसलमान राजालोग हिन्दु लोगों पर बाल बढ़ाने का कर लगाते थे। परन्तु सबसे पहले अकबर ने बाल बडाने के कर को रद्द करदिया। मुसलमान राजा के दरबार में हिन्दुओं को नौकरियाँ नहीं मिलती थीं । लेकिन अकबर ने अनेक प्रधान नौकरियों पर हिन्दुओं को नियुक्त किया जैसे मानसिंह, तोडरमल, तेजसिंह, बहदूर सिंह आदि। [1]''यह भी सत्य है कि अकबर के पुत्र 'सलीम' का प्रेम व्यवहार में 'अनारकली' नामक नारी सजीव समाधी होगई। इस घटना से यह मालूम होता है कि अकबर वंश गौरव केलिए कड़क और कठोर मनवाला बन गया था। पिता

---

1. अकबर- श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 179

और पुत्र दोनों के बीच अंतर अधिक हो जाते हैं। बात यहाँ तक पहुँचती है कि जब अकबर साम्राज्य विस्तार में व्यस्त होकर राजधानी दिल्ली से दूर दक्षिण भारत में था, तब सलीम अपना नाम जहंगीर रखकर अपने आप को बादशाह घोषित करके, अहमदनगर के किले में रहने लगता है। लेकिन वह अपने पिताजी से डरता है कि उसका सामना करना उसकी वश की बात नहीं। इसलिए अकबर बादशाह के प्रधान वजीर और सलाहदार अबुलफजल को मारकर तोहफे के रूप में उसका सर काटकर बादशाह के पास भेजता है।'' यह घटना ऐतिहासिक सत्य है। इसके बाद अकबर का मन विचलित हो जाता है। वह खून के रिश्ते को भी भूलकर 'सलीम' को मारना चाहता है। लेकिन प्रधान सेनापति मानसिंह अपने दामाद सलीम की रक्षा करता है। क्यों कि अपने दामाद के पश्चात अपना पोता शाहजहाँ को ही राज्य मिलनेवाला है। इसलिए वह अपने आश्रयदाता अकबर का मन बदलदेने का प्रयत्न करने लगता है। अकबर का स्वास्थ धीरे-धीरे बिगड़ने लगता है। यह सलीम के लिए खुश खबर है। मानसिंह के मन अपने बादशाह अकबर के प्रति अपार श्रद्धा और गौरव है। इसलिए बिना संकोच उसकी देखरेख करने लगता है। वह जानता है कि सलीम विस्तृत भारत के राज्यों की देख-रेख सहीं ढंग से नहीं कर सकता। परन्तु उसका बेटा 'शाहजहाँ' वंश का नाम रोशन करेगा। बाल्यावस्था से ही अकबर ने अथक परिश्रम किया और अनेक कष्टों का सामना किया। जब वह राजा बना था तब चारों तरफ शत्रु और मुसीबतें घेर रखे थे। अकबर ने बैरमखाँ के पास ग्यारह बरस के उम्र में अधिक परिश्रम करके तालीम ग्रहण किया। शत्रु लोगों का अन्त करके राज्य की रक्षा की। हिन्दु देश में मुसलमान राज्य स्थापन करना बहुत मुश्किल है। लेकिन ऐतिहासिक परिस्थितियों में भी संयम के साथ सुस्थिर राज्य कायम किया। तानसेन, बीरबल अबुलफजल जैसे कलाकारों को अपने दरबार में स्थान देकर महान कलाभिमान के रूप मे प्रतिष्ठित हो गये। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में अकबर के महान व्यक्तित्व का वर्णन किया है। यह ऐतिहासिक घटनाओं से भरा उपन्यास है।

3.7.2. काल्पनिकता :-

ऐतिहासिक उपन्यास को सफल बनाने के लिए काल्पनिकता का सहारा लेना भी अति आवश्यक है। क्योंकि काल्पनिकता के बिना कथावस्तु आगे नहीं बढता और सिलसिला भी टूट जाता है। इतना ही नहीं काल्पनिकता के अभाव में यह उपन्यास नहीं इतिहास ग्रन्थ बन जाता है। इसलिए श्रीप्रसाद ने अकबर नामक ऐतिहासिक उपन्यास में जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लिया। इस में अनारकली की कहानी काल्पनिक है। वास्तव में अनारकली नामक चरित्र ऐतिहासिक है। परन्तु उस के चारों तरफ़ जुडी कहानी में काल्पनिकता है।[1] "युवराज सलीम बहुत श्रृंगारी और विलासी पुरुष है। सौंदर्योपासना करना उसका लक्षण है। अनारकली का नाम मेहर नारी है। वह नर्तकी है। उसके साथ सलीम का प्रेम व्यवहार शुरू होता है। राजवंशज का यह सहजगुण है, कि नर्तकी के साथ ऐसा संबंध रखना। वे किसी भी नर्तकी के साथ श्रृंगार व्यवहार कर सकते हैं। लेकिन सलीम ऐसी नर्तकी को शादी करके रानी बनाना चाहता है। यह गलत है। इस सन्दर्ब में उपन्यासकार ने काल्पनिकता के सहारे कथावस्तु को रोमांचक ढंग से आगे बढाता है। वास्तव में नर्तकी अनारकली पर अकबर के मन में गलत भावना नहीं है। बादशाह की दृष्टि में वह एक सुन्दर नारी और कुशल नर्तकी है। परन्तु जब बादशाह को यह मालूम हुआ कि उस के कारण मुगलवंश पर कलंक लगनेवाला है। इसलिए बादशाह यह सहन नही कर सका । उसने उसे जीवन समाधी करने की सजा सुना दी। इसके पश्चात सलीम बहुत दु:खित होजाता है। समय बीतने लगता है। धीरे-धीरे राजकुमार बदल जाने लगता है। एक दिन उसकी नजर 'नूरजहाँ' पर पडती है। वह तुरन्त उस की तरफ आकृष्ट हो जाता है। मृतक अनारकली की आत्मा मेहर में आ बसी है।" यह काल्पनिक घटना है। इसलिए सलीम और 'मेहर' दोनों एक-दूसरे की ओर आकृष्ट हो जाते है। फिर अकबर दोनों को अलग करने में सफल हो जाता है। यह काल्पनिक घटना है कि मृतक की आत्मा जीवित व्यक्ति के अन्दर घुसना। फिर भी

---

1. अकबर- श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 47

इस काल्पानिक घटना के आधार पर कहानी आगे बढ़ती है। क्योंकि, इसी कारण से राजकुमार सलीम अपने पिताजी अकबर बादशाह पर विद्रोह करने तैय्यार होना और विचलित मनवाला अकबर का स्वास्थ्य धीरे-धीरे बिगड़ना आदि घटनायें घटती हैं।

उपन्यासकार ने कहानी की शोभा बढाने के लिए 'नौ रोज उत्सव' नामक विख्यात त्योहार का वर्णन किया। यह त्योहार मुगल जमाने में बहुत धूम-धाम से मनाया जाता है। इसलिए इसे वर्णन करने के लिए लेखक ने काल्पनिक घटनाओं का सहारा लिया। छठा अध्याय में 'नौ रोज उर्स' का वर्णन किया गया है। फारसी देशों में वह बहुत विख्यात त्योहार है। इसलिए मुगल वंशज भी इसे दिल्ली, सिक्रीनगर आदि मुख्य नगरों में यह त्योहार मनाते हैं। अकबर के जमाने में यह अति वैभव के साथ मनाया जा रहा है। यह त्योहार पूरे नौ दिन मनाया जाता है। पहले आठ दिन नगर के नर-नारी सब मिलकर उर्स में भाग लेते हैं। देश के विभिन्न प्राँतों से आनेवाले कलाकार, व्यापारी, विदूषक, खिलाड़ी आदि सभी एक-एक स्थान में अपनी कलाओं का प्रदर्शन देकर लोगों को मनोरंजन देने लगते हैं। इस प्रकार पहले आठ दिन प्रधान नगर विभिन्न कला प्रदर्शनों, विनोद कार्यक्रमों, व्यापार कार्यकलापों के साथ भूतल स्वर्ग के जैसे दिखता है। अंतिम दिन का कार्यक्रम पूरी तरह स्त्रियों के लिए निर्धारित किया। किसी एक-भी पुरुष को उत्सव के प्रधान स्थान की ओर आना या आखिर आँख उठाकर देखना भी मना है। इसलिए अंत:पुर स्त्रियाँ, परदे की नारियाँ भी स्वेच्छा और स्वतंत्र के साथ बाहर आकर उत्सव में भाग लेती हैं। नगर की तमाम स्त्रियों को अंत:पुर में प्रवेश दिया जाता है। 'फतेपुरसिक्री' में यह बहुत धूम-धाम से मनाया जाता है।

देश का राजधानी नगर आगरा होने पर भी प्रशासन के काम फतेपुरसिक्री नगर से ही होते हैं। फतेपुरसिक्री नगर के पीछे एक कहानी छिपी है। विवाह के पश्चात् कई साल बीत गये परन्तु अकबर सन्तान हीन रहा। इस स्थान में स्थित एक दरगाह में 'सलीमसिक्री' नामक संतबाबा रहता था। उसके पास जाकर बादशाह ने

अपनी वेदना सुना दी। सलीम बाबा ने उसे एक वर दिया, जिसके साकार रूप में एक पुत्र का जन्म हुआ। बाबा की मृत्यु के बाद बादशाह ने वहाँ एक सुन्दर नगर का निर्माण किया और 'फतेपुरसिक्री' नाम रखा। अपने पुत्र का नाम 'सलीम' रखा। बहुत समय बादशाह फतेपुरसिक्री नगर में ही बिताते हैं। अकबर बादशाह जितना वीर, और धीरोदात्त थे, उतना ही कलापिपासी और सौन्दर्योपासक थे। अपनी कल्पनात्मक इच्छाओं के अनुसार फतेपुरसिक्री नगर को बहुत सुन्दर बनाया। इसे देखने देश-विदेशी यात्रिक आते हैं। नौ रोज उत्सव में इस नगर की शोभा दुगुनी हो जाती है।

[1]"अंतिम दिन बादशाह वेष बदलकर स्त्री वेष धारण करके प्रौढ स्त्री के रूप में उत्सव स्थान में आगया। वह सरदार पृथ्वीराज की पत्नी 'श्रीदेवी' जो सदा परदे में रहती उसे देखना चाहता है। लेकिन पोल खुलजाता है। राजपूत स्त्री 'श्रीदेवी' घने पौधों के झुंड में लेजाकर स्त्री वेषधारी अकबर पर हमला करके, उसे धमकी देती है कि 'राजपुत्रस्त्रियाँ' प्राण छोड़ती हैं। पर मान नहीं छोडती। अपमानित अकबर बहुत विचलित हो जाता है।" यह काल्पनिक घटना है। लेकिन उपन्यासकार ने बहुत रोमांचक और सुन्दर ढंग से वर्णन किया। इस घटना के द्वारा लेखक यह साबित करना चाहता है कि बादशाह अकबर में भी श्रृंगार संबंधी कमियाँ हैं। इतना ही नहीं यह भी साबित होता है कि राजपूत स्त्रियाँ पवित्र जीवन बिताती हैं। वे अपनी मान बचाने के लिए प्राण देने या लेने के लिए भी तैय्यार होती हैं।

काल्पनिक विषयों में लेखक ने अकबर के व्यक्तित्व को प्रधान स्थान दिया। अकबर और सलीम के बीच होनेवाले मानसिक संघर्ष को लेखक ने प्रधानस्थान दिया। बाबर और हुमायूं के जमाने में मुगल साम्राज्य सुस्थिर नहीं रहा। परन्तु अकबर के जमाने में वह स्थिर हो गया। इसलिए अकबर के मन में कलाओं के प्रति रुचि

---

1. अकबर- श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 79

जागृत हो गई। फतेपुरसिक्री नगर निर्माण के पीछे जो किंवदंतियाँ प्रचलित हैं, उन को लेखक ने उपन्यास में प्रधान रूप से विश्लेषण किया। इस प्रकार का विश्लेषण करके यह साबित करना चाहता है कि अकबर में भक्ति, श्रद्धा, सौन्दर्य और कलाराधना है। अकबर और सलीम दोनों बाप-बेटे के बीच अंतर बढाने में लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। सलीम स्वतंत्र होकर, बादशाह बनकर प्रशासन भार संभालना चाहता है। उसके मन में प्रेम भरा है। वह श्रृंगारी पुरुष है। इन भावों से डरकर अकबर उसे सचेत करने के लिए 'अनारकली' को जीव समाधी बनाता है। बाद में नूरजहाँ की शादी एक पठान के साथ करवाकर दूर बंगाल प्राँत में भेजता है। इस प्रकार एक-एक काम अकबर अपने बेटे को सुधारने, या सही रास्ते पर लाने के प्रयत्न में करता है। लेकिन दोनों के बीच अंतर बढ़ता है। विचलित मन से अकबर चल बसता है। इस प्रकार अकबर का चरित्र चित्रण अनुपम ढंग से किया गया है।

3.7.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

श्रीप्रसाद की रचनाओं में अनुपात की दृष्टि से ऐतिहासिक घटनाओं की संख्या अधिक हैं। प्रस्तुत उपन्यास 'अकबर' में उपन्यासकार ने ऐतिहासिक घटनाओं को एक दूसरे से मिलाने में ही काल्पनिकता का उपयोग किया। उपन्यास के आरम्भ में तीसरे आध्याय में ही लेखक ने सम्पूर्ण मुगल वंश के इतिहास के मुख्य घटनाओं को हमारे सामने रखा। [1]"लेखक ने अध्याय का आरम्भ करते हुये लिखा है कि हमारी कहानी आरम्भ होने के समय में अकबर बादशाह बनकर दिल्ली के तख्त पर बैठा है। इन के पहले मुगल राज्य को कायम करने के लिए बाबर ने हिन्दुस्थान में आकर अधिक परिश्रम करके अंत में उसने कामयाबी हासिल किया है।" इस प्रकार आरम्भ करके लेखक ने अकबर के पहले घटित प्रधान घटनाओं का जिक्र किया। बाबर के पहले उनके दादा-परदादा तैमूरखाँ के वंशज सिर्फ दुराक्रमण करके धन-दौलत लूटकर भाग जाते थे। परन्तु सबसे पहले अकबर के दादा बाबर ने भारत देश

---

1. अकबर- श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 7

में राज्य कायम किया। उसके बाद हुमायूँ उसे स्थिर रखने में विफल हो गया। तब अकबर बारह साल के उम्र में उसे कायम रखा। इस प्रकार इतिहास के प्रधान घटनाओं को सिलसिले में रखकर, लेखक ने एक या दो कल्पित घटनाओं के सहारे उपन्यास के लक्षणों के दृष्टि में रखकर कहानी को आगे बढाया।

3.8. शाहजहाँ : –

3.8.1. ऐतिहासिकता :-

आधुनिक साहित्यकार श्रीप्रसाद द्‌वारा लिखित 'शाहजहाँ' नामक उपन्यास में शाहजहाँ और मुमताजमहल की प्रेम-कहानी है। उन दोनों की अमर जीवनियाँ इस उपन्यास में मौजूद है। मुगल वंश में शाहजहाँ अनोखा सम्राट है। यह ऐतिहासिक सत्य है कि उसका समय स्वर्ण-युग मानाजाता है। साहित्य, संगीत, निर्माण आदि विभिन्न कलाओं का बेहद आदर उस वक्त कियागया है। उदाहरण के रूप में शाहजहाँ के दरबार में मौजूद नवरत्नों को हम लेसकते हैं। नौ महान कवि दरबार की शोभा बढाते थे। सफेद और लाल संगमरमर के पत्थरों से बने इमारतों में लालकिला, आगरा किला और मुंताज की समाधि ताजमहल आदि विख्यात हैं। इस सभी ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर प्रस्तुत उपन्यास लिखा गया है। इसलिए ऐतिहासिक जीवनी परक उपन्यास मानना उचित है।

उपन्यान का आरम्भ इस प्रकार किया गया है कि शाहजहाँ की पत्नी मुम्ताजमहल मरीज हो चुकी है। वह मरणशय्या पर अन्तिम क्षण गिन रही है। सारा साम्राज्य विशाद सागर में डूब गया है। उस ने बचाने का प्रयत्न किया जा रहा है। लेकिन यह असंभव है। विशाद मुद्रा में बैठे शाहजहाँ के बारे में स्वयं उपन्यासकार वर्णन करने लगता है। वहाँ से शाहजहाँ की कहानी शुरू होती है। ऐतिहासिक घटनाओं का जिक्र यहाँ पर किया गया। अकबर के जमाने से लेकर शाहजहाँ की शादी तक घटित

घटनाओं का वर्णन किया गया है।[1] ''अकबर बादशाह के पश्चात् उसका बेटा 'सलीम' ने जहांगीर उपनाम से राजसिंहासन संभाला। उसके संतान में से तीसरा बेटा खुर्रम है। बचपन में से उसके अंदर धैर्य, साहस, पराक्रम के साथ-साथ कलाभिमान भी है। इसलिए जवानी में कदम रखते ही मुमताजमहल से प्यार करने लगता है। मुंताज के पिताजी फारसी देशवासी और सेना दलपति के रूप में कामकर रहा है। मुंताज बहुत ही सुन्दर, लावण्यवती और कोमल नारी है। इसलिए उसकी ओर जहांगीर आकृष्ट होता है। धीरे-धीरे नूर्जहाँ राज्य प्रशासन में प्रधान-स्थान निभाने लगी। उसके सहारे 'असफखाँ' भी प्रधान सेनाधीश के रूप में अपना अधिकार जमाने लगा। इस प्रकार नूर्जहाँ और जहांगीर का रिश्ता ही मुंताज और शाहजहाँ की शादी का आधार है। विवश होकर जहांगीर ने शादी के लिए स्वीकृति दी। इस प्रकार खुर्रम और मुंताज की शादी धूम-धाम से सम्पन्न हुई है।''

नूरजहाँ अपनी बेटी का विवाह जहांगीर का चौथा पुत्र शहरयार के साथ करती है। इस के बाद राज परिवार में संकट स्थिति शुरू होती है। जहांगीर के संतान में राजा बनाने की काबिलियत सिर्फ खुर्रम में ही हैं। बाकी संतान योग नहीं है। लेकिन नूर्जहाँ अपने दामाद को राजा बनाने का साजिश करती है। उस वक्त जहांगीर रोगग्रस्त होकर कश्मीर में आराम कर रहा है। दक्षिण भारत के राज प्रतिनिधि के रूप में खुर्रम व्यस्त है। इस साजिश को पहचानते ही असफखान अपने दामाद को राजा बनाने का प्रयत्न करता है। अंत में अनेक सरदर भी खुर्रम को ही सहमत देते हैं। बादशाह जहंगीर के जिंदा रहते हुये भी नूरजहाँ अपने दामाद को राजा घोषित करती है। यह समाचार सुनकर कश्मीर में अचानक जहंगीर की मृत्यु होती है। राजवंशजों के संघर्ष में खुर्रम की जीत होती है। नूरजहाँ और उसके अनुयायी बंदी बनाये जाते हैं। इस प्रकार खुर्रम ने 'शाहजहाँ' उपनाम रखकर बादशाह का स्थान ग्रहण किया। शाहजहाँ के जमाने में सारा देश शांत और सुभग है। दक्षिण देश में साम्राज्य का

---

1. शाहजहाँ - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 17

विस्तार हुआ है। मुंताज के कोक से चार लड़के और दो लड़कियाँ का जन्म हुआ। लडकों के नाम 'दारा', 'मुराद', 'औरंगजेब' और 'शुजा' हैं। लड़कियों के नाम 'जाहनारा' और 'रोशनारा' हैं। शाहजहाँ के मन में दारा और जाहनारा के प्रति विशेष अभिमान है। इसलिए रोशनारा और औरंगजेब धीरे-धीरे माता-पिता के खिलाफ हो जाते हैं। राजनीति में रोशनारा बहुत ही चालाक नारी है। उसकी बातों में आकर औरंगजेब भी कुटिल राजनीति में प्रवीण बनता है। उपन्यासकार ने ऐतिहासिक सत्य के आधार पर यह साबित किया कि शाहजहाँ के अंतिम दिनों में औरंगजेब और रोशनारा के द्‌वारा षडयंत्र किया गया है। शाहजहाँ के द्‌वारा किस प्रकार आलीशान इमारतें बनाये गये, उसका भी रोचक वर्णन किया गया है।

ताजमहल के निर्माण के सन्दर्भ में घटित घटनाओं के बारे में उपन्यासकार ने ऐतिहासिक तथ्यों को आधार बनाया। [1]''राजदरबारी वैद्यगण ने यह घोषित किया कि मुम्ताजमहल अब इस दुनिया में चन्द दिनों का मेहमान है। यह सुनते ही शाहजहाँ ने जोर से चीख उठा। उस के चीख भयभीत बच्चे भी जोर से रोने लगे। मुम्ताजमहल ने होश में आने के बाद अपने पतिदेव से पूछा - 'आप हमारे प्रेम का अनोखा स्मृति चिह्न बनाइये।' बादशाह ने कहा कि - 'स्मृति चिह्न का नाम मैं ही रखूँगा।' यह सुनकर रानी ने कहा -'मुझे अब कुछ नहीं चाहिये। अब मैं निश्चिन्त रूप से प्राण त्यागना चाहती हूँ।'' इस प्रकार अपनी पत्नी की अन्तिम अभिलाषा पूरा करने के लिए बादशाह ने अपने प्रेम का अनोखा स्मृति चिह्न बनाया। वह चिह्न 'ताजमहल' है जो विश्वविख्यात इमारतों में से सफेद संगमरमर का मकबारा है। धीरे-धीरे बादशाह का मन विचलित हो गया। [2]''वह प्रशासन कार्यों में भाग लेना छोड़ दिया। वह दिनभर ताजमहल में ही समय बिता रहा है। रात के वक्त आगरा के किले के किनारे से ताजमहल के दिव्य-सुन्दर-शोभा देखने लगे। उसकी स्थिति देखकर लोग समझने लगे कि वह सदा के लिए उस मकबरे में ही आराम लेना चाहता है।''

---

1. शाहजहाँ - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 20-24
2. शाहजहाँ - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 65

मुम्ताजमहल की मृत्यु के पश्चात बादशाह का स्वास्थ्य भी धीरे-धीरे बिगडने लगा। दरबारी वैद्य भी अस्वस्थ का कारण पहचानने में विफल होगए। अनेक शोध करने पर भी रोग निर्धारण नहीं हुआ। उस वक्त आगरा और दिल्ली में राजप्रतिनिधि के रूप में 'दारा' काम कर रहा है। 'मुराद' मध्य भारत में राज प्रतिनिधि है। 'शुजा' बंगदेश का राज प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त है। लेकिन औरंगजेब बहुत दूर दक्षिण देश में राज्याधिकार संभाल रहा है। औरंगजेब को राजा बनाने का पूरा प्रयत्न रोशनारा के द्वारा किया गया है। यह ऐतिहासिक सत्य है कि औरँगजेब के राजा बनने का श्रेय सिर्फ रोशनारा को ही है। [1] "यह साबित करने के लिए लेखक ने रोशनारा के हाथों से औरंगजेब के नाम पर लिखित पत्र का वर्णन सुन्दर ढंग से किया। इस पत्र के द्वरा एक-एक भाई के व्यक्तित्व का अन्दाजा हम लगा सकते हैं। भारत देश में इस्लाम धर्म का उद्दार और आदर उसके द्वारा नहीं होसकता। इसलिए वह राजा बनने का कबिल नहीं है। दूसरा भाई मुराद मूर्ख और आज्ञानी है। स्त्री के मोह और शराब की मादकता में तल्लीन होने वाला नीच व्यक्ति है। सव से छोटा भाई 'शुजा' में राजनैतिक, कुटिलता और प्रशासन परिज्ञान की कमी है। वह अपनी पत्नी के साथ सदा ख्यालों में जीवन बितानेवाला है। इसलिए तीसरा भाई औरंगजेब ही सब से काबिल और इस्लामधर्म के प्रचार में सब कुछ त्यागने के लिए तैयार रहनेवाला श्रेष्ठ आदमी है।"

तख्त के लिए हुये युद्ध में औरंगजेब ने विजय प्राप्त की। उसने एक-एक करके तीन भाइयों को अपने रास्ते से हटा दिया और अपने भविष्य-जीवन को सुगम बनाया है। इस कार्य में रोशनारा का विशिष्ट योगदान है। आगरा और दिल्ली प्राँतों का राज प्रतिनिधि के रूप में काम करने वाले दारा के ऊपर और बादशाह के ऊपर सब से पहले मुराद, विद्रोह करने के लिए तैय्यार होता है। उसके साथ औरंगजेब भी मिलजाता है। बंगाल में शुजा भी विद्रोह का झंडा उडाता है। इन दोनों विद्रोहियों को

1. शाहजहाँ - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 75

दबाने में दारा असफल हो जाता है। आपस के युद्ध में असफल होकर दारा रेगिस्तान की ओर परिवार सहित भाग जाता है। मुराद को विष भरा मदिरा पिलाकर मुराद का अंत औरंगजेब करता है। इसके ही षडयंत्र से दारा भी रेगिस्थान में तड़प-तड़पकर मर जाता है। शुजा को भी औरंगजेब ही आँखे उखाडकर मृत्यु के कगार में ढकेल देता है। इस प्रकार औरंजेब के तमाम् शत्रुओं का अंत होता है। [1]" इस संदर्भ में बादशाह बिकलते हुए 'जहनारा' से कहता है कि - मेरे पुत्र ही इस प्रकार एक दूसरे पर तलवार उठारहे हैं। आपस में तख्त के लिए लड रहे हैं। इस का अंदाजा भी मैं ने नहीं किया। मैं ने जो सोचा उस के विपरीत में सब कुछ होरहा है। दारा को मैं राजा बनाना चाहता था। परन्तु ऐसा नहीं हुआ।"

इस प्रकार सात साल तक शाहजहाँ ने आगरा के किले में बंदी के रूप में जीवन बिताया। सम्राट का पद और सिंहासन छीन लियेगये सातवर्षों में एकबार भी बादशाह औरंगजेब उसे देखने नहीं आया। दारा, मुराद और शुजा मरचुके हैं। इतना ही नहीं उस का जीवनाधार और प्यारी पत्नी हृदयरानी मुमताजमहल भी चलबसी थी। उसके अन्तिम समय में जहानारा उसके साथ है। पुत्री के रूप में नहीं बल्कि माता के रूप में उसकी देखरेख करने लगी। अंत में घटित घटनाओं का वर्णन उपन्यासकार ने रोचक ढंग से किया। परन्तु काल्पनिकता का सहारा लियागया है। लेकिन यह तो हकीकत है कि शाहजहाँ ने अपना अंतिम समय मुम्ताजमहल में बिताया और वहाँ उसकी मृत्यु हुई। [2]"औरंगजेब से शाहजहाँ अंतिम अनुरोद करता है कि, वह अपनी पत्नी की समाधि ताजमहल में प्राण त्यागना चाहता है। उसकी इच्छा के अनुसार आग्रा किले के दरवाजे खुलगये और जाहनारा के साथ ताजमहल के पास आपहुँचा और अपनी पत्नी को पुकारते हुये - देखों रानी! मैं आचुका हूँ। अब इस दुनियाँ में कोई शक्ति हम दोनों को जुदा नहीं कर सकती। पाप की दुनिया छोडकर अमर प्रेम-साम्राज्य में हम दोनों सदा साथ ही रहेंगे। इस प्रकार कहते हुए

---

1. शाहजहाँ - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 88
2. शाहजहाँ - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 237

समाधि की शिला पर उसने अपना सर झुका दिया।'' इस प्रकार अंत तक उपन्यासकार ने ऐतिहासिक तथ्यों को दृष्टि में रखकर उपन्यास को रोचक ढंग से वर्णन किया। इसलिए इसे सफल जीवनी परक उपन्यास कहना उचित है।

3.8.1. काल्पनिकता :-

शाहजहाँ नामक उपन्यास का मूलाधार मुम्ताजमहल और शाहजहाँ के बीच का अमर प्रेम और संगमरमर का बनाया गया सुन्दर इमारत ताजमहल। युगों से लेकर आजतक लोग जिस इमारत पर राज करते हैं उसका नाम है, 'ताजमहल' इसके पीछे छिपी अमर प्रेम-कहानी का वर्णन प्रस्तुत उपन्यास में किया गया। ऐतिहासिक - जीवनी परक उपन्यास होने के कारण लेखक ने इसे आगे बढाने के लिए और रोचक बनाने के लिए जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लिया। [1] ''उपन्यास के आरम्भ में लेखक ने अनारकली के बारे में वर्णन किया। इतिहास के आधार पर आज भी इसके बारे में मतभेद हैं। वह एक साधारण नर्तकी है। फिर भी बहुत ही सुन्दर नारी है। उस पर मोहित होकर राजकुमार सलीम ने उसे अपने हृदय-साम्राज्य की महरानी बनादिया। परन्तु राजनीति में इस प्रेम का मूल्य नहीं है। अकबर बादशाह के हुक्म के अनुसार सलीम की शादी एक राजपूत वंश की नारी के साथ निश्चित हुई। बादशाह यह भी जानता है कि इस शादी के लिए 'अनारकली' जरूर रुकावट बनेगी। इसलिए उसे मौत के घाट उतरवा दिया। बाद में सलीम की शादी सम्पन्न हुई। कुछ समय के बाद सलीम की दृष्टि नूरजहाँ नामक सुन्दर स्त्री की ओर आकृष्ट हो गई। यह तो सत्य है कि सलीम सौन्दर्योपासक है। लेकिन यह कल्पना है कि अनार्कली ही नूरजहाँ बनकर जहांगीर के जीवन में आई।'' इस विषय के बारे में इतिहासकारों में भिन्नमत है। ऐतिहासिक आधार न मिलने के कारण इस घटना को काल्पनिक मानना ही उचित है।

---

1. शाहजहाँ - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 7

मुम्ताजमहल की मृत्यु के बाद उसके लिए एक प्रेम-चिन्ह शाहजहाँ बनाना चाहता है। इसके लिए भिन्नप्रान्तों से विख्यात शिल्पी राजा के पास इमारत के नमूने पेश करने आते हैं। परन्तु उनमें से एक को भी राजा ने पसन्द नहीं किया। ऐसे समय में शेख गालिबबेग के द्वारा निर्मित नमूना राजा के पास लायागया और उसे राजा ने तुरन्त स्वीकार किया। इस विषय के वर्णन में लेखक ने काल्पनिक घटना का सृजन किया। [1] "शेख गालिब बेग जहांगीर के दरबार में विख्यात शिल्पकलाकार है। उसकी पत्नी सुन्दर और लावण्यवती है। उसने एक बेटी को जन्म दिया। बाद में उसकी मृत्यु हुई। तब से उसने जहंगीर का दरबार छोड दिया। पत्नी की मृत्यु के पश्चत् उस के मन में स्थित कलात्मक शक्ति उसे छोडकर चलीगई। धीरे-धीरे लोग भी उस कलाकार को भूलगये। शाहजहाँ के मामाजी और मुम्ताजमहल के पिता असफखाँ एक दिन गालिब के घर गये और उसका कुसल समाचार पूछा। अब गालिब का जीवनाधार उस की बेटी 'प्यारी' है। एकदिन प्यारी अदृश्य हो जाती है। उसे खोकर गालिब सचमुच पागल हो जाता है। अपनी पत्नी और बेटी की यादों में गालिब एक सुन्दर इमारत का नमूना तैयार करता है। उसे स्वयं शाहजहाँ रात के वक्त गुप्त वेश में आकर चुराकर ले जाता है। वह सुन्दर नमूना ही 'ताजमहल' है।" यह एक काल्पनिक घटना है। इस के लिए ऐतिहासिक आधार नहीं है। उपन्यासकार ने इस घटना का वर्णन रोमांचिक ढंग से वर्णन किया। इस घटना के माध्यम से लेखक ने यह भी साबित किया कि कलाकारों का मन जब दु:ख से भरजाता है तो, वे कलाखंडों का सृजन सुन्दर ढंग से करते हैं। राजा होकर भी शाहजहाँ ने गुप्त वेष में अंधकार रात में एक साधारण व्यक्ति के जैसे ताजमहल के नमूने को चुराकर लेगया। इन घटनाओं के माध्यम से लेखक ने यह साबित किया कि दर्द-दिल से कलाखंड का सृजन होता है। उपन्यासकार ने इस घटना का वर्णन रोमांचक ढंग से किया है। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि शाहजहाँ अपनी प्यारी पत्नी की याद में शहनशाह से साधारण मानव के रूप में बदलगया था।

---

1. शाहजहाँ - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 30-47

राज सिंहासन के लिए बादशाह के चार बेटे आपस में लडने लगे। शाहजहाँ के मन में 'दारा' को राजा बनाने की इच्छा है। परन्तु दारा राजनीतिक कुटिलनीति नहीं जानता। इसलिए उसे हराने में औरंगजेब कामयाब होता है। सब से पहले औरंगजेब 'मुराद' और 'शुजा' को अंत करदेता है। लेकिन दारा को हराना काफी मुश्किल काम है। क्यों कि दारा को हराने की घटना का वर्णन काल्पनकिता के सहारे उपन्यास में किया गया है।[1] "शइस्थाखान सोरहा था। अचानक वह जाग उठा। उसे किसी ने जगाया। आँख मलकर जब देखा तो सामने शहजादी रोशनारा सामने खडी है। उसे देखकर वह अचरज हो गया। सेनादीश नहीं जानता कि 'दारा' के विरुद्ध षडयंत्र किया जा रहा है। रोशनारा ने शरमाती हुई अपने प्रेम के बारे में कहा। उस के राय के अनुसार रोशनारा और शइस्थखान की शादी के लिए औरंगजेब सहमत है। परन्तु दारा उसके खिलाफ है। इस प्रकार रोशनारा ने उसका मन बदल दिया। पलत: दारा और औरंगजेब के बीच होनेवाले युद्ध में परोक्षरुप से औरंगजेब की सहायता करने के लिए वह संसिद्ध होगया। इस प्रकार दारा को हराने में रोषनारा का योगदान है।" प्रस्तुत घटना का जिक्र इतिहास में नहीं हुआ। फिर भी उपन्यासकार ने बहुत ही आकर्षक ढंग से इस घटना का वर्णन किया। संपूर्ण उपन्यास में ऐसी घटनायें बहुत कम मिलती हैं। उपन्यासकार ने इसे एक अमर प्रेमकथा के रूप में चित्रण करने में सफल हो गये। उपन्यास का मूलाधार शाहजहाँ और मुम्ताजमहल की प्रेमकथा है। ऐतिहासिक घटनाओं की परम्परा को तोडने के बिना है ही उपन्यासकार ने कहानी को आगे बढाया। इस प्रकार जीवनी परक उपन्यास लिखने में लेखक सफल हुए हैं।

3.8.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

यह एक प्रेम कहानी पर आधारित उपन्यास है। ऐतिहासिक तथ्यों को प्रधान स्थान देकर उपन्यासकार ने सुन्दर ढंग से उपन्यास की रचना की। सम्पूर्ण उपन्यास में दो-तीन घटनाओं के अलावा सम्पूर्ण रचना इतिहास पर आधीरित जीवनी परक

---

1. शाहजहाँ - श्रीप्रसाद - पृष्ठ - 107

उपन्यास है। शाहजहाँ के जन्म से लेकर मृत्यु तक घटित एक-एक घटना जिक्र किया गया। परन्तु उपन्यास को सीमित पुष्ठों में लिखने का प्रयत्न कियागया है। ऐतिहासिक घटनाओं की परम्परा का वर्णन करने से वह इतिहास बनता है। परन्तु यहाँ लेखक का लक्ष्य-सुन्दर जीवनी परक उपन्यास का सृजन है। इसलिए ऐतिहासक - घटनाओं को वर्णनात्मक शैली में लिखा। शिल्पगत विवेचन भी सुन्दर ढंग से कियागया है। आमतौर पर उपन्यास की कथावस्तु को आगे बढाने के लिए लेखक ने दो-तीन काल्पनिक घटनाओं की सहायता ली। इस प्राकर प्रस्तुत उपन्यास बादशाह शाहजहाँ और मुंताज की प्रेम-कहानी पर आधारित है। भारत के इतिहास में मुगल वंशजों का जमाना स्वर्ण-युग कहलाता है। तमाम् बादशाहों में से शाहजहाँ का ही जमाना स्वर्ण-युग माना जाता है। इसलिए लेखक ने शाहजहाँ के जीवन पर आधारित उपन्यास का सृजन किया है। इतिहास में शाहजहाँ और मुन्ताज अमर प्रेम-जोडी है। उपन्यासकार ने इन दोनों की जीवनियों के आधार पर प्रस्तुत उपन्यास का सृजन किया है। इन दोनों की प्रेम-कृति ही 'ताजमहल'। यह एक आलीशान इमारत है, जिसे दुनिया का सबसे सुन्दर इमारत माना गया है। इस इमारत के निर्माण के बार में लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास में सुन्दर ढंग से वर्णन किया है। आमतौर पर यह भी सफल जीवनी परक उपन्यास साबित हुआ है।

3.9. अहल्याबाई :-

3.9.1. ऐतिहासिकता :-

श्री चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंहजी द्वारा लिखित 'अहल्याबाई' एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इस उपन्यास का विषय पीशवा राजवंशजों से जुडी है। महाराष्ट्र के इतिहास में घटित घटनाओं पर आधारित प्रस्तुत उपन्यास में अहल्याबाई का जीवन वर्णित है। एतिहासिक भूमिका के रूप में महराष्ट्र में होल्कार राज्य का राजधानी निंददूरनगर है। राजधानी से दूर एक घना जंगल है। उस में जंगली लोग एक प्राँत में निवास करने लगे। उनका नायक एक बूढा ऋृशि है। एक दिन एक नवयुवक उस संत से मिलने कुटीर पहुंचता है। उस नवयुवक का नाम श्यामसुंदर है। दीवान राधाकांतराव

ने श्याम को महरानी अहल्याबाई के प्रशासन के बारे में लोगों के राय जानने संत व्यक्ति के पास भेजा। दोनों के बीच राजवंश के इतिहास और आज की स्थिति के बारे में बेहस होता है। [1] ''संत ने पूछा - 'बेटा तुम कौन हो? और तुम्हे किसने भेजा? तुम्हारा नाम श्यामसुन्दर दत्त है ना?' श्याम - 'जी हाँ। राधाकाँत जी ने मुझे यहाँ भेजा। महराणी के पक्ष में हम रहना चाहते हैं। महरानी के विपक्ष-शत्रु का संहार करना चाहते हैं।' संत- 'मैं ने बहुत सोचा। परन्तु एक स्त्री को राज सिंहासन पर लोग बैठने नहीं देंगे। आप चाहे महरानी की रक्षा करे और सचेत रहे, परन्तु विपक्ष-शत्रु महरानी को हराने षडयंत्र रचारहे हैं।'' 'श्याम' - आप बहुत ही बूढे हो चुके हैं। आप इस राजवंश के इतिहास के बारे में शायद जानते होंगे। क्या मैं उसके बारे में सुनसकता हूँ। मुस्कुराते हुये संत ने जवाब दिया - 'जब शिवाजी की मृत्यु हुई तब मैं बारह साल का था। शंभूजी का जन्म और मृत्यु मेरी आँखों के सामने ही हुये थे। औरंगजेब के लडनेवाली सेना में मैं भी था। पीशवा बालाजी, बाजीराव, विश्वनाथ आदि मेरी दृष्टि में बच्चे हैं। क्यों कि तब मैं तप करने जंगल पहुँच चुका हूँ।' श्याम - तो आप एक सौ से ज्यादा सालों का इतिहास जानते हैं। संत - 'जानवर भी आज मैं महरानी की रक्षा करने काम में नहीं आ सकता। क्यों कि महरानी के आस-पास चरने वाले प्रशासनाधिकारियों में ही उस के शत्रु मौजूद हैं।'' इस घटना से संपूर्ण राजवंश की जानकारी प्राप्त होती है।

उपन्यासकार ने छटे अध्याय में अहल्याबाई को रानी बनने की कहानी बतादी। महराष्ट्र के राजाओं में 'होलकार' वंशजों का यश सदा याद रखने योग्य है। इस वंश का आदि पुरूष का नाम मलहरराव होल्कार है। इस का जन्म एक साधारण मध्यवर्गीय परिवार में हुआ था। वीर-धीरोधात् होने के कारण उस ने सिपाही का नौकरी प्राप्त की। पीशवा राजाओं के पास ईमानदार, होशियारी से काम करने के कारण, पीशवा बालाजीराव ने उसे जागीरदार बना दिया। उस जमाने में जगीरदार छोटे राजा के नाम

---

1. अहल्याबाई - श्री चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंह - पृष्ठ - 5

से यशस्वी होते हैं। इस के पश्चात् मलहरराव ने अपना राज्य विस्तरण किया। धीरे-धीरे मालव राज्य का विस्तरण होता गया। ईदूर राजधानी के रूप में समृद्ध है। पीशवा के अधीन में होते हुये भी, मलहरराव सर्व स्वतंत्र राजा के रूप प्रशासन करने लगा। दिन-ब-दिन बढनेवाली मालव-देश की शक्ति से डरकर, पीष्वा भी चुप रहने लगा। यादव वंशज होकर भी अकलमंदी और साहस के साथ, राज्य प्रशासन करने में वह समर्थ रहा। परन्तु रोगग्रस्त होकर उसका जवान एकलौता बेटा राजकुमार खांडेराव मरगया। खांडेराव की पत्नी का नाम अहल्याबाई है। उसके दो संतान हैं। बेटे का नाम मालिराव और बेटी का नाम मुक्ताबाई है। गुणवति, और सफल विधाओं में प्रशिक्षित बहुरानी अहल्याबाई और उसके संतान को देखकर मलहरराव दुःख छोडकर संतुष्ट मन से जीवन बिताने लगा। पति को खोकर भी पतिव्रता के रूप में अहल्याबाई जीवन बीतने लगी। बूढे होने के कारण मलहरराव भी स्वर्ग सिधारगये। तमाम् दीवान मिलकर मलहरराव के पोते मालिराव को राजा बनाया। भगवान ने फिर एकबार इस राजवंश की कडी परीक्षा ली। छोटे उम्र में ही बीमारी के कारण मालीराव की मृत्यु हुई। इस प्रकार होल्कार वंश अंत होने का समय आपहुँचा। साँस, पति और पुत्र तीनों को खोकर, संकट स्थिति में रहकर भी, अहल्याबाई ने अपने आप को संभालकर राज्य और प्रजा की रक्षा करने के लिए राज्य -प्रशासन अधिकार अपनाया। महरानी ने जो निर्णय लिया उसे अनेक दीवान और राज्याधिकारियों ने तिरस्कार किया। फिर भी वे खामोश रहे। वंशोध्दारक हीन वंश का अंत करने पर राज्य को हडपलेने के लिए शत्रुराजा संसिद्ध हैं। ऐसी संकट स्थिति में महरानि अहल्यबाई ने राज्याधिकार अपनाया। महरानी का यह साहस कार्य अनेक राजाओं के लिए तिरस्करणीय रहा। तब से महरानी राज्य-प्रशासन संभालते हुए राज्य के अंदर-बाहर के शत्रुलोगों का अंत करने लगी।

रानी अहल्याबाई के विश्वसनीय और ईमान्दार दिवानों में से राधाकांतराव प्रथम है।[1] " एक रात प्रशासन संबंधी विषयों के बारे में बातचीत करने वह अपने शिष्यों में से एक श्यामसुंदर को साथ लेकर रानी जी के पास गया। दीवानजी और श्यामसुंदर को सिपाही ने अंदर भेजा। एक विशाल कमरे में राणी और उसकी बेटी दोनों बातें कररही हैं। उनके सामने कमरे को दो भागों में विभाजन करते हुये एक नाजुक, परदा लट करहा है। परदे की ओर से रानी और राजकुमारी को ठीक से देखना मुश्किल है। श्यामसुंदर सोचरहा था कि रानी शायद सुंदर आभूषणों से अलंकृत सुंदर रूपवाली होगी। लेकिन दुबली-पतली काले वर्णवाली एक प्रौढ-स्त्री को स्यामसुंदर ने वहाँ देखा। उसके पास बैठी सोलह साल की लडकी उसकी बेटी मुक्ताबाई है। राधाकांत राव और श्यामसुंदर दोनों ने रानी का अभिवादन किया। और परदे के नजदीक जाकर अपने-अपने स्थान ग्रहण किये। श्यामसुंदर ने रानी को इसके पहले कभी नहीं देखा । इसलिए रूपवान और सौंदर्यवती न होकर काले वर्णवाली, साधारण-स्त्री की तरह कपडे पहननेवाली अजनबी स्त्री को अब भी रानी मानने में उसका मन हिचकरहा है । मुक्ताबाई के चले जाने के पश्चात्त रानी ने परदा हटाकर राधाकांत से पूछा कि, 'क्या आपने इस बालक के बारे में हससे बात की।' राधा-कांत जी ने जवाब दिया - जी हाँ। आप मुझे जिस प्रकार अपना इमानदार मानते हैं? उसी प्रकार इस बालक को भी मनाली जिए। जब इस प्रकार दीवान जी कहनेलगा रानी की आँखों में से आँसी की बूँद टपकने लगी। तुरंत राधाजी ने अचरज के साथ रानीजी से पूछा - 'माँजी, यह क्या - आप चिंताग्रस्त होरहे हैं?' रानी जी ने जवाब दिया - 'यह बालक बिलकुल मेरे पुत्र मालिराव की तरह दिख रहा है।' हाँ। पुत्र तुम्हारी मृत्यु के कारण ही हमें बेईमान दिवान से टक्कर लेना पडरहा है। तुम्हारे पिता की तरह तुम भी मुझे अकेले छोडकर चलेगये हो।' माताजी को रोते दोखकर मुक्ताबाई भी कमरे के अन्दर जोर से रो उठी। राधाकांतजी ने अपने आप को संभालकर महारानी को सात्वना दिया। एक ही क्षण में महारानी अपने आप को

---

1. अहल्याबाई - श्री चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंह - पृष्ठ - 38-46

संभालकर राधाकांतजी से बातें करने लगी। उसने कहा - मैं अपनी जनता को ही अपने बेटे मानकर प्रशासन करने लगी हूँ। लेकिन मेरे ही दरबार में कुछ लोग मेरे खिलाफ षडयंत्र करने लगे हैं। मैं ने आप और गंगाधर जस्वंत को इमानदार माना। परन्तु कल रात गंगाधर मेरे पास आकर अपने बेटे को गोदलेने के लिए मुझे मजबूर कर रहा है। राधाकांत ने कहा - 'महारानी जी! आप मेरे बारे में निश्चिंत रहे। अपनी जान देने के लिए भी मैं तय्यार रहूँगा। मैं ने श्यामसुंदर को जासूस कार्यों में निष्णात बना रहा हूँ। लोगों का मत आपके प्रशासन संबंध में किस प्रकार है, उसका भी जानकारी मैं प्राप्त कर रहा हूँ। रानी जी ने फिर एक बार संदेह व्यक्त किया कि गंगाधर जस्वंत को साथ देनेवाले राजाधिकारियों में दौलतराव भी एक है। राधाकांत ने कहा - आप ने ठीक अन्दाजा लगाया कि गंगाधर और दौलत दोनों भी षडयंत्र के प्रधान व्यक्ति है। भगवान को साक्षी मानकर हम दोनों शपथ ले रहे हैं कि हम दोनों अंत तक आप को साथ देंगे।''

इस प्रकार कुछ दिन बीतगये। धीरे-धीरे शत्रु लोगों के षडयंत्र का असर तीव्रतर होने लगा। देश में जहाँ-तहाँ डाकु लोग डाके डालने लगे, राहगिरों को लूटने लगे और स्त्रियों पर अत्याचार भी करने लगे। लोग भयबीत होकर प्राण-रक्षा के लिये रानी के सामने विनति करने लगे नहीं तो जान बचाने वे राज्य छोडकर चलेजाने के लिये तैयार हो रहे थे। रानी को शिकायतें मिली है कि देश की सेना में से एक टुकडी अपने ही लोगों को शिकार केलने लगि। अपने ही सेनाध्यक्षों के बेईमान कार्यों से तंग आकार रानी ने, अपने पक्षवाले ईमानदार, प्रशासनाधिकारों को बुलाया और इन विषयों पर बेहस करना चाहती है। महारानी अपने आप को असहाय स्थिति में मेहसूस करके या तो दीवानों के हाथों में पुतली बनकर सर झुकाना चाहती है, या राज्यव्यवहार छोडकर सन्यास ग्रहण करके वनों में जाकर तप करना चाहती है। [1]'' उसने राधाकांतजी से कहा - ''राज्य में अकृत्य करने वालों को पकडकर सजा

---

2. अहल्याबाई - श्री चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंह - पृष्ठ - 66-68

देना है। लूट-पाट और मार-काट करके अशांति फैलानेवाले 'भिल्लु' नामक जंगली जाती का भी अंतकरना है। जस्वन्तराव के प्रोत्साहन शत्रु राजा राघुनाथ राव हमारे राज्य पर दुराक्रमण करने संसिद्ध होरहा है। इस प्रकार विकल मन से कहनेवाली महरानी को देखकर राधाकांत ने उसे सात्वना देते हुए कहा कि 'महारानी आप निश्चिंत रहे। देश में षडयंत्र करनेवाले धूर्त राज्याधिकारी निकट भविष्य में ही हमारे आधीन में आजायेंगे। इस काम में मैं श्यामसुन्दर, पहले भिल्ल-डाकुओं को पकडने के कार्य में निमग्न रहिये। राधाकांत ने रानी को आश्वासन दिया - हम दोनों जाकर डाकुओं के नायकों को पकडकर आयेंगे। इसी बीच सेनाध्यक्ष तुकाजी को सेना सहित संसिद्ध रहने की आज्ञ भी दीजिये। बहुत जल्दी ही कामयाबी के साथ हम आप के सामने हाजिर होंगे।''-

कुछ ही दिनों के बाद गन्डाभिल्लु को पकडने में श्यामसुंदर ने कामयाबी हाजिल की। परन्तु रातों - रात उस डाकु को किसी ने भाग निकलने दिया। हताश होकर श्यामसुन्दर रानी के सामने अपराधी की तरह खडा हो गया। वास्तव में इस कृत्य का सजा - मृत्युदन्ड है। परन्तु राधाकांत की बात मानकर रानी ने श्यामसुन्दर को देश से बाहर निकाल दिया। दिन बीत ने लगे दौलतराव गाँवों में जाकर लोगों में रानी के खिलाफ भाषण देने लगा। भिल्लुजाति के लोगों में भी रानी के प्रति प्रतिकूल भावनायें जागृत हो गयी। उन सब के सामने दौलतराव ने जस्वंतराय के लडके को ही भविष्यत के राजा घोषित किया। लोगों से 'कर' वसूल करने का काम भी दौलतराव ने स्वयं अपनाया। परन्तु रानी की आज्ञा के बिना ही यह काम किया गया है। इतना ही नहीं 'कर' के रूप में जो धन मिला उसे राज कोश में जमा करने के बिना रानी के विपरीत में क्रांती करने के लिए खर्च कर रहा है। रानी की सेना से लडने के लिए सेना इकट्ठा कर रहा है। उस सेना में डाकू-लोग ज्यादा है। श्यामसुंदर अपना नाम 'जमाखान' रखकर छदम वेशधारण करके शत्रु सेना में शामिल होकर रानी के लिए जासूस कार्य करता रहता है। अंत में भेतालसिंह नामक शत्रु सेनाध्यक्ष और दौलतराव

अपनी सेना के साथ दुर्ग पर हमला करने के लिए तैय्यार होते हैं। परन्तु जमाखान ऐन मौके पर भेतालसिंह को पछाडता है। सेनाध्यक्ष की मृत्यु से शत्रु सेना तितर-बितर होजाती है। राजद्रोह करनेवाले गोमोजी, दौलतराव भी राज्य छोडकर भाग जाते हैं। अंत में रानी के सामने राधाकांतराव पोलखुलता है। रानी का मन आनंद से भरजाता है। श्यामसुंदर को कोत्वाल का काम दिया जाता है। इस प्रकार शत्रुओं को साथ देने पर भी रानी के शरण में आनेवाले जस्वंतराव को क्षमा दिया जाता है। क्यों कि रानी की पुत्री मुत्काबाई उसे चाहती है। अंत में जस्वंत और मुक्ता की एवं श्यामसुंदर और कमलाबाई की शादियाँ होती हैं। इस प्रकार अनेक ऐतिहासिक घटनाओं के साथ उपन्यास लिखा गया है।

3.9.2. काल्पनिकता :-

श्री लक्ष्मी नरसिंहजी द्वारा लिखित उपन्यास 'अहल्याबाई' ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास होने पर भी जहाँ-तहाँ उसमें काल्पनिकता का झलक मिलता है। उपन्यास को रोचक बनाने केलिए जय जरूरी है कि काल्पनिकता का प्रभाव जरूर है। उपन्यास का आरम्भ ऐतिहासिक पृष्टभूमी के आधार पर होता है। 'अहल्याबाई' के पूर्वजो का विवरण दियागया है। दूसरे प्रकरण में एक काल्पमिक घटना का वर्णन है। [1]''श्यामसुन्दर और ऋषि के बीच रानी के वंश के इतिहास के बारे में बातचीत हो रहा है। मुनि-कुटीर के द्वार के सामने लोग हडबडाने इकट्टे हो रहे थे। वे कहरहे थे कि 'रक्षा करो'-'बिना कारण बेचारे मररहे हैं। स्त्री भी खतरे में फँसगई है।' मन में करुणभावना जागृत होने के कारण श्यामसुन्दर बातचीत करना बीच में छोडकर बाहर दौड पडा। जाते वक्त ही अपने कमर पर लटकने वाले स्थान से तलवार भी निकाल लिया। मुनि ने द्वार पर खडे लोगों से किसी एक को बुलाकर घटना की जानकारी प्राप्त की। बाहर जाकर श्यामसुन्दर ने देखा तो वहाँ एक पागल जंगली भैंस ने किसी क्षत्रिय वेशधारी व्यक्ति को धक्का देकर घायल कर दिया। उसे

---

1. अहल्याबाई - श्री चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंह - पृष्ठ -16-25

पकडने में विफल होकर दो सिपाही सेवक भी वहाँ से भाग निकले। वह क्षत्रिय और कोई नहीं बल्कि राणोजी – होल्कार है। वह दरबार में एक प्रधानाधिकारी है। एक क्षण में पाल्की छोडकर तमाम सेवक भी तितर-बितर हो गये। श्यामसुन्दर जब वहाँ पहुँचा तब तीव्रतर घायल राणोजी और नवविवाहित उसकी सुन्दर पत्नी मूर्छित स्थिती में है। श्याम ने इनदोनों को गाँववाले की सहायता से अपनी बहिन के घर पहुँचा दिया। परन्तु रास्ते में ही 'राणोजी' मरगये। यह समाचर राणोजी का भाई दौलतराव को भेज दिया गया।''

पाँचवे अध्याय में दौलतराव का वर्णन काल्पनिक है। उसे नील मेघश्याम शब्द से वर्णन किया है। वास्तव में वह बहुत काले वर्णवाला है। शव संस्कार हो जाने के बाद कमलाबाई को अपने घर में ही आश्रय देकर उसे अपनी दूसरी पत्नी बनाने के लिए दौलतराव तैय्यार होता है। उसकी पत्नी दुर्गाबाई बहुत नेकनारी है। वह बहुत समझाती है कि बडे भाई की भाभी स्वयं माँ के समान होती है। उसे दूसरी शादी करना महान पाप हेगा। और एक ओर महारानी को परास्त करके राजाधिकार अपनाने के षडयंत्र में भी दौलतराव शामिल है। इसलिए उसकी पत्नी दुर्गाबाई स्वयं यह समाचार राधाकांत तक पहुँचाती है कि अनर्थ होने वाला है। राधाकांत ने इसे महारानी के सम्मुख रखा। एकदिन महारानी उसे अपने पास बुलाकर राधाकांत के सामने ही धमकी देती है। कमलाबाई को पूर्ण स्वतंत्र दिया जाता है कि वह जहाँ चाहे जासकती है। अपमानित दौलतराव किसी भी तरह कमलाबाई पर अपना गुस्सा उतारना चाहता है। एक दिन घर में कमलाबाई को अकेले पाकर, उस पर दौलतराव अत्याचार करने का प्रयत्न करता है। जब कमला उसे निंदा करने लगी। नाराज होकर दौलतराव ने कमला को मारने के लिए अपनी तलवार भी उठाता है। इतने में उसकी पत्नी दुर्गाबाई आकर शोरमचाकर कमला को बचाती है। रातों-रात घर छोडकर कमला चलीजाती है। परोक्षरूप से दुर्गा उसकी मदद करती है। सुबह से उसे घर में न पाकर दौलतराव अपने सेवकों को डूंढने इधर-उधर भेजता है। नगर के बाहर पुराने कुँए में किसी लाश को देखकर सेवक कमला का शव मानते हैं। यह समाचार मिलते

ही दौलताराव घबरा उठता है। तुरन्त वह लाश जला दिया है। जाता इस प्रकार दौलतराव को दृष्ट साबित करने के लिए इस काल्पनिक घटना का वर्णन किया गया है। यह सच है कि पुराने जमाने में अंधविश्वास ज्यादा है। एक काल्पनिक घटना के आधार पर लेखक ने उल्लिखित विषय को साबित किया।[1] "अहल्याबाई को परास्त करके अधिकार अपनाने के लिए षडयंत्र करने वाले लोगों में राणोजी, दौलतराव, गंगाधर, ऋषि और गन्डाभिल्ल आदि मुख्य हैं। जंगल में दुर्घटनाग्रस्त होकर राणोजी का निधन होता है। इस विषय के बारे में सोचविचार करने के लिए शत्रुगण मुनि कुटीर में इकट्ठा होते हैं। आगे के कामकाज के बारे में वे बातचीत करने लगे। मुनि ने कहा – 'रानी को हटाकर होल्कार वंशज को ही राजा बनाने के लिए योजना बनाना है। इस काम में रानी की सेना का सामना करने के लिए भिल्लु सेना ही उचित है। गन्डा भिल्लु ही यह काम कर सकता है। गुन्डभिल्लु ने कहा – ' इस काम में यदि हम कामयाब होने से मैं श्री कालीमाता को सौ भैंसों का बली चढाऊँगा। इतनाही नहीं श्यामसुंदर को रानी की दृष्टि में नीचे दिखाने में यदि मैं कामयाब होंगा तो एक मानव को भी मैं बलिचढाऊँगा। इस के लिए एक अनाथ बालक भी मिल चुका है।"

पहली नजर में ही श्यामसुन्दर को कमलाबाई से प्रेम होगया है। लेकिन उसे व्यक्त करने के लिए सही समय नहीं मिला इसी बीच यह अनर्थ हो जाता है। कमलाबाई के निधन का समाचार लोगों में फैलजाता है। वह पता लगाता है कि इस अकृत्य के पीछे दौलतराव का ही हाथ है। फिर भी वह कुछ नहीं कर सकता। उस वक्त उस के सरपर राज काज का भोज है। भिलुजाति के नायक गुन्डाभिल्लु को जिन्दा पकडने का काम उसे सौंप दिया गया। इस काम में व्यस्थ रहने पर भी कमला की तलाश करने लगता है। गन्डाभिलु को पकडने के बाद उसे बन्दी बनाकर संत के कुटीर में रखता है। कमला की तलाश में बाहर जाने के बाद गन्डभिल्लु संत को घायल करके वहाँ से भाग निकलता है। इस अपराध में श्यामसुन्दर देश से निकाल

---

1. अहल्याबाई – श्री चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंह – पृष्ठ –63

दिया जाता है। यह काल्पनिक घटना है। क्यों कि रानी और राधाकाँत की व्यूह रचना में यह एक भाग है। लेखक ने इस घटना से यह साबित किया कि जासूसी व्यवस्था उस जमाने में कितना उत्तम था। अन्य काल्पनिक चरित्रों में भेतालसिंह भी एक है। वह एक राजपुत्र वंशज है। रानी के खिलाफ क्रांति करने के लिए संसिद्ध होने वालों को वह मदद करना चाहता है। इसलिए गोमोजी से हाथ मिलाकर क्रांति की योजना बनाता है। भेताल के साथियों में प्रधान अंगरक्षक भैरवसिंह एक है। गोमोजी खयालों में डुबकियाँ लगाते हुये दीवान पद का सपना देखरहा था। वास्तव में रानी के विश्वसनीय और कर्मठ राजाधिकारियों में गोमोजी भी एक है। परन्तु शत्रुसेना के द्वारा दियेजानेवाले पदों के लालच में गोमोजी रानी के साथ गद्दारी करने के लिए भी संसिद्ध हो गया। षडयंत्र के योजनों में एक काम यह भी है कि रानी को अकेली बनाना। अर्थात सेनाध्यक्ष को सेना सहित राज्य से दूर भेजना है। [1] ''इसलिए एक दिन अहल्याबाई के पास जाकर गोमोजी ने कहा – माँ जी सारे राज्य में यह समाचार फैलगया है कि जस्वंतराय की सहायता से रघुनाधराव जी पर्याप्त सेना सहित राज्य पर हमला करनेवाला है। इसलिए जनता में होहल्ला मचरहा है। उसे सानना करने के लिए सेना सहित तुकाजी को वहाँ जाना है।' रानी ने कुछ देर के लिए सेचकर कहा – 'यह समाचार तुम्हें कैसे मालुम हुआ?' गोमोजी ने जवाब दिया –'आप बहुत ही भोली–बाली हैं। आप को दूर विचार होना चाहिए। यह भी आप नहीं जानती कि स्वयं आप के चाचाजी पीश्वा माधवराव के प्रेत्साहन से ही यह हमला होनेवाला है।' रानी ने कहा – 'ठीक है। तो मैं उन को रोकने और उन पर विजय प्राप्त करने के लिए सेना सहित राधाकाँत जी को ही भेजती हूँ।' गोमती ने कहा- 'बूढा आदमी दीवान राधाकाँत जी को ही भेजती हूँ।' गोमती ने कहा – 'बूढा आदमी दीवान राधाकाँत क्या कर सकते हैं? यदि तकाजी स्वयं जाते तो विजय प्राप्त कर सकता है।' लेकिन रानी के राय में बदलापन नहीं रहा। राधाकाँत जी को यह समाचार प्राप्त हुआ। वह स्वयं युद्ध करने जाना नहीं चाहता क्यों कि श्यामसुन्दर को मृत्यु की सजा से बचाने के

---

1. अहल्याबाई – श्री चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंह – पृष्ठ -90

लिए अपने अलावा वहाँ और कोई नही रहा। फिर भी विवश होकर युद्ध के लिए प्रस्थान किया।''

अन्य काल्पनिक चरित्रों में सीता भी एक है। राज-कुमारी मुक्ताबाई की प्रधान नौकरानी का नाम लेखक ने सीता रखा क्यों कि राजदरबार में नौकर-चाकर होना साधारण सी बात है। इसलिए लेखक ने 'सीता' नाम रखकर एक नौकरानी - चरित्र का सृजन किया। [1]''राजकुमारी ने आवाज दिया - सीते! सीते! तुमने जो कहानी सुनादी बहुत ही रोचक है। तुम बहुत ही चतुर नारी हो। तुम्हारे और हमारे बीच की दूरी कम हो रही है। तुम्हारी कहानी सुनने और तुम से बातचीत करने के बिना मुझे समय नहीं कटता। सीता को राधाकाँत जी ने ही रानिवास में नौकरानी का काम दिया। राधाकाँत जी की तरह सीता भी ईमान्दारी से दासी का काम कर रही है। कभी-कभी रानी भी उसकी कहानियाँ सुनकर आनन्दित होती है। सीता और मुक्ताबाई में गहरी मित्रता उत्पन्न हुई। सीता को राजकुमारी अपनी सहेली ही नहीं बल्कि सगे बहन मानती है। राजकुमारी मुक्ता सीता को अपने साथ भोजन खिलाने और अपने साथ एक ही बिस्तर पर सोने को मजबूर करती है। सीता कहती है 'साहिबा, शादी के बाद मुझे याद भी नहीं करती है ना?' शादी की बात सुनते ही मुक्ता के शरीर में गुदगुदी होने लगी।' फिर एक बार सीता ने कहा 'साहिबा, आप से जरूर गंगाधर जस्वन्त मिलेगा।' राजकुमारी ने कहा, नहीं सीते! मेरी माँ मेरी शादी किसी और एक के साथ करवानी चाहती है। क्यों कि जस्वंत के शाली जी ने शत्रुओं के साथी समझ रखा। प्रियतम व्यक्ति के साथ शादी के बिना मृत्यु ही बेहतर है।

षडयंत्र की योजना के अनुसार राजकुमारी को शनिवार से अपहरण करना है। उचित समय देखकर शत्रु लोगों ने अपहरण का काम किया। यह काल्पनिक घटना है। लेखक ने बहुत ही चतुरता से अपहरण - घटना का वर्णन किया। राजकुमारी

---

1. अहल्याबाई - श्री चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंह - पृष्ठ -103

समझकर शत्रुलोग नौकरानी सीता को लेजाते हैं। सीता नौकरानी होने पर भी बहुत सुन्दर नारी है। इसलिए शत्रुसेना का नायक शाय जी होल्कार उस पर मोहित है। सीता पर मोहित होनेवालों में हरिहर पाँड्यजी भी एक है। वास्तव में वह बूढा होचुका है। फिर भी सीता की खूबसूरती पर मोहित हो उठा है। शत्रु सेना में शामिल बाजीराव सीता से मिलने उस के कुटीर में जता है। वह सीता का भाई है। कुछ साल पहले राधाकाँत जी द्‌वारा जासूसी काम करने शत्रुसेना में गुप्त रूप में सिपाही बना दिया गया था। बाजीराव को पहचानकर सीता बहुत ही आनन्दित होती है। वहाँ के तमाम व्यक्तियों के बारे में समझाकर एक मौके पर वहाँ से किसकने की योजना भी बना दी गई है। शत्रुलोगों में सीता के लिए झगडा शुरू हुआ। उचित समय देखकर बाजीराव अपनी बहिन सीता के साथ राधाकाँतजी के पास चला जाता है। यह लेखक द्‌वारा उपन्यास को रोमांचक बनाने के लिए तैय्यार किया गया। विषय है। वास्तव में सीता और कोई नहीं बल्कि 'कमलाबाई' ही है। इस प्रकार उपन्यास को रोचक और उत्सुक बनाने ऐसे छोटे - बडे काल्पनिक घटनाओं का सहारा लिया। अंत में अहल्याबाई की मृत्यु समाचार राज्य में फैल जाता है। फिर भी दिवान राधाकाँत बहुत ही होशियारी से शत्रुसंहार करता है। वास्तव में रानी जिन्दा ही है। इस प्रकार आमतौर पर उपन्यास में काल्पनिकता की झलक ऐतिहासिकता से अधिक नहीं है। यह साधारण सी बात है कि उपन्यास की कहानी तब ही आगे बढती है, जब उस में काल्पनिक चरित्र और संघटनाओं के लिए स्थान होता है। ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर काल्पनिक घटनाओं के सहारे उपन्यास रचित है।

3.9.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

सम्पूर्ण उपन्यास ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित है। परन्तु सामग्री की कम उपलब्धी के कारण लेखक को काल्पनिकता का सहारा लेना पडा। उपन्यास का ऐतिहासिक आधार यह है कि मराठ राज्य के इतिहास में अहल्याबाई एक क्षत्रिय रानी है जिस के ऊपर राज्यभार संभालने का नौबत आपडा। इतिहास में महारानी का

वंशवृक्ष, उपन्यास के दूसरे और तीसरे प्रकरणों में ऋषी और श्यामसुन्दर के संवाद में व्यक्त होता है। महाराष्ट्र राज्य में राजवंश के होल्कार वंश वहुत यशस्वी वंश है। वास्तव में होल्कार सेना में मलहरराव एक सिपाही है। अपनी ईमान्दारी और साहस-पराक्रम से राजानुग्रह प्राप्त करके मालव राज्य का जागीरदार बनता है। तब से वह होशियारी से राज्याधिकार संभालता है। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि मल्हरिराव की बहु अहल्याबाई है। यह भी सत्यहै कि मलहरिराव का पुत्र युवराज खाँडेराव ज्वरग्रस्त होकर कम उम्र में ही मरजाता है। तब अहल्यबाई के दो सन्तान है। उसी वक्त बुढापे के कारण मल्हरिराव भी मर जाता है। उपन्यासकार ने इन तथ्यों का सहारा लेना पडा। उपन्यासों के चरित्रों में अहल्याबाई, मुक्ताबाई, राधाकाँत, श्यामसुन्दरदत्त, जस्वन्त, दौलतराव, आदि सभी ऐतिहासिक हैं। इतना ही नहीं भिल्लजाति भी ऐतिहासिक जाति है। 'गण्डा भिल्ल' ही उनका नायक है। उन्हें हम भारत के इतिहास में पा सकते हैं, जिन का वर्णन उपन्यासकार ने सही ढंग से किया। यह सत्य है कि विद्रोहकारों ने अहल्याबाई को हराने के लिए भिल्लजाति का सहारा लिया। परन्तु यह भी सत्य है कि उन्हें हराकर राज्याधिकार कायम रखने में अहल्याबाई ने कामयाबी प्राप्त की। कहानी में रोचकता लाने और कथा-वस्तु को आगे बढाने के लिए लेखकने जहाँ-वहाँ काल्पनिक घटनाओं का विश्लेषण भी किया। उन घटनाओं से राणो जी की मृत्यु, कमलाबाई की मृत्यु आदि मुख्य हैं। कल्पनिक चरित्रों में सीता, कमलाबाई, श्याम की बहिन, बहनोई, ऋषि आदि मृत्यु हैं, जिन के सहारे लेखक ने उपन्यास की कहानी को आगे बढाया। कथावस्तु ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित है। उपलब्ध सामग्री पर ही उपन्यास का निर्माण तो संभव नहीं होता। इसलिए लेखक ने काल्पनिक घटनाओं को भी मिलाकर उपन्यास को रोचक और आकर्षक ढंग में प्रस्तुत किया। उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्यों को कही भी गौण स्थान नही मिला। हम आसान से पहचान सकते हैं कि जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लियागया है। आमतौर पर उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्यों का आधार बनाया रखा। उनुपात की नजर से यह ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है।

3.10. छत्रपति शिवाजी :-

3.10.1. ऐतिहासिकता :-

लल्लादेवी द्वारा लिखित जीवनीपरक उपन्यासों में 'छत्रपति शिवाजी' वीर रस प्रधान, सफल उपन्यास है। मुसलमान सत्ता को चुनौती देकर हिन्दु राज्य को कायम करने में शिवाजी का योगदान अविस्मरणीय है। लेखक ने ऐतिहासिक आधारों पर यह उपन्यास लिखा है। शिवाजी के जन्म के बारे में लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यों को आधार बनादिया है। [1] ''शाजीभौंस्ले और जिजियाबाई का अकेला पुत्र शिवाजी है। बचपन से ही शिवाजी के मन में अपनी माता के प्रति अपार श्रद्धा और गौरव है। बच्चे को सही रास्ते पर जाने के प्रोत्साहन सिर्फ माँ ही देसकती है। शिवाजी जब बच्चा था तब माँ जिजिया ने उसे वीर रस, भक्तिरस, करुणरस और देश भक्ति से भरी कहानियाँ सुनादीं। उन से प्रभावित होकर बालक शिवाजी के मन उन भावनाओं का असर लगगया। रामायण, महाभारत, शिवपुराण और महा भागवत की कहानियाँ उन्हे बहुत पसन्द थी। इसलिए माता जिजियाबाई उसे बार-बार ऐसी कहानियाँ सुना दी थी। सात वर्ष की उम्र में ही उन्हों ने युद्ध कलाओं के प्रति उत्सुकता व्यक्त किया। इसलिए आचार्य के रूप में दादाजी कोंडदेव की नियुक्ति हुई। शिवाजी के मन में अपनी माता के प्रधान स्थान है तो दूसरा स्थान अपने गुरु के लिए है। तमाम युद्ध कलाओं में प्रावीण बनकर चौदह साल के उम्र में उन्हो ने पहली बार घुडसवार किया था। शक्ति और युक्ति के साथ खड्गचालन करना उनकी विशेषता है। शिवाजी की माता भगवान शिव की भक्तिन होने के कारण उसने अपने बच्चे का नाम 'शिवाजी' रखा। अपनी माँ की तरह शिवाजी के मन में भगवान शिव और काली-माँ के प्रति अनन्त भक्ति है। इस प्रकार माता जिजिया बाई ने धार्मिक कहानियाँ सुनाकर बालक शिव को सही उत्तम रास्ता दिखा दिया। किशोरावस्त में पहुँचते ही आचार्य के रूप में कोंडदेव ने युद्ध कलाओं में उसे प्रवीण और धीरोधात्त बनादिया।'' इस प्रकार माता जिजियाबाई और आचार्य कोंडदेव दोनों ने शिवाजी को 'छत्रपति' नामक उत्तम स्थान तक पहुँचाने के लिए पहली और दूसरी सीडियाँ तैय्यार की।

---

1. छत्रपति शिवाजी - लल्लादेवी - पृष्ठ -7-15

बीजापूर सुल्तान आदिलशाह के दरबार में शहजी भोंसले एक जागीरदार हैं। रायगढ किले में रहकर आस-पास के ग्रामों में कर वसूल करना, प्रशासन व्यवस्था संभालना, शांती और सुरक्षा का प्रबन्ध करना शाहजी का काम है। धीरे-धीरे जागीरदार से सामंत राजा पद तक वह पहुँचगया। मुगल और बीजापुर सुल्तान के साथ जब युद्ध चलरहा था, तब शाहजी ने अपने-आप को स्वतंत्र राजा घोषित किया लेकिन बाद में वह मरगया। उस वक्त शिवाजी सिर्फ बारह साल का था। शिवाजी ने अपने आचार्य कोंडदेव की देख-रेख में राज्याधिकार ग्रहण किया। बचपन से ही नारियों के प्रति गौरव भाव रखता है। इसलिए औरंगजेब की बहन, उस पर मोहित होने पर भी, वह उस नारी को माता कहकर, उसे संबोधित करता है। हिन्दु धर्म के प्रति उस के मन में श्रद्धा भाव है। इसलिए 'समर्थरामदास' नामक संत से प्रभावित होकर हिन्दु-धर्म की रक्षा का प्रन लेता है। संत के उपदेशों का असर शिवाजी पर अधिक हैं। अपने गुरुदेव और संत महोदय के उपदेशों के अनुसार शिवाजी ने 'छत्रपति' नामक उपनाम से राज्याधिकार संभालता है। युद्ध नीति में प्रवीण होने के कारण आस-पास के छोटे राज्यों को आक्रमण करके शिवाजी ने हिन्दु राज्य को धीरे-धीरे विशाल बनादिया। युद्ध नीति के आधार पर उसे 'पहाडी चूहाँ' कहते हैं। यह ऐतिहासिक सत्य है कि शुत्र को बिना सूचित किये बिना हमला करना उसे पराजित करना ही उस की युद्ध नीति की विशेषता है। इसे अंग्रेजी में 'गेरिल्ला वार' कहते हैं।

शिवाजी से प्रभावित होकर 'तानाजी' नामक नौजवान ने सेना में भर्ती होगया। वह बहुत ही होशियार और बलवान भी है। उसकी युद्ध नीती से शिवाजी बहुत सन्तुष्ट होगया। इसलिए 'तानाजी' को राजा ने सेना की एक विभाग का अध्यक्ष बनादिया। तानाजी की मृत्यु एतिहासिक घटना है। [1]''शिवाजी के राज्य में सिंहघढ अनोखा स्थान है। उसे हाजिल करने के लिए बीजापूर सुल्तान ने बहुत प्रयत्न किया।

1. छत्रपति शिवाजी - लल्लादेवी - पृष्ठ -54-59

लेकिन विफल होगया। एकबार जब शिवाजी अपनी सेना सहित राज्य के दूसरे छोर पर मुगल सेना के साथ युद्ध कर रहा था, तब बीजापूर सुल्तान ने दूराक्रमण करके सिंहगढ को अपने कबजे मे लेलिया। मुगल सेना को हराकर, भगादेने के पश्चात, शिव सेना वापस देवगढ लैटी। विजयानंद से तमाम सेना मस्त है। शिवाजी ने अपनी माँ के पास पहुँचकर आनंद के साथ कहा - माँ! हम ने मुगल सेना को पहलीबार हराकर भगादिया। इस शुभ अवसर पर तोहफे के रूप में हम, आप की इच्छा पूरा करना चाहते हैं। सिंहघढ के बारे शिवाजी नहीं जानता। माता जिजिया बाई ने तोफे के रूप में एक ही दिन में सिंहघढ फिर हाजिल करने की इच्छा व्यक्त की। तब शिवाजी को पता चला कि सिंहघढ पर अब बीजापूर का अधिकार जमा हुआ है। शिवाजी सोच विचार करने लगे। यह विषय जानकर तानाजी ने अपनी सेना सहित सिंहगढ पहुँचकर रातों-रात आक्रमण करता है। घमासान युद्ध हुआ। तानाजी के शौर्य- पराक्रम के सामने शत्रु-सेना टिक नही सकी। अंत में तानाजी ने सिंहघढ पर विजय-पताक पहरा दिया। शत्रु-सेन हारकर भागनिकली। समाचार मिलते तही शिवाजी परिवार सहित वहाँ पहुँचगया। लेकिन वहाँ का दृश्य देखते ही शिवाजी बिलक-बिलक कर रो उठे। युद्ध में तीव्र रूप से घायल होकर तानाजी मृत्य से लडरहा है। शिवाजी के हाथों में तानाजी ने दमतोड दिया। विचलित मन से शिवाजी ने गदगद स्वर से कहा, 'गढ आया पर सिंह गया'। यह ऐतिहासिक सत्य है कि सिंहगढ के युद्ध में तानाजी का निधन हुआ था।''

सिंहघढ के दुर्ग को अपने अधिकार में करलेने के पश्चात, शिवाजी ने प्रशासन व्यवस्था को संभाल लिया। 'साईबाई' से उनका विवाह हुआ। 'शिवाजी' का एकमात्र संतान 'शंभूजी' है। पिताजी की तरह वह भी होशियार और पराक्रमी है। शिवाजी की युद्धनीति में प्रधान लक्षण यह है कि 'बल के साध जो काम सम्पन्न नहीं होता, उसे छल से पूरा करना है'। गुरुदेव की मृत्यु से शिवाजी को और एक धक्का लगा। बीजापूर सुल्तान ने यह जानकर शिवाजी को संधि के लिए आह्वान

किया। [1] ''एक छट्टान के ऊपर, स्थित मंदिर में संधि का प्रबन्ध कियागया है। मराठा राज्य की ओर से शिवाजी और बीजापूर राज्य की ओर से प्रधान सेनाधीश 'अफजलखाँ ' संधि कार्य में भागलेने वाले हैं। संधि-नियमों के अनुसार बिना सेना या हथ्यार के बिना मंदिर में प्रवेश करना है। मंदिर में दोनों के अलावा किसी को भी प्रवेश मना है। लेकिन योजना के अनुसार अफजलखाँ ने छोटी सी हथियार छुपाकर अंदर प्रवेश किया। शिवाजी ने लोहे का कोट पहनकर प्रवेश किया। संधि पत्रों पर दोनों ने हस्ताक्षर कर दिया। स्नेह के साथ दोनों ने एक-दूसरे के गले लगालिया। तुरंत अफजलखाँ, शिवाजी के गलद बाने लगा। अफजलखाँ बहुत लंबा छौडा विशाल कद वाला है। लेकिन शिवाजी बहुत छोटे कद वाला है। इसलिए शिवाजी का गर्दन अफजलखाँ के बाहों में कसता जाने लगा। सही मौके पर अफजलखाँ ने छोटासा कटार से शिवाजी पर मारा, परन्तु लोहे के कोट ने उसे रोकदिया। तुरंत शिवाजी ने अपने कोट के अंदर छिपे बाघ के नाकूनों से अफजलखाँ के पेट को चीरडाला। तडपते हुये अफजलखाँ मरगया। दूसरे ही क्षण में अफजल ने ऊँचे स्वर में शिवाजी की मृत्यु की घोषणा की। शिव सेना शत्रु सेना पर टूट पडी। नायक के बिना लडना मुश्किल हो गया। इसलिये फिर एकबार शत्रु सेना भाग निकली।''

3.10.2. काल्पनिकता :-

शिवाजी के व्यक्तित्व को प्रभावित करने वालों में से महान भक्त 'तुकाराम' एक हैं। वह ऐतिहासिक चरित्र होने पर भी उन्हे वर्णन करने में लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। [2] ''भक्त तुकाराम भगवान विट्टलनाथ जी का अनन्य भक्त है। बिना स्वार्थ वह सदा भगवान के ध्यान में तल्लीन रहता है। उसकी पत्नी 'साराबाई' बहुत मेहनत करनेवाली नारी है। अधिक परिश्रम करके खेतीबारी करती है। जब वह फसल काटकर घर में अनाज लाती है, तो तुकाराम उसे गरीबों में बाँट देता है। समाज

---

1. छत्रपति शिवाजी - लल्लादेवी - पृष्ठ -72-77
2. छत्रपति शिवाजी - लल्लादेवी - पृष्ठ -92-99

में व्याप्त अंधश्विासों का खंडन करता है। खासकर उस जमाने में देवदासी तथ्या है। यह प्रथा आधुनिक बेश्यावृत्ति के समान है। भक्त तुकाराम को बरबाद कर के समाज मे उसे बदनाम करने के लिए पंडित गण तय करते हैं। इसलिए 'माया' नामक देवदासी को सम्मोहनास्त्र की तरह भक्त तुकाराम पर प्रयोग करते हैं। लेकिन तुकाराम की भक्ति के सामने वे सब हारजाते हैं। देवदासी माया ने पूरी तरह प्रयत्न करके विफल होजाती है। तुकाराम ने उसे ज्ञानोपदेश करता है। माया अपनी सौंदर्य पर राज करती है। परन्तु तुकाराम उसे एक आइने के सामने खडाकरदिया और भगवान से विनती की उस का सही रूप दिखादिया जाय। तुरन्तु आइने में माया का वह झर्झर और बूढारूप दिखाई दिया, जो उसे एक सौ साल के बाद मिलने वाला है। माया को ज्ञान-नेत्र खुलजाते हैं। वह भी भक्तिन बनकर भगवान के मंदिर में भजन करने लगती है। कुछ समय बीत जाने के बाद कपटी पंडित लोगों ने मंदिर से भगवान की मूर्ति चुराकर गंगा नदी में फेंकदिया है। मूर्ति के चुराने के अपराध में सिपाही ने तुकाराम को गिरफतार किया। यह विषय जानकर स्वयं शिवाजी वहाँ आ पहुँचते है जहाँ मूर्ति की चोरी हुई। परन्तु अनन्य भक्त तुकाराम की प्रार्थना से गंगा नदी के गहरे पानी से बाहर निकलकर मंदिर में आकर सही स्थान पर प्रत्यक्ष होजाता है।'' यह एक काल्पनिक घटना है।

काल्पनिक घटना के माध्यम से लेखक ने शिवाजी को भक्तिमार्ग दिखानेवाले महान भक्त तुकाराम को उत्तम और निस्वार्थ भक्त के रूप में साबित किया है।

3.10.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने शिवाजी को हिन्दु धर्म परिरक्षक, हिन्दु राज्य स्थापक, आदर्श राजा और लोक नायक के रूप में वर्णन किया है। उपन्यासो में ऐतिहासिक घटनाओं की संख्या अधिक है। एक बालक के रूप में अपनी माता से जितनी तालीम प्राप्त करना है, उसे प्राप्त करने में वह सफल होगया था। गुरु

कोण्डदेव के पास धीर-वीर पराक्रमी बनकर युद्ध कलाओं में प्रवीण हो गया था। विदेशी धर्म और विदेशी शासकों के अधिकार में गुलामी देने वाले भारतवासियों मे देशभक्ति जगृत कराके एक सुवशिाल हिन्दूराज्य कायम करनेवाले युग कर्ता के रूप में प्रस्तुत उपन्यास में वर्णन किया गया है। सन्त समर्थरामदास और भक्त तुकाराम जैसे महात्मागण के ज्ञाना मर्ग से प्रभावित होकर आदर्श व्यक्ति और लोकनायक के रूप में शिवाजी का वर्णन किया गया है। लेखक ने उपन्यास में रोचकता और उत्सुकता लाने के लिए जहाँ-तहाँ काल्पनिक घटनाओं का भी वर्णन किया। उपन्यास के अंत में बन्दीखाने से जिस प्रकार शिवाजी और शम्भूजी भागजाते हैं उस में भी काल्पनिकता का झलक मिलता है। यह घटना काल्पनिक दिखने पर भी एतिहासिक आधार पर निर्भर है। इतिहास में यह जिक्र कियागया है कि चालाकी से शिवाजी और शम्भूजी दोनों मिठाइयों की टोकरियों में छिपकर भागजाते है। हिन्दु समाज में जोश उत्पनन्न करने वाले महान व्यक्ति के रूप में लेखक ने शिवाजी का अभिर्णन किया है। इसलिए यह ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है।

3.11. झाँसी लक्ष्मीबाई :-

3.11.1. ऐतिहासिकता :-

तेलुगु साहित्य में 'सुब्रह्मण्य शर्माजी' का प्रमुख स्थान है। उनके द्वारा लिखित 'झाँसी लक्ष्मी बाई' वीररस और देशभक्ति से भरी उपन्यास है। इस रचना में 'लक्ष्मीबाई' को स्वतंत्र सेनानी के रूप में वर्णन किया है। [1]''महाराष्ट्र में पेशवा के राज्यकाल में बलवन्तराव नामक पराक्रमी को सेना में उच्च पद मिला। उसके दो लडके हुये- एक मोरो पन्त और दूसरा सदाशिव। ये दोनों पूना दरबार के कृपापात्र में थे। अंग्रेजी-सरकार ने पेशवाई खत्म करके बाजीराव को आठलाख रूपया वार्षिक पेंशन और बिठूर की जागीर दी। बाजीराव बिटूर (ब्रह्मावर्त) चलेआये। उस के साथ मोरोपन्त भी था। मोरो पन्त ही मनूबाई के पिताजी है। माता भगीरथी बाई का देहान्त तब हुआ जब मनूबाई, चार वार्ष की थी। मनू बचपन से बहुत होशियार

1. झाँसी लक्ष्मीबाई- सुब्रह्मण्य शर्म - पृष्ठ -9-25

है। बाजीराव के अपनी कोई सन्तान न थी। इसलिए नानाघोडुपन्त नामक एक बालक को जो अपने राजवंश का है, गोद लिया। नानापनन्त के दो भाई हैं- एक रावसाहब और दूसरा बाला। राजकुमार बनने के पश्चात उस का नाम नानाफडनवीस के रूप में बदलगया। उसे नानासाहब भी कहते हैं। उम्र में वह मनू से छोटा है। फिर भी बाजीराव अपने पुत्र के साथ मनू को भी अपनी पुत्री की तरह देखरेख करता है।''

बचपन से ही रामायण, महाभारत आदि महान काव्यों से मनूबाई बहुत प्रेरित होती है। आधुनिक युग में छत्रपति शिवाजी को वह आदर्श मानती है। लडकी होकर भी वह लडकों की तरह वेश धारण करके उनके साथ ही पढती है। लडके भी उसे कभी लडकी की तरह नहीं देखते। वे साथ-साथ खेलते-खाते और पढते हैं। कुश्ती, तलवार-बन्दूक आदि का चलाना, अश्वारोहण, पढना-लिखना इत्यादि सब लडकों के साथ छुटपन से ही वह सीखती है। देखते-देखते ही वह सयान होजाती है। वह युद्ध कलाओं में और पढाई में भी लडकों से भी पौनी बुद्धिवाली होकर आगे निकलगई है।'दीक्षित' नामक पौराणिक ने, जो झाँसी नगर का है, देखा था। वह बाजीराव और मोरोपन्त से बातीत करने लगा। बीचों-बीच मोरोपन्त ने अपनी सयान लडकी की शादी का प्रस्थाव रखा। दीक्षित महोदय ने संशय के साथ 'झाँसी' के राजा गंगाधरराव के बारे में बतादिया। वास्तव में गंगाधर विधुर थे। क्यों कि मरीज होकर उस की पत्नी मरचुकी थी। राजा वंश हीन बनना नहीं चाहता। इसलिए वह फिर से विवाह करना चाहता है। लेकिन दूसरी शादी के लिए कोई लडकी सहमत नहीं होती। राज पौराणिक दीक्षित ने राजा की इच्छा पूरा करने के लिए अच्छी और सुगुणशील लडकी की तलाश की। दीक्षित ने गंगाधरराव की जन्मपत्री से मनू की जन्मपत्री का मिलन किया। दोनों जन्मपत्री मिलचुकी हैं। इस विवाह सम्बन्धी प्रस्ताव को बाजीराव और मोरोपन्त ने स्वीकार करलिया। गंगाधररावजी की सहमति से विवाह की तैय्यारियाँ होने लगी। सुमूर्त में चौदह वर्ष की मनू की शादी राजा गंगाधरराव से हुई। विवाह के वक्त अडोस-पडोस के राजा भी शामिल होगये हैं।

विवाह होने के पहले ही अंग्रेजी राज प्रतिनिधि के रूप में 'कप्तान डनलप' आता-जाता रहता है। राज्य के प्रशासन में वह शामिल होता है। मनुबाई का नाम विवाह के समय में 'लक्ष्मी बाई' बनजाता है। राज पुरोहितों के कहने पर ही उसका नाम बदलदिया गया है। रानी लक्ष्मी तो प्राय: किले के अंदर रानिवास- महल में ही रहने लगी। इसलिए सवारी व्यायाम इत्यादी भी किले में ही करती थी। धार्मिक ग्रन्थों का नियमपूर्वक अध्ययन करती। रानी लक्ष्मीबाई में गम्भीरता घर करती जा रही थी। राजा गंगाधरराव पुरातन पन्थी थे। वे स्त्रियों की स्वाधीनता के प्रोत्साहक नही हैं। उन को एक पुत्र हुआ जो तीन महीने की आयू में मरगया। राजा के मन पर इस दुर्घटना का स्थायी प्रभाव पडा। इसलिए उन्हों ने एक सजातीय बालक को गोदलिया, जिसका नाम 'आनन्दराव' है। गोद के उपरान्त उसका नाम दामोदरराव रखा गया। लेकिन कम समय में हृद्रोग से गंगाधररावजी का स्वास्थय बिगडने लगा। जब लक्ष्मीबाई अट्टारह वर्ष की है, तब गंगाधररावजी की मृत्यु होगई। कम्पेनी सरकार ने गोद को अस्वीकार किया, और झाँसी को कम्पेनी के राज्य में मिलाने की घोषणा किया। रानी को पाँच हजार रूपये महीने की वृत्ती और रहने के लिए झाँसी नगर का महल मिला। किला तो खाली करदियागया। इसी प्रकार देशभर में जागीरें की जब्त हुई। जमींदारियाँ कायम हुई।

3.11.2. काल्पनिकता :

रानी लक्ष्मीभाई ने अपने खास साथियों के साथ अपने महल के पीछे के मैदान में युद्ध कलाओं का प्रशिक्षण जारी रखा।[1] "एकदिन रानी के पास तात्याटोपे आया। दोनों ने अंग्रेजी सरकार के खिलाफ होनेवाले क्राँती के बारे में बहस की। रानी ने बडी सेना इकट्ठा करने का काम अपने खास रिस्तेदारों को दिया।" उन में से जवारसिंह और रघुनाथजी प्रमुख हैं। रानी जैसे राजवंशजों के प्रति सरकार के अकृत्य दिन-ब-दिन बडने लगे। सात वर्ष के बाद रानी अपने बेटे दामोदरराव को

1. झाँसी लक्ष्मीबाई- सुब्रह्मण्य शर्म - पृष्ठ -79

'जनेऊ' कारना चाहती है। योजना के अनुसार उस समारोह में खास लोगों को आह्वान किया गया है। किसी को शकतक नही होता। रानी ने तमाम प्रमुख व्यक्तियों के साथ बैठकर आने की प्रणाली तय करके स्वतंत्र समर की तैय्यारियाँ आरम्भ की। गरमी के दिन आगये। स्वाधीनता-युद्ध को आरम्भ करने के दो चिन्ह है। सरोवरों में कमल खिलउठना और फसल से घर भरना। सही वक्त पर युद्ध शुरू हो गया। मेरट और दिल्ली की सम्मिलित हिन्दुस्थानी फौज ने दिल्ली के लालकिले पर अधिकार जमा करलिया। बादशाह बहादुरशाह को भारत का साम्राट घोषित किया और इक्कीस तोपों की सलामी दी। बाद में कानपूर और झाँसी में भी क्रान्ती के लक्षण प्रकट हुये। क्राँती को दबाने 'जनरल गार्डन' और 'डनलप' ने अपनी सेना सहित दुराक्रमण किया। दो दिन के बाद घमासन युद्ध शुरू होगया। किले के अंदर अंग्रेजी-सेना फँसगई। किले को क्राँतिसेना ने चारों ओर से घेरलिया। अंत में जनरल गार्डन और कत्पान डनलप दोनों मारे गये। विजयी क्राँति-सेने ने त्योहार मनाना शुरू किया।

3.11.3 इतिहास और कल्पना का अनुपात :

क्राँति सेना में अनुशासन नहीं था। अपनी विजय पर उन को पागलों सा हर्ष था। लेकिन धीरे-धीरे तमाम लोग रानी के अधिकार के नीचे आगये। लोगों के सामने खडी होकर रानी बोली, आप लोग जो भार मुझे दे रहे हैं, उसको मैं अपना गौरव मानती हूँ और परमात्मा की कृपा से उसको निभाऊँगी। लोगों ने जय-जयकार किया। किले पर अपना झंडा चढादिया गया। रानी के द्वारा पधादिकारी नियुक्त कियेगये। उन में लक्ष्मणराव, जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह, मुहम्मद जमीखा, खुदाबख्श, गुलमगौसखाँ, नायब दीवान, नाना भोपटकर, मोतीबाई आदि प्रमुख हैं। डाकू सागरसिंह भी अपने साथियों के सहित रानी की सेना में शामिल होगया था। दिन बीतने लगे 'अलीब हाडर' और 'पीरअली' नामक दो दरबारी कर्मचारियों के कारण गोपनीय समाचार अंग्रेजों तक पहुँचने लगा। 'जनरल रोज' ने सही मौका देखकर

झाँसी राज्य पर आक्रमण किया। बहुत खतरनाक अस्त्र शस्त्रों का प्रयोग किया गया है। खासकर तोपों के कारण एक-एक योद्धा मरने लगे। अंत में जनरल रोज ने विजय प्राप्त की । अखिर विवश होकर रानी अपने साथ बची सेना लेकर ग्वालियर की ओर चली गयी। ग्वालीयर किले में भी उसे पराजय प्राप्त हुआ। इस प्रकार एक एक करके झाँसी के तमाम् विशिष्ट अधिकारि आहत होगये। अंत में रानी ने कहा, आज प्रमाणित करदो कि हिन्दुस्थानी सिपाही की तलवार के सामने संसार का कोई योद्धा नही टिक सकता। रानी ने रामचन्द्र देशमुख को आदेश दिया कि दामोदर को आज तुम पीठ बाँधों। यदि मैं मारी जाऊँ तो इसको किसी भी तरह तुम बचाओं। रानी के रण कौशल के मारे अँग्रेजी जनरल थर्रा गये। लेकिन अंत में उसे गोली लग गई। उस के सर पर तलवार का प्रहार हुआ। रानी का तन अचेतन होगया। सूर्यास्त हुआ। इस प्रकार झाँसी की रानी अपने छोटा लडका दामोदरराव के साथ अमर हो गई। यह एक सफल जीवनीपरक उपन्यास है।

3.12. तिप्पु सुल्तान :-

3.12.1. ऐतिहासिकता :-

आधुनिक उपन्यासकार 'शातवाहन' के द्वारा लिखित रचना 'तिप्पु सुल्तान' जीवनीप्रधान उपन्यास है। इसका दृश्यमान रूप ही दूरदर्शन में पप्रदर्शित धारावाहिक " The Sward of Tippu Sultan" हैं। समीक्षकों ने इसे काल्पनिक घटनाओं की रचना माना था। [1] " यह सच है कि उपन्यास और टि.वी. धारावाहिक में काफी अंतर है। अनेक ऐतिहासिक घटनाओं को लेखक ने अपनी रचना में स्थान दिया था। उदाहरण के रूप में 'तिप्पु' का जन्म, राज्याधिकार, प्राप्तकरना, अंग्रेजी सेना के खिलाफ युद्ध करना आदि ऐतिहासिक घटनायें हैं। दक्षिण भारत में मैसूर विशाल राज्य है।" महामात्य और महामंत्रि देवराज, नंजराज दोनों अपने बुद्धिबल से राजा को पुतली बनाकर राजाधिकार और प्रशासन व्यवस्था को अपने हाथ में ले चुके थे। उस वक्त तिप्पु के पिताजी 'हैदराली' एक साधारण सिपाही के रूप में काम करते थे।

---

1. तिप्पु सुल्तान - शातवाहन - भूमिका

उस की पहली पत्नी 'शाबाद बेगम' मरीज और मृत्युशय्या पर है। इसलिए उस ने फकृन्नीसा नामक सुन्दर युवती के साथ अपने पति हैदराली की शादी करवाती है। लेकिन बहुत समय तक वे दोनों संतान हीन रहे थे। [1] "'तिप्पु मस्तानवली' नामक संत की समाधी के पास फकृन्नीसा ने अनुष्ठान किया। नौ महीने के पश्चात 1750 नवम्बर 20 को 'देवनहल्ली' नामक गाँव में फकृन्नीसा ने एक लडके को जन्म दिया। संत के आशीश से ही हैदर एक साधारण सिपाही से सेनाधीश स्थान तक पदोन्नती प्राप्तकर चुका है। इसलिए अपने पुत्र का नाम तिप्पु सुल्तान रख दिया।" बचपन से ही वह होनहार साबित हुआ। तमाम धर्मग्रन्थों का अध्ययन करने लगा। स्वयं हैदर ने अपने तिप्पु को घुडसवार, खड्गचालन,आदि युद्ध कलाओं का प्रशिक्षण दिया। कुछ समय बीतगया। फकृन्नीसा ने छः महीनों के बच्चे को जन्म दिया। राजवैद्य ने बताया कि उस का जान बचाना बहुत मुश्किल है। लेकिन अल्ला की दया से वह बच्चा जीवत रहा। धीरे-धीरे वह बडने लगा। इसलिए उसका नाम 'अब्दुल करीम' रखागया है। राजगुरु पूर्णय्या के आशीश से हैदराली सेनाध्यक्ष बनगया।

3.12.2. काल्पनिकता :

हैदर का छोटा बेटा 'अब्दुल करीम' डरपोक और अकलहीन है। वह पागल की तरह कभी-कभी व्यवहार करता है। इसलिए हैदराली ने अपने वारिस के रूप मे तिप्पुसुल्तान को घोषित किया। महामंत्रि पूर्णय्य ने इस घोषणा को अपनी सहमती दी। जवान होने के बाद गाजीखान नामक गुरु के पास तिप्पु ने युद्धकलाओं का परिज्ञान प्राप्त किया। हैदराली की सेना में विशिष्ट नाम कमाने वाले गाजीखाज को राजा ने ही गुरू के रूप में नियुक्त किया था। एकबार गाजीखान ने तिप्पु और अब्दुल दोनों को शत्रुसेने के दुराक्रमण से बचाया था। युद्धनीती में वह प्रवीण है। इसलिए दोनों बच्चों को अपने ही घर में छिपाकर शत्रुसेना को अकेले ही हराकर भगादेता है। गाजीखान की बेटी रूखिया ने तिप्पु और अब्दुल की देख-रेख ठीक तरह से की।

1. तिप्पु सुल्तान - शातवाहन - पृष्ठ -7

किशोरास्था में कदम रखनेवाले तिप्पु के मन में रुखिया के प्रति प्रेम और आदरभाव उत्पनन्न होता है। वास्तव में तिप्पु शांति मनवाला है। परन्तु पिताजी हैदराली के प्रभाव से तिप्पु पूरीतरह बदलजाता है। युद्ध कलाओं में प्रवीण होने पर भी आरम्भ में तिप्पु का मन युद्ध विनाश के प्रति विमुख है। लेकिन अपने पिताजी के साथ 16 साल से युद्धो में भागलेने के वजह से 18 साल आते ही वह पूरी तरह युद्धोन्मुख होगया है। अब वह अपने पिताजी और गुरूजी से भी अत्यन्त प्रवीण योद्धा बनचुका है। धीरोदात और पराक्रमी योद्धा तिप्पु को लोग 'मैसूर-बाघ' उपनाम से पुकारते हैं। राज्य की जनता के मन में तिप्पु के प्रति श्रद्ध और आदर भाव अधिक होने लगे हैं। क्यों कि वे सब हैदराली को अपने नेता मानचुके थे। मैसूर के महाराजा बनने के बाद हैदर ने प्रशासन व्यवस्था को सुधार लिया। लेकिन ज्यादा समय उसे सीमा सुराक्षा में व्यस्त रहना पडता था। जवान तिप्पु के कारण सीमा सुराक्षा का भार हैदराली के ऊपर से हट गया। सीमा सुरक्षा में कामयाबी प्राप्त करके उस ने अपने आप को वीर योद्धा साबित किया। अपने पिताजी की सहमती से उस ने 'रूखिया' को शादी करलिया।

तिप्पु कुशल राजनीतिज्ञ भी है। [1]''उस वक्त भारत में फ्रैंच और अंग्रेजी लोग अपनी सत्ता कायम रखने के लिए आपस में लड रहे थे। 'कलनल अंबरष्टोन' ने अंग्रेजी सेना सहित मैसूर पर दुराक्रमण किया। उस युद्ध में तोप के विस्पोटन में हैदराली घायल होजाता है। विवश होकर महामात्य पूर्णय्य ने राजा को वापस मैसूर लेजाता है। उग्ररूप धारणकरके तिप्पु ने अंग्रेजी सेना को हराकर भगादेना है। लेकिन मैसूर पहुँचते ही तिप्पु को यह समाचार मिलता है कि हैदराली का देहान्त होगया है।'' तिप्पु का मन व्यधित होजाता है। फिर भी राज्याधिकार संभालता है। वह मन ही मन निश्चित करलेता है कि किसी भी तरह तोपचलान सीखकर उसे अंग्रेजों पर प्रयोग करे। इसलिए उस ने फ्रेंच-सत्ता के साथ सम्झौता करलेता है।

---

1. तिप्पु सुल्तान - शातवाहन - पृष्ठ -75

उसके अनुसार फ्रेंच-सेना ने तोप बेचलिया। उन से तोपचलाने में तिप्पु ने प्रशिक्षण लिया। भारतीय इतिहास में यह साफंलिखा है कि तिप्पु ने ही सबसे पहले अंग्रेजी सेना पर तोप चलाया लार्ड वार्न होष्टिग्स के समय में तिप्पु के हाथों में अंग्रेजी सेना हारजाती है। सारा संसार अवाक रहजाता है। इसका कारण यही है कि तिप्पु ने फेंच सेना की सहायता से 'तोप' सामाग्री प्राप्त करके उसके प्रयोग से अंग्रेजी-सेना को परास्त किया। 'वर्सइलस' समझौता के कारण अंग्रेजी सत्ता और फ्रेंच सत्ता दोनों के बीच शांती उत्पनन्न होती है। फलत: फ्रेंच सत्था से तिप्पु को मिलनेवाली सहायता रूकजाती है। फिर भी तिप्पु ने अपने राज्य की रक्षा केलिए अनेक योजनायें तैय्यार किया। रिष्वत लेकर धोका देनेवाले अधिकारियों को भी तिप्पु ने क्षमाकर दिया। लेकिन उन्हें दूरप्राँतों में तबादला करदिया। इन घटनाओं से हमें यह पताचलता है कि तिप्पु बहुत ही सुशिक्षित राजनीतिज्ञ है।

3.12.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

तिप्पु के हाथों में हारकर अपमानित 'लार्ड वार्न हेष्टिंग्स' लंडन वापस चलाजाता है। उस के स्थान में नये गवर्नर जनरल के रूप में 'लार्ड कारनवालीस' अधिकार अपनाता है। कूटनीति से उसने एक योजना बनाया। योजना के अनुसार सब से पहले युद्ध समाप्त होगया। तिप्पु ने शत्रु को हर मानकर वापस जाते देखकर, प्रशासन और जनता के संक्षेम की ओर ध्यान दिया। हैदरबाद के राजा, गोल्कोंड नवाब के साथ अंग्रेजी सरकार ने समझौता करलिया। तिप्पु के सलाहदारों से 'मीरसादीक' को रिष्वत देकर अपने वश में करलिया। उसने तिप्पु के बारे में अनेक विशय बतादिया। इस षडयंत्र के बारे में जानकारी प्राप्त करने में तिप्पु असफल होगया। योजना के अनुसार गोल्कोंड नवाब ने मैसूर राज्य पर दुराक्रमण किया। दोनों के बीच घमासान युद्ध हुआ। अंग्रेजी सरकार की सहायता से गोल्कोंड की सेना ने तोपों का प्रयोग किया। तिप्पु की सेना मे तोप खाना खतम होचुका है। फ्रेंच सेना से मिलनेवाली सहायता भी समाप्त हो चुकी है। प्रधान मंत्री पूर्णय्या घायल हो गये। मैसूर के राज

प्रासाद में तिप्पु की पत्नी रोग ग्रस्त होकर मरगई। चारो तरफ मुसीबत ही मुसीबत आ घेरे हैं। इसलिए तिप्पु ने गोल्कोंडा के नवाब के साथ संधी करली। उसके अनुसार तिप्पु के दोनों पुत्रों को गोल्कोंडा के किले में रखना चाहिए ताकि किसी भी हालात में तिप्पु को किसी प्रकार का दुराक्रमण करने का अधिकार नहीं रहा। यदि दोनों पुत्रों का देना नहीं चाहता तो अधिक धनराशी देना पडेगा। उतना धन तिप्पु के पास उस वक्त नही रहा। विवश होकर, पत्नी वियोग से विरक्त होकर तिप्पु ने सम्झौते के नियमों का स्वीकार किया। इस प्रकार तिप्पु पर सहीवक्त पर अंग्रेजोंने प्रहार किया। वास्तव में उसे किसी भी तरह मारना चाहते है। नये गवर्नर जनरल 'वेल्लेस्ली' ने यह आरोप लगाकर तिप्पु पर युद्ध घोषणा किया कि तिप्पु ने फ्रेंछ-सेना के साथ गुप्त में युद्ध की सहायता की तैय्यारी की। यह सिर्फ बहाना मात्र ही है। विवश होकर तिप्पुने वीरोचित युद्ध किया। अंत में अंग्रेजी के हाथों वह शहीद होगया था। प्रस्तुत उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्य है। इसलिए इसे उचित जीवनीपरक उपन्यास मानना उचित है।

3.13. समीक्षा :-

उल्लिखित उपन्यासों में खास व्यक्तियों की जीवनियाँ दिखाई देती हैं। जीवनियों पर आधारित उपन्यासों को जीवनीपरक उपन्यास मानना उचित है। प्रस्तुत अध्याय में ऐतिहासिक राजवंशजों की जीवनियाँ को हम देख सकते हैं। उदाहरण के रूप में संम्राट अशोक, शाहजहाँ, आदि राजाओं की जीवनियाँ है। इतना ही नहीं राजा से या राजवंश से निकट संबंध रखनेवाले मंत्रियों की जीवनियाँ भी प्रस्तुत अध्याय में उपलब्ध है। 'आर्य चाणक्य' की जीवनी पर आधारित उपन्यास में मौर्य वंश की जानकारी भी प्राप्त होती है। क्यों कि मौर्य वंश की स्थापना में और चन्द्रगुप्त को सम्राट बनाने में राजगुरु के रूप में एवं अर्थशास्त्र जैसे महान ग्रंथ के लेखक के रूप में उस का बहुमूल्य योगदान है। इस प्रकार अप्पाजी जिस का असली नाम 'तिम्मरुसू' है, उस की जीवनी पर आधारित उपन्यास में विजयनगर की विशेषता और श्रीकृष्ण

देवराय के यश के बारे में वर्णन किया गया है। इन रचनाओं को ध्यान से परख ने पर हमे यह ज्ञात होता है कि दो, तीन उपन्यासों को छोडकर बाकी सभी उपन्यास ऐतिहासिक सामग्री पर ही लिखित हैं। लेकिन उपन्यासों मे काल्पनिकता का सहारा लेना सहज लक्षण है। उपन्यास को रोचक बनाने के लिए लेखक को काल्पनिकता का सहारा लेना पडता है। आमतौर पर सभी उपन्यास सफल जीवनीपरक उपन्यास हैं।

- अध्याय चार -

तेलुगु के साहित्यिक और सामाजिक, जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण

जीवनीपरक उपन्यासों को ऐतिहासिक-सामाजिक और ऐतिहासिक साहित्यिक उपन्यासों के रूप में विभाजन कर सकते हैं। ऐतिहासिक-राजनैतिक उपन्यासों में राजवंशजों की और स्वतंत्र सेनानियों की जीवनियाँ होती हैं। उदाहरण के रूप में सम्राट अशोक, अक्बर, झांसी की रानी और तात्याटोपे आदि उपन्यास विख्यात हैं। ऐतिहासिक सामाजिक उपन्यासों की श्रेणी में सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक महान व्यक्तियों की जीवनीयाँ आदि हैं। तेलुगु साहित्य में ऐसी रचनाओं की कमी नहीं है। उदाहरण के रूप में नोरि नरसिंहशास्त्री द्वारा लिखित जीवनीपरक उपन्यासों में कविसार्वभौमुडु , कविद्वयमु, और नारायण भट्टु आदि मुख्य हैं। एक-एक उपन्यास एक-एक कवि की जीवनी पर आधारित है। 'कवि सार्वभौमुडु' नामक उपन्यास में तेलुगु साहित्य के श्रृंगार कवि श्रीनाथ की जीवनी का विस्तृत वर्णन किया गया है। कवि द्वयमु नामक उपन्यास में दो महान कवियों की जीवनियों का तुलनात्मक वर्णन है। 'नारायण भट्टु' नामक उपन्यास में महान कवि 'भट्टु मूर्तिजी' की जीवनी है। इन रचनाओं के अलावा 'लल्लादेवी' और श्रीप्रसाद द्वारा लिखित प्रमुख जीवनीपरक उपन्यास भी हैं। ऐसे उपन्यासों में रोशनारा, लकुमदेवी, रुचीदेवी आदि मुख्य है। रोशनारा नामक उपन्यास औरंगजेब की प्यारी बहन रोशनारा की जीवनी पर आधारित है। 'लकुमादेवी' नामक उपन्यास में आँध्र-नृत्यशास्त्र की प्रसिद्ध नर्तकी की जीवनी का वर्णन है। रुचीदेवी नामक उपन्यास में विजयनगर साम्राज्याधीश की पत्नी होकर भी समाज सेविका के रूप में जीवन बितानेवाली एक महान व्यक्ति की जीवनी है। भगवान श्री कृष्ण की कहानी को साधारण जन-भाषा में लिखनेवाले महाकवि 'पोतना' की जीवनी पर आधारित एक जीवनीपरक उपन्यास भी विख्यात है। प्रसिद्ध भक्त संगीताचार्य अन्नमाचार्यजी की जीवनी का वर्णन भी एक उपन्यास में कियागया है। इस प्रकार ऐतिहासिक सामाजिक उपन्यासों के अलावा और कुछ छोटे-बडे

ऐतिहासिक उपन्यास भी तेलुगु साहित्य में दिखाई देते हैं। लेकिन ध्यान देने की बात यह है कि उन में ऐतिहासिकता काल्पनिक है। उदाहरण की दृष्टि से विश्वनाथ सत्यन्नारायण द्वारा लिखित 'एकवीर' नामक ऐतिहासिक उपन्यास में काल्पनिक कथावस्तु है। ऐसे उपन्यासों में देशकाल वातावरण को ज्यादा प्रधान स्थान दियाजाता है। इसलिए वे जीवनीपरक उपन्यासों की श्रेणी के अंतर्गत रखने लायक उपन्यास नहीं है।

4.1. काल के आधार पर उपन्यासों का विभाजन :

तेलुगु-साहित्यिक इतिहास के चार भाग मौजूद हैं। काल विभाजन की दृष्टि से चार भागों के नाम प्राचीनकाल, पूर्व-मध्य काल, उत्तर मध्यकाल और आधुनिककाल मुख्य हैं। प्राचीनकाल की अवधि ईसापूर्व से लेकर ईसा जन्म के बाद आठवी शती तक है। इस अवधि में जीवित किसी भी सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक महान व्यक्ति की जीवनी पर आधारित उपन्यास उपलब्ध नहीं है। इस अवधि से संबंधित ऐतिहासिक उपन्यास हैं। लेकिन उन में जीवनीपरक उपन्यास दिखाई नहीं देते। पूर्व मध्यकाल की अवधि आठवी शती से लेकर पन्द्रहवी शती तक मानीजाती है। इस काल से संबंधित सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक महान व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित उपन्यास खासकर नौ उपन्यास हैं। उत्तर मध्यकाल की अवधि पंद्रह शदी से लेकर सत्रहवी शदी तक मानीजाती है। अर्थात मुगलराजवंश के अंत तक मान सकते हैं। इस अवधि से संबंधित जीवनीपरक उपन्यास सिर्फ दो ही हैं। आधुनिक काल की अवधि अंग्रेजों के आगमन से लेकर आज तक है। आधुनिककाल से संबंधित उपन्यासों में ऐतिहासिक उपन्यास अनेक हैं। लेकिन उन में से खास जीवनीपरक उपन्यास नहीं है।'इंटरमीडियट' छात्रों के लिए दो ऐतिहासिक उपन्यास पाठ्यांश के रूप में विद्याविभाग द्वारा रखे गये हैं। उन में से एक 'स्वर्णयोगी' और दूसरा 'तेलुगुवेलुगु' हैं। इन दोनों में स्वर्णयोगी की कथावस्तु काल्पनिक हैं। तेलुगुवेलुगु नामक उपन्यास में स्वतंत्र सेनानी अल्लूरी सीतारामराजु की जीवनी का झलक है।

ध्यान देने की बात यह है कि प्रस्तुत उपन्यास में देशकाल परिस्थितियों का विस्तृत और जीवनी का गौण वर्णन है। काल के आधार पर उपन्यासों का विभाजन इस प्रकार है।

1. **प्राचीन काल :**

   नहीं

2. **पूर्व मध्यकाल :**

   1. कवि सार्वभौमुडु
   2. तिक्कन
   3. कविद्वयमु
   4. धूर्जटि
   5. नारायण भट्टु
   6. आँध्र कविता पितामहुडु
   7. पोतनामात्युलु
   8. लकुमादेवी
   9. रूचीदेवी

3. **उत्तर मध्यकाल :**

   10. रोशनारा
   11. श्री ताल्लपाक अन्नमाचार्यलु

4. **आधुनिक काल :**

   नहीं

चरित्र और कथावस्तु के आधार पर ऐतिहासिकता और काल्पनिकता का विश्लेषणः-

4.2 कविसार्वभौमुडु

4.2.1. ऐतिहासिकता :

नोरि नरसिंह शास्त्री द्वारा लिखित कविसार्वभौमुडु नामक उपन्यास जीवनीपरक ऐतिहासिक रचना है। यह श्रीनाथ कवि की जीवनीपर आधारित उपन्यास है। दक्षिण भारत के इतिहास में कोंडवीडु राज्य का विशिष्ट स्थान है। पेदकोमटि वेमारेड्डी के प्रशासन में राज्य के लोग संतुष्ट हैं। उसके दरबार में महान कवि पंडित श्रीनाथ विद्याधिकारी के पद पर विराजमान है। आप असाधारण कवि हैं। वेद, वेदांग और पुराणों का गहरा अध्ययन किया। तमाम शास्त्रों का परिज्ञान उन में मौजूद है। उनके द्वारा लिखित अनेक रचनाओं में से शालिवाहन शप्तशति, श्रृंगार नौषदमु, बहुत ही मूल्यवान ग्रंध हैं। ऐसे महान काव्यों के सृजन के पश्चात उनका नाम दिन-ब-दिन पडोसी राज्य विजयनगर, राचकोंड और देवरकोंड आदि में भी रोशन होने लगा इस प्रकार महान कवि पंडित श्रीनाथ को राजा ने विद्याधिकारी के रूप में नियुक्त किया। समकालीन राज्यों में विद्यानगर का भी अधिक नाम है। उस राज्य का विद्याधिकारी अरुण गिरिनाध डिंडिमभट्टु भी श्रीनाथ की तरह महान कवि और पंडित हैं। समकालीन इतिहास में साहित्यक्षेत्र में उन्हें हरानेवाले कोई नहीं रहा। इसलिए उसे कविसार्वभौमुडु कहा करते हैं। श्रीनाथ के मन यह प्रबल इच्छा है कि किसी भी तरह उसे हराये। डिंडिमभट्टु की और एक खासियत यह भी है कि उस के पास एक लोहे (ताम्र) का ढोल भी है, जिस के बजाने पर यह मालूम हो कि पंडितजी पधार रहे हैं। इस प्रकार समकालीन राज्यों में श्री विद्यानगर साहित्य और सेनाबल दोनों क्षेत्रों में विख्यात हैं। उस वक्त ये छोटे राज्य आपस में लडरहे थे। लेकिन श्री विद्यानगर को साहित्य क्षेत्र में और युद्ध क्षेत्र में हराना बहुत मुश्किल था। इसलिए राजा पेद कोमटि वेमारेड्डी, किसी भी तरह विद्यानगर राज देवराज को हराना चाहता था। परन्तु यह मुमकिन नहीं था। इसलिए साहित्य क्षेत्र में अपना नाम रोशन करने के लिए तिक्कनामात्य को श्री विद्यानगर भेजा था।

उपन्यासकार नोरी नरसिंह शास्त्रीजी ने प्रस्तुत उपन्यास में इन दोनों महान कवियों की साहित्य स्पर्धा का अभिवर्णन बहुत सुंदर ढंग से किया। [1]" श्री विरूपाक्षेश्वर भगवान की प्रशंसा करते हुए श्रीनाथ ने एक काव्य साधारण जन भाषा में लिखा था। उसे अपने शिष्यों से पढाकर अरुणा गिरिनाथ ने उस पर ध्यान नहीं दिया। शिष्यों की बात मानकर उस काव्य को गलतियों का संकलन घोषित करदिया। श्रीनाथ यह जानता था कि जरूर गिरिनाथ ऐसी गलती कर बैठेगा। इसलिए उसने राजा देवराय से इनसाफ माँगा। राजा ने दोनों के बीच साहित्य परीक्षा रखी। निश्चित दिन श्रीनाथ ने राजा के सामने यह घोषित किया यदि स्तुति काव्य में गलतियाँ होती तो वह हार मानकर राज्य छोडकर चलाजायेगा और सदा के लिए काव्य लेखन छोडदेगा। यदि महाकाव्य गलतियों से मुक्त है तो राजा और प्रजा के सम्मुख गिरिनाथ को लोहे का बना अपना संगीत साधन ढोलक को तोडना है। इस के प्रसंग से राजसभा के तमाम सदस्य सहमत होगये। काव्य को पढने के बाद यह मालूम होगया कि यह काव्य साधारण भाषा में लिखित स्तुति काव्य है। विवश होकर गिरिनाध को हार माननी पडी। पलतः ढोलक को सिपाहियों ने राजा की आज्ञा के अनुसार तोड-मरोड दिया। इस प्रकार राजा देवराय की आज्ञा के अनुसार यह कार्य किया गया। बाद में दोनों महाकवि श्रीनाथ और अरुणगिरनाथ ने एक दूसरे के गले लगा लिया। राजा ने महाकवि श्रीनाथ को अपने दरबार में एक हफ्ते तक साहित्य सेवा करने के लिए आह्वान किया। महात्मा ने भी सविनय सहमत दे दी। श्रीनाथ की विजय का समाचार तत्काल कोंडवीडु राज्य तक पहूँचगया। राजा वेमरेड्डी का ऐसा महसूस करने लगा मानो यह जीत साहित्य क्षेत्र में बल्कि सेना क्षेत्र में भी उसे प्राप्त हुई है। राजा के साथ यह समाचार सुनकर राज्य के तमाम लोग भी सुख से तल्लीन होने लगे थे।"

उल्लिखित घटना ऐतिहासिक घटना है। इस घटना का जिक्र आँध्रसाहित्य के इतिहास में कियागया है। इसलिए उपन्यासकार ने इसे अपनी रचना में प्रधान स्थान दिया है। कोंडवीडु राज्य के शिला लेखनों पर भी यह उद्‌धृत है कि देवराय के

1. कवि सार्वभौमुडु - श्री नोरी नरसिंहशास्त्रि - पृ. - 180-195

दरबारी कवि डिंडिम अरुण गिरिनाथ को महाकवि श्रीनाथ ने साहित्य परीक्षा में हराकर डिंडम नामक संगीत साधन को तोड दिया। इसलिए उपन्यासकार ने इस घटना को अपनी रचना में प्रधान स्थान दिया। बाकी घटनायें गौण है। उपन्यासकार ने श्रीनाथ की जीवनी के प्रधान अंशों का जिक्र अपनी रचना में किया। परन्तु मृत्यु के बारे में नहीं बताया । यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि इतिहास के अनुसार श्रीनाथ की जीवनी में अंतिम समय बहुत ही दु:ख भरित है। इसलिए उपन्यासकार ने अंतिम समय की घटनाओं का वर्णन संपूर्ण रूप से वर्णन नही किया। परन्तु यह भी सत्य है कि उपन्यास में सभी घटनाओं के लिए स्थान मिलना मुश्किल है। समीक्षा के रुप में यह मानना उचित है कि उपन्यासकार श्रीनाथ की जीवनी का वर्णन करने में सफल हुये हैं।

4.2.2. काल्पनिकता :-

शास्त्रीजी ने प्रस्तुत उपन्यास में कथावस्तु को आगे बढाने के लिए काल्पनिकता का सहारा लिया। वास्तव में उपन्यासकार ने श्रीनाथ और पोतनामात्य, दोनों की जीवनियों पर रचना करते समय अपने सुझाव से श्रीनाथ की जीवनी को अलग उपन्यास के रूप में लिखना शुरू किया। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने श्रीनाथ कवि को सहज पंडित के रूप में वर्णन किया। उपन्यास का मूलाधार श्रीनाथ की जीवनी है। उन के जीवन में घटित एक घटना को प्रस्तुत उपन्यास में प्रधान स्थान दिया गया है। विद्यानगर राज्य का विद्याधिकारी अरुणगिरिनाथ डिंडिमभट्टु महान कवि और पंडित भी है। उनकी साहित्य प्रतिभा से प्रसन्न होकर महाराज देवराय ने उसे डिंडिम नामक लोहे से बना संगीत साधन ढोलक को तोफे के रूप में दिया, जिस के कारण उन का नाम अरुण गिरिनाथ डिंडिमभट्टु बनगया। उसकी ध्वनी से लोगों को यह पता चलता है कि महाकवि पथार रहे हैं। उन को साहित्य क्षेत्र में हरानेवाला कोई नही रहा। इसलिए श्रीनाथ कवि, उसे हराने के लिए तैय्यार होता है। लेकिन योजना के साथ हराना है। यहाँ पर उपन्यासकार ने काल्पनिकता का सहारा लिया।

वास्तव में साहित्य स्पर्धा के लिए महाराज वेमारेड्डी से अनुमति प्राप्त करके श्रीनाथ विध्यानगर की ओर प्रस्थान करता है। परन्तु महाकवि की रक्षा के लिए साथ राजा ने महान बलवान मल्लयोद्धाओं को भी भेजता है। यह एक काल्पनिक घटना है, जिसका कोई आधार इतिहास में नहीं रहा। फिर भी उपन्यासकार ने प्रस्तुत रचना में मल्लयोद्धाओं के बीच होनेवाली लडाई का भी वर्णन किया। [1]''मल्लयुद्ध देखने के लिए शहर के अनेक लोग आगये हैं। पर्वतमल्ल के शिष्य के सामने विद्यामल्ल का शिष्य बहुत ही कमजोर दिखाई दे रहा है। मानों हाथी के सामने घोडी की तरह। मल्लयुद्ध के लिए दोनों मल्ल तैय्यार होगये। न्याय निर्णयक ने दोनों की परीक्षा ली और लडने के लिए छोडा। दोनों के बीच मल्लयुद्ध शुरु होगया। दोनों योद्वाओं ने हाथ मिला लिये। एक ही क्षण में विद्यामल्ल के शिष्य को पर्वतमल्ल के शिष्य ने उठाकर नीचे गिरादिया। परन्तु धीरे-धीरे उसके हाथ और पैर निर्जीव होने लगे। दर्द के मारे वह तडपने लगा। मौका मिलते ही नीचे गिरा, विद्यामल्ल्ल ऊपर उट खडा हो गया और पर्वतमल्ल के शिष्य पर आक्रमण करने केलिए संसिद्ध होगया। लेकिन इसके पहले ही उसके हाथ और पैर निर्जीव होने के कारण, वह तडपते हुये बेहोश होगया। वहाँ के दर्शक लोग 'धोखा-धोखा' चिल्लाने लगे। सब लोग शंकाभरी दृष्टि से देखने लगे। परन्तु यह सत्य है कि धोके के बिना वह जीतगया।''

यह एक काल्पनिक घटना है। पर्वतमल्ल के शिष्य को धोके से हराया गया है। लेकिन इसे जानना काफी मुश्किल है। घोके को पहचानने के लिए महामात्य श्रीनाथ को वहाँ आना पडा। उस ने मल्ल को देखा और उसे एक दवा दी कुछ ही समय के बाद उसे होष आगया। बाद में उसे दूसरी दवा दी। कुछ ही देर बाद वह सोगया। महामात्य ने सब से, मरीज को अकेले छोडकर जाने को कहा। इस प्रकार मल्लायोद्धा को बचाया। यह काल्पनिक घटना है। इस घटना के माध्यम से उपन्यासकार ने यह साबित करना चाहता है कि महामात्य श्रीनाथ में तमाम् विषयों को जानने की

---

1. कवि सार्वभौमुडु - श्री नोरी नरसिंहशास्त्रि - पृ. -149-152

शक्ति और वैद्य की तरह सेवा करने का ज्ञान है। एक हफ्ते के बाद फिर मल्लयुद्ध लडने की तिथि आपहुँची। श्रीनाथ ने पर्वतमल्ल के तमाम शिष्यों को अपने पास एक गुप्त स्थान पर बुलाया। उन को महाभागवत में से कुछ घटनाओं का विश्लेषण करके बताया। बलराम-कृष्ण दोनों ने मिलकर निहत्थे होकर भी कंस के आंगन मे मल्लयोद्धाओं को परास्त करने में जिनकलाओं का प्रयोग किया, उन कलाओं के विवरण से श्रीनाथ ने तमाम् योद्धाओं को अवगत कराया। वहाँ के शिष्यों में से गण्डमल्ल नामक एक योद्धा को सामने बुलाकर बाकी को प्रस्थान करने को कहा। उस के शरीर पर श्रीनाथ ने एक खास लेपन लगाया। बाद में मल्लयुद्धा लडने को भेजा। निश्चित समय पर मल्लयुद्ध शुरु होगया। गण्डमल्ल के सामने जो शत्रुमल्ल खडा है, वह बहुत बलवान दिखरहा है, दर्शकगण दोनों मल्लयोद्धाओं पर और उनकी विजय पर पैसे दाव पर लगाने लगे। विद्यामल्ल उस वक्त दूर एक स्थान पर आसन ग्रहण करचुका है। उसके चेहरे पर कोई विशेष भाव नहीं हैं। लेकिन और एक जगह पर बैटे पर्वतमल्ल काफी घबराया दिखाई दे रहा है। देखते-देखते दोनो के बीच धमासान मल्लयुद्ध होने लगा। गण्डमल्ल ने एक ही पल में शत्रुमल्ल को पछाडदिया। उसे अपने दोनों हाथों के बीच बन्दी बनादिया। उस वक्त वह ऐसा दिखाई देने लगा मानों वह, उसे मारनेवाला है। परन्तु मध्यवर्ती ने दोनो को अलग करदिया। लोग हर्षउल्लास के साथ जयगान करने लगे। गण्डमल्ल उसके साथी मल्लयोध्दाओं ने अपने कन्धों पर उठाकर विजयोत्सव मनाते हुये श्रीनाथ के आश्रम तक लेगये। साधारणत: हर एक मल्लयोद्धा, जीत के पश्चात अपने गुरु को प्रणाम करता है। लेकिन यहाँ गण्डमल्ल सीधे श्रीनाथ के पास जा पहुँचा और उस के चरणों पर गिरकर प्रणाम किया और बाद में ही अपने गुरु पर्वतमल्ल को प्रमाम किया। विजय के पश्चात पर्वतमल्ल का मन खुशी से ओत-प्रोत होने लगा। पर्वतमल्ल ने स्वयं श्रीनाथ को प्रणाम किया और अपने शिष्य को गले लगाकर अशीष दिया।''

उल्लिखित घटना भी काल्पनिक घटना है, जिस के माध्यम से उपन्यासकार ने श्रीनाथ को मल्लयुद्ध की खूबियों को जाननेवाले ज्ञानी के रूप में वर्णन किया।

4.2.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

श्री नोरि नरसिंह शास्त्री सफल साहित्यकार हैं। तेलुगु साहित्य में ऐतिहासिक-जीवनीपरक उपन्यास लिखनेवाले लेखकों में से श्री नोरि नरसिंहशास्त्री एक हैं। वे सिर्फ तेलुगु में ही नहीं बल्कि संस्कृत, कन्नड और अंग्रेजी भाषाओं में प्रवीण हैं। इनकी विशिष्ट साहित्य सेवा के कारण भारत सरकार ने उन्हे 'साहित्य अकादमी' का पुरस्कार भी दिया। प्रस्तुत उपन्यास में श्री शास्त्री ने महाकवि श्रीनाथ को सफल साहित्यकार और महान पंडित के रूप में साबित किया। उपन्यास का मूलाधार श्री विद्यानगर में डिंडिमनाथ को साहित्य परीक्षा में हराने की घटना है। साहित्य क्षेत्र में श्रीनाथ को ध्रुवतारा के रूप में वर्णन किया है। परन्तु उन के जन्म, शिक्षा प्राप्ति के बारे में पूरी जानकारी देने में असफल हुए। इतना ही नही श्रीनाथ के अंतिम दिनों के करूणरस प्रधान जीवन के बारे में वर्णन नही किया। परन्तु भूमिका में ही उपन्यासकार ने पाठकगण से निवेदन किया कि श्रीनाथ के अंतिम जीवन के बारे में और एक उपन्यास में वर्णन किया है, जिस का नाम 'कविद्वयम' है। लेकिन आमतौर पर उपन्यासकार ने श्रीनाथ को सचमुच 'कविसार्वभौम' बनादिया है। साधारणत: अनेक युद्धों में विजय प्राप्तकरने वाले महराजा को 'सार्वभौमुडु' कहते हैं। अर्थात् सार्वभौम के अधिकार को अनेक सामंत राजा स्वीकार करते हैं। यहाँ उपन्यासकार ने श्रीनाथ को 'कवि सार्वभौमुडु' के रूप में साबित करने के लिए साहित्य स्पर्धा का वर्णन रोचक ढंग से किया है। यह ऐतिहासिक घठना है। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने श्रीनाथ के चरित्र का सुन्दर वर्णन किया है। इसलिए प्रस्तुत रचना को जीवनीपरक उपन्यास मानना उचित है।

4.3. तिक्कन सोमयाजी

4.3.1. ऐतिहासिकता :-

श्री तुम्मलपल्लि रामलिंगेस्वरराव जी द्वारा रचित 'तिक्कन सोमयाजी' नामक उपन्यास, ऐतिहासिक और जीवनीपरक रचना है। उस जमाने के ऐतिहासिक अंश

का वर्णन लेखक ने बहुत ही रोचक ढंग से किया है। विक्रमसिंहपुर राजा तिक्कदेवचोल महराज धार्मिक और उदार स्वभाववाला है। उसका अभिमत है कि देश की जनता धर्म और न्याय सम्मत स्वभाव से रहे। उन की और एक प्रबल इच्छा यह है कि महाभारत का आन्ध्रीकरण पूराहोजाय। महाभारत को तेलुगु में अनुवाद करने वाले महाकवि के लिए राजा तलाश कररहा है। [1]''सिंहपुर राजा के महामन्त्रि का नाम सिद्धन्नजी हैं। उस के छोटे भाई का नाम कोम्मनामात्युलु है। वह भी राजदरबार में काम कर रहा है। उसकी वफादारी से प्रभावित राजा ने उसे सेनाध्यक्ष बनाकर उत्तरप्राँत की रक्षा का काम भी सौंपा। एकबार 'अद्दंकि' राज्य के सामन्त राजा ने विद्रोह किया। उसे रोकने और विजयप्राप्त करने के लिए राजा ने कोम्मनामात्य को भेजा। कोम्मनामात्य ने सेनासहित आक्रमण किया और विजय भी प्राप्त की। वापस आते समय एक शत्रु सैनिक ने उस पर पीछे से वार किया। घायल होकर रणभूमि में ही कोम्मनामात्य ने प्राण त्यागा। कोम्मना की वीरपत्नी अन्नमाँबा ने पति के साथ सती सहगमन किया। उन का एकलौता पुत्र तिक्कन, उस वक्त आट साल का बच्चा था। उसे प्यार से परिवार में बाल तिक्कना, छोटा तिक्कना जैसे नाम से पुकारते थे। इस से उम्र मे बडा होने के कारण महामन्त्रि सिद्धन्ना के पुत्र को परिवार में बडा तिक्कना कहते हैं। वह बडा होकर खड्गतिक्कना और रण तिक्कना के नाम से विख्यात हो गया है। बाल तिक्कना ने माँ-बाप का अंतिम संस्कार किया। उस के बाद बाल तिक्कना किसी को नजर नही आया।''

यह ऐतिहासिक तथ्य है कि कवि तिक्कना और खड्ग तिक्कना दोनों भाई समान हैं। उपन्यासकार ने तिक्कन वंश का विवरण इस प्रकार दिया है जो एतिहासिक तथ्य है। [2]''महामन्त्रि सिद्धन और सेनापति दोनों भाई हैं। सिद्धन की पत्नी प्रोलाम्बा और कोम्मन की पत्नी अन्नमाम्बा दोनों भी बहिन है। अन्नमाम्बा के सहगमन के पश्चात प्रोलाम्बा ही बाल तिक्कन की देखरेख करना चाहती है। परन्तु अन्तिम

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 19-21
2. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 23

संस्कार के दिन से बाल तिक्कन लापता है। किशोरावस्था में पहुँचनेवाले खड्ग तिक्कन की शादी प्रोलाम्बा के बडे भाई अनन्तय्य की लडकी बडी चानम्मा के साथ की जाती है। प्रोलाम्बा के दो भाई हैं। उन में से बडे का नाम अनन्तय्य और दूसरे का नाम दुग्गय्य है। दोनों राजदरबारी काम करते हैं। दुग्गय्य श्री कालहस्ति दुर्ग का दुगाधीश है। उस की एकलौती बेटी छोटी चानम्मा है। अंतिमसंस्कार के दिन ही अन्नमाम्बा को दूग्गय्य ने वचन दिया कि कवि तिक्कन की शादी अपनी बेटी छोटी चानम्म के साथ ही की जायेगी। इसलिए उसदिन से दोनो की शादी की बात पक्की मानी गयी। परन्तु तिक्कन नजर नही आने के कारण चानम्म की शादी टालदी गई। दुखी मनवाली चानम्म धीरे-धीरे भगवान की भक्ति में तल्लीन होने लगी। वह सदा भगवान की पूजा में समय बिताती थी महामात्य सिद्दन्न और दुर्गधीश दुग्गय्य दोनों ने बाल तिक्कन को डूढने का काम जारी रखा। इधर छोटी चानम्म भगवान की परम भक्तिन बनगई।''

राजा के आदेश के अनुसार यह समाचार देश, विदेशी राजदरबारों में व्याप्त करने के लिए राजप्रतिनिधि गये, कि महाभारत को तेलुगु में अनुवाद करनेवाले महान पंडित चाहिए। राजमहेन्द्र नगर में एक ऐसा महान पंडित मिलगया था जो 'गौतम पंडित' नाम से उत्तर भारत में भी प्रसिद्ध है। यह समाचार पहले ही राज प्रतिनिधि अन्नमभट्टा ने राजधानी नगर भेजा। अन्नमभट्टु के साथ राजमहेन्द्री से राजधानी पहूँचने वाले गौतम पंडित के स्वागत के लिए तमाम तैय्यारियाँ होने लगी। इस कार्यक्रम में भागलेने के लिए राजा ने महामात्य सिद्धन्ना को भेजा। गौतम पंडित और कोई नही बल्कि कवि तिक्कन ही है। उसे अपने भतीजे के रूप में पहचान कर सिद्धन खुश होते हैं। चौदह सालों से वे सब तिक्कन के लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं। खासकर छोटी चानम्मा उसकी प्रतीक्षा में आत्मत्याग करने के लिए संसिद्ध होगई। परन्तु भगवान की दया से उनको तिक्कन कवि मिलगया। राजा भी बहुत प्रसन्न है। वे स्वयं तिक्कन और चानम्मा की शादी में उपस्थित है। शादी के पश्चात एक राज कार्य के कारण राजा तिक्कदेव ने महामात्य सिद्धन्न सेनाधीश खड्ग तिक्कना और

राजाधिकारियों को बुलाकर तिक्कन कवि को शिक्षा मंत्रि के पद पर नियुक्त किया। संतुष्ट मन से कवि तिक्कना ने भरी राज्यसभा में महाभारत को तेलुगु में अनुवाद करने की सौगंध ली।

स्वास्थ्य बिगडने के कारण राजा तिक्कदेव, राज्याधिकार छोडकर भगवान की भक्ति में अपना अंतिम समय बिताना चाहता है। इसलिए अपने पुत्र युवराज मनुमसिद्धि को राजा बनाना चाहता है। इस विषय के बारे में राजा और महामन्त्री के बीच बहस होती है। महामात्य सिद्दन्न भी अवकाश ग्रहण करना चाहता है। यह एक ऐतिहासिक घटना है। [1] ''उस रात को विक्रमसिंहपुर राज्य के राजा छोड तिक्क महराज चैन से सो नही सका। इस केलिए पारिवारिक और राजनैतिक कारण भी हैं। गलतरास्ते की ओर आकृष्ट होने वाले युवराज मनुमसिद्धी को सुधारना ही राजा का लक्ष्य बनगया है। इस के लिए उसे राजा बनाना ही उचित मार्ग समझा । क्यों कि जिम्मेदारियों से व्यस्त रहने पर मानव सुधरसकता है। लापरवाही से रहनेवाला बिगडजाता है। मनुमसिद्धि को सुधारने की योजना बनाकर दूसरे दिन राजा ने राजाधिकारियों की बैठक बुलायी। सुबह राजप्रासाद के गुप्तमन्दिर में महाराज, महामन्त्रि, सेनाध्यक्ष, अन्य प्रधानाधिकारि भी मौजूद हैं। निश्चित अधिकारियों के आने के पश्चात राजा इसप्रकार कहने लगा –चालीस वर्षों से आप सब की सेवा और सफल कर्तव्यनिष्ठा से मै राजा के रूप में सम्मानित रहा हूँ। हमारी और हमारे राज्य की रक्षा करने और राज्य में न्याय और धर्म संकटों को सुलझाने में महामन्त्री सिद्धन की अकलमन्दी का सक्रिय योगदान है। आज तक उन के विचारों के खिलाफ एक घटना भी नहीं घटी। कल उन्हों ने राजाधिकार से अपने पद से अवकाश ग्रहण किया। उन्हों ने यह साबित किया है, कि बुढापे के कारण वे राजाधिकार त्यागचुके थे। उन्हें आदर्श मानकर मैं ने भी यह निश्चित किया कि, युवराज को राजा बनाकर बचाहुआ जीवन भगवान की भक्ति में बिताया जाय। यह मेरी आज्ञा है कि मेरे प्रस्थान और राज्याभिषेक

1. तिक्कन सोमयाजि – श्री रामलिंगेश्वरराव – पृ. – 57

को एक ही सुमुहूर्त में हो जाना है। महामन्त्री के रूप में महाकवि तिक्कन को राज्याधिकार सम्भालना है। इस प्रकार कहकर राजा ने वहाँ से प्रस्थान किया।''

भूतपूर्व महराज का प्रस्थान, महामन्त्री का अवकाश ग्रहण करना जैसी घटनाओं से शत्रुराजाओं की नजर लाल हो उठी। उन्हों ने सोचा नये राजा और नये मन्त्री के खिलाफ जरूर क्राँति होगी और उसका फायदा उठाना है। परन्तु नीति चाणक्य के उपनाम वाले नये महामन्त्री महाकवि तिक्कन की अकलमन्दी के कारण तमाम कठिनाई दूर होगई। सीमाप्राँत में जहाँ-जहाँ विद्रोह होनेलगे, वहाँ-वहाँ सेना सहित जाकर खड्गतिक्कन ने उन विद्रोहियों को परास्त किया। विक्रमसिंहपुर राज्य के उत्तरी भाग पर अद्दन्कि राज्य है। अद्दन्कि राजा स्वयं अपनी सेना सहित विक्रमसिहपुर राज्य पर हमला करने रवाना होगया था। उन की अश्वसेना की शक्ति का सामना करना काफी मुश्किल है। इसलिए महामन्त्रि तिक्कन की योजना के अनुसार शत्रु सेना को घने जंगल में ही अकलमंदी और षडयंत्र के साथ ही खड्गतिक्कन ने परास्त किया। इस प्रकार सेनापति खड्गतिक्कन के पराक्रम और महामन्त्रि कवि तिक्कन की अकलमन्दी के कारण राज्य का यश चारों ओर फैलने लगा। राज्य की प्रशासन व्यवस्था को ठीक करके महामन्त्री तिक्कन ने भूतपूर्व राजा की इच्छा के अनुसार 'निर्वचानोत्तर रामायण' की रचना करना शुरु की। इसके पूराहोजाने के बाद महाभारत की रचना करना कवि तिक्कन का लक्ष्य है। वे हर दिन अपना राजकाज पूराकर के घर लौटकर, बिना भोजन, अपने पूजामंदिर में जाकर, भक्ति श्रद्धा सहित, धारा प्रवाह पद करते जाते थे और उनके खास शिष्य उन पदों को तालपत्रों पर लिखाकरते थे। उन तमाम पदों में से एक भी गध्यांश नही है। एक दिन सवेरे ब्रह्ममूहूर्त के समय में तिक्कन ने 'निर्वचनोत्तर रामायण' नामक रचना का समापन किया। सुमुहर्त के दिन महाकवि तिक्कना ने अपनी अनमोल रचना को भगवान श्रीरामचन्द्र के नाम पर समर्पित करके, महराज मनुमसिद्धि के हाथों में सौंपदिया। इस सुअवसर पर दरबार के अनेक प्रमुख राजोध्योगि और अन्य कविगण भी शामिल हुये। उसे पढते हुये राजा भी बहुत प्रसनन्न हुये थे। कुछ समय बीतगया। एक दिन जब महाकवि संध्या के वक्त भगवान

की अनुष्टान कर रहा था, तब एर्रगड्डु राज्य के अमात्य ब्रह्मरुद्रय्य के द्वारा भेजागया पत्र मिला। उसमें साफ-साफ लिखागया है कि एर्रगड्डु राज्य में वर्ष के अभाव से अकाल पडा है। खासकर घास के बिना पशुगणों का अंत हो रहा है। इसलिए काटमराज्य की ओर से निवेदन किया जाता है कि पशुगणों को आपके राज्य के जंगलों में चरने का मौका दिया जाये। चरते समय जितने भी बचडे जन्म लेंगे, उन को आप के हवाले करदेंगे। पत्र के विषय पर राजा, मंत्रि और सेनाध्यक्ष बेहस करके अंत में राजा ने स्वीकृति पत्र भेजदिया।

मनुमसिद्धि महाराज की इच्छा के अनुसार महाकवि तिक्कन महाभारत को अनुवाद करने के लिए संसिद्ध होता है। नन्नय्या की मृत्यु के बाद अनुवाद का कार्यक्रम रुकगया था। इसलिए तिक्कन ने पिनाकिनी नदी के तट पर एक कुटीर बनाकर यज्ञ किया और सुलगन दशमी के दिन अनुवाद का कार्यक्रम फिर शुरू किया। नन्नय्या ने जिस अध्याय का अनुवाद बीच में छोडदिया, उसे तिक्कन ने भी छोडदिया और अगले अध्याय से अनुवाद का कार्य संभाला। तिक्कन मुह से धारा प्रवाह की तरह पद निकलते थे और उनके प्रिय शिष्य गुरुनाथ, उन्हें लिखते जाते थे। जितने भी पद तेलुगु लिखे जाते थे, वे दूसरे ही दिन राजा के दरबार पहचते थे। राजा के साथ लोग भी इस सन्दर्भ में बेहद प्रसन्न थे। राजा ने यह आज्ञा दी कि राज्य की राजनैतिक और अन्य समस्याओं के बारे में महाकवि को जानकारी ना देदीजाय। समय बीतने लगा। एर्रगड्डु राज्य में बारिष हुई और हरियाली छाने लगी। काटमराजा के पशुगुण अपने राज्य लौटगये। परन्तु समझौते के अनुसार उन्हों ने जंगलों में जन्म लेने वाले बछडों को नही दिया। इस अवसर पर दोनों राज्यों के बीच बात बिगडगई। दोनों राज्यों में युद्ध की तैय्यारी होने लगी। परन्तु इस गम्भीर स्थिति के बारे में महामात्य तिक्कन को समाचार नही दिया गया।

दोनों राज्यों की सेना के बीच घमासान युद्ध हुआ। पहले दिन के युद्ध में विक्रमसिंहपुर की सेना हारगई। सेनाध्यक्ष खड्गतिक्कन अपमान से सर झुकाये घर

पहूँचे। घर में भी पत्नी ने उस की निन्दा की। अपमान से ललकारनेवाले तिक्कन ने दूसरे दिन महारुद्र की तरह शत्रुसेना का संहार किया। लेकिन अंत में काटमराजा द्वंद्व युद्ध के लिए तिक्कना को ललकारा, दोनों गुरु-शिष्य थे। दोनों के बीच तीव्र स्थिति में युद्ध हुआ। अंत में दोनों एक-दूसरे के हाथ में मारे गये। अंतर इतनाही है कि एरुगड्डु की ओर से एक भी सिपाही नहीं बचा। लेकिन विक्रमपुर की सेना एक ओर विजय की खुशी और दूसरी ओर तिक्कन की मृत्यु-शोक से वापस राज्य पहुँची। तमाम राज्य दु:ख-सागर में डूबगया। पतिव्रता नारी चानम्मा ने अपने पति के साथ अग्नि में सती होगई। इतना सबकुछ होने पर भी यह समाचार महामात्य तक नही पहुँचा।

सुलग्न में महाभारत की रचना पूरी हुई। यज्ञ कुटीर से कवि परिवार को वापस आदर सहित लेजाने, राजा के बदले मंडलाधीश आ पहूँचा। तिक्कन ने अन्दाजा लगाया कि शायद कुछ बुरी घटना घटी होगी। इसलिए वे खामोश होकर सीदे सिद्धन के घर गये। विषय जानकर तमाम परिवार-सभ्य विचलित होगये। वेदना को रोकते हुए तिक्कन ने महराज को निवेदन किया कि, [1]''मुझे अपने सगे भाई की तरह देखरेख करनेवाले और मुझे जान से अधिक प्यार करनेवाले सेनाधीश तिक्कन और मेरे बीच कितनी गहरा प्रेम है, उसे आप जानते ही हैं। उन के निदन और सपत्नी सहगमन के अवसर पर मुझे समाचार न देना, आप जैसे राजा के लिए उचित नही रहा। लेकिन बीच में सिद्धन ने कहा, - नहीं पुत्र, जल्दबाजी में राजा की निन्दा मत करे। क्यों कि राजा ने अपने सेनाधीश तिक्कन की आज्ञा का पालन किया। मृत्यु के पहले सेनाधीश ने स्वयं ही आज्ञा दी, कि कोई भी समाचार महामात्य तक नही पहूँचे, जिस से वे निर्वज्ञ ही रचना का कार्य जारी रखे। महराज स्वयं इस घटना पर चिंताग्रस्त हो रहे थे। वे स्वयं अंनिम यात्रा में शामिल हुये थे'' सेनाधीश खड्गतिक्कन की अंतिम यात्रा में भारी भीड शामिल हुई थी। गलत फहमी दूर होजाने के पश्चात महामात्य तिक्कन

---

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 192

भी अनुताप से राजा के पास जाकर विनती की, कि 'शात कार्य' में वे भी भाग ले। राजा ऐसे मेहसूस करने लगे, कि उन के दोनों हाथ कटगये थे। तमाम कार्य पूरे होजाने तक राजा कवि तिक्कन जी के साथ ही रहे।

दिन बीतने लगे। इस घटना से विचलित मनवाली चानम्म का स्वास्थ धीरे-धीरे बिगडने लगा। आखिर एकदिन उस ने प्राणत्याग दिया।-[1] ''चित्र चानम्म ने सबेरे ही पूजा पाठ किया और अपने पति का चरण स्पर्श किया। एकबार सब को अपने कमरे में आने को कहा। परिवार के सभी सदस्य कमरे में इकट्टे होगये। चानम्म अपने बिस्तर पर नीरस लेटी हुई थी। एक पल के लिए उस ने सब की ओर देखा। उस की नजर में अंतिम क्षण झलक रहे हैं। इसे पहले ही महामात्य ने भाँप लिया। वे जानते थे कि अब चानम्म परमधाम को सिधारने वाली है। इसलिए वे शांतिवचन बोलने लगे। चानम्म भी उन शब्दों को दुहराती हुई अचानक रुक गई। सब के सब ऊँचे स्वर में रो उठे।''

महामात्य ने अन्य मन्त्रियों के साथ प्रशासन व्यवस्था के बारे में बेहस किया। पुरोहितगण को आमन्त्रित करके शाँति यज्ञ को जारी रखने की प्रणाली बनादी। नये सेनाध्यक्ष के साथ राज्य की सुरक्षा के सन्दर्भ में चर्चा की। अंत में महामात्य ने राजा के सामने अपनी मनोभिलाषा व्यक्त की। वे काशीयात्रा के लिए निकलना चाहते हैं। यह सुनकर राजा के साथ अन्य अमात्यगण भी चिंताग्रस्त होगये- [2]''इस सन्दर्भ में महामात्य ने विवरण दिया कि हे राजा! मैं इतना कमजोर मनवाला नहीं हूँ। प्रकृति में जनन और मरण सहज विषय है। मै अपनी पत्नी की मृत्यु से विचलित मनवाला नहीं बनूँगा। मैं विपत्तियों में भी कर्तव्य निभाना परम धर्म मानता हूँ। स्वर्गस्थ सेनापति और उस की पत्नी की अस्तियों को उनका पुत्र गंगा नदी में मिलाना चाहता है। इतना ही नहीं मेरी पत्नी की अस्थियों को भी अपना पुत्र गंगा नदी में मिलाने की

---

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 197
2. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 200

इच्छा व्यक्त करता है। परिवार के बुजुर्ग लोगों की भी यही अभिलाषा है। जहाँ पर मैं ने शिक्षा ग्रहण की, वहाँ जाने के लिए मेरा मन भी उत्सुक है। यहाँ राज्य की देख-रेख के लिए आप को साथ देने केलिए बय्यन्ना, अन्नबंदु, गुरुनाध जैसे अमात्यगण भी तैनात हैं। आप को किसी भी विषय के लिए चिंताग्रस्त होने की जरूरत नही। क्यों कि, यहाँ सब कुशल-मंगल है। इसलिए मैं अपने दोनों पुत्रों को साथ लेकर शुकृवार के प्रात:समय काशी क्षेत्र की ओर प्रस्थान करने वाला हूँ। आप मुझे प्रसन्नता से विदा कीजिये। इस प्रकार राजा की अनुमति प्राप्त करके तिक्कन काशी के लिए रवाना होगये।''

महामात्य के काशी चलेजाने के पश्चात राजा चिन्ताग्रस्त होने लगे। महान प्रतापी सेनाधीश तिक्कन के निधन और महामात्य की काशी यात्रा के कारण राजा का मन अशंकित होने लगा। जब सेनाधीश जीवित थे, तब शत्रुराजा लोग विक्रमसिंहपुर की ओर देखने के लिए भी हिचकते थे। अब तो प्रशासन के कुशल महामात्य भी राज्य में नही रहे। इसलिए सिंहपुर राज्य के दक्षिण प्राँत में कलिंग राज्य की सेना अशांति फैलाने लगी। उत्तर प्राँत में काकतीय राज्य की सेना कलिंग राज्य की सेने के साथ युद्ध की तैय्यारी करने लगी। पश्चिम की ओर पाण्ड्य राज्य का राजा सुन्दर पाण्डय भी सिंहपुर पर आक्रमण करने के लिए संसिद्ध है। कलिंग राज्य की सेना को हराने के लिए काकतीय राजा ने राजा मनुमसिद्धि के साथ समझौता करलिया। उसके अनुसार कलिंग सेना को हराने के लिए सिंहपुर की सेना को युद्ध क्षेत्र की ओर जानी पडी। ऐन मौके पर सुन्दर पाण्ड्य ने सिंहपुर पर चडाव किया। लेकिन वह किले के अन्दर जाने मे असफल होगया। क्यों कि किले के किवाड बन्द किये गये। कलिंग सेना को हराकर वापस लौटते समय मनुमसिद्ध को यह समाचार मिला। यह समाचार काशी तक पहुँचा। महामात्य ने एक योजना बनाकर,पत्र लिख भेजा। उसे प्राप्त करने के पश्चात राजा को भविष्य कार्य ज्ञात हुआ। उस योजना के अनुसार राजा ने यह समाचार लोगों में व्याप्त किया कि राजा मनुमसिद्धि, अपनी सेना और काकतीय सेना सहित सुन्दर पाण्ड्य पर आक्रमण करने के लिए राजधानी की ओर अग्रसर

होरहा है। धीरे-धीरे यह खबर पाण्ड्य राजा तक पहुँचगई। वह डर के मारे अपनी सेना सहित राजधानी छोडकर अपने राज्य की ओर प्रस्थान किया।

काकतीय राजा गणपति देव महान शिव भक्त, योग्य प्रशासक और साहित्य प्रेमी है। उनकी एक लौती बेटी रुद्रमदेवी एक वीर की तरह युद्ध कलाओं में प्रवीण है। राजा गणपति देव और यवरानी रुद्रमदेवी दोनों में महामात्य तिक्कन का आह्वान आदर के साथ किया। एक विशेष बैठक में विक्रमसिंहपुर में घटित घटनाओं का विवरण राजा के सामने दियागया। तुरन्त राजा ने प्रधान सेनाधीश हेमाद्रिरेड्डी से युद्ध की तैय्यारी करने का आदेश दिया। * ''विशेष मंदिर में बैठे सदस्यों को सम्बोधित करके राजा गणपति देव ने कहा कि जब तक विक्रमसिंहपुर राज्य आजाद नही होता, तब तक हम महामात्य तिक्कन का दर्शन भी नहीं लेसकते। इसलिए उन्हों ने प्रधान सेनाधीश से कहा कि वे अपनी सेना केसाथ युद्ध की तैय्यारी करे। खासकर विजय प्राप्त करने के पश्चात राजा मनुमसिद्ध से यह कहना है, कि काकतीय चक्रवर्ति ने राज्य जीतकर 'आँध्र महाभारत' लेखक महाकवि तिक्कन को तोफे के रूप में दिया। बाद में महामात्य, उस राज्य को किसी को भी दान में दे सकते हैं।'' निश्चित योजना के अनुसार काकतीय सेना का स्वागत गुरुनाथ ने कृष्णा नदी के तट पर किया। रहस्य मार्ग पर आगे बढकर काकतीय सेना ने विक्रमसिंहपुर राज्य को अपने अधिकार के अदीन में लेलिया। रात के वक्त उदयगिरि पहुँचकर राजा मनुमसिद्धि के लिए ढूँढनेलगे। गुरुनाथ के अन्दाजे के अनुसार राजा मनुमसिद्ध उदयगिरि के बन्दिखान में दिखाई दिया। उन को अजाद करके, काकतीय सेना सिंहपुरि पहुँचा। विजय समाचार प्राप्त करके काकतीय सम्राट गणपतिदेव ने विशेष समारोह का आयोजन किया। उस में महामात्य तिक्कन का सादर सत्कार किया गया। राजा की अभिलाशा के अनुसार तिक्कन ने 'आँध्र महाभारत' का पठन करके लोगों का मन बहलाया। भक्ति-श्रद्धा के साथ लोग 'भारत कहानी' तेलुगु में सविवरण सुनने लगे। बहुत समय तक वहाँ रहकर तिक्कन ने 'आँध्र महाभारत' की कहानी, राजा को सुनाया।

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 277

महामात्य को यह ज्ञात हुआ कि उन के परमधाम को सिधारने का समय आपहुँचा। इसलिए उन्होंने काकतीय सम्राट से आज्ञा लेकर अपना गाँव पाटुरु की ओर प्रस्थान किया। रास्ते में 'अहोबिलम' जैसे पुण्यक्षेत्रों का दर्शन भी उन्हों ने किया। एक दिन ब्रह्ममुहुर्त के समय पद्मासन में जप करते हुये तिक्कन ने अपने प्राण त्याग दिये। यह समाचार मिलते ही उन के परिवार सदस्य वहाँ आपहुँचे। इस प्रकार तिक्कन की मृत्यु से सारा आँध्रराज्य दुःख सागर मे डूबगया।

4.3.2. काल्पनिकता :-

प्रस्तुत उपन्यास में काल्पनिकता जहाँ-तहाँ दिखाई देती है। कहानी को आगे बढाने केलिए लेखक ने कल्पना का आश्रम लिया। उपन्यास के आरम्भ में ही चिन्नचानम्म के सन्दर्भ में लेखक ने कल्पना के आधार पर इस प्रकार लिखा - [1]"श्री कालहस्ति नगर-पालक श्री दग्गय्या की इकलौती बेटी चिन्न चानम्म अनशन कर रही है। इसका कारण यह है, कि जब वह बहुत छोटी बच्ची थी, तब उसके पिता ने अपने मित्र के आट साल के लडके के साथ उसकी शादी करने का वादा किया था। लेकिन बाद में वह लडका परिवार को छोडकर कही चलागया, जो आज तक वापस नहीं आया। ऐसे लडके की प्रतीक्षा आज सयान युवति चिन्न चानम्मा कर रही थी। वह अपनी पूजामन्दिर में देवी माँ के सामने भक्ति के साथ अनशन कर रही थी।" वास्तव में वह और कोई नहीं उपन्यास का नायक तिक्कन महाकवि ही है। आँध्रराज्य में राजमहेन्द्रवर नागर की अपनी अनोखी विशेषता है। उस में मार्कंडेय स्वामीजी का मन्दिर, शैव पुण्यक्षेत्रों में से एक है। [2]"इस मन्दिर की एक प्रचलित कहानी फैली थी, कि वहाँ के शिवलिंग मूर्ति से भगवान शिव प्रत्यक्ष होकर अधर्म का आश्रय लेनेवाले यमधर्मराजा को उस ने सजा दिया और कठोर तप करनेवाले शिवभक्त मार्कन्डेय मुनी को कैलाश में स्थान दिया। इसलिए भक्त कवि नन्नया महाकवि ने इस

---

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 5
2. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 9

मन्दिर का प्राकार बनाया था। कहाजाता है, कि इस में राजा नरेन्द्र ने गणपति नवरात-उत्सवों का आरम्भ किया''

नवरत- उतस्वों में अनेक महान कवि, पंडित भागलेते हैं। हरवर्ष की तरह इसबार भी वेद-वेदांगों में, दर्शन शास्त्र आदि अनेक शास्त्रों में शिक्षा सम्बन्धी प्रत्योगितायें रखी गई हैं। उन में काशी विध्यापीट में प्रशिक्षित तीन युव पंडितों को प्रथम स्थान प्राप्त हुआ। इन तीनों में से बडे पंडित का नाम विश्वस्वर, दूसरे का नाम रूद्रय्य और तीसरे का नाम गौतम है। काकतीय चक्रवर्ति ने इन तीनों का सम्मान धूम-धाम से किया। समारोह के समापन के पश्चात गौतम ने पंडित विक्रमसिंहपुर की ओर 'राज-पालकी' में प्रस्थान किया।

महामन्त्रि सिद्धन्न के कनिष्ट पुत्र और महासेनाधीश को महामात्य के एकलौता पुत्र का नाम तिक्कन है। लेकिन युद्ध में कोम्मनामात्य की मृत्यु होती है। फलत: उसकी पत्नी अन्नमांबा भी चलबसती है। इन दोनों की अंत्योष्टी के पश्चात बाल तिक्कन अदृष्य हो जाता है। यहाँ पर लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। क्यों कि, छोटा बालक माँ-बाप की मृत्यु के पश्चात अदृश्य हो जाना और दसवर्ष के पश्चात गौतम पंडित के नाम मशहूर व्यक्ति होकर काशी विद्यापीट से प्रशिक्षित होकर वापस सिंहपुर राज्य में स्थित अपना घर आना काल्पनिक साबित होता है। प्रोलाम्ब के दोनों भाइयों के दो सन्तान थी। अनन्तय्य की बेटी पेद्द चानम्म और दग्गय्य की बेटी चिन्न चानम्म है। सिद्धन्न के पुत्र खड्गतिक्कन की शादी पेद्द चानम्म के साथ हो गई है। अब चिन्न चानम्म की शादी कोम्मनामात्य के बेटे के साथ होती है। परन्तु वह बचपन में ही अदृश्य होगया था। इसलिए सयान होने के पश्चात चिन्न चानम्म बाल तिक्कन की प्रतीक्षा में अनशन करने लगी। उसी वक्त राजमहेन्द्रवरम से सिद्धन्न के घर गौतम पंडित पहुँच गया। बाल तिक्कन के रूप में उसे पहचानकर सब खुश हो गये। इस के पश्चात चिन्न चानम्म और तिक्कनामात्य की शादी हुई।

चिन्न चानम्म और तिक्कनामात्य की पहली मुलाकात के बारे में वर्णन करते हुये उपन्यासकार काल्पना की शरण ली।

उपन्यासकार ने खड्गतिक्कन और महाकवि तिक्कन दोनों की विशेषताओं के बारे में सविवर पाठकों को समझाने के सन्दर्भ में एक काल्पनिक घटना का वर्णन किया। [1]" सिंहपुर राज्य के बगल में चोलराज्य है। उसका राजा 'राजेन्द्रचोल' सिंहपुर राजा का मित्र है। अचानक एक दिन यह समाचार मिला है कि वह अदृश्य होगया। कर्णाटक राजा वीरेश्वर और राजेन्द्र के बीच शत्रुता थी। अन्दाजा लगाया गया कि इस षडयंत्र के पीछे जरूर वीरेश्वर का ही हाथ होगा। राजेन्द्र को छुडाने का काम दोनों तिक्कन्न भाईयों को दिया गया। उन्हों ने कुशल पूर्वक इसे सफल बनादिया।" महामन्त्रि सिद्धन्न बुढापे के कारण पद त्यागना और मन विकलित राजा तिक्कदेव चोड भी उनकी राय से सहमत होकर राजपद छोडकर तप करने वन की ओर प्रस्थान करना, कल्पना पर आधारित है। युवराज मनुमसिद्धी बुरे लोगों की दोस्ती में कर्तव्य विमुख हो रहा था। इसलिऐ उसे ठीक रास्ते पर लाने के लिए महराज, उसे सिंहसन सौंपना चाहता है। लेकिन उसी वक्त त्यागपत्र देने सिद्धन्न वहाँ पहुँचता है। राजा की दृष्टि में ऐसा बुद्धिमान और श्रेष्ठ व्यक्ति और कोई नही रहा। तब सिद्धन्न ने उन्हें तिक्कन्न का याद दिलाया। तिक्कन अब शिक्षामन्त्री के रूप में है। लेकिन दोनों ने यह निश्चय किया तिक्कनामात्य को महामन्त्री के पद पर नियुक्त करे। राजा ने निश्चित मुहूर्त में युवराजा मनुमसिद्‌ध को महाराज और तिक्कनामात्य को प्रधानमन्त्री बनाया। एक ही समय में राजा और प्रधानमन्त्री को बदलदेने से शत्रुराजा जिस प्रकार विद्रोह करने के लिए तैय्यार होते हैं, उसका वर्णन करने केलिए लेखक ने 'गग्गय्य साहिणी' नामक सासन्त राजा के माध्यम से कल्पना के सहारे यह साबित किया। [2]"गन्गय्य सहाणी सामन्त राजा होने पर भी परम वीर और धीरोद्धात्त एवं राजा तिक्कदेव चोड का दोस्त भी है। लेकिन राजा मनुमसिद्ध को राजा के रूप में वह स्वीकार कर नहीं

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 45- 55
1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 65-70

सका। यह पहले ही खड्गतिक्कन पहचान चुका है। इसलिए उसे परिवार सहित बन्दी बनाकर राजा के सामने सेनानी खडाकर दिया। वास्तव में उसे कलुषित करने वाला रक्कसंग नामक मंडलाधीश है। इसलिये प्रधानमन्त्रि तिक्कनामात्य ने खूब सोचविचार करके राजप्रतिनिधी गंगय्य सहाणी को तबादला करके विद्रोह का षडयन्त्र रचने वाले मंडलाधीश रक्कसंग को देश से बाहर निकाल देने का सलाह दिया। राजा ने इसे उचित मानकर ऐसा ही किया जैसे प्रधानमन्त्री ने सलाह दिया।''

दिन बीतने लगे। सेनाधीश खड्गतिक्कना के पराक्रम से और महामात्य तिक्कन की बुद्धि कुशलता से सिंहपुर राज्य सुभिक्ष और सुसम्पन्न है। मनुमसिद्धि महराज ने महामात्य तिक्कन से विनती की, कि वे 'महाभारत रचना' का आँध्रीकरण करे। महामात्य भी राजा की इच्छा पूरी करने की तैय्यारी में है। एकदिन महाराणी की प्रधानदासी तिक्कन के घर आई। [1]''उस ने महामात्य को प्रणाम किया। शणिवास में यह परम्परा है, कि हर कार्तिक पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा का अनुष्टान करना। खासदिन महराणी अपनी दासियों के सहित एक महान उत्तम ब्राह्मण के निरीक्षण में पूजा-पाठ करती है। उस वक्त ब्राह्मण पति-पत्नी को दान में पूजा सामग्रि और धन देने की परम्परा भी है। इसलिए महाराणी शीलमादेवी ने विनय सहित आमन्त्रण भेजा। महाराणी की विनती सुनकर महामात्य को कर्तव्य नही सूझा। कुछदेर गहरी चिन्ता में डूबगये। आज तक अमात्य ने महाराणी को नहीं देखा। उस की विनती को अस्वीकार करना कुसंस्कार है। बाद में उन्हे कर्तव्य सूझा। एक घण्टे के बाद दोनों वहाँ उपस्थित होने का समाचार भेजा।''

समय बीतने लगा। पडोसवाले राज्य में बारिष के अभाव में खेत वीरान पडगये। इसलिए पशु, घास के लिए तरस रहे हैं। उस राज्य के महामात्य ब्राह्मरुद्रय्य और महामात्य तिक्कन दोनों सहपाठी थे। इसलिये रुद्रय्य ने तिक्कन के यहाँ एक

2. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 78-79

विनतिपत्र भेजा कि राजा के सामने शिफारिश करके पशुग्रास के लिए उस राज्य के पशु को सिंहपुर के जंगलों में चरने की अनुमति दिलाने की कृपा करे। महामात्य तिक्कन बहुत ही दयालु है। इसलिए उनकी बात मानकर राजा ने स्वीकृति देदी। एकदिन दरबार में राजा मनुमसिद्धि ने महामात्य से कहा, कि आप आँध्रमहाभारत की रचना कीजिये। सेनाधीश खड्गतिक्कन ने भी यह कहा, कि 'आदिकवि' नन्नय्य द्वारा आरम्भ किया गया काम तिक्कन द्वारा पूराहोना उचित है। अन्य सभा सदस्यों ने सहमती दी। [1] ''सोचते-सोचते महामात्य पहूँचगये। उनके कानों में बेद व्यास के संस्कृत श्लोक गूँजने लगे। साहित्यक्षेत्र में व्यासकवि की तुलना भगवान ब्रह्म से करते हैं। रात के वक्त गहरी नींद में महामात्य ने सुन्दर स्वप्न देखा। स्वप्न में माँ सरस्वती के सम्मुख वेदव्यास बैठे अनुष्टान कर रहे हैं। उसी वक्त अमात्य भी वहाँ पहुँचे। वे दोनों तिक्कन की ओर प्रसन्न दृष्टि से देखने लगे। तब कवि तिक्कन ने एसा मेहसूस किया, कि उन्हों ने आँध्र महाभारत की रचना केलिए स्वीकृती देदी।''

महाराज मनुमसिद्धी के मन में एक आशा है कि आँध्र महाभारत की रचना उस के जमाने में तिक्कनामात्य के हाथ से हो जाय। उन्हों ने एकदिन महामात्य के सम्मुख व्यक्ति किया। महामात्य ने इस के लिये अपनी स्वीकृती देदी। लेकिन अब तिक्कन के लिए एक उत्तम लिपिक की जरूरत है। [2] ''इस सन्दर्भ में उपन्यासकार ने काल्पनिकता के सहारे, एक धटना का अभिवर्णन किया। राजा-सभा में महाकवि तिक्कन ने कहा कि आँध्र महाभारत की रचना के लिए एक उत्तम लिपिक की आवश्यकता है। एक ओर महामात्यजी के द्वार यज्ञ चलाता रहेगा और एक तरफ अनुवाद का काम जारी रहेगा। रातों-रात तक लिखने की क्षमता लिपिक में होना अतिआवश्यक है। महाभारत को अनुवाद करते समय उनके मुह से निकलनेवाले पदों को जल्दी-जल्दी लिखने के लिए एक उत्तम लिपिक की आवश्यकता है। खड्गतिक्कन ने कहा, कि जैसे वेद व्यास को गणनाथ मिला, उसी प्रकार उत्तम

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 95
2. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 100-105

लिपिक की आवश्यकता है। दरबार में बैटे लोगों मे से गुरुनाथ नामक व्यक्ति ने खडा होकर प्रणाम किया और निवेदन किया कि जब महामात्य शीघ्रगति में पद कहे, तो सही ढंग से वह लिखेगा। उस गति में लिखने में यदि असफल होता है तो उसे अपने दहिने हाथ काटने का प्रण खाया। खड्गतिक्कन ने नाराज होकर कहा कि हे गुरुनाथ ! तुम्हारी बातों में घमंड है। वास्तव में एक लेखक और लिपिक के लिए विनम्रता की आवश्यकता है। इस प्रकार जब लिपिक की बात बिगड रही थी तब महामात्यजी ने सब को समझाकर समस्या को सुलझाने का प्रयत्न किया। इस प्रकार भरी सभा में तिक्कन ने गुरुनाथ को अपने लिपिक के रूप चुनलिया।''

मनुमसिद्धी महाराज बहुत खुश है। क्यों कि अपनी बात मानकर तिक्कन महाकवि ने महाभारत की रचना शुरु किया। राजा से स्वीकृति प्राप्त करके पडोसी राज्य एर्रगड्डुपाटी राज्य के ग्वाला लोग अपने पशु विक्रमसिंहपुर के वनों में चरा रहे हैं। पशुगण की रक्षा केलिए स्वयं काटमराजा अपनी सेना सहित वहाँ आ पहुँचे। इतिहास की दृष्टि सें यह सत्य है, कि दोनों राज्यों के बीच पशुगण के विषय में बात बिगडगई थी। यहाँ पर उपन्यासकार ने एक काल्पनिक घटना का अभिवर्णन किया। [1] ''यादवराज के (पशुगण) ढोर गलती से खेतों में भी चरने लगे। उन की रक्षा केलिए सिपाही हिस्र पशु को मारते वक्त गलती से हिरण भी मारे गये। इसलिए किसान और अनुशूचित-जन-जाती लोगों ने यादवराज काटम राजा के पास आकर शिकायत किया। काटमराजा के अंगरक्षक और किसानों के बीच बाच बात बिगडगई। धीरे-धीरे बात चिडकर यहाँ तक आपहूँची कि मनुमसिद्धी महराजा इस विषय पर सचेतहोकर सोचने लगा। सलाह देने के लिए राज दरबार में महामात्य तिक्कना भी मौजूद नहीं। यह विषय आगे चलकर युद्ध का कारण बन चुका था। उपन्यासकार ने इस संदर्भ में काल्पनिकता का सहारा लिया। लेखक ने यह साबित किया कि विक्रमसिंहपुरी और यादवराज्य के युद्ध का कारण वन में चरनेवाले यादव राज्य के

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 107-117

ढोर हैं। इस घटना के वर्णन में लेखक ने एक वेश्य माता और पुत्री एवं अक्कन्ना और वय्यना नामक दो खास रिश्तेदारों का भी अभिवर्णन किया। वास्तव में युद्ध की बात ऐतिहासिक है। परन्तु युद्ध के कारण में मत भेद हैं। लेखक ने यह साबित किया कि युद्ध का कारण सिर्फ पशुगण ही है।''

दोनों राज्यों के बीच युद्ध शुरु होगया। विक्रमसिंहपुरी की ओर सेनाध्यक्ष खड्गतिक्कना अपनी सेना सहित युद्ध क्षेत्र में उपस्थित होता है। यादव राज्य की ओर से सेनाधीश पिन्नमनायुडु भी वहाँ अपनी सेना सहित आपहुँचा है। इस सन्दर्भ में उपन्यासकार ने काल्पनिकता का सहारा लिया। ऐतिहासिक सत्य यह है कि खड्गतिक्कना अपनी सेना सहित परास्त होकर घर लौटता है। बाद में पत्नी से अपमानित होकर युद्ध क्षेत्र में वापस आकर घमासान युद्ध करके वीरगती प्राप्त करता है। [1] ''प्रोलमराजा की सलाह सुनकर यादवराज मंत्रशक्ति का सहारा लेना चाहता है। इसलिए वे अपने खास साथियों के साथ (महामंत्रकार) महाजादूगर ब्रह्मरूद्रय्य के पास गये। ब्रह्मरुद्रय्या ने जो जादू किया उस के असर से राजा के तमाम ढोर मंत्रित होकर तेजगति से युद्धक्षेत्र में इधर-उधर दौडने लगे। फलत: तिक्कना की सेना को काफी नुकसान पहुँचा। हताश होकर सेनाधीश तिक्कना पराजित होकर घर लोट गये।'' यहाँ पर उपन्यासकार ने तिक्कना को वीर और धीरोधात साबित करना चाहा। लेकिन ऐतिहासिक घटना को जिंदा रखने के लिए उन को हराना भी जरूरी है। इसलिए मंत्रशक्ति या जादू के सहारे तिक्कना को पराश्त करने की घटना का वर्णन किया। यहाँ लेखक ने यह भी साबित किया कि यदि चाहते तो सेना गोहतया कर सकती है। परन्तु गोहत्या महापाप है। इसलिए तिक्कना की सेना प्राण त्यागने के लिए तैय्यार हो गई।

खड्गतिक्कन की मृत्यु के पश्चात विक्रमसिंहपुर की ओर शत्रुराजा आशा से देखने लगे। मनुमसिद्ध महाराज ने इस घटना के पश्चात विकलमन से प्रशासन की

---

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 310

ओर ज्यादा ध्यान देना छोड दिया। क्यों कि उन के मन में साहित्य के प्रति मोह बडने लगा। वे स्वयं निर्वचनोत्तर रामायण, महाभारत जैसे महान कृतियों की तरफ अत्यधिक ध्यान देने लगे। राजाज्ञ के कारण भाई खड्ग तिक्कना की मृत्यु की बात महामात्य तक नही पहूँची। राजा का राय है कि रचना के काम में कोई विघ्न न पहुँचे। उपन्यास के अंत में महामात्य तिक्कन की योजना के अनुसार ही राजा मनुमसिद्धि शत्रुराजाओं से अपने राज्य को बचाता है। इस घटना के वर्णन में उपन्यासकार ने काल्पनिकता का सहारा लिया। [1]"महराजा के रिश्तेदार अक्कना-बय्यना के षडयंत्र के कारण शत्रु सेना ने राजा को बन्दी बनाया। ऐसे समय में महामात्य की विनती से काकतीय राजा गणपतिदेव ने अपनी सेना सहित शत्रु राजा को हराकर, भगादिया और पूरे राज्य को तिक्कनाजी को तोफे के रूप में प्रदान किया। यहाँ पर उपन्यासकार ने काल्पनिकता का सहारालिया। तिक्कनाजी को उपहार के रूप में विक्रमसिंहपुर राज्य मिलना और उसे महामात्य राजा मनुमसिद्धि को फिर से वापसकरना काल्पनिक घटना है। यह सत्य है, कि काकतीय सेना की सहायता से ही राजा मनुमसिद्धी ने शत्रुसेना को हरादिया। उपन्यासकार ने कवि तिक्कना को महान बनाकर और पाठकों के सामने उच्छ राजनीतिज्ञ के रूप में रखने का प्रयत्न किया।"

4.3.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

श्री तुम्मलपल्लि रामलिंगेश्वरराव द्वारा लिखित यह रचना ऐतिहासिक उपन्यास है। आदि से लेकर अंत तक उत्सुकता से भरी रचना है। तिक्कना कवि के समय में घटित हर ऐतिहासिक घटना का वर्णन उचित ढंग से किया गया है। जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लेने से भी यह उपन्यास ऐतिहासिक रचना कहने योग्य है। तिक्कनजी को एक महाकवि ही नहीं बल्कि उत्तम राजनीतिज्ञ एवं महान यज्ञक के रूप में लेखक ने वर्णन किया। वास्तव में कवि तिक्कना का जीवन और सेनाधीश खड्गतिक्कना का जीवन एक दूसरे पर निर्भर है। इसलिए उपन्यासकार ने खड्गतिक्कन के जीवन संबंधी घटनाओं का भी वर्णन सही ढंग से किया।

1. तिक्कन सोमयाजि - श्री रामलिंगेश्वरराव - पृ. - 315

लेकिन इस सन्दर्भ में उन्हे काल्पनिकता का सहारा लेना पडा। वीरोचित घटनाओं का वर्णन करने में उपन्यासकार ने काल्पनिक अंशों का वर्णन किया। वस्तव में कवि तिक्कना और खड्ग तिक्कना के बीच भाई-भाई का रिश्ता है। उम्र में खड्गतिक्कना बडे हैं। इसलिए महामात्यजी उनके प्रति आदर और श्रद्धा दिखाते हैं। उपन्यासकार ने विक्रमसिंहपुर राज्य के प्रति आदर और श्रद्धा दिखाते हैं। राज्य के कायम से लेकर मनुमसिद्धि महराजा के काल तक घटित घटनाओं की झलक दी गई। उपन्यास में तिक्कनाजी की जीवनी के साथ-साथ महाभारत का अनुवाद करना भी प्रधान अंश हैं। उस वक्त राजदरबार में साहित्य-सेवा का प्रोत्साहन जिसप्रकार किया जाता था, उस का सोदाहरण वर्णन किया गया। इसलिए तिक्कना की साहित्य सेवा को भी प्रधान स्थान मिला।

अनुपात की दृष्टि से उपन्यासकार ने रचना को आगे बढाने के लिए जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लिया। कवि तिक्कना की पत्नी ''चिन चानम्मा'' के सन्दर्भ में, आरम्भ में ही लेखक ने काल्पनिक घटना का वर्णन किया। लेखक ने यह साबित किया भगवान की इच्छा के अनुसार ही विवाह होते हैं। आश्चर्य की बात यह है कि कवि तिक्कना और खड्ग तिक्कना दोनों भाई हैं और उन दोनो की पत्नियाँ भी बहिन है। महामन्त्री सिद्धना बुढापे के कारण पद त्यागना चाहता है। उन की बात से सहमत राजा भी अपना राजसिंहासन छोडकर तप करने वन की ओर प्रस्थान करता है। इस घटना के माध्यम से लेखक यह साबित करना चाहता है कि बुढापे में मानव को इहलोक संबंधी विषय भूलकर भगवान की भक्ति में तल्लीन होना उचित है। युवा पीडी को एक मौका देना अति आवश्यक है। तिक्कना की मृत्यु के समय में घटित घटनाओं के अभिवर्णन में भी लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। इस प्रकार आमतौर पर उपन्यासकार ने उचित ढंग से ऐतिहासिक घटनाओं का अभिवर्णन किया। इसलिए अनुपात की दृष्टि से यह एक सफल ऐतिहासिक घटना है।

4.4. कवि द्वयम

4.4.1. ऐतिहासिकता :-

यह उपन्यास दो महान कवियों की जीवनीयों पर आधारति रचना है। श्री नोरी नरसिंहशास्त्री जो ने श्रीनाथ और पोतनामात्य दोनों पर अपनी श्रद्ध व्यक्त की। वास्तव में श्रीनाथ की जीवनी के अंतिम समय के बारे में करुणरस प्रधान वर्णन हमे इस रचना में मिलता है। श्रीनाथ कवि के जीवनसे संबंधित अनेक विष्यों के बारे में विभिन्न विद्वानों के द्वारा लिखित अनेक आधार ग्रन्थों में वर्णित अनेक विषयों को प्रस्तुत उपन्यास में स्थान मिला है। ऐतिहासिक दृष्टी से ये विषय बहुत ही प्रधान है। उपन्यास का आरम्भ श्रीनाथ की दयनीय जीवन से होता है। [1]"श्रीनाथ अपने मित्र मुम्मडि शांतय्या के पास तीन साल से आराम के साथ जीवन बिता रहा है। उन के लिए राजश्रय तो नहीं। परन्तु शांत मन से श्रीनाथ साहित्य सेवा में तल्लिन होने लगा। वास्तव में उस वक्त कपिलेश्वर गजपति और राजमहेन्द्रवर के रेड्डिराजा के बीच युद्ध होरहा था। इस युद्ध के साथ ही श्रीनाथ के राजाश्रिति जीवन में आपत्ति आगई। राजा वीरारेड्डी ने आज्ञादी कि राजाश्रित कलाकारों के पास, जितनी संपत्ति है उसे राज्य उन्नती केलिए खर्च करे। आज्ञा के अनुसार श्रीनाथ ने तमाम संपत्ति वहाँ छोडकर अपने मित्र के पास कोनसीमा प्राँत चले गये। गाँव में एक किसान के रूप में जीवन बिताते हुए भी वह अपने राजा की विजय की आकाँक्षा करने लगे। दिन बीतने लगे। परन्तु अंत में गजपति राजा ने विजय प्राप्त की। विवश होकर रेड्डीराजा ने संधि करली। श्रीनाथ के पारिवारिक जीवन में भी बदलपन आगया। श्रीनाथ की प्रथम पत्नी श्रीदेवी और उस की बेटी दोनों चलबसी थी। पोते के नाम कुमारस्वामी है। उसकी देखरेख के लिए श्रीनाथ ने भूदेवी से दूसरा विवाह करलिया। "

अपनी बहिन श्रीदेवी की मृत्यु के पश्चात श्रीनाथ के परिवार से पोतना का परिवार बिछड गया है। लेकिन उन दोनों के मिलने के बारे में उपन्यासकार ने रोचक

---

1. कवि द्वयम - नोरी नरसिंह शास्त्री - पृ. - 15-17

ढ़ंग से वर्णन किया। [1] ''एक दिन शाम के वक्त महानकवि श्रीनाथ भगवान मल्लिकार्जुन का ध्यान करने लगा। श्रीनाथ कवि आँख मूँदकर ध्यान मुद्रा में बैठे थे। तब उसे ऐसा लगा, मानो कोई अजनबी श्रद्धा भक्ति सहित उस के सामने ही खडा है। श्रीनाथ के दर्शन से उस अजनबी के चेहरे पर आनंद उल्लास दिखाई देने लगे। बुढापे के कारण श्रीनाथ की नजर कमजोर होगई। इसलिए पोतना को पहचानने में वह असफल होगया। ध्यान से देखने पर उसे अजनबी के चेहरे में भगवान मल्लिकार्जन की रूपु रेखा दिखाई देने लगी। पोतना ने भावोल्लास के साथ एक मधुर पद सुनाया। श्रीनाथ ने उसे पहचान लिया। भावोध्वेग के साथ उन की आँखों से आँसू बहने लगे। पोतना ने अपनी माता लक्कमांबा पत्नी एल्लम्मा और पुत्र मल्लन्ना का परिचय कराया। सब ने श्रीनाथ के चरण स्पर्श किया। बाद में उस से बिदालेकर अपने लिए दियागया स्थान में आकर टहरे। लेकिन बार बार उन्हे बहिन श्रीदेवी की याद आने लगी। इसलिए उनका दर्शन लेने श्रीनाथ के घर गये। तब उन्हें यह मालुम हुआ कि श्रीदेवी चलबसी और श्रीनाथ ने भूदेवी के साथ शादी करली। भूदेवी ने पोतना को सादर सगे भाई की तरह घर के अन्दर आह्वान किया।''

तेलुगु साहित्य में पोतना द्वारा लिखित भागवत ग्रंथ का स्थान अद्वितीय है। वास्तव में महान कवि बनने की अभिलाषा, पोतना के अंदर, श्रीनाथ के प्रोसाहन से ही उत्पन्न हुई। इसविषय को उपन्यासकार स्पष्ट रूप से निम्मलिखित घटना के रूप में वर्णन किया। [2] '' पोतना, श्रीशौल पुण्यक्षेत्र में देवदर्शन के बाद श्रीनाथ के पास आये। दो दिनों तक दोनों के बीच अपनी रचनाओं के बारे में चर्चा हुई। श्रीनाथ द्वारा लिखित ग्रन्धों का अध्ययन करने के बाद पोतना उन्हे श्रीनाथ को लोटना चाहता है। परन्तु श्रीनाथ ने उन्हें पोतना को ही तोफे के रूप में भेंट किया। पोतना ने अपने द्वारा लिखित भगवान नारायण के पदों को सुनाया। उन्हें सुनते ही श्रीनाथ अपने मन ही मन उसे सराहने लगा। पोतना ने यह भी कहा कि अपने मन में दिन-

---

1. कवि द्वयम - नोरी नरसिंह शास्त्री - पृ. - 27-35
2. कवि द्वयम - नोरी नरसिंह शास्त्री - पृ. - 40-42

ब-दिन भगवान श्री कृष्ण के प्रति भक्ति और श्रद्धा बडने लगी। तब महात्मा श्रीनाथ उन्हे यह सलाह दी कि श्री कृष्ण की जीवनी पर आधारित भागवत ग्रन्ध का अनुवाद तेलुगु भाषा में करे। उन्हों ने यह भी आस्वसन दिलाया कि उसे जरूर सफलता मिलेगी। पोतना ने श्रीनाथ से कहा कि, क्या यह वश की बात है? क्यों कि भागवत का पढना ही बहुत मुश्किल है। ऐसी रचना का अनुवाद करना साधारण विषय नहीं है। तब श्रीनाथ ने कहा भागवत ग्रन्ध रचना से तुम्हारा जन्म धन्य होगा और उसे पढनेवाले का जीवन भी धन्य बनेगा। इसलिए बेशक का काम शुरु करो। इस प्रकार भागवत के आँध्रीकरण का शुरु करो। इस प्रकार भागवत के आँध्रीकरण का काम श्रीनाथ के प्रोत्साहन से ही हुआ है।''

श्रीशैल-क्षेत्र की यात्र पूरीकरके श्रीनाथ अपना गाँव बोड्डुपल्लि वापस आगया। जाने के पहले श्रीनाथ 700 सौ टंक सरकार को कर के रूप में चुकाने में असफल होगया। इस प्रकार कर के रूप में हर किसान को चुकाना है। जो किसान विफल होता है, उसे सजा बुगतना पडता है। श्रीनाथ के विषय में यही सिद्ध हुआ है। [1]''रात के वक्त रायस प्रभु ने अपने सलाहदार नागय्य को बुलाया और श्रीनाथ के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त की। नागय्य के मन में श्रीनाथ के प्रति विरोधभावना है। इसलिए श्रीनाथ के खिलाफ अनेक असत्य बातें बताकर उस ने राजा का कान भरदिया। राजा के मन में शंका उत्पन्न होगया कि श्रीशैलम राज्य की ओर से अपने राज्य की ओर कोई दुराक्रमण होने वाला है। इसलिए श्रीनाथ को उस ने एक जासूस समझा। बाद में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए ग्रामाधिकारी को बुलाया। उस ने कहा श्रीनाथ महाकवि, पंडित उत्तम ब्राह्मण, तपस्वी और अमीर भी है। परन्तु विधिवक्रित होने के कारण आज वह कंगाल होगया। पेट भरने के लिए ग्राम मन्दिर की भूमी को किराया पर लेकर व्यवसाय करने लगा। परन्तु खेद की बात यह है कि बाढ के कारण आधिक फसल नहीं मिला। इसलिए पिछले साल का किराया

1. कवि द्वयम् - श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि - पृ. - 70-75

दे नही सका। ग्रामाधिकारी के चलेजाने के बाद नागय्या ने कहा कि श्रीशैल राज्य में अपनी पांडित्य कुशलता दिखाकर श्रीनाथ ने बहुत धन कमाया। लेकिन उस धन में से किराया चुकाने के बिना सुखतर जीवन बिताना चाहता है।'' इस प्रकार श्रीनाथ पर राजा के मन में शंका भाव उत्पन्न होगया।

4.4.2. काल्पनिकता :

श्रीनाथ के जीवन में अंतिमदिन बहुत ही मुसीबतों में व्यतीत हुये। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि श्रीनाथ ने ऐश और आराम के साथ अपना आरम्भिक जीवन व्यतीत किया और कटिनाइयों को अंतिम दिनों में सामना किया। श्रीनाथ पर उत्पन्न शक दूर करने के लिए और भूमी का कर्ज वापस वसूल करने के लिए राजा ने श्रीनाथ को अपने दरबार में सादर आह्वान किया। [1] ''रायस प्रभु ने अमरावती नगर में आयोजित विशेष कवि सम्मोलन में श्रीनाथ का सादर आह्वान करते हुये न्योता भेजदिया गया। कवि सम्मेलन का नाम सुनते ही श्रीनाथ का चेहरा खिलउठा। इसलिए प्राचीन वैभव के अनुसार श्रीनाथ ने कीमतीवस्तु धारण किया। कश्मीर का मूल्यवान रेश्मी दुशाल ओडलिया। ललाट पर गोरोचन तिलक लगाया जो ज्ञान नेत्र की तरह दिखाने लगा। गले में रुद्राक्ष माला पहनलिया। गहने के संदूक जो पहनने केलिए सोने के आभूषण एक भी नहीं है। भगवान के मंदिर में जाकर उसका स्मरण किया। मंदिर के बाहर उसकी पत्नी भूदेवी इन्तजार करने लगी। श्रीना को समारोह में भागलेने से रोकना चाहती है। क्यों कि उसका मन कहने लगा कि कोई आपत्ति आनेवाली है। उस को रोकने केलिए भूदेवी ने उसके चरण पकडकर अनुनय विनय की। लेकिन श्रीनाथ का मन अचंचल है। अब तक वह इतना ही सोचता रहा कि भूदेवी के मन में अपने प्रति प्रेम नहीं स्वार्थ भाव है। लेकिन इस घटना से यह मालूम हुआ कि वह कितना चाहती है और उसके मन में पति के प्रति प्रेम ही है, स्वार्थ नही। कल रात उस ने एक बुरा सपना देखा जिस में श्रीनाथ का धोर अपमान हुआ था।

---

1. कवि द्वयम् - श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि - पृ. -93-97

परन्तु श्रीनाथ ने उसे स्वांतना दिया और धीरज बाँधा। घर के आँगन में आकर श्रीनाथ के शिष्य ने कहा कि रायस प्रभु ग्रामाधिकारी को बुलाकर श्रीनाथ के द्वारा चुकाने वाले कर के बारे में पूछा। सात सौ सोने के सिक्के के लिए उसे बन्दी बनाने की बात राजा सेचरहा था। यह समाचार सुनकर श्रीनाथ गम्भीर होगया। इतने में उस का बेटा उसे देखकर चकित होगया। क्यों कि वह पहलीबार इस वेष में अपने पिता को देखरहा था। उसे देखते ही कवि का मन अनंद से भर गया। उसे चुम्बन किया। भगवान पर भरोसा रखकर कवि ने राज दरबार की ओर प्रस्थान किया।''

कवि सम्मेलन में भागलेने अनेक कवि राज दरबार में आपहुँचे। महान कवि श्रीनाथ भी वहाँ गये और अपने लिए निर्धारित उचित स्थान पर उपस्तित हुये। दुपहर तक अनेक कवि अपनी कविताएँ और अपने अनमोल पद सुनाते रहे। लेकिन श्रीनाथ ने मौनधारण किया। भोजन का विराम होनेवाला ही है, उसी वक्त श्रीनाथ ने ही सुनादिया। सभी कवि भोजनशाला की ओर जाने लगे। इतने में वहाँ पर घुडसवार सिपाही आगये। उनका अनुरोध है कि श्रीनाथ से सात सौ रूपये कर वसूल करे। यह ऐतिहासिक सत्य है कि श्रीनाथ को बन्दी बनाना और अपमान करके रास्ते पर घसीटता लेजाना। [1]''राजा के दरबार में जहाँ कवि सम्मेलन हो रहा था, वहाँ तमाम् सिपाही अपने हथियार सहित श्रीनाथ कवि को घेर लिया। फिर भी श्रीनाथ निडर और निश्चल खडे थे। सिपाहियों ने उन्हे जंजीरों के साथ बन्दी बनादिया। राजा ने फिर एक बार पूछा कि वे कर्ज चुकाने तैय्यार थे या नहीं। यह दृश्य देखकर तमाम पंडित कविगण अवाक रहगये। तुरन्त उन्हों ने इस घटना का खण्डन किया। उन्हों ने राजा के द्वारा दियेगये उपहारों को तिरस्कार किया। तमाम् विद्वान लोग राजदरबार से बाहर आकर एक मंदिर में समावेश होकर यह निर्णय लिया कि किसी भी तरह पैसे इकट्ठा करके कवि श्रीनाथ को छुडवादे। तुरन्तु एक हजार सोने के सिक्के इकट्टा किये गये। इसी बीच कडी धूप में श्रीनाथ कवि बोझ ढोते हुए सजा

1. कवि द्वयम् - श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि - पृ. - 100-107

भुगत रहा है। दयनीय स्थिति में श्रीनाथ को देखकर एक कवि के मुह से करुणरस पद व्यक्त हुआ। उसे सुनकर अन्य कवि भी वृद्ध कवि के साथ देने लगे।'' इस घटना के बारे में सुनकर पोतना का मन विचलित होगया। इसलिए अंतिम दिनों में वृद्ध कवि श्रीनाथ को पोतना अपने साथ रखना चाहता है। इसकी इच्छा के अनुसार ही श्रीनाथ ने अपना अंतिम समय पोतनामात्य के पास व्यतीत किया। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में श्रीनाध के अंतिम जीवन के साथ-साथ पोतना की जीवनी भी है।

श्री नोरी नरसिंह शास्त्री के द्वारा लिखित ऐतिहासिक उपन्यासों में से यह विशेष उपन्यास है। इस में दो महान कवियों की जीवनियोंका विश्लेषण है। श्रीनाथ के अंतिम समय का करूण रस प्रधान विश्लेषण और पोतना कवि का आरम्भिक जीवन का भी विवरण है। यह सत्य है कि इतिहास के आधार पर उपन्यास लिखने के लिए काल्पनिकता का सहारा लेना आवश्यक है। इसलिए प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। रेड्डिराज वंश के बाद श्रीनाथ का जीवन दुर्भर होगया। ओड्डेर राजवंश के दरबार में श्रीनाथ कवि के लिए स्थान नहीं। इसलिए विवश होकर श्रीनाथ ने किसान का व्यवसाय ग्रहण किया। परन्तु प्राकृतिक बाधाओं के कारण दो सालों से श्रीनाथ खेत का कर्ज, सरकार को चुकाने में असफल होगया। हर वर्ष कर्ज का रकम बढ़ने लगा। हर वर्ष उसे सात सौ सोने के सिक्के जमा करना पडता है। परन्तु अब चौदह सिक्के जमाकरना पडता है। खेतीवाडी की आमदनी उस के लिए पर्याप्त नहीं है। क्यों कि कृष्ण नदी के बाढ के कारण उसे काफी नुक्सान पहुँचा। भगवान श्रीशैल मल्लिकार्जुन के दर्शन करने श्रीनाथ अपनी दूसरी पत्नी भूदेवी और पुत्र सहित गया। वहाँ उन्हे यह समाचार मिला कि उस के व्यवहार में राजा बहुत ही नाराज है। उसे किसी भी वक्त गिरफ्तार करने वाले है। यह समाचार सुनकर श्रीनाथ चिन्ताग्रस्त होगये। उस वक्त अपने आप को रिश्तेदार बताकर सुब्बम्मा नामक बुढ़िया ने घर में प्रवेश किया। दो महीने तक रहकर उस ने घर संभाला। श्रीनाथ भी शांत मन से भगवान का ध्यान करता रहा। वह घर के तमाम् काम अकेले ही करती थी। छोटे बच्चे का लालन-पालन करना, भूदेवी के काम

करना और श्रीनाथ के पूजा पाठ की देख-रेख करना भी उस के हाथों से होने लगे। दो महीनों के बाद वह श्रीशैल महाक्षेत्र छोडकर चलीगई। यह लेखक के द्वारा कल्पित घटना है। इस घटना के द्वारा लेखक यह साबित करना चाहता है कि श्रीनाथ कर्ज की बात भूलचुका है। यह काल्पनिक घटना है।

[1]"प्रति दिन पूजापाठ करना श्रीनाथ की आदत है। एकदिन सुबह उन्हों ने एक सपना देखा। सपने में उन्हें एक आवाज सुनी की कोई अजनबी पलनाटि वीरचरित्र की कहानी लिखने के बारे में पूछरहा है। इसके बाद तुरन्तु कवि जाग उठे और अपनी पूजा पाठ करने भगवान के मंदिर में गये। स्नानादि काम पूराकरके मंदिर में जाकर ध्यान करने लगे। परन्तु कुछ समय के बाद आँख मूँदकर ध्यानमुद्रा में बैठे श्रीनाथ को ऐसा मेहसूस होने लगा, मानो कोई व्यक्ति उन के सामने खडे हैं। इसलिए कवि ध्यान भी नही करसके। श्रीनाथ की आँखे खुलगई। सचमुच उसके सामने एक अजनबी कुछ माँगने संसिद्ध खडा है। उसे देखते ही श्रीनाथ ने पूछा कि उसे क्या चाहिए? अजनबी ने कहा कि पलनाटी वीरचरित्र लिखने की इच्छा उस के मन में उत्पन्न हुई है। श्रीनाथ को ऐसा मेहसूस हुआ कि स्वयं भगवान श्री चेन्नकेशव स्वामीजी ने ही लिपिक को उसके पास भेजा है।" यह काल्पनिक घटना है। उपन्यासकार ने कहानी को आगे बढाने के लिए और भविष्य वस्त को स्वप्न के सहारे हमारे सामने प्रस्तुत करने के लिए काल्पनिकता का सहारा लिया। यह ऐतिहासिक सत्य है कि श्रीनाथ का धोर अपमान हुआ। परन्तु उसे एक स्वप्न के माध्यम से पहले ही पाठकगण तक पहुँचाना चाहता है। "श्रीनाथ को कवि सम्मेलन में भागलेने के लिए आह्वान पत्र मिलता है। लेकिन सुबह उनकी पत्नी ने नींद में एक बुरा सपना देखा। उस में श्रीनाथ का घोर अपमान हुआ था। इसलिए वह अपने पति को वहाँ जाने से रोकती है। परन्तु सम्मेलन में भाग लेने के लिए श्रीनाथ तैय्यार होता है। विलपने वाली अपनी पत्नी को वह स्वांतना देता है । वास्तव में श्रीनाथ

1. कवि द्वयम - श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि - पृ. - 55

ने भी एक बुरा सप्ना देखा। उस में कवि को एक वैषीली साँप ने ढंसलिया। उसका शरीर अचेतन होगया। उस वक्त वह तालाब में नहा रहा था। तुरन्त उसे होश आया तो अपने आप को उस ने बिस्तर पर देखा। सुबह होगया था। वह जानता है कि कोई बुरी घटना घटनेवाली है। लेकिन धीरज बाँधकर उसने अपनी पत्नी को समझाकर कवि सम्मेलन में भागलेने राजमंदिर की ओर प्रस्तान किया। यह एक काल्पनिक घटना है। लेकिन उपन्यासकार ने बहुत ही रोचक ढंग से वर्णन किया। स्वप्न के सहारे कथावस्तु का झलक दिखाना एक खास लक्षण है।''

हर एक किसान का यह कर्तव्य है कि फसल उत्पादन के बाद भू-कर चुकाना। परन्तु किसान का काम करनेवाला श्रीनाथ यह भूल जाता है। लेकिन इसका एक कारण यह है कि दो सालों से प्राकृतिक बाधाओं के कारण उसे पर्यप्त आमदनी नहीं मिली। एक महान कवि और उत्तम नागरिक के रूप में अब तक वह रहचुका था। लेकिन कर चुकाना मात्र वह भूल जाता है। इतना ही नहीं अपनेलिए राजा के द्वारा दीगई बहु मूल्य चीजों को भी वह ध्यान नहीं देता। [1]''कवि सम्मेलन में ही उन चीजों को वह याद करके एक बहु मूल्य अंगूठी कर चुकाने के लिए राजा के पास भेजता है। इतना ही नहीं उसके साथ ही एक रेश्मी कीमती दुशाल भी राजा को तोफे के रूप में रखने को भेजता है। यह एक काल्पनिक घटना है। एक उत्तम नागरिक का कर्तव्य है कि उसे कानून का सहीं पालन करना। परन्तु लेखक ने उपन्यास को रोचक बनाने के लिए आगामी घटना को दृष्टि में रखकर काल्पनिकता के सहारे इस घटना का वर्णन किया। एक साधारण कवि और किसान राजा को दुशाल देना असहज है। इसलिए राजा नाराज होजाता है। वह समझता है कि कवि श्रीनाध घमंड होकर, जानबूझकर ही कर चुकाना नहीं चाहता। इसलिए वह श्रीनाध को सजा देता है।'' श्रीनाथ की मृत्यु के बारे में एतिहासिक तथ्य उपलब्द न होने के कारण उपन्यासकार ने काल्पनिकता के सहारे एक घटना का वर्णन किया। [2]''श्रीनाथ के

---

1. कवि द्वयम् - श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि - पृ. - 77
2. कवि द्वयम् - श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि - पृ. - 102

मन में महाप्रस्थान का भाव उत्पन्न हुआ। मृत्यु के बाद एक लाश का अंतिम संस्कार किया जाता है उसीप्रकार का संस्कार श्रीनाथ जीते जी आरम्भ किया। उसके पास पोतना और दग्गना भी मौजूद है। यह समाचार सुनकर अनेक लोग कृष्णा नदी के किनारे जमा होगये। लोगों के साथ पोतना और दग्गना भी अवाकर होकर देख रहे थे। पूजा-पाठ होने के बाद श्रीनाथ उठ खडे होगये और नदी के प्रवाह को अंदर चल पडे। देखते-देखते ही वे अदृश्य हो गये। यह एक काल्पनिक घटना है। उपन्यासकार स्वयं यह भी मानता है कि कवि की मृत्यु के बारे में उचित सामाग्रि इतिहास में अनुपस्तित है।''

भूदेवी के सति-कार्य के बारें में भी उपन्यासकार ने काल्पनिकता का सहारा लिया। इस प्रकार जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लेते हुये लेखक ने उपन्यास को रोचक ढंग से पूरा किया।

4.4.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

श्री नोरि नरसिंह शास्त्री द्वारा लिखित जीवनीपरक उपन्यासों में ''कविद्वयम'' एक विलक्षण रचना है। क्यों कि इस में दो महान कवियों की जीवनीयों का तुलनात्मक वर्णन है। ये दोनों महाकवि तेलुगु साहित्य में बेशक अग्रगण्य है। दोनों की उम्र में करीब बीस-पच्चीस साल का अंतर होने पर भी दोनों समकालीन थे। पोतना के पदों में श्रीनाथ की छाया दिखाई देती है। दोनों कवि परम शिव भक्त है। दोनों कवि बहुमुख प्रतिभा दिखानेवाले और श्रृंगार वर्णन में प्रवीण थे। पोतना सीदासादा व्यक्ति और सहज पंडित थे। लेकिन श्रीनाथ विलासी थे। समीक्षकों की दृष्टि में दोनों कवि नियोग ब्राह्मण थे। परन्तु स्वभाव की दृष्टि से, उस की रचनाओं में अभिव्यक्त वर्णन शैलि और भावों के आधार पर लेखक ने उन दोनों को वैदिक ब्राह्मण सिद्ध किया। आचार-विचार की दृष्टि से भी दोनों में वैदिक लक्षण गोचर होते हैं। इस प्रकार लेखक ने दोनों की जीवनीयों को अनेक ऐतिहासिक आधारों पर एक सुंदर रचना का रूप दिया।

4.5. धूर्जटि

4.5.1. ऐतिहासिकता :-

श्री नोरि नरसिंह शास्त्री द्वारा लिखित अनमोल रचनाओं में 'धूर्जटि' एक है। इस महान कवि का जन्म श्री कालहस्ति पुण्यक्षेत्र में हुआ है। बहुमुख प्रज्ञावन श्री धूर्जटि कवि का परिवार, किसान परिवार है। विशाल भूसम्पत्ति से वे सुभिक्ष हैं। परिवार के पूर्वज, व्यवसाय-क्षेत्र में जीवन बितानेवाले होने पर भी धन दौलत की कमी न होने पर भी धूर्जटि, राजाश्रय प्राप्त करना चाहता है। इसलिए वह अपनी पत्नी ज्ञान प्रसूनाम्बा के साथ विजयनगर पहुँचता है। भगवान की दया से उस ने राजा श्री कृष्णदेवराय के सम्मुख अपनी पांडित्य कला प्रदर्शन से तमाम सभा-सदस्यों को प्रभावित किया। उस की कविता संपत्ति से रीझकर सम्राट ने धूर्जटी कवि अपने दरबार के अष्ठ दिग्गजों में स्थान दिया। धूर्जटि ने अपनी बेटी भारती विवाह अपने ही रिश्तेदार वेंकटेश्वरराव के साथ किया। श्रीकालहस्ति में घर-करोबार उन्ही को सौपकर, धूर्जटि विजयनगर आकर अपनी पत्नी सहित आराम से जीवन बिताने लगे। [1] ''वह महान कवि ही नही परम शिव भक्त भी है। उस की भक्ती भावना का एक उदाहरण यह घटना है। वह कभी कभी वेश्या वाटिका में जाता है। वहाँ मोहिनी नामक एक वेश्या के साथ वह सुख भोगता है। एकबार जब वह मोहिनी के कमरे में सो रहा था। उसी वक्त घंटानाद सुनाई दी। तुरंत वह जाग उठा। वह किसी भी चीज को शिवलिंग मानकर पूजा करना चाहता है। उस की आँखों के सामने विवस्त्र वेश्या मोहिनी सो रही है। उसके वक्षस्थल को शिवलिंग मानकर धूर्जटि ने शिवपूजा की। जाग उठी मोहिनी की ज्ञान नेत्र खुलगई। वह भी शिव भक्तिन बनगई।'' यह ऐतिहासिक स्तय है कि धूर्जटि परम शिव भक्त है। समय के अनुसार निर्विघ्न शिव पूजा करना उसकी आदत है। एकबार ऐसी विचित्र घटना घटी जिस से वेश्या भी भक्तिन बनगई। उपन्यासकार ने इसे रोचक ढंग से वर्णन किया।

---

1. धूर्जटि- श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि - पृ. - 14

[1] " एक बार धूर्जटि, रुद्र याग में व्यस्त है। वह भूलजात है कि आज ही, एक आवश्यक बैठक राज दरबार में होने वाली है। वहाँ अष ठ धिग्गजों का उपस्थित होना अति आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। यह बैठक बहुत दिनों के पहले तैय हुई है। वास्तव में धूर्जटि यह विषय भूलचुका है। इसलिए वह रुद्रयाग में तल्लीन होकर बैठा है। एक दिन तक यह याग चलता रहा। सम्राट ने धूर्जटि को लेकर राज दरबार में लाने, सिपाहियों को भेजा। परन्तु वहाँ का दृष्य देखकर वे वापस चले गये। गलतफहमी से सम्राट ने गुस्से में आकर कवि को देश बहिश्कार का दंड दिया। परन्तु तेनालि रामलिंग कवि ने राजा के सामने जाकर रुद्र याग का विषय बता दिया। धूर्जटि ने जो रूद्र याग किया, उस के प्रतिफल में राज्य सुबिक्ष और समृद्ध रहेगा। तमाम रहस्य खुलजाने के बाद राजा ने धूर्जटी कवि को सादर अपने भुवनविजय दरबार में आह्वान किया।" श्रीकृष्ण देवराय और तिरुमलाम्बिक का एक लोता सन्तान तिरुमलराय है। उसे बहुत लाडप्यार के साथ, वे देख-रेख करते हैं। सात साल की उम्र में ही उसे युवराजा धोषित करने महाराज श्रीकृष्ण देवराय तैय्यार होता है। वह सदा महामात्य तिम्मरुसु को पितासमान मानकर अप्पाजी नाम से पुकारता है। इसलिए अपनी इच्छा सबसे पहले उन के सामने व्यक्त करता है। परन्तु अप्पाजी ने राजा को समझाया कि यह सही वक्त नही। यदि तरुिमलराय को युवराज घोषित करे तो उसे शत्रुलोग खतम करने का प्रयत्न करेंगे। इसलिए सही समय में सुमुहरत देखकर युवराजा घोषित करना उचित है। आज तक श्रीकृष्ण देवराय ने कभी भी अप्पाजी की बात इनकार नही की। परन्तु पहली बार उस ने अप्पाजी की बात तिरस्कार की। बिना उसे पूछे, सम्राट ने वारिस के रूप में युवराजा के पद पर अपने पुत्र तिरुमलराय को प्रतिष्टित किया। विवश होकर अप्पाजी ने बालक को अशीर्वाद दिया।

---

1. धूर्जटि- श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि - पृ. - 25

4.5.2. काल्पनिकता :

'भुवनविजय' प्रासाद में कविसम्मेल आयोजित हुआ। महराजा ने धूर्जटि के पदो से बहुत सन्तुष्ट और प्रभावित होकर उसे उपहार के रूप में काफी धन दिया। रिश्तेदारों के षडयंत्र से धूर्जटी कवि के दामाद वेन्कटेश्वरराव और पत्नी भारती दोनों गाँव छोडकर विजयनगर आगये। वे दोनों कवि के घर में रहने लगे। इसीबीच कर्नाटक प्राँत में एक विचित्र घटना घटी है। [1] "श्रीनिवासराव नामक व्यापारी ने बहुत घन कमाया। सुखतर जीवन बीतने वाले उस व्यापारी के सपने में एक बार भगवान पंडरीनाथ प्रत्यक्षहोकर, अपनेलिये एक मंदिर बनाने की आज्ञा दी। तुरन्त वह जागउटा और सोचने लगा। वास्तव में वह बहुत ही कंजूस है। किसी को दान नहीं देता था। लेकिन भगवान के दर्शन से वह पूरी तरह बदलचुका है। अपनी सरी कमाई से उस ने विशाल मंदिरों का एक नगर बनवाया, जिसका नाम पंडरीपुरम रखागया है। आज भी कर्नाटक में पंडरीपुरम एक प्रत्येक नगर है। उस नगर में पांडुरंग देवालय मशहूर मंदिर है। व्यपारी श्रीनिवास पूरीतरह बदलगया है। वह अपना नाम बदलकर पुरंधरदास बन गया। कर्णाटक साहित्य में पंडरीनाथ नामक महान भक्त बनगया है। कर्णाटक साहित्य में इस का प्रत्येक स्थान है।" समय बीतने लगा। अप्पाजी ने जो अन्दाजा लगाया उसके अनुसार बालक युवराज तिरुमलराय को शत्रुलोगों ने खत्म किया। दुर्भाग्य की बात यह है, कि यह इलजाम अप्पाजी पर लगाया गया। भरी दरबार में अप्पाजी को बन्दी बनाकर अपमानित करते हुये सिपाही उसे कारवास में खैद किया। राजा ने मौन धारण किया। अप्पाजी के खिलाफ षडयंत्र कियागया है। सबूत भी कल्पित मिले हैं। विवश होकर तमाम अष्ट दिग्गज कविगण ने राजा को समझाने का प्रयत्न किया। लेकिन विफल होगये।

---

1. धूर्जटि- श्री नोरि नरसिंहशास्त्रि - पृ. - 57

4.5.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

धूर्जटि ने भी राजा को समझाने का प्रयत्न किया। लेकिन विफल होगया। तेनालिराम लिंगम ने जो प्रयत्न किया, उसे प्रतिफल में कारावास मिला। धूर्जटी ने धीरज बाँधकर द्वंद्वार्थ में व्यंग्य करते हुये एक पद के सहारे राजा के दुष्कार्य का खण्डन किया। फलतः राजा ने उसे सपरिवार देश भहिष्कार किया। परम शिव भक्त धूर्जटि अपने परिवार सहित शिवस्तान और महापुण्यक्षेत्र श्रीकालहस्ति में जा बसना चाहता है। यह समाचार पहले ही वहाँ के राजा तक पहुँचजाता है। वह अपने आप को धन्य मानकर कवि परिवार को अपने नगर मे सादर आह्वान करता है। धूर्जटि कवि के साथ 'सिरिलूत' नामक महान शिल्पकार भी विजयनगर छोडकर कवि के साथ यहाँ आकर एक भक्त शिष्य के रूप में जीवन बिताने लगे। राजा ने कवि से अनुरोद किया कि भगवान शिव पर एक महाकाव्य की रचना करे। कविवर भी सोचने लगे कि इस महान पुण्य क्षेत्र में एक महान काव्य की रचना संभव होगा। यहाँ आने के पश्चात वेंकटेश्वरराव और भारती का पारिवारिक जीवन सुधारगया है। वे दोनों मिलकर खुषतर जीवन बिताने लगे। इसीबीच रात के वक्त, सपने में कविवर को वृद्ध दंपति के रूप में शिव-पार्वति का दर्शन हुआ। उन की आज्ञा भी यही है कि शिव पुराण लिखा जाय। इस प्रकार सब के प्रोत्साहन से धूर्जटी कवि ने एक महान काव्य लिखा, जिसका नाम 'श्री कालहस्तीस्वर महत्यम' है। यह महान शिव पुराण है। समय बीतने लगा। विजयनगर साम्राज्य में विप्लव हुआ। अच्युतराय, सम्राट बन चुका है। कवि ने इस पुराण ग्रन्थ को स्वामीजी को सौपना चाहता है। इस सन्दर्भ में महा उत्सव मनाया जाता है। उस में भाग लेने स्वयं सम्राट अच्युतराय आता है। उस ने कवि को सपरिवार अपने राज्य में फिर वापस आने के लिए अनुरोद किया। परन्तु कवि अपना अंतिम समय शिवक्षेत्र में शांति के साथ बिताना चाहता है। इसलिए वह इनकार करता है। नरसिंह स्वामी का शिल्प बनाने राजा ने सिरिलिपि शिल्प का आह्वान किया है। कवि के प्रोत्साहन से उस ने वहाँ जाकर, मंदिर बनाता है। इस प्रकार बुढ़ापे में प्रशांत जीवन बिताते हुये वह परलोक सिधर जाता है। यह एक सफल ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है।

4.6. नारायण भट्टु

4.6.1. ऐतिहासिकता :-

यह उपन्यास श्री नोरि नरसिंहशास्त्री द्वारा लिखित है। नारायण भट्टुजी का पूरा नाम **'नन्नि नारायण भट्टु'** है। उसके पिताजी का नाम अकलंक शंकरामात्य है। दक्षिण भारत के मशहूर राज्यों में कल्याणकटकम एक है। उस के राजा तैलोक्यमल्ल देवर के पास भट्टजी के पिताजी अमात्य के रूप में काम करते थे। उस जमाने में जैन धर्म का प्रभाव अधिक रहा था। राजा भी जैन धर्म के उपासक होने के कारण सम्पूर्ण राज्य में उस धर्म का प्राबल्य व्याप्त होगया था। जन्मत: नारायण में वैधिक धर्म के प्रति श्रद्धा है। इसलिए पिताजी से विमुख होकर देशाटन करने निकल पडता है। अंत में राजमहेंद्रवरम में आकर वहाँ अपनी पत्नी सहित जीवन बिताने लगता है। उसकी पत्नी और पुत्री दोनों रमेश्वर तीर्थस्थान देखना चाहती है। इसलिए उन दोनों को मोटुपल्लि नौकाश्रय से बिदकरता है। उन की देखरेख के लिए अपने शिष्यों को भी भेजता है।

उस वक्त राजमहेंद्रवरम राज्य का राजा राज-राजनरेंद्र है। उस की पत्नी का नाम 'अच्यगदेवी' है। एक दिन भगवान के मंदिर में महारानी की मुलाकात नारायण भट्टु के साथ होती है। वह अपने आप को नत्तिनन्नु नाम से परिचय देता है। इस प्रकार महरानी का कृपा पात्र होकर दरबार में भी आश्रय प्राप्त करता है। हर साल राजमहेंद्र में भिन्न-भिन्न कलाओं का प्रदर्शन होता है। उस प्रदर्शन में भागलेने देशविदेशों से अनेक कलाकार, भिन्न-भिन्न खेल-कूदों में भाग लेने खिलाडी भी आजाते हैं। इन प्रतियोगिताओं में राजकुमार राजेन्द्रदेव और कामराज पुत्र, दोनों समान स्थर पर आजाते है। अब इन दोनों के बीच प्रत्योगित होती है। ठग विध्या के प्रभाव से कामराज जीतना चाहता है। फलत: राजेन्द्रदेव के बाण से नारायणभट्ट घायल होता है। लेकिन बाद में रहस्य खुलजाता है। नारायण की बात मानकर ठग करनेवाले कामपुत्र को सजा दी जाती है। राजकुमार को निर्दोष साबित करने वाले नत्तिनाबु को सब लोग नारायणभट्टु के रूप में पहचानकर उस का सम्मान करते हैं।

4.6.2. काल्पनिकता :

नारायण और नन्नय्या दोनों सह विद्यार्थी थे। अब दोनों एक ही राजाश्रय में काम करने लगे। न्याय सलाहकार और अमात्य के रूप में नारायण और दरबारी कवि के रूप में नन्नय्या दोनों राजमहेंद्र राज्य की शोभा बढ़ाने लगे। ये दोनों काँचीपुरम महाविद्यालय में एक साथ छात्रावास में रहकर शिक्षा ग्रहण करचुके थे। जब से अमात्य के पद पर नियुक्त हुये, तब से नारायण के स्वभाव से राजा और रानी के साथ बाकी प्रमुख राजवंशज भी संतुष्ट हैं। खासकर राज दंपत के प्रीतिपात्र बनगया है। तीर्थयात्रा से लौटनेवाले नारायण की पत्नी और पुत्री, दोंगलमर्रि नामक प्राँत में डाकुओं ने बन्दी बनादिया। लेकिन यह विषय अमात्य नारायण को पता नहीं। राजमहेन्द्र राज्य के सीमाप्राँत के सामंत राजाओं से 'धारवर्ष महराज' विद्रोह करके अपने आप को स्वतंत्र घोषित करदिया। उसे आदर्श मानकर अन्य सामन्तराजा भी दुराक्रमण करने संसिद्ध होने लगे। विद्रोह को दबाने के लिए सम्राट राजराजनरेंद्र अपनी सेना सहित जाने के लिए तैय्यार होने लगा। उसी वक्त अमात्य नारायण ने सम्राट को एक सलाह दिया कि राजकुमार को विद्रोह को दबाने का काम सौंप दिया जाय, जिस के सहारे वह अपने आप को भविष्य सम्राट सिद्धकरके दिखायेगा। नारायण का सुजाव, सम्राट को अच्छा लगा। उस ने तुरन्तु राजकुमार को अपने पास बुलाकर यह काम सौंपदिया। लेकिन सम्राट का मन संशय व्यक्त करने लगा। इसलिए राजकुमार के साथ युद्धनीति में प्रवीण, अमात्य नारायण को भी भेजदिया। सम्राट का अन्दाज सही निकला। नारायण की युद्ध नीती के प्रभाव से उस की योजनाओं के अनुसार एक-एक विद्रोह को अंतकर दिया गया है। अंत में विजयश्री प्राप्त होगई। वापस आने वाले सिपाहियों को बीच जंगल में डाकूओं के कब्जे में बन्दी बने अमात्य की पत्नी और पुत्री भी मिलगई। भगवान की दया से अमात्य को अपनी पत्नी और पुत्री वापस मिलगई है।

4.6.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

इस प्रकार 'चक्रकोट' मंडलादीश को हराकर वहाँ के विद्रोह को दबाने में नारायण की तंत्रनीति बेमिसाल है। सम्राट ने जो काम सौपदिया उसे अमात्य नारायण ने राजकुमार के साथ ठीक तरह से निभाया। सम्राट की सहमती से नारायणामात्य ने राजकुमार की शादी करने के लिए एक लडकी ढूँड लिया। यह रिश्ता राजनैतिक लाभ से युक्त है। युद्ध में हारनेवाले मंडलादीश की बेटी 'विंध्यवासिनी' बहुत ही सुन्दर और सुशील लडकी है। यदि राजकुमार की शादी इस लडकी से होती है तो वह मंडलादीश स्वयं अपने दामाद पर युद्ध करने या सम्राट के खिलाफ विद्रोह करने का साहस नहीं कर सकता। नारायण ने यह राजनैतिक योजना बनादिया। इस योजना के बारे में पूरी तरह जानकारी प्राप्त करने के पश्चात सम्राट बहुत ही खुश होगये। नारायण के नेतृत्व में उस की योजनाओं के अनुसार विजयश्री के साथ नव विवाहित दुल्हन को भी साथ लेआने वाले राजकुमार का स्वागत धूम-धाम से कियागया है। पूरा राजमहेंद्रवर नगर रंग-बिरंगे फूल-पत्तों से सजाया गया है।

समय बीतने लगा है। एक दिन नारायण ने राजा के सामने भरे दरबार में यह सुजाव किया कि नन्नय्या कवि के द्वारा महाभारत की रचना तेलुगु में हो जाय। राजा ने इसे प्रोत्साहन दिया। नारायणामात्य के निरीक्षण में 'सोमयाग' शुरु हो गया। नारायण की पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। महाभारत की रचना शुरु होगया। लेकिन तीन अध्याय पूरे होते ही अस्वस्त होकर नन्नय्य का स्वर्गवास होगया। सोमयाग रूकगया। नारायण का मन विचलित होगया। इसलिए सन्यास ग्रहण करके कानन में चलेगये। घने जंगलों में ही उनका देहान्त होगया। इस प्रकार यह एक सफल जीवनीपरक ऐतिहासिक उपन्यास है।

4.7. आन्ध्रकविता पितामहुडु

4.7.1. एतिहासिकता :-

श्री आंजनेयुलु द्वारा लिखित एक अनुपम रचना 'आन्ध्रकविता पितामहुडु' है। यह उपन्यास 'अल्लसानी पेद्दन्ना' की जीवनी पर आधारित रचना है। ई. 1509 से 1525 तक-सोलह साल का इतहास प्रस्तुत उपन्यास में पूर्णरूप से वर्णित है। विजयनगर के राजा वीरनृसिंहराय का स्वास्थ्य बिगड जाता है। राज वैध्य भी कहते हैं कि राजा अब इस दुनिया के कुछ ही दिनों का मेहमान है। देश विदेशों से आये वैद्यों ने यह साफ साफ कहदिया कि राजा की मृत्यु निश्चित है। [1] " तब राजा ने महामात्य तिम्मरुसु को अपने पास बुलाया और एकांत में दर्द स्वर में इस प्रकार कहा महामंत्रि जी अब मेरी चिंता छोड दीजिये। मंत्रि ने कहा, राजा आप जल्दी टीक हो जायेंगे। लेकिन राजा ने मंत्रि की बात की तरफ ध्यान तक नहीं दिया और उसने फिर से कहा - मेरे पश्चात मेरे वारिस और मेरे पुत्र तिम्मराजुरायल को राजा बनाओ। मुझे वचन दो कि किसी भी स्थिति में मेरे राज्य और मेरे पुत्र को क्राँति करने वाले मेरे भाई अच्युतराय से बचाओ। महामंत्रि ने राजा को वचन दिया- राजा। जब तक मैं जिंदा रहूँगा तब तक तिम्मरायलु की और राज्य की रक्षा करता रहूँगा। इस प्रकार कहते हुये तिम्मरायल को अपने पास बिठाया। उसी वक्त राजा की आँखें में आनन्द के आँसू दिखाई दिये" यह एतिहासिक घटना है कि वीरनृसिंहराय की मृत्यु के समय में एक तरफ अच्युतराय राज्यधिकार के लिए काँति करने के लिए संसिद्ध था। लेकिन तिम्मरुसु की दृष्टि में राज-पद के लिए श्रीकृष्ण देवराय ही उपयुक्त है। क्यों कि यह उम्र में अच्युतराय से बडा है और नेक ईमान्दार और पराक्रम वीर क्षत्रिय वंशज है।

विजयनगर राजा वीरनरसिंहराय अपने और एक भाई श्री कृष्ण देवराय को मारना चाहता है। लेकिन महामंत्रि तिम्मरुसु ने उसे बचाया और ऐन मौके पर राजा

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. - 33

बनाया था। आदोनी–दुर्गाधीश चोक्कनामात्य का पुत्र पेद्दन्ना है। बचपन से उसके मन में काव्य रचना की ओर विशिष्ट रुचि है। उसने काव्य रचना के साथ–साथ युद्ध कलाओं का भी अध्ययन भी किया। तिम्मरुसु ने कृष्णदेवराय को जिस प्रकार रक्षा किया, प्रस्तुत घटना में साबित होता है। [1] ''तिम्मरुसु द्वारा भेजा गया अप्पनामात्य अदिवान (आदोनी) दुर्ग पहुँचकर, दुर्गाधीश चोक्कना का घर पहुँचकर कृष्णराय से मिलता है। कृष्ण देवराय पूछता है कि हमें कब प्रस्थान करना पडेगा? ....अभी। भाई कैसे हैं? वे मृत्योन्मुख है और राजवैद्यों ने कहा कि चन्द्रोदय से पहले रात में ही उनकी मृत्यु निश्चित है। अच्युतराय क्या कहरहा है? तिम्मराय को मारकर वह राजा बनना चाहता है। अब हमें यहाँ से रवाना होना अनिवार्य है'' यह समाचार दुर्गाधीश तिम्मराय तक पहुँचता है, कि सेनापति चोक्कनामात्य ने छदमवेश में रहनेवाले कृष्णराय को अश्रय दिया और ऐन मौके पर उसे यहाँ से भेजदिया। तिम्मराय ने तुरन्त सिपाहियों को भेजकर पेद्दन्ना के पिताजी चोक्कनामात्य को बन्दी बनाकर कारवास में रखदिया। दोस्तों के द्वारा यह समाचार प्राप्त करके पेद्दन्ना अपनी पत्नी उमादेवी के साथ काकतीय राज्य में जाकर एक अजनबी की तरह जीवन बिताने लगा।

वीर नृसिंहराय की मृत्यु के पश्चात महामंत्रि तिम्मरुसु के बुलाने पर कृष्ण देवराय राजधानी विजयनगर पहुँचता है। कृष्ण देवराय को राजा बनाने के लिए तिम्मरुसु और कुछ खास राजाधिकारी एक भवन में बैठकर चर्चा करने लगे। यह ऐतिहासिक घटना कहलाने येग्य है। [2] ''बैठक में भागलेने वाले राजकर्मचारियों में से, एक ने कहा, कि क्राँतिकार अच्युतराय को मौत की सजा देना है। और एक ने कहा बालक तिम्मराय को भी मारडालना है। कृष्णराय ने उन की ओर घ्यान तक नही दिया। उस ने तिम्मरुसु का राय पूछा। तिम्मरुसु ने अपना राय बताया कि अच्युतराय को मारने की आवश्यकता अब नही रही। क्यों कि उस से कोई खतरा

---

1. आँध्र कविता पितामहुडु – श्री आंजनेयुलु – पृ. – 47
2. आँध्र कविता पितामहुडु – श्री आंजनेयुलु – पृ. – 52

अब नही रहा। इतना ही नहीं, उसे मारने से लोगों में कृष्णराय के प्रति नीच भावना उत्पन्न होने की आशंका है। इसलिए अच्युतराय को राजधानी से दूर किसी दुर्ग के अधिकारी बनाकर, भेजदेना उचित रहेगा। और एक मंत्रि ने कहा कि दूर भेजने से वह, वहाँ से ही विद्रोह कार्य कर सकता है। फिर तिम्मरुसु ने कहा कि उस के सेनापित के रूप में हमारे एक वफादार व्यक्ति को रखेंगे। रायल ने प्रश्न किया कि बालक तिम्मराज को क्या करेंगे? व्यंग्य स्वर में तिम्मरुसु ने जवाब दिया कि वह राज्य के भागीदार है न ? फिर कृष्णराय ने ही कहा कि कुछ भी हो उस लडके को मैं नहीं मारना चाहता । उसे किसी एक प्राँत के अधिकारी बनाकर भेज देना चाहता हूँ। उसी दिन के शाम को मृतक राजा वीर नृसिंहराय का अंतिम संस्कार कियागया।''

पेद्दन्न का मित्र वीरमल्ल अब राजा कृष्णराय के सेनापति है। उसे यह समाचार मिलता है कि अदिवान दुर्गाधीश तिम्मना ने पेद्दन्ना के पिताजी चोक्कनामात्य को बन्धी बनादिया। और पेद्दन्ना को राज्य से बाहर निकाल दिया। दासी पुत्र भी कृष्णराय को राजा मानने के लिए इनकार करने वालों में से तिम्मना भी एक है। तिम्मना की बुरी नजर से बचने के लिए पेद्दन्ना अपनी पत्नी उमादेवी के साथ उदयगिरि राज्य में गया। यह प्राँत बहुत ही विवादग्रस्त है। कुछ समय तक यह विजयनगर राजा के प्रशासन मे था। मगर अब तो गजपतिराज के अधिकार में चलागया है। उदयगिरि मे रहनेवाले पेद्दन्ना काव्य रचना में निमग्न है। उस की अभिलाशा है कि हरिकथा साराँश पर काव्य रचना करके श्रीकृष्ण देवराय के नामाँकन करता है। [1] ''एकदिन दीक्षित नामक पुरोहित ने बताया कि श्रीकृष्ण देवराय अब तक जिन्दा है और वह राजा बनचुका है। पेद्दन्ना ने आश्चर्य से पूछा कि क्या यह सच है? हाँ यह सच है कि तिम्मरुसु की माया और अकलमंदी से श्रीकृष्ण देवराय को मौत से बचाकर राजा बनाया गया है। श्रीकृष्ण देवरा बहुत ही नेक इनसान, दानी और साहित्याभिमानी है। पंडित और विभिन्न कलाकारों को प्रोत्साहन करने में वे

---

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. - 92

बेमिसाल हैं। पेद्दन्ना ने कहा कि अब आन्ध्रराज्य की उन्नती अवश्य होगी। लेकिन दोनों तरफ उदयगिरि के गजपति राजा और रायचूर के राजा शत्रु के रूप में है। '' यह सुनकर दीक्षित ने शंका व्यक्त किया।

पेद्दना के जीवन में रूद्रकवि को उदयगिरि राजदरबार में साहित्य होड में परास्त करना ऐतिहासिक घटना है। पेद्दना दीक्षित, रुद्रकवि को देखने राज दरबार मे गया जहाँ पर नंदि तिम्मन कवि के साथ रुद्रकवि का मुकाबला होनेवाला है। पहले रुद्रकवि ने एक समस्या दिया और उस पर तिम्मन कवि ने पद्य लिखा। राजा तिरुमल कान्तराय सन्तुष्ट हुए। तिम्मनकवि के पूछने पर रुद्रकवि ने और एक पद बताया। रुद्रकवि के शिष्य ने प्रश्न किया कि उस पद में रस क्या है? किसी ने जवाब तक नहीं दिया। रुद्रकवि व्यंग्य के साथ राजदरबार का अपमान करने लगा। नाराज होकर पेद्दना ने एक पद्य में जवाब दिया, जिसे सुनते ही रुद्रकवि का सर अपमान से झुकगया। राजा ने पेद्दना की सराहन की। तमाम कवि गण पुरस्कृत कियेगये। इस के पश्चात नंदि तिम्मन कवि के साथ पेद्दना की दोस्ती दिन-ब-दिन बढ़ने लगी। इसी बीच पेद्दना के पास एक निमंत्रण आया की विजयनगर राजा श्रीकृष्ण देवराय के साथ काकतीय राजकुमारी प्रेम कर रही है। परन्तु गजपतिराजा और विजयनगर राजा के बीच एक जमाने में शत्रुता थी। इसलिए राजाकुमारी की इच्छा के अनुसार श्रीकृष्णराय के विवाह के लिए संसिद्ध करने पेद्दना अपनी पत्नी को दीक्षित के घर में छोडकर विजयनगर कि ओर प्रस्थान करता है। जब पेद्दना ने राज्य में प्रवेश किया, तब श्रीकृष्ण देवराय राज्याधिकार संभालने, हाथी पर सवार होकर जुलुस के साथ एक रास्ते पर आगे बढरहा था। पेद्दना को पहचानकर स्वयं हाथी से उतरकर, राय अपने मित्र पेद्दना को गलें लगाकर हाथी पर चढाकर आगे निकलगया। पेद्दना का मित्र वीरमल्लु और महामंत्रि तिम्मरुसु भी पेद्दना को देखकर अति प्रसन्न हो गये थे। यह ऐतिहासिक घटना है कि राय के साथ पेद्दना ने भी हाथी पर सैर किया। इसका वर्णन लेखक ने सही वक्त पर रोचक ढंग से किया था। यह ऐतिहासिक सत्य है कि सेनाधीश वीरमल्लु और पेद्दना दोनों खास दोस्त है। इन दोनों के साथ राय की दोस्ती भी है।

एक दिन श्रीकृष्ण देवराय के रहस्य मंदिर में राजकुमारी अन्नपूर्णदेवी के कृष्णराय के साथ प्रेम के बारे में चर्चा होने लगा, जिस में चोक्कनामात्य, तिम्मरुसु, पेद्दना और वीरमल्लु भी बैटे थे। [1]''पहले पेद्दना खडा होकर इस प्रकार कहा, महाराजा की दृष्टि में लाने की उपयुक्त घटना उदयगिरी राज्य मे घटित थी। सब की नजर पेद्दना की ओर पडी। लेकिन सब में से तिम्मरुसु ने पूछा कि एसी कौन सी घटना है जिसे तुम राजा के सामने लाना चाहते हो। पेद्दना ने कहा कि गजपति राजकुमारी अन्नपूर्णा देवी हमारे राजा से प्रेम करने लगी और विजयनगर की राणी बनना चाहती है। लेकिन गजपति ने उसकी प्रेम का तिरस्कार किया। उस ने मुझ से विनती की कि इस मंदर्भ में उसकी सहायता करे। महाराज के चेहरे पर हस्सी आगई। महामन्त्रि तिम्मरुसु ने कहा कि गजपति वंशज नेक स्वभाव वाले नहीं थे। शायद वे हमारे साथ रिश्ता मिलाने के खिलाफ होसकते हैं। कृष्ण देवराय ने मंत्रि से कहा, 'क्या आप मेरे मन का राय जानना चाहते हैं?' फिर महामंत्रि ने मंत्रि से कहा, 'हर काम के लिए सोच-विचार करके निर्णय लेना आवश्यक है'। एक तरफ बीजापुर सुल्तान युद्ध प्रयत्न करने लगा। अदिवन दुर्गाधीश तिम्मना भी उसे साथ देना चाहता है। विजयनगर में ही रहकर अच्युतराय क्रौंतिकरना चाहता है। अस्थिर स्थिति के लिए उदयगिर राज भी संसिद्ध है। इसलिए बहुत सोचविचार करके निर्णय लेना हमारेलिए अच्छा होगा। 'प्रेम के साथ अपने आप को मेरे हवाले करनेवाले क्षत्रानी को तिरस्कार करना क्या उचित रहेगा, राजा ने प्रश्न किया। इसीबीच द्वार-रक्षक सिपाही आकर, समाचार दिया कि एक बैद्ध संत मंत्रि से भेंट करना चाहता है। संत वेषधारी जासूस ने समाचार दिया कि उदयगिरि राजा युद्ध के लिए संसिद्ध हो गया है। उस ने बीजापुर सुल तान की सहायता लेकर विजयनगर पर दुराक्रमण करना चाहता है। विजयनगर में भी कुछ लोग क्रौंति करने तैय्यार हो रहे हैं। इसलिए आप को सावधानी से काम करना चाहिए।''

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. - 125-130

निश्चिंत समय में ही तिम्मरुसु की मंत्रण और योजनाओं के सहारे विजयनगर राजा के रूप में कृष्णदेवराय स्थिर होगया। शत्रुराजाओं को हराकर भागदिया गया। राय के दरबार का नाम भुवन विजयम है। उस में अष्टदिग्गज के उपनाम से आठ महान कवि-पंडितों के साथ राय भी साहित्य सेवा में निमन्त्रन हो गये है। आठ महान कवियों में पेद्दन्ना ही सब से बडा और विशिष्ट कवि है। वह अपने मित्र और सम्राट कृष्णराय के नाम पर एक महान काव्य लिखकर सौंपना चाहता है। आखिर वह शुभदिन आ ही गया जिसकी प्रतीक्षा पेद्दन्ना ने सदियों से की।[1] "आज विजयनगर में सचमुच में एक त्योहार मनाया जारहा है। पेद्दन्ना द्वारा लिखित 'मनुचरित्र' नामक काव्य आज कृष्णदेवराय के नामाँकन किया जारहा है। यह एक पबन्ध काव्य है। काव्य-कन्या को स्वीकार करने स्वयं सम्राट कृष्ण देवराय स्वयं पेद्दन्ना के घर गया। उस के साथ अनेक राज्याधिकारी वहाँ मौजूद हैं। मोतियों की पालकी मे सरस्वती स्थान पर काव्य रख दियागया है। राजा ने पेद्दना को भी पालकी में बैटने का आमत्रण दिया। उस ने कहा आओ पेद्दन्ना पालकी में स्थान प्राप्त कीजिये। पेद्दन्ना ने राजा से कहा पहले आप हाथी पर बैठिये। फिर राजा ने कहा, 'नही पेद्दना'। आज आप को छोडकर सब के सब भुवनविजयम तक पैदल ही चलें, क्यों कि आज आपने यह साबित कर दिया, कि आप तेलुगु कविता के लिए पिताश्री है। राजा की इच्छा के अनुसार सेवक पालकी ढोने लगे। लोग जयजयकार करने लगे कि आन्ध्र कविता पितामह की जय हो। निश्चित समय के अनुसार भुवनविजयम पहुँचकर राजा ने पेद्दना की काव्य कन्या को स्वीकार किया। उत्पलमाला नामक चन्दोवृत्तों में राजा कृष्ण देवराय पर पद बनानेवाले पेद्दना के पैर में स्वयं राजा ने अपने हाथों से मणि रत्नों से भरे सोने का कंकण पहनाया। और चरण स्पर्श करते हुये प्रणाम किया। आदर और सम्मान के साथ भरे भुवनविजयम में पेद्दना को राय ने आह्वान किया और कहा आइये, आन्ध्र कविता पितामह इस सिंहासन पर तशरीफ रखिये।"

---

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. - 195-245

पोर्चगल विदेशी व्यापारियों के कारण दिन-ब-दिन श्रीरंगक्षेत्रालय में अत्याचार और अकृत्य बढ़ने लगे। इसलिए वहाँ के लोगों के द्वारा समाचार प्राप्त होते ही, राय अपने मन्त्रिमंडली और कवि पेद्दना के साथ सोच-विचार करने लगे। एक योजना बनाया गया। पेद्दना के निरीक्षण में इसे बनाया गया। उस योजना के अनुसार पोर्चगल व्यापारी केन्द्रों पर विजयनगर की सेना ने हमला किया। घमासान युद्ध होने लगा। सेनाध्यक्ष गोविंदराय, सबसे आगे रहकर सेना का नेतृत्व करने लगा। उस के साथ पेद्दना भी सेना का संचालन करने में निमग्न है। दुर्भाग्यत: पोर्चुगल सिपाही के द्वारा चलाईगई गोली से पेद्दना घायल होगया। राजगुरु ने पेद्दना को अपने कुटीर मे लाकर आवश्यक दवादिया। पेद्दना की हालत देखकर श्री कृष्ण देवराय बहुत ही दु:खित है। इसी बीच यह समाचार राय की सेना में व्याप्त होगया। और सेना का पौरुष अधिक होगया। फलत: पोर्चुगल व्यापारी अपनी सेना सहित हारकर राय के शरण में आगये। इस प्राकर घायल होनेवाले पेद्दना की स्पूर्ति से रायल विजेता होगया। राजगुरु की बात मानकर पेद्दना को गुरूजी के कुटीर में छोडकर सेना सहित रायल राजधानी चलेगये।

दिन बीतने लगे। घायल पेद्दना धीरे-धीरे स्वस्थ होने लगा। फिर भी अश्कतता के कारण राजधानी न जाकर, राजगुरु के आश्रम में ही आराम लेने लगा। अचानक एकदिन महाराज का खास पत्र आया। उस में लिखा हुआ है, कि कृष्णदेवराय के पुत्र तिरुमलराय को वारिस के रूप में राज्याभिशेक किया जारहा है। इस शुभअवसर पर सादर आह्वान किया जा रहा है। पत्र पढकर खुशी के साथ राजधानी जाने के लिए पेद्दना तैय्यार होने लगा। लेकिन अब भी अशक्तता के कारण जा नही सका। किसी भी तरह अपने आप को संभाल कर, जब पेद्दना राजधानी पहुँचा, तो देखा कि विषप्रयोग के कारण तिरमलराय की मौत हुई और हत्यारे के रूप में महामंत्रि तिम्मरुसु को मृत्युदंढ दियागया। लेकिन पेद्दना ने जासूसी का काम किया, तो पता चला कि इस घटना के पीछे शत्रुराजाओं के और क्रौंतिकारों के हाथ हैं। षडयंत्र के बारे में पूरी जानकारी प्राप्तकरके पेद्दना ने राजा को समझाया। लेकिन

इसके पहले ही अपमानित महामंत्रि ने कारावास में अपनी आँखे पोडकर आत्महत्या करली। कृष्ण देवराय पागल होगया। अपने काम में असफल होकर विरक्त मन से पेद्दना घर बार छोडकर, तिरुमलक्षेत्र में संत की तरह जीवन बिताने लगा। अंत तक भगवान बालाजी स्वामी के मंदिर में अंतिम समय बिताते हुये वही पेद्दना चलबसा। इस प्रकार संपूर्ण उपन्यास में लेखक ने एतिहासिक घटनाओं को प्रधान स्थान दिया। लेकिन यह भी सच है, कि जहाँ -तहाँ उन्हों ने काल्पनिकता का सहारा भी लिया। आमतौर पर ऐतिहासिकता ज्यादा है।

4.7.2. काल्पनिकता :-

'आन्ध्र कविता पितामहुडु' नामक ऐतिहासिक उपन्यास, श्री आँजनेय द्वारा लिखित है। यह उपन्यास अल्लासानी पेद्दना की जीवनी पर आधारित है। परन्तु पेद्दना की जीवनी के साथ-साथ हमें श्रीकृष्ण देवराय की जीवनी का भी वर्णन मिलता है। विजयनगर साम्राज्य के साम्राट वीर नरसिंहराय अपने भाइयों को मारकर, अपने ही पुत्र बालक तिम्मराय को राजा बनाने की तैय्यारी करने लगता है। लेकिन महामंत्रि तम्मिरुसु की दृष्टि में सिंहासन के लिए कृष्णदेवराय ही उचित और योग्य है। इसलिए उन्हों ने कृष्णराय को अपने मित्र और अदिवान दर्ग के दंडनायक वा सेनापति चोक्कना के घर में छदम वेष में रहने को भेजता है। इस घटना से उपन्यास का आरम्भ तो होता है, जो काल्पनिक है। लेखक ने इस घटना का वर्णन बहुत ही रोचक ढंग से किया। [1] ''भोजन के बाद पान चबानेवाले दंडनायक चोक्कनामात्य के घर के सामने चार गुडसवार व्यक्ति आखडे हुये और एक-एक करके उन्हों ने प्रणाम किया। उन चारों में से पहला दुर्ग का ही द्वारपालक-सिपाही है। और उस के पीछे तीन अजनबी खडे हैं। इन तीनों को दुर्गाध्यक्ष के हवालेकरके सिपाही चलागया। उन तीनों के छदमवेष बदलकर अपने असली रूप में प्रकट हुये। पहला व्यक्ति महामंत्रि के रिश्तेदार और सेनाध्यक्ष गोविंदराय है। दूसरा व्यक्ति 'श्रीकृष्ण

---

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. -11-14

देवराय' और तीसरा राय का ही अंगरक्षक 'कोंडोजी' है। गोविंदराय को चोक्कना ने पहचान लिया और विषय जानना चाहा। तब गोविंदराय ने महामंत्रि, द्वारा कही बात समझादी । उस ने कहा कि कृष्णदेवराय को मारकर महाराज आप के पुत्र को राजा बनाना चाहता है। राजा की आज्ञा के अनुसार कृष्णदेवरा की आँख निकलकर जंगल में मारना है। परन्तु महामंत्रि राय को बचाकर चोक्कनामात्य केयहाँ गुप्त में रखना चाहता है। सबूत के लिए किसी जंगली जानवर की आँखे ले जाकर राजा को दिखाना चाहता है, ताकि कृष्णराय की मृत्यु का समाचार देश भर में फैलजाय। महामंत्रि के मन की बात पहचानकर चोक्कनामात्य ने जावब दिया महामंत्रि की आज्ञा के अनुसार मै अवश्य करूँगा। भविष्य सम्राट कृष्णदेवराय को अपने जान से ज्यादा रक्षा करके, अस्वस्थ महाराज की मृत्यु के बाद महामंत्रि के पास भेजूँगा। तब तक यह विषय बहुत गोपनीय रहेगा। उसी वक्त कमरे की ओर किसी के आने की आवाज हुई। तुरन्तु इधर वार्तालाप बन्ध होगया। दूसरे ही क्षण में चोक्कनामात्य का पुत्र पेद्दना ने स्वीकृति प्राप्त करके कमरे में प्रवेश किया। उस का रूप देखनेलायक, हट्टा-कट्टा सदृढ स्वभाव, वेद-वेदाँग और व्याकरण में वह प्रवीण है। अजनबी लोगों को उस ने इस के पहले यहाँ कभी नहीं देखा। पिताजी को प्रणाम करके सोजाना उस की आदत है। प्रणाम करके वापस जानेवाले पेद्दना को रोककर चोक्कना ने अजनबी लोगों का परिचय कराया कि पहले व्यक्ति का नाम मंत्रि का भाई गोविंदराय बताया गया। दूसरे व्यक्ति का नाम 'कन्नय्या' बनाया गया। और तीसरे व्यक्ति को उसके दोस्त बताया गया। उन को भी प्रणाम करके पेद्दना वहाँ से चलागया। अपने पुत्र को भी सच न बताने वाले चोक्कनामात्य की राजभक्ति से गोविंदराय बहुत प्रभावित हुये।'' यह लेखक द्वारा कल्पित घटना है। इतिहास के अनुसार पेद्दना प्रमुख तेलुगु कवि ही है। परन्तु प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने पेद्दना को धीरोधात्त, वीर और प्रमुख मल्लयोद्धा के रूप में भी अभिवर्णन किया है। लेखक ने यह साबित किया कि पेद्दना खड्गचालन, घुडसवार के साथ-साथ कविता लिखने भी प्रवीण है। इतिहास के अनुसार यह काल्पनिक हो सकता है।

उदाहरण के रूप में लेखक ने और एक उचित काल्पनिक घटना को भी प्रस्तुत किया। [1] "चोक्कना द्वारा कायम कियेगये विध्यालय में युद्ध कलाओं के साथ-साथ युवक साहित्य भी सेखते है। दूसरे दिन पेद्दना, कन्नप्पा और खोंडोजी दोनों को वहाँ लेजाता है। और बताता है, कि यहाँ मेरे साथ पचास युवक शिक्षा ग्रहण कर रहें हैं। उन में से वीरमल्लु सबसे उत्तम मल्लयोद्धा है। उस शिक्षालय में शिक्षाधिकारी के रूप में जगपति मल्ल रहता है, जो एक जमाने में सेनापति के रूप में श्री कृष्णदेवराय के पिता के पास काम करचुका था। इसलिए ऐसे अनुभवी को चोक्कनामात्य ने प्रशिक्षिक के रूप में यहाँ काम कर रहा है। पेद्दना की बात मानकर कृष्णराय और खोंडोजी दोनों भी शिक्षालय पहूँचे जहाँ पर उनकी मुलाकात वीरमल्लु और आचार्य जगपतिदेव से हुई। विद्यालय सदस्यों ने भी कृष्ण देवराय अपने आप को कन्नप्पा के नाम से परिचय कराया। जब से वीरमल्लु योद्धा को देखा, कृष्णराय के मन में उस में मल्लयुद्ध लडने की इच्छा पैदा हुई। आखिर एकदिन जगपतिगुरु ने ही स्वयं कन्नप्पा का आह्वान किया और कहा, किसी एक को चुनकर लडने का मौका दिया। कन्नप्पा ने वीरमल्लु के साथ युद्ध स्वीकृती दी। दोनों के बीच मल्लयुद्ध शुरु हुआ। कोई भी मल्लयोद्धा वीरमल्ल के साथ एक घंटे तक नहीं लडसकते। मगर बहुत चतुराई के साथ कन्नप्पा को घंटे के बाद भी लडते हुये देखकर युवक उत्साह से देखने लगे। बहुत ही चालाकी से वीरमल्ल ने कन्नप्पा को गिराया लेकिन दूसरे ही क्षण में कन्नप्पा ने और एक योजना से वीरमल्ल को भी भूमी पर गिरादिया, जिससे उसे चक्कर सा आगया। लोग जय-जय गान करने लगे। दोनों एक दूसरे से आनंद के साथ गले लगाकर मित्र बनगये थे। इस घटना के पश्चात गुरु की आज्ञा के अनुसार हररोज कन्नप्पा भी विध्यालय में नियमानुसार व्यायाम करने लगा।" यह एक ऐसी घटना है जिसे लेखक ने कृष्णराय को बचाने के लिए काल्पनिक स्थर पर बनाया था। इतिहास में इस का वर्णन कही नहीं मिलता।

---

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. - 17-22

एक दिन यह समाचार देश भर में व्याप्त हो गया, कि कृष्णराय की मृत्यु होगई है। इसलिए अस्वस्थ राजा के बाद उस का पुत्र छ: वर्ष का लडका राजा बनने वाला है । कुछ ही दिनों के बाद राजा वीरनरसिंह की मौत होती है। रात के वक्त चोक्कना के घर, एक अजनबी व्यक्ति आता है। उस के समाचार के अनुसार खोडोंजी और कृष्णराय, दोनों रातों-रात चोक्कना से विंदालेकर अप्पाजी के पास विजयनगर पहुँचते हैं। चोक्कना ने उन दोनों की रक्षा के लिए वीरमल्ल को भी उन के साथ भेजा। निश्चित समय में राजधानी पहुँचने के बाद अप्पाजी के साथ उन की मुलाकात हुई। कृष्ण देवराय ने मंत्रिजी से वीरमल्ल के बारे में बता दिया। उसने सब के सामने वीरमल्ल को अपने अंगरक्षक घोषित किया और और एक रत्नजडित खड्ग भी प्रदान किया। तब, वीरमल्ल को सब कुछ अवगत हुआ। अदिवान दुर्गाधिपति ने चोक्कनामात्य को बन्धी बनाकर कारावास में रखा। यह समाचार मिलते ही पेद्दना ने महामात्य तिम्मरुसु के नाम एक पत्र लिख भेजा था। जो इस प्रकार है। [1] ''महामात्य जी को प्रणाम! दीन व्यक्ति पेद्दना कि विनती है कि मेरे पिताजी ने आपकी आज्ञा के अनुसार एक अज्ञात विजयनगर वासी को आश्रय दिया। जिस विजित्र रूप से उस ने हमारे दुर्ग में प्रवेश किया, उतने ही विचित्र रूप से यहाँ से अदृश्य भी होगया। तब से मेरे पिताजी भी लापता है। राजद्रोह अपराध में दुर्गाधिपति ने मेरे पिताजी को गिरफ्तार किया था। इस विषय में आप हमे न्याय कीजिये। - आप का विनम्र, अल्लसानि पेद्दना । इस प्रकार अपने बारे में पेद्दना महामात्य को एक पत्र द्वारा अवगत कराता है। पेद्दना के बारे में जानकारी प्राप्त करके, वीरमल्ल बहुत ही दुखित होता है। इधर पेद्दना भी मुसीबतों में फँसने लगा। इसलिए अपनी पत्नी के साथ अदिवान दुर्ग छोडकर, रोतों रात उदयगिरि राज्य जा पहुँचता है। उदयगिरि से दूर, पेन्नानदी के किनारे, एक पुराने मंदिर में कुछ समय तक आराम लेते हुये पेद्दना, इस प्रकार सोचने लगता है, कि मेरे ऊपर इतनी भारी मुसीबत क्यों आपडी है। मेरी किस्मत क्यो बैठगई है? पिताजी की हालात क्या

---

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. - 55-75

होगी? उन्हें वहीं छोडकर, मै क्यों जान बचाकर भागरहा हूँ? कन्नप्पा कौन हो सकता है? वीरमल्लु को क्या होगया? इसप्रकार सोच-विचार करते हुये पेद्दना ने मंदिर की मूर्ति के कन्धों पर हाथ रखा तो, मूर्ति के एक रहस्य मंदिर का द्वार खुला जिस में अपार धन, दौलत, सोना, चाँदी, अनमोल रतन भी हैं। उन में से एक को भी पेद्दना ने हात तक नही लगाया। पति-पत्नी दोनों बाहर आगये और द्वार अपने आप बन्द होगया। इतने में एक पुरोहित वहाँ आया और इन दोनों के बारे में जानकारी प्राप्त करके, उदयगिरि लेजाकर अपने ही घर में कुछ दिन तक रहने के लिए अश्रय दिया।''

लेखक द्वारा कल्पित और एक घटना है। पेद्दना को उदयगिरि में गिरफ्तार करना और उमादेवी को उद्दाँखान के घर में बन्धी बनादेना। [1]''पूजाकक्षा में अनुष्ठान करनेवाले पेद्दना के पास उद्दवखाँन, सिपाहियों के सहित पहुँचकर गिरफ्तार करता है। दोनों के बीच वाद-प्रतिवाद चलता है। पेद्दना पूछता है कि किस की आज्ञा से मुझे गिरफ्तार करते हो? महाराज की आज्ञा से ही। मुझे बन्धी बनाने की आज्ञा क्या महाराजा ने दी या चिट्टप्पा ने दी? चलो, मैं स्वयं महाराज से मिलना चाहता हूँ। तुम्हारी इस दुष्क्रिया का फल तुम्हे जरूर भुगतना पडेगा। उमा! तुम दीक्षित के साथ नन्दि तिम्मना के घर जाओ और वही रहो। पेद्दना को राजदोषी के रूप में राजा के सामने खडाकर दिया गया। राजा ने पेद्दना के नाम, परिवार के बारे में जानकारी प्राप्त करना चाहता है। लेकिन पेद्दना ने एक भी प्रश्न का जवाब ठीक तरह से नहीं दिया। विवश होकर राजा ने उसे कारावास में भेजदिया। शाम तक यह समाचार राज्य भर में फैलगया, कि पेद्दना नामक किसी ब्राह्मण को विजयनगर राज्य का जासूस समझकर गिरफ्तार कियागया है। बेचारी उमादेवी शाम तक दीक्षित की प्रतिक्षा करती रही। वह अपने पतिदेव की आज्ञा के अनुसार कवि तिम्मना के घर में रहना चाहती है। मगर उस के घर के पते के बारे में वह बिल्कुल

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. - 100-113

नहीं जानती । लेकिन घर के आँगन में उद्दवखाँ को फिर से देखकर वह बेहोश होजाती है। जब उसे होश आया तो, वह अपने आप को उद्दवखाँ के मंदिर में तीन-चार दासियों के बीच बिस्तर पर आराम से लेटी, पहचानती है। तब ही उद्दवखाँ वहाँ आकर उसे धमकी देता है, कि 'मुझसे शादी करो। तुम्हें मै उदयगिरि की रानी बनादूँगा।' 'नीच, कमीना! भगवान तुम्हारा अंत करेगा।' उमा ने शाप दिया। 'तुम्हारी खूबसूरती के सामने, मै नतमस्तक हूँ। मेरी प्यारी मुझे अपनाओ'- उद्दवखाँ ने कहा। 'अरे मुर्ख! यदि मेरे साथ बलात्कार करोगे, तो मै अंगूठी काकर मरजाऊँगी।' उमा ने जवाब दिया। उसकी धमकी से नरम होकर उद्दाँखान ने कहा, 'मैं तुम्हे दो दिन का समय देता हूँ। तुम अपना मन बदलकर शादी के लिए तैय्यार होजाओ।' इस प्रकार कहकर, वहाँ से उस ने प्रस्थान किया। उधर कारावास में पेद्दना के सामने एक विचित्र समस्या उठ खडा हुआ। गजपति महराज की बेटी अन्नपूर्णादेवी ने अपनी खास दासी द्वारा कवि के पास अपना प्रेम समाचार भेजा, कि वह महराजा श्रीकृष्ण देवराय से प्रेम करती है और उस की रानी बनना पसन्द करती है। इसे सफल बनाने पेद्दना कवि को कारावास से चुडाकर विजयनगर भेज दियाजाता है। इस के प्रतिफल में उमादेवी, उद्दवखाँ के मंदिर से चोरी-चुपके अंतःपुर में पहुँचती है। उपन्यासकार द्वारा वर्णित यह प्रसंग काल्पनिकता के आधार पर निर्मित है।''

इस प्रकार दिन बीतने लगते हैं। कवि पेद्दना, प्रेमसंदेश लेकर कृष्ण देवराय के पास पहुँचता है। वहाँ धूम-धाम से उसका आह्वान किया जाता है। प्रशासन व्यस्था को सठीक करने के पश्चात अन्नपूर्णा के विषय में निर्णय लिया जाता है। इसी बीच चोक्कनामात्य को बन्धविमुक्त करके शत्रुसंहार किया जाता है। पेद्दना अपने पिता चोक्कना के साथ विजयनगर मे ही निवास करने लगता है। इस संदर्भ में उपन्यासकार ने और एक कल्पनिक घटना का अभिवर्णन किया जो एक किंवदंती पर आधारित है। 'मेखला' नामक देवदासी और कवि के बीच में प्रेम व्यवहार के बारें

में उपन्यासकार ने यहाँ जिक्र किया। [1]"पेद्दना और चोक्कनामात्य के लिए एक खास निवासयोग्य मंदिर मुकर्रर किया गया है। उमादेवी के अभाव की कमी भवन में सुस्पष्ट दिखाई दे रही है। कवि पेद्दना सदा अपने घर में उदास रहता है। अपनी पत्नी के बारे में चिन्ताग्रस्त रहता है। एक दिन अपने शयन कक्षा में सोचविचार कर रहा था, तब ही एक दासी आकर उसे एक लिफाफा दिया, जिस में 'मेखला' नामक देवदासी, नर्तकी द्वारा लिखित पत्र है। उस में इस प्रकार लिखा हुआ है। अल्लसानी पेद्दना के दिव्य समुख देवदासी मेखला की विनती है कि, कवि, पंडित और सहृदय, वाले, आप ने मेरा नाट्य देखकर मेरा सराह किया। यह मेरे लिए बहुत ही खुशी की बात है, बहुत समय से मेरे मन में साहित्य पर काम करने की प्रबल इच्छा है। और दिन-ब-दिन बड रही है। कृपया आप मुझे अपनी शिष्य बनाकर नृत्य, संगीत के साथ साहित्य भी जोडने का वर-दान दीजिये। मेरा आह्वान स्वीकार करके एकबार वसंतोत्सव केदिन हमारे घर पधारिये, आप के आगमन से हमारा घर पुनीत होजायेगा। धन्यवाद। आप की देवदासी 'मेखला'। पत्र पढ़कर, सोचविचार करनेवाले पेद्दना की मनोभावनों को पहचान कर चोक्कना ने कहा, क्या उसे शिष्य के रूप में स्वीकार करने में दिख्कत है? 'नहीं'। परन्तु वह बहुत ही सुन्दर नारी, उसे शिष्या के रूप में स्वीकार करने से लोगों में भिन्न भावनायें व्याप्त होने की संभावाना है। इसलिए मन हिचकरहा है। पेद्दना ने कहा। और मेखला के घर जाने के लिए संसिद्ध होगया।" इस संदर्भ में ध्यान देने की बात है कि मेखला और उसकी बहिन 'नागा' दोनों उपन्यासकार द्वारा कल्पित चरित्र है। उदयगिरि में राजकुमारी, यहाँ छदम रूप में रहने वाली उमादेवी को 'विजयन' नामक सेनापति के सहारे पेद्दना के पास फिर वापस लाने में मेखला का योगदान भी काल्पनिक है। लेखक ने इसे भी रोचक ढंग से वर्णन किया।

---

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. - 131-135

लेखक के द्वारा वर्णित और एक काल्पनिक घटना है। [1] ''बोलनेवाले तोतों को बेचनेवालों के रूप में मेखला और विजय जा पहुँचे। राजमहल के सामने से जानेवाली मेखला के सौंदर्य पर राजकुमारी अन्नपूर्णा भी अचरज होती है। उसने पूछा 'तुम कहाँ की रहनेवाली हो?'' विजयनगर की रहनेवाली हूँ।''तोते का मूल्य क्या है? ''यह आप के लिए तोफा है।' अन्नपूर्णा फिर एकबार चकित होगई। 'किसने इसे भेजा?' इतने में तोता स्वयं बोला 'राय ने भेजा और आप को लेजाने वे बहुत उत्सुक है।' अन्नपूर्ण की खुशी के लिए अंत नही। उस ने पेद्दना के कुशल समाचार पूछा। मेखला ने कहा, 'हम उमादेवी को लेजाना चाहते हैं।' इस प्रकार एक योजना के अनुसार उमादेवी विजयनगर लाई गई। उसे देखकर पेद्दना अवाक रहगया। चोक्कना भी अचरज होगया। उमादेवी ने पहले पेद्दना के चरण स्पर्श किया और बाद में मामाजी के चरण भी स्पर्श किया। चोक्कना ने कहा 'आओं बहू! तुम्हारे बिना घर में शोभा का अभाव है। तुम्हारे आगमन से आज घर में खुशहाली फिर से लौटआई।' पेद्दना ने मेखला को धन्यवाद अदा किया।

उपन्यास के अंत में भी लेखक ने काल्पनिकता का सहारा लिया। उदयगिरि पर हमला करते समय पेद्दना का घायल होजाना और उन्हे अमात्य और राजगुरु के आश्रम में रहना, आदि घटनायें काल्पनिकता पर निर्भर है। कृष्णदेवराय की मृत्यु के पश्चात, पेद्दना विजयनगर में रहना नहीं चाहता। इसलिए अपना अंतिम समय तिरुमलेश के मंदिर में बिताना चाहता है। उसी वक्त समाचार मिलता है कि, गजपति राजा विजयनगर पर हमला करने संसिद्ध है। एक पत्ते पर एक पद लिखकर उसे गजपति तक पहुँचाता है, जिसे पढकर वह शरमिंदा होकर सेना सहित विजयनगर छोडकर वापस अपना राज्य चलाजाता है। यह घटना भी लेखक द्वारा कल्पित है, जिस में महाकवि का व्यक्तित्व और विजयनगर राज्य की ओर अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त है। इस प्रकार आमतौर पर उपन्यास में जहाँ-तहाँ काल्पनिकता का सहारा लियागया है।

1. आँध्र कविता पितामहुडु - श्री आंजनेयुलु - पृ. - 152

4.7.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :-

'आँध्रकविता पितामह' नामक उपन्यास इतिहास प्रसिद्ध महाकवि अल्लसानि पेद्दना के जीवन पर आधारित है। महाराज श्रीकृष्ण देवराय के जीवन के साथ ज्यादा तरह पेद्दना का जीवन जुडा है। इसलिए जहाँ तक होसके वहाँ तक पेद्दना के जीवन के साथ-साथ कृष्णराय के जीवन-घटनाओ का भी अभिवर्णन किया। साधाहरणत: लोग पेद्दना के साहित्य-जीवन के बारे में जानते हैं। परन्तु उन के द्वारा रचित रचनाओं में 'हरिकथा साराँश' जैसे एक-दो रचनायें आज उपलब्द नहीं है। फिर भी समकालीन साहित्यकारों की रचनाओं का भी अध्ययन करने उपन्यासकार ने पेद्दना का व्यकितगत जीवन को प्रकाश में लाने की पूरी कोशिष की है। पेद्दना का जीवन जिस प्रकार श्रीकृष्ण देवराय के साथ जुडा है उसी प्रकार दरबार के आठ कवि और महामंत्रि तिम्मरुसु के साथ भी जुडा है। संक्षिप्त में कहने की बात यह है कि महामंत्रि तिम्मरुसु को देवराय प्यार से 'अप्पाजी' कहते थे और पेद्दन्न को प्यार और आदर के साथ अपने सगे भाई मानते थे। पेद्दना के पदों में से अनेक पद इस बात की सबूत देते हैं। कृष्णराय को राजा बनाने के पहले, उसे छदम वेष में चोक्कनामात्य के यहाँ अप्पाजी की आज्ञा के अनुसार रहना पडता है। यह ऐतिहासिक तथ्य है। परन्तु पेद्दना का ज्ञान युद्ध कलाओं में भी अधिक होना ऐतिहासिक तथ्य नहीं हो सकता,लेकिन उपन्यासकार ने काल्पनिकता के सहारे यह साबित करदिया कि रोज पेद्दना के साथ व्यायाम करने कृष्णराय भी व्यायामशाला जाता था। उमादेवी को उद्दवखान उठाकर लेजाना काल्पनिक घटना है। ऐतिहासिक सत्य यह है कि उसे तिम्मनामात्य के यहाँ रखदिया गया है। राणी अन्नपूर्णादेवी और कृष्णराय के बीच प्रेम व्यवहार चलना, पेद्दना तो जरूर जनाता था, मगर पेद्दना को ही इस प्रेम व्यवहार का आधार बताया। यह जरूर काल्पनिक है। रायल के साथ स्वयं पेद्दना भी युद्ध में भागलेने का विषय तो काल्पनिकता के स्थर पर निर्भर है, जिसे लेखक ने बहुत ही रोचक ढंग से अभिवर्णन किया। उपन्यास के अंत में तिरुमलराय की हत्या के बाद, अपराधी के रूप में खडे अप्पाजी को बचाने का यत्न, पेद्दना करता

है। लेकिन विफल होता है। यह ऐतिहासिक घटना है। विरक्त मन से तिरुमलेश के मन्दिर में भक्ति से समय व्यतीत करने वाला पेद्दना ने विजयनगर राज्य को एक पद के द्वारा गजपति राज के हमले से बचाया। यह एक किंवदंती पर आधारित है। आमतौर पर यह सफल ऐतिहासिक उपन्यास है।

4.8. पोतनामात्य

4.8.1. ऐतिहासिकता :-

तुम्मलपल्लि रामलिंगेस्वरराव द्वारा लिखित 'श्री पोतनामात्युलु' नामक उपन्यास भक्ति रस प्रधान रचना है। इस में पोतनामात्य की जीवनी का भी वर्णन कियागया है। [1]''आँध्रप्राँत में 'राचकोंड' नामक राज्य में 'बम्मेर' नामक एक छोटा सा गाँव है। उस गाँव में केतनामात्य नामक शिव भक्त, अपनी पत्नी लक्कमांबा के साथ आराम के साथ जीवन बिता रहे हैं। उन के दो सन्तान है। पहले बेटे का नाम तिप्पना और दूसरे बेटे का नाम पेतना है। राचकोंड राजा की सेना में तिप्पना एक सेनाधिकारी के रूप में काम कर रहा है। लेकिन पोतना अपने जन्मस्थान बम्मेर गाँव में ही रहकर किसान के रूप में जीवन बिता रहा है। बचपन से पोतनामात्य के मन में कविता लिखने की रुची है। उस के अनुसार ही छोटी उम्र में ही उस ने 'वीरभद्र -विजय' नामक रचना करके, समाज में नाम कमाया।'' यह तो ऐतिहासिक सत्य घटना है। कवि सम्राट श्रीनाथ की पत्नी रिश्ते में पोतनामात्य की बहिन है। यह विषय तब मालूम हुआ, जब श्रीनाथ के परिवार को तिप्पनार्य ने चोर डाकूओं से बचाया। एकदिन श्रीनाथ कवि अपनी पत्नी और अपनी बहिन के साथ पालकी में बैठकर जंगल से गुजर रहा था। उस की रक्षा के लिए सिपाही भी थे। परन्तु बीच जंगल में चोर-डाकुओं ने उन पर हमला किया। उस वक्त तिप्पनार्य भी श्रीनाथ के साथ चलने वाले सिपाहियों में एक था। तब वह सिर्फ एक साधारण सिपाही था। लेकिन उसने धीरज बाँधकर वीरोचित ढंग से चोरों को भगादिया। चोरों को भगाने

1. पोतनामात्य - श्री तुम्मलपल्लि रामलिंगेश्वरराव- पृ. - 7-15

में पोतनामात्य ने भी अपने भाई की सहायता की। क्यों कि निकट गाँव में ही वे रहते हैं। घर पहुँचने के बाद श्रीनाथ और उसकी पत्नी ने सब को पहचान लिया। कुशल समाचार पूछने के पश्चात श्रीनाथ को यह मालूम हुआ, कि पोतना एक किसान ही नहीं बल्कि कवि भी हैं। पोतना के द्वारा लिखित वीरभद्र विजयम नामक ग्रन्थ से कुछ गिने-चुने पद सुनाकर श्रीनाथ कवि बहुत खुश होगये।

कुछ समय बीतगया। मरीज होकर श्रीनाथ की पत्नी की मृत्यु हुई। श्रीनाथ अपनी बहिन की शादी पोतनामात्य से करदी। वह बहुत ही सुशील नारी है। वह घर में प्रवेश करते ही परिवार के तमाम सभ्यों के साथ हिल-मिल गई। पोतना के विवाह महोत्सव में भागलेने स्वयं 'राजारावमहीपाल' बम्मेर गाँव आकर, उस ने नव विवाहित दंपत को अपने आशीष दिये। इस विवाह के पहले ही तिप्पनार्य को पदोन्नती मिलचुकी है। क्यों कि उस ने कवि सर्वाभौम श्रीनाथ की रक्षा की । आज तिप्पनार्य साधारण सिपाही नहीं बल्कि सेनाधिकारी बनचुका है। विवाह के पश्चात पोतनामात्य अपनी पत्नी के साथ पुण्यक्षेत्र का दर्शन करने तीर्थयात्रा की। श्रीशैलक्षेत्र में पोतनामात्य ने स्वामी श्री चिदानंदभारति का दर्शन किया। स्वामीजी ने सुमुहूर्त में पोतनामात्य को दिव्य मंत्रोपदेश किया। कुछ समय बीतगया। [1]''पोतना के माँ-बाप चलबसे। उनके अस्तियों को गंगानदी में मिलाने पोतना ने काशी-यात्रा की। अपनी पत्नी के साथ वहाँ के पुण्यक्षेत्रों का दर्शन किया। व्रेपल्ले, मधुरा, बृंदावन आदि प्राँतों का दर्शन करके वापस गाँव पहुँचगया। तब उसे यह समाचार मिलगया, कि उसकी पत्नी गर्भवती है। तुरंत पेतना अपने गुरु, चिदानंदभारती के दर्शन करने श्रीशैलक्षेत्र पहुँचगया। स्वामीजी ने दिव्यदृष्टि से बताया, कि उसके घर में पुत्र का जन्म होगा और उसे भगवान मल्लिखार्जुन स्वामी के नाम पर रखना है। तब ही पोतना ने अपने पुत्र का नाम मल्लना घोषित किया।''

---

1. पोतनामात्य - श्री तुम्मलपल्लि रामलिंगेश्वरराव- पृ. -25-27

4.8.2. काल्पनिकता :

गाँव में रहनेवाले पोतनामात्य मन लगाकर साहित्य सेवा करने में विफल होने लगा। क्यों कि कम उम्र में ही उस पर खेती-बाडी का बोझ आ पडा। उस का पुत्र मल्लना भी दस-साल के उम्र में पिता के साथ कडी धूप में खेतों में मेहनत करने लगा। व्यवसाय काम-काज में भागलेते हुए ही मल्लना अपने पिताजी के पास ही शिक्षा ग्रहण करने लगा। वह बचपन से ही अकलमंद और होशियार साबित होगया। किंवदंतियों पर आधारित यह घटना ऐतिहासिक नही होसकता। क्यों कि इसका आधार इतिहास में कहीं नहीं मिलता। लेकिन जनश्रुतियों के आधार पर लेखक ने अपनी रचना में इस घटना को स्थान दिया। [1]"कवि सम्राट श्रीनाथ सजे हुये पालकी में बैठकर अपनी पुत्री सहित बम्मेर गाँव पहुँचगया। वह एक राजाश्रय कवि होने के कारण तमाम सुख भोगने लगा। उस ने कई बार अपने जीजा पोतना को समझाया, कि राजाश्रय में कवि यश कमकर धन-दौलत के साथ सुख भोग सकता है। परन्तु पोतना ने मृदु वाणी में उस की बात तिरस्कार की। आज तक व्यवसाय पर निर्भर होकर, साहित्य सेवा भी कर रहा है। एक दिन जब श्रीनाथ कवि गाँव के निकट आ पहुँचा, तो वहाँ खेतों में पेतना और मल्लना दोनों कडी धूप में काम कर रहे थे। अपने शान और शौकत दिखाने का सही मौका आगया। इसलिए श्रीनाथ ने पालकी ढोने वाले चार आदमियों में से आगे ढोनेवाले दोनों व्यक्तियों को हटजाने की आज्ञा दी। हरे-भरे खेतों के बीच रास्ते पर पालकी आगे बढरही है। दूर, अपने खेत में काम करने वाले पोतना ने इसतरफ ध्यान नहीं दिया। परन्तु बालक मल्लना ने उस तरफ देखकर अचरज होगया। तुरन्त उसे यह ज्ञात हुआ कि पालकी में आनेवाले अपने रिश्तेदार हैं। बालक मल्लना ने अपने पिताजी को यह ज्ञात कराया कि रिश्तेदार पालकी में आरहे हैं। उसने यहभी बताया, कि पालकी हवा में चलरही है। अपनी ओर देखनेवाले मल्लना को पहचान कर श्रीनाथ ने पीछे ढ़ोनेवाले सेवकों को भी हठादिया। अब पूरी पालकी हवा में चलने लगी। यह सब मल्लना के द्वारा

---

1. पोतनामात्य - श्री तुम्मलपल्लि रामलिंगेश्वरराव- पृ. - 43-47

सुनकर, पोतना ने पालकी की तरफ ध्यान तक नही दिया। उस ने मल्लना से कहा कि हल को खींचनेवाले बौलों को हटादे। तुरन्त मल्लना ने वह काम पूरा किया। अब बिना बैल, हवा में ही हल खींची जा रही है। अर्थात श्रीनाध ने जो शान और शौकत दिखा दिया, उस के बदले, पोतना ने यह काम किया।'' इस घटना से श्रीनाथ का गर्वभंग होगया। यह दृश्य देखकर श्रीनाथ की पुत्री हर्षध्वनी करने लगी। श्रीनाथ ने पोतना से क्षमा माँगलिया। शायद यह काल्पनिक घटना हो सकती है।

4.8.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

राजाश्रय कवि श्रीनाथ का स्वागत धूम-धाम से बम्मेर गाँव में किया गया है। कुचेल की तरह जीवन बिताने वाले कृष्ण भक्त पोतना के घर में श्रीनाथ को बहुत ही स्वादिष्ट भोजन, मीठे पकवान के साथ परोसा गया। यह भगवान विष्णु की माया ही हैं। गाँव के तमाम लोग वहाँ आकर श्रीनाथ का दर्शन करने में तत्पर होने लगे। उन के द्वारा अनेक खाद्य चीज लाईगई। तीनदिन तक श्रीनाथ वहाँ टहरा। राजदरबार में जितने भी खाद्य चीज परोसजाती है, उतनी चीज के सहित स्वादिष्ट भोजन परोसा गया। लेकिन पोतना तो अपनी सूखी रोटी के बिना खाता ही नहीं। यह ऐतिहासिक घटना है, कि पोतना के बेटे के साथ श्रीनाथ की पुत्री का विवाह हुआ। [1]''भोजन के पश्चात श्रीनाथ ने अपनी एकलौती बेटी को पोतना की पत्नी को सौंपकर दुःख भरे स्वर से कहा कि बहिन मेरी बेटी के जीवन में माँ के प्यार और वात्सल्य का अभाव है। इसलिए आज तक उसे माता का प्यार नहीं मिला। क्यों कि बचपन मे ही उसकी माँ परलोक सिधरगई। आज उस के साथ मै हूँ, मगर कल मुझे कुछ होजाये, यदि मै मरजाऊँ तो वह अनाथ लडकी बनजायेगी। इसलिए उसे अपनी बहू बनाकर उसे माता-प्यार दो। उस वक्त पोतना भी वहाँ बैठा है। श्रीनाथ की बात मानकर पोतना ने भी अपने बेटे का विवाह श्रीनाथ की बेटी के साथ करने केलिए स्वीकार देदिया।'' पोतना के मुह से विवाह की स्वीकृती की बात सुनकर श्रीनाथ की आँख भरआई।

---

1. पोतनामात्य - श्री तुम्मलपल्लि रामलिंगेश्वरराव- पृ. - 72-75

वह निश्चिंत मन से वहाँ से देशटन करने निकल पडा। सयान होने के पश्चात मल्लना और शारदा का विवाह धूम-धाम से किया गया है। दिन बीतने लगे। 'श्रीमद्भागवत की रचना' समपन्न हुई। 'भागवत' रचना के बारे में चारों तरफ यशोगान व्याप्त होने लगे। इस रचना का मूलकारण साधारण जनता तक भगवान श्री कृष्ण की कहानी को पहुँचाना। लेकिन अनेक राजा लोग उसे अपने दरबार में प्रतिष्टित करने उत्सुक हैं। ऐसे राजाओं में से राचकोंड राज्य के राजा भी एक है। उस के राज्य में बम्मेर गाँव में रहनेवाला पोतना है। राजा ने पोतना के भाई तिप्पनार्य के द्वारा अपने दरबार में पधारने यह आह्वन पत्र भेजा। परन्तु पोतने ने हँसते-हँसते उसे तिरस्कार किया। यह समाचार मिलते ही राज, आग बबूल होगया। उस के मन में किसी भी तरह 'भागवत' ग्रन्थ को हडपलेनी की इच्छा प्रबल होगई। अगली बार राजा ने दलपति चिन्नमदेव को भेजा। यहाँ उपन्यासकार ने काल्पनिकता का सहारा लिया। [1]" दलपति चिन्नमदेव ने पोतना के घर पर हमला किया। परन्तु उसी वक्त एक जंगली सुआर पागल की तरह वहाँ आकर सेना दल पर हमला किया। उस के प्रचंड प्रहारों से दल के सभी सिपाही घायल होकर, भयभीत होकर वहाँ से भगगये। सुअर के प्रहार तीव्ररूप होकर दलपति चिन्नमदेव वही कटे वृक्ष की भाँति मरगया। इस घटना से राजा भी घबरा उठा। पोतना ने अपनी अनुपम रचना भागवत को भगवान श्री कृष्ण के नाम अंकित किया।" तिप्पनार्य भी नौकरी छोडकर व्यवसाय करते अपने गाँव में ही रहने लगा। राचकोंड राजा के दुर व्यवहार के बारे में सुनकर जंगल में सन्यासाश्रम में जीवन बितानेवाले अल्लसानी पेद्दना का मन विकल होगया। इसलिए उस ने पुष्पग्रंध नामक राजनर्तकी को अपने पास बुलाकर किसी भी तरह पोतना को राजा की बुरी नजर से रक्षा करने का भार सौंप दिया। पेद्दना की योजना के अनुसार पोतना अपने परिवार के साथ श्रीशैलक्षेत्र में निश्चिंत रूप से रहने लगा। शायद यह काल्पनिक घटना हो सकता है। बहमनी सुल्तान ने दुराक्रमण करके राचकोंड राज्य को आक्रमण किया। पोतना ने श्रीशैलम, त्रिपुरांतकम,

1. पोतनामात्य - श्री तुम्मलपल्लि रामलिंगेश्वरराव- पृ. - 140-150

महानंदि आदि पुण्यक्षेत्र का दर्शन किया। अंत में 'ओंटिमिट्ट' प्राँत में रहने लगा। पोतना के बारे में जानकर गजपति राज 'नरेंद्रकुमार' वहाँ आकर पोतनामात्य के आशीश लेचुका है। कवि की विनती मानकर बहमनी सेना को परास्त करके राचकोंड राज्य को स्वतंत्रता दिलाया। राजा के आह्वान पर पोतना ने फिर वापस बम्मेर गाँव की ओर प्रस्थान किया। बीच रास्ते में कोंडपल्लि गाँव में मल्लना और शारदा का विवाह सम्पन्न हुआ। इसीबीच श्रीनाथ का देहावसान हुआ। अंत में पोतना ने अपने ही गाँव में जीवन त्याग दिया। यह उपन्यास सफल जीवनीपरक रचना है।

4.9. लकुमादेवी

4.9.1. ऐतिहासिकता :-

यह उपन्यास लेखक 'लल्लादेवी' द्वारा लिखित जीवनीपरक उपन्यास है। 'लकुमा' नामक चरित्र एक ऐतिहासिक चरित्र है। आँन्ध्र के वैभवपूर्ण गरिमामय इतिहास में 'रेड्डि साम्राज्य' अपना विशिष्ट महत्व रखता है। 13वी शती में कुमारगिरि कोंडवीडु राज्य पर शासन करते थे। उन्हीं के समय का इतिहास कल्पना के परिवेश में प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास की रचना में लेखक ने ऐतिहासिक घटनाओं की रक्षा करते हुए उसकी पुष्टि के लिए कल्पना का सहारा लिया है। अर्थात इस में कल्पना का अंश भी कम नहीं है, पर इतिहास की पृष्टभूमी में ही उसका विस्तार हुआ है।

'लकुमा' एक देवदासी थी। वह कुमारगिरी राजा की प्रेयसी बनी। उसने सम्राज्य की रक्षा के हेतु आत्माहुती करदी। यह घटना ऐतिहासिक सत्य है। शेष घटनाओं में से अधिक काल्पनिक घटनायें भी हैं। उपन्यास के पात्रों में से सोमदेव और गुप्तचार दोनों काल्पनिक हैं। बाकी तमाम चरित्र तो ऐतिहासिक हैं। लकुमा उच्चकोटी की नर्तकी है। उसके नृत्य ने सम्राट को नाट्य शास्त्र के प्रणयन की प्रेरण

दी। यद्यपि 'वसंत राजीय' नामक नाट्य शास्त्र आज पूर्ण रूप में उपलब्ध नहीं है, यद्यपि उस के कई अध्याय और शलोक यत्र-तत्र उद्धृत कियेगये हैं। उनके आधार पर नाट्यशास्त्र की रचना की पुष्टि होती है। लकुमा की आत्महत्या के पश्चात सम्राट में मानसिक परिवर्तन हुआ, और उन्हों नें साम्राज्य के उत्थान में पूर्ववत योग दिया। [1] "चौदहवी शती में आंध्रप्रदेश में शक्तिशाली काकतीय साम्राज्य टूटगया। उस साम्राज्य के सेनापतियों ने अपने अपने अलग राज्यों का निर्माण किया। इन सेनापतियों मे प्रोलय रोडडी मुख्य है। वह काकतीय साम्राज्य के अन्तिम सम्राट प्रतापरुद्र के सेनापति थे। उन्हों ने अदूंदकि को अपनी राजधानी बनाकर रेड्डी साम्राज्य की नीव डाली। रेड्डिराज्य के द्वितीय सम्राट वेमारेड्डी थे। इसका पुत्र अनपोता रेड्डी था। इस के बाद, इस का पुत्र कुमार रेड्डी सम्राट बनगया था।"

कुमारगिरिरेड्डी महान शासक ही नहीं बल्कि कलाभिमानी भी है। इसका प्रधान सेनापति और महामंत्रि काटय वेमारेड्डी है। वह राजा के बहनोई है। वे बल, पराक्रम और राजनीती के क्षेत्र में चतुर माने जाते हैं। एक बार दोरपरेड्डी नेल्लूर के निकट शत्रु को भगाकर लौटते हुये रास्ते में 'चीराला' नामक प्राँत में पडाव डाला था। उसे समाचार मिला है, कि 'बापटला' के भावनारायण स्वामी मन्दिर में एक अपूर्व लावण्यवती बाला नृत्य करती है। वह माननीय अपसरा प्रतीत होती है। शायद यक्ष, गंधर्व, किन्नेर अथवा विद्याधर की कन्या है। राजधानी लौटते समय, वह मंदिर में घुसकर नर्तकी को उठाकर राजा के मंदिर में आगया। उसने तोहफे के रूप में नर्तकी को समर्पित किया। यह देखकर पहले राजा नाराज होगया और बाद में प्रशांत होकर उसने नर्तकी के बारे में पूछा। उस लावण्यरासी का नाम 'लकुमा' है। इस घटना के बारे में बापटला के भावनारायण मंदिर के शिलाफलक पर उदधृत किया गया है।

[2] "लकुमा का जन्म बापट्ला में एक देवदासी परिवार में हुआ। माता का नाम वल्लेमा और पिता का नाम 'कापरेड्डी' है। माता बापट्ला के भावनारायण

---

1. लकुमादेवी- लल्लादेवी - पृ. - 1-5
2. लकुमादेवी- लल्लादेवी - पृ. - 29-31

स्वामी मंदिर की देवदासी है। बचपन से वह नृत्य सीखने लगी। अट्ठारह साल की उम्र मे कदम रखते ही वह नृत्य में प्रवीण होगई है। विराम के समय वह भगवान के सामने नृत्यु किया करती है। भरतनाट्य, भामा-कलाप, वीधि भागवत, यक्षगान आदि नृत्यु सम्प्रदायों से वह भली-भाँति परिचित है। उस के पठन-पाठन की वयवस्था पर ही की गई है। इस प्रकार अपने बारे में पूरा परिचय लकुमा देती है।'' राजा बहुत ही प्रसन्न होकर उस के साथ एक भद्र परिवार की नारी की तरह व्यवहार करने की आश्वासन देता है। लकुमा की इच्छा के अनुसार उसे राजधानी में ही उचित मंदिर दिया जाता है, जिस में पतिव्रत्य की रक्षा की व्यवस्था है। लकुमा ने राजकीय निवास गृह में पहुँचकर देखा, भवन के विभिन्न कक्षों में वैभवपूर्ण समाग्री सुसर्ज्जित है और नौकर-चाकर है, जो उसके हर आदेश का पालन करने को मानो तैय्यार हैं। यह सब देखकर लकुमा को अपनी माँ की बात याद आगई। उस की माँ कहती थी कि जोतिष्यों के अनुसार लकुमा को रानीवास की जिन्दगी बसरना है। राज्य में जहाँ भी देखो सुख ही सुख से लोग जीवन बिता रहे हैं। लकुम भी तन्मय होकर जीवन बिताने लगी।

4.9.2. काल्पनिकता :

कोंडवीडु राज्य में चैत्रोत्सव का शुभारंभ हुआ। समारोह, 'वसन्तोत्सव' नाम से भी विख्यात है। इस उत्सव में राज्य के मंत्रि, सामंत, दंडनाथ, मंडलाधिपति तथा नगर के प्रतिष्ठित नागरिक उचित आसनों पर बैठे थे। साधारण प्रजा भी वहीं मौजूद थी। अनेक कलाकार अपनी कलाओं का प्रदर्शन करने लगे। अंत में नृत्य कला-प्रदर्शन हुआ। राजा के आमंत्रण पर लकुमा नृत्य करने लगी। सम्राट अपने शरीर को सहस्त्र नेत्र बनाकर नर्तकी के कौशल का अवलोकन करने लगे। तमाम् लोग नृत्य में तल्लीन होकर अपने आप को खों बैठे हैं। सम्राट ने लकुमा को राजनर्तकी नियुक्त की और उस के निवास तथा अनन्य आवश्यक व्यवस्थाएं राज्य की ओर से की जाने की घोषणा की। लकुमा के नृत्य ने कुमारगिरि के मन-मयूर को जगादिया। वे सोचने

लगे, मैं जिस शास्त्र का प्रणयन करना चाहता हूँ, वह तो लकुमा के व्यक्तित्व में विद्यामान है। कुमारगिरि राज्य की ओर से निश्चिन्त होकर साहित्य की रचना में निमग्न होगये। वे नाट्य शास्त्र के अच्छे ज्ञाता, एवं नृत्य के अनुपम प्रेमी थे। लकुमा के नृत्य से प्रभावित होकर राजा नाट्य शास्त्र पर समीक्षा लिखना चाहता है। इस विचार से महरानी सम्राज्ञी मल्लांबिका बहुत ही चिन्तित है। आखिर एक दिन लकुमा के मंदिर में राजा कदम रखता है। वहाँ लकुमा के नृत्य की विभिन्न भंगिमाओं का प्रदर्शन वह देखना चाहता है। राजा के पट्टाभिषेक की दसवी वर्षगांठ के अवसर पर जो उत्सव मनाया जाता है, उस में राज की इच्छा पूरी होती है। राजा की आज्ञा के अनुसार राजशिल्पि सोमदेव ने नृत्य भंगिमाओं में शिल्प को लकुमा की आकृति देकर बनाया। धीरे-धीरे राजा लकुमा के नजदीक हो जाता है। उन्हों ने नाट्य-शास्त्र का निर्माण करने की अपेक्षा योजना बद्ध रूप से कार्य करने का निश्चय किया। उन्हों ने लकुमा को आदेश दिया कि वह प्रति दिन पूर्व-तैय्यारी के बाद ही नवीन नृत्य प्रस्तुत किया करे। फिर, वसंत-पंचमी के दिन शुभ मुहर्त में सम्राट ने अपने भावी नाट्यशास्त्र के प्रणयन का श्रीगणेश किया। नर्तकी और सम्राट का सहचर्य समीप से समीपतर होता गया। परस्पर प्रेम करने लगे। एक दिन नृत्यु करते-करते थक कर लकुमा सम्राट के गोद में जा गिरी। उस क्षण से दोनों शारीरिक रूप से भी एक होगये थे। यह समाचार धीरे-धीरे फैलगया था, कि नर्तकी लकुमा का घर ही राजा के विश्राम घर बना गया है। यह समाचार गुप्तचारों के द्वारा विजयनगर शासकों तक पहुँचगया था। आखिर हरिहरराय ने कोंडवीड के सीमाप्रांतों पर आक्रमण किया। यह समाचार प्राप्त करके भी राजा युद्ध के लिए नहीं जासका। क्यों कि राजा लकुमा के प्रमे सागर में तल्लीन होने लगा है।

4.9.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

दुराक्रमण को रोकने के लिए महाराज ने काटय वेमारेड्डी को आज्ञा दी। घमासान युद्ध के बाद काटय्या के हाथों मे हरिहरराय पूरी तरह हारगया। विजय-

घोष से कोंडवीडु में उत्साह की लहर दौडगई। तोहफे के रूप में हरिहरराय ने काट्य्या की शादी अपनी पुत्री से कर दी। सम्राट ने उन दोनों का विवाह धूम-धाम से कर दिया । कई दिनों के बाद सम्राट ने शादी के अवसर पर सम्राट ने लकुमा के घर से बाहर कदम रखा। साम्राज्ञी मानसिक व्यथा से व्याकुल है। महारानी के लिए स्वयं सम्राट ही एक सामस्या बने हुये हैं। ले किन कुछ समय के बाद सम्राट तीर्थयात्र केलिए निकल पडता है। नियमानुसार राजा को रानी के साथ जाना पडता है। मगर नाट्य शास्त्र लिखने के लिए राजनर्तकी लकुमा को साथ लेकर राजा तीर्थयात्रा करने चले जाते हैं। मल्लांबिका फूट-फूट कर रो पडती है। कुछ समय पश्चात् बहमनी सुल्तान राज्य पर दुराक्रमण करते हैं। लेकिन कटय्य के साहस के सामने सुल्तान को हार मानकर वापस लौटना पडा। सम्राट द्राक्षाराम में कुछ समय व्यतीत कर लकुमा समेत राजधानी लौटे। साम्राज्ञी का स्वास्थ्य बहुत ही गिर गया। रात के वक्त महरानी स्वयं लकुमा के पास जाकर, उससे अपनी पती की भिक्षा माँगती है। राजा को राज्य के हवाले करने को कहती है। रानी की बात मानकर लकुमा आत्मदान देने के लिए तैय्यार होती है। दूसरे दिन राजा ने नाट्यशास्त्र के शेष अध्याय पूरा किया। मरने से पहले राजा से वह एक वचन लेती है ।उस के वचन के अनुसार राजा फिर एक बार लकुमा के पूर्व की तरह राज्य शासन करने लगा। नाट्य-शास्त्र रक्त से अभिसिंचित होगया है।

4.10. रोशनारा

4.10.1. ऐतिहासिकता :—

श्रीप्रसाद द्वारा लिखित ऐतिहासिक उपन्यासों में 'रोशनारा' एक विलक्षण रचना है। साधारणत: उपन्यासकार महान, और उत्तम चरित्रवाले व्यकित्यों की जीवनीयों पर आधारित उपन्यास लिखते हैं। परन्तु पहलीबार खलनाइका के रूप में प्रसिद्ध विलक्षण चरित्रवाली रोशनारा की जीवनी पर आधारित उपन्यास लिखगया है। रोशनारा एक ऐसी नारी है, जिस में विचित्र और विपरीत लक्षण है। प्रस्तुत रचना

में उपन्यासकार ने अनेक एतिहासिक घटनाओं को आधार बनाकर रोशनारा का चरित्र चित्रण किया है। इसलिए यह सफल ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है। [1]"भारत के इतिहास में मोगल वंशज औरंगजेब बहुत ही खतरनाक और निर्दय राजा है। ऐसे कठोर मनवाले सम्राट औरंगजेब से ही अधिक कठिन और निर्दय स्वभाव वाली रोशनारा बदसूरत और कुरूप है। शाहजहाँ के संतान में से यह बहुत अनाकारी है। बचपन से ही उसे माँ-बाप का और भाई-बहनों का लाड-प्यार नहीं मिला। सब लोग उसे घुणा भरी दृष्टि से देखते रहे। फलत: उसके मन में विपरीत लक्षण उत्पन्न होगये। वह इतना बदसूरत दिखती है, कि मानो नपुंसक हो। काली वर्ण में पुरुष लक्षणों के साथ वह दिखाई देती है। इस प्रकार बचपन से ही वह पुरुषद्वेषी बनगई। सम्राट औरंगजेब भी बदसूरतवाला है। इसलिए शाहजहाँ की नजर में रोशनारा और औरंगजेब एक ही है। फलत: ये दोनों भाई-बहन, माँ-बाप के प्यार से वंचित है।"

रोशनारा इस्लाम धर्म की परम-भक्तिन है। इस्लाम धर्म के कठोर नियमों का पालन करना उस का खास लक्षण है। इसलिए इस्लाम धर्म का परम भक्त औरंगजेब भी उस के साथ मिलकर अपने पिता के खिलाफ ही षडयंत्र करके सिंहासन के साथ राज्याधिकार भी अपने वश में करलेते हैं। रोशनारा का मनोभाव बहुत ही कठोर है। [2]" इस्लाम धर्म की रक्षा के लिए ही उसने औरंगजेब को सम्राट बनाने में सफलता प्राप्त की। शाहजहाँ के संतान में औरंगजेब सब से छोटा है। नियमानुसार बडा पुत्र ही राज बनता है। रोशनारा ने औरंगजेब को सम्राट बनाने केलिए एक योजना बनादिया। बन्धु-प्रीति छोडकर उस ने अपने बडे भाई को हराने केलिए दूसरे भाई मुगद को प्रोत्साहन देती है। वे दोनों आपस में लडते-लडते मरजाते हैं। तीसरे भाई शुजा को शराब में जहर मिलाकर उस की हत्या करडालती है। इन तमाम कार्यों के पीछे रोशनारा का राजनैतिक ज्ञन है।"

---

1. रोशनारा - श्रीप्रसाद - भूमिका
2. रोशनारा - श्रीप्रसाद - पृ. - 5

बचपन से ही औरंगजेब अपनी बहन रोशनारा से अधिक निकट रहकर, इस्लाम धर्म के नियमों का पालन करना, तक्त को हाजिल करने के प्रयत्न करता रहा। छुटापन से ही कुरूप रोशनारा के मन में विद्रोह भावना अधिक हो गई। उसने औरंगजेब को सम्राट बनाने के लिए, अपने सगे भाईयों को मारडाला और पिताजी को भी आगरा के किले में खैद करवादिया। उस ने अपने जीवन के अंत तक अन्याय, अधर्म, अकृत्य किये। औरंगजेब के सम्राट बनने के पश्चात उसका अधिकार इतना वस्तिार होगया, कि वह भगवान को भूलकर अपने आप को फरिस्ता (देवता) मेहसूस करने लगी। उस की कुटनीती और योजना के सहारे सम्राट बने औरंगजेब सिर्फ रोशनारा की बात ही मानता है। और उस से डरता भी है। [1]"रोशनारा बहुत ही कुरूप और काली है। स्त्री होकर भी उस में पुरुष लक्षण अधिक है। इसलिए वह ज्यादा समय परदे मे ही रहकर सिर्फ अपनी आँखे ही दिखाती है। एकदिन अपनी प्रधान सेविका जुमेलिया के साथ पालकी में सैरकरने विंध्या-पहाडों मे गई। पिंडारी नामक अनुसूचित जनजाति के लोगों ने उस पर हमला करके, लूटने का प्रयत्न किया। आखिर उन्हों ने रोशनारा को नपुंसक मानकर मारने का यत्न किया। इतने में माराठा की सेना वहाँ पहुँच गई। शिवाजी ने पिंडारियों को भगाकर रोशनारा की रक्षा किया।" यह ऐतिहासिक सत्य है। नारियों की तरफ देखे बिना शिवाजी ने वहाँ से प्रस्थान किया। अपनी सेविका से रोशनारा को यह मालुम हुआ, कि वीर-सूर-पराक्रमी का नाम छत्रपति शिवाजी है। पहलीबार उसे एक मर्द के प्रति प्रेम-और मोह उत्पन्न हो गये। पहले वह नहीं जानती, कि उस वीर योद्धा का नाम शिवाजी है। शिवाजी ने अपनी सिपाहियों को रक्षक बनाकर पालकी के साथ आगरा के सीमा प्राँत तक भेजा। रास्ते में रोशनारा का मन उस वीर के प्रति प्यार से भरगया। अंत में उसे मालूम हुआ, कि वह वीर शिवाजी ही मुगल बादशाह का शत्रु है। हिन्दु राज्य की स्थाना में वह व्यस्त है। फिर भी रोशनारा का प्यार कम नही हुआ। औरंगजेब की नजर में शिवाजी एक खाफिर है। लेकिन एक खाफिर के लिए रोशनारा अपना जीवन ही अंत करलेती है।

---

1. रोशनारा - श्रीप्रसाद - पृ. - 57

4.10.2. काल्पनिकता :

रोशनारा के सलाह पर ही औरंगजेब ने रानिवास की रक्षा केलिए नपुंसकों को तैनात किया। यह ऐतिहासिक सत्य है, कि औरंगजेब के जमाने में रानिवास की रक्षण कार्य संभालने एक प्रत्येक सेना-दल था, जिस में नपुंसक-वीर थे। रोशनारा की देख-रेख में तमाम रानिवास रहता है। पौरुष हीन नपुंसकों की कडी परीक्षा दरबारी हकीमों के द्वारा की जाती है। औरंगजेब की बेटी फकृन्नीसा के साथ प्रेम व्यवहार करनेवाले नपुंसक वेषधारी युवक को रोशनारा ने कोडे से मरवाकर यमुना नदी में फेंक दिया। एक बार रोशनारा के कमरे के सामने पहारा देनेवाला नपुंसक सोरहा था। यह देखकर औरंगजेब ने उसे वहीं तत्काल मारडाला। इस प्रकार रानिवास के नियम बहुत कठिन हैं। कभी-कभी औरंगजेब अपनी बहन रोशनारा की सलाह पर जटिल समस्याओं को हल करता है। औरंगजेब के जीवन में शिवाजी के अलावा अन्य कोई शत्रु नही रहा। शिवाजी को अंत करने के लिए उस ने बहुत सोच-विचार किया। अंत में उसे, इस संदर्भ में अपनी बहिन रोशनारा की सलाह लेनी पडी। शिवाजी का चित्र देखकर रोशनारा अवाक रहती है। उस के मन में मोह भाव उत्पन्न होती। किसी भी तरह शिवाजी के साथ एक रात बिताना चाहती है। [1]''शिवाजी को हराकर बन्धी बनाने स्वयं राकुमारी रोशनारा अपनी मोगल सेना सहित रहाना चाहती है। उस की रक्षा के लिए जोदपुर का सामंत राजा जस्वंतसिंह भी उस के साथ युद्ध क्षेत्र में आजाता है। राजा जस्वंत, सामंत होने पर भी, वह हिन्दू धर्म का है। हिन्दू राज्य स्थापन के लिए काम करने वाले शिवाजी के खिलाफ युद्ध करना, उस के लिए परीक्षा है। रोशनारा यह जानकर जस्वंत पर कडी नजर रखती है। मराठ-सेना-दल बहुत ही होषियार, होनहार और पराक्रमी है। घने जंगल में छदम वेषदारी शिवाजी की मुलाकात जस्वंत से होती है। वास्तव में पूना-किले के बारे में जानकारी लेने जस्वंत जंगल में भटकने लगा था। वे दोनों आपस में मिलकर हिन्दू राज्य की स्थापन के लिए एक-दूसरे की मदद करने निश्चय करलेते हैं। योजना के अनुसार 'पूना

---

1. रोशनारा - श्रीप्रसाद - पृ. - 92-97

किले' के दोनों तरफ से आक्रमण होता है। जस्वंत सिंह अपनी सेना सहित दूसरी ओर आक्रमण करने चलाजाता है। रात के वक्त मोगल सेना जब गहरी नींद में थी, तब मराठ-सेना ने आक्रमण किया। मुगल-सेना तितर-बितर होजाती है। अंधकार में मधिरापान के उन्मत्त में आपस में लडकर कई मोगल सिपाही मारे जाते हैं। मराठ-सेना के साथ अपने राजा शिवाजी के पास यह समाचार भेजती है। समाचार लानेवाले दो-तीन सिपाहियों में से एक सिपाही आगे बढ़कर शिवाजी के सामने यह खुश खबरी सुनादी कि मुगल-सेना परास्त होगई। शिवाजी ने आनंद के साथ युव सिपाही को गले लगालिया। तब उसे मालूम हुआ कि वह छदम वेषधारी रोशनारा है। रोशनारा ने अपनी मोह भरी इच्छा व्यक्त की। लेकिन शिवाजी ने उसे 'माँ' कहकर वहाँ से चलेजाने को कहा। लेकिन रोशनारा ने शपद किया कि किसी भी तरह वह, शिवाजी को या तो हाजिल करेगी वरना उस का अंत करेगी।'' यह ऐतिहासिक सत्य है कि जस्वंत सिंह के कारण एकबार मुगल सेना परास्त होगई।

4.10.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

अपमान से औरंगजेब का मन ग्लानी से भरजाता है। अंबर देश का राजा जयसिंह ने औरंगजेब को स्वांतना देकर संधि करने पूना पहुँचता है। शिवाजी के सामने वह दो विषय व्यक्त करता है, कि एक है उसे दक्षण भारत का राजप्रतिनिधि बनाकर, औरंगजेब को सम्राट मानना और दूसरा युद्ध के लिए संसिद्ध होना। राजप्रतिनिधि बनकर रहने के लिए, वह राजी होजाता है। [1]''इस अवसर पर औरंगजेब ने शिवाजी को दिल्ली आने का निमन्त्रण किया। शिवाजी अपने बेटा शंभूजी के साथ दिल्ली पहुँचता है। लेकिन वहाँ उन दोनों को बंदी बना दिया। औरंगजेब किसी भी तरह शिवाजी और शंभूजी को मारना चाहता है। परन्तु देश भर में हिन्दू विद्रोह करेंगे। इसलिए उसने रसोइया को यह आज्ञा दी, कि शिवाजी के भोजन में ऐसा जहर रोज मिला दिया जाय, जिस के कारण वे दिन-ब-दिन निर्जीव

---

1. रोशनारा - श्रीप्रसाद - पृ. - 144-150

और सुस्त हो जाय। यह पहचान कर रोशनारा ने उस रसोइये को रिश्वत देकर उस का मन बदल देती है। अंत में भी रोशनारा को 'माँ' कहकर शिवाजी ने उस का मन जीतलिया। रोशनारा मोहित मन से शिवाजी और शंभूजी को भाग जाने का रास्ता दिखाती है। यह जानकर औरंगजेब कृधित होकर स्वयं अपने हाथों से जहर मिलाकर पानी देता है। विरक्त मन वाली रोशनारा हंसती हुई, उसे पीकर प्राण त्याग करलेती है।'' यह ऐतिहासिक सत्य है कि रोशनारा ने आत्महत्या करली। यह सफल जीवनीपरक उपन्यास है।

4.11. रुचीदेवी

4.11.1. ऐतिहासिकता :-

विद्वान परवस्तु वेंकय्य सूरी द्वारा लिखित यह रचना, आँध्र-प्राँत में विख्यात एक ऐतिहासिक तालाब के निर्माण के बारे में शिला लेख पर उद्घृत शासन पर आधारित है। सूरीजी ने शासन को केन्द्र-स्थान बनाकर पूरे इतिहास का छान-बीन करके इस तालाब का निर्माण करनेवाले महारनी रुचीदेवी की जीवनी का वर्णन प्रस्तुत उपन्यास में किया गया है। आँध्रसाहित्य के इतिहास में इन घटनाओं का जिक्र किया गया है। इसलिए यह ऐतिहासिक उपन्यास है। [1]''कटक नगर को राजधानी बनाकर प्रतापरुद्र गजपति महाराज कलिंगराज्य का प्रशासन कर रहे थे। उस के दो पुत्र और एक पुत्री है। उन के नाम रामचन्द्रदेव, वीरभद्र और जगन्मोहिनी है। एकलौती और लाडली बेटी होने के कारण उस के विभिन्न नाम रखे गये हैं। उस के नाम दुर्गादेवी, भद्री, तुक्कादेवी, ज्योतिर्मई, रुचीदेवी, अन्नपूर्णादेवी, सुभद्र आदि है। वह बहुत सुन्दर, सुकोमल, सुशील, होशियार और लावण्यवती है। प्रशासन संबंधी जटिल समस्याओं को हलकरने में, राजनैतिक विषयों में, वह अपने पिता महराजा की सहायता करती रहती है। महराजा, अपनी बहिन मयादेवी के पुत्र नरहरिपात्र को भी अपने सन्तान की तरह देख-रेख करने लगा। क्यों कि उस के माता-पिता

---

1. रुचीदेवी - श्री वेंकय्य सूरी - पृ. - 2-7

चलबसे थे। प्रतापरुद्र महराजा अपनी बेटी का विवाह नरहरिपात्र के साथ करना चाहता है। परन्तु महरानी तो, उस की शादी अपने भाई वीरेन्द्र के साथ करदेना चाहती है। ''

राजकुमारी रुचीदेवी असामान्य लावण्यवती, सौन्दर्यवती, सविनयी और सुशील नारी है। संगीत, साहित्य, नृत्य आदि कलाओं में प्रावीण है। महराजा के प्रशासन संबंधी विषयों में सलाह देने की राजनैतिक क्षमता भी वह रखती है। वह भगवान श्रीराम की अनन्य भक्तिन है। वह सदा रामायण के पद गाती हुई अपने पिता के मन को आनन्द और शांति पहुँचाती है। इसलिए गजपतिराजा की, वह लाडली बेटी है। [1]''विजयनगरादीश श्रीकृष्ण देवराय की विजययात्रा ऐतिहासिक घटना है। देवराय ने अपने सम्राज्य को विस्तार करते समय, प्रतापरुद्र गजपति ने देवराय को सम्राट मानने के लिए इनकार किया। दोनों के बीच युद्ध हुआ और अंत में देवराय की जीत हुई। फलत: गजपति ने संन्धि बनाते हुए अपनी बेटी रुचीदेवी की शादी देवराय के साथ की।'' वास्तव में गजपति यह विवाह नही चाहता था। परन्तु स्वयं देवराय ने रुचीदेवी का हाथ माँगा। गजपतिराजा के सामने दूसरा रास्ता नहीं है। देवराय के खिलाफ वह कुछ नही कर सकता। युद्ध मे हारकर वेष बदलकर परिवार सहित गाँव-गाँव भटकते हुये, विवश होकर, उस ने अपनी बेटी का विवाह देवराय के साथ करने का निर्णय लिया।

एकदिन गजपतिराजा ने अपनी बेटी से कहा [2]''बेटी। मैं विवश होकर तुम्हारी शादी देवराय के साथ करदेना चाहता हूँ।' जगन्मोहिनी ने जवाब दिया, 'पिताजी! देवराय स्वयं मुझे चाहा और मुझे प्राप्त करने के लिए हमारे राज्य पर चढाई की। मेरे वजह से उत्कल राज्य की बरबादी, मैं देखनही सकती। उत्कल राज्य की सुरक्षा की दृष्टि से आप संधि के लिए राजी होजाइये। मेरे भाग्य में जो लिखा है

1. रुचीदेवी - श्री वेंकय्य सूरी - पृ. - 14-19
2. रुचीदेवी - श्री वेंकय्य सूरी - पृ. - 43

वही होगा।'' इस प्रकार गजपतिराजा और उसकी बेटी के बीच वार्तालाप हुआ है। [1]'' महामात्य तिम्मरुसु के आह्वान पर उत्कल साम्राज्य के सिंहासन पर गजपति राजा विराजमान होगये। इस के बाद, एक दिन गजपतिराजा ने क्षत्रियकुल के शान और शौक्य सहित राजपौराणिकों के एक समूह को, होने वाले दामाद श्री कृष्ण देवराय को मंगलासन करवाकर, सम्मान सहित, विवाह केलिए उत्कल राज्य ले आने के लिए भेजा। परन्तु महामात्य तिम्मरुसु ने कहा कि अब दिग्विजय यात्रा दीक्षा सहित है। इसलिए विवाह के लिए वे वहाँ लेजाइये और शादी का कार्य पूराकरके वधु सहित वीरखड्ग को विजजनगर भेजिये। वीर खड्ग के साथ हमारे पौराणिक भी वहाँ उपस्थित होंगे।'' यह महामात्य की राजनीती का एक उदाहरण है। एकबार पराजित राजा शत्रु के सामने है। इसलिए अकल के साथ महामात्य ने आनेवाले संकट को टालदिया। बहुत ही धूम-धाम से विवाह सम्पन्न होता है। शान के साथ गजपति राजा ने अपनी बेटी का विदा किया। नववधु के अह्वान के लिए विजयनगर सुन्दर ढंग से अलंकृत किया गया है। सुहागरात के दिन दुर्घटना घटती है। यह शायद काल्पनिक संघटना होसकती है। क्यों कि इस का जिक्र इतिहास में नहीं है। [2]''वधु के रूप में राणी रूचीदेवी राजा के प्रासाद में कदम रखती है। राजा देवराय मर्मगर्भित रूप में हंसते हुए, रानी के पास पहुँचा और उसे गले लगाने के बिना दूर से ही रानी के कटिभाग पर अलंकृत सोने के आभूषण को अपने हाथ से दबाया। तुरंत उस के छेद में से एक छोटा चाकु निकला, जिस पर विष का प्रलेप है। यह देखकर रानी अवाक रहगई। इसे राजा ने षडयंत्र मानकर रानी को राज्य से बाहर निकलजाने की आज्ञा दी। वास्तव में रानी की दासी ने विद्रोहकारियों की बातों में आकर यह सबकुछ किया। उस ने बयान दिया, कि रानी निर्दोष है। यह जानकर महामंत्रि ने राजा को समझाया। लेकिन राजा के मन बदलाने से पहले ही रानी अपने दासीगण के साथ विजयनगर राज्य छोडकर कानन की ओर चलपडी।''

---

1. रुचीदेवी - श्री वेंकय्य सूरी - पृ. - 45-47
2. रुचीदेवी - श्री वेंकय्य सूरी - पृ. -59

रानी रुचीदेवी ने साथीगण सहित नल्लमल जंगल में कदम रखा। [1]"प्रकाशाम जिला के प्रसिद्ध चट्टान भैरवेश्वर शिखर के पास वह जब पहुँची, तब उस के मन में वही टहरने की इच्छा उत्पन्न हुई। वहाँ चारों तरफ नल्लमल-जंगल व्याप्त है। जब महरानी अपने परिवार के साथ वहाँ पहुँची, तब भारी वर्षा होने लगी। विवश होकर उन सब को वहीं टहरना पडा। महारानी को ऐसा मेहसूस हुआ, कि किसी अनजान शक्ति के कारण उसे रुकनी पडी। चट्ठान पर भैरवमन्दिर है। उस के प्रधान पौराणिक के साथ विचार-विमर्ष करने के पश्चात, महारानी ने तै करली। भैरव मुनि ने भी महारानी के विवाह के पश्चात घटित घटनाओं के बारे में जानकर, उसे स्वांतना दिया। उस ने कहाँ, कि बेटी हिम्मत रखो। तुम अपने स्वस्थान में हो। देवराय बहुत ही दयावान है। गलत फहमी के कारण उस के मनोनयन बंद होगये। परन्तु भैरव स्वामी की दया से वे सब कुछ जानलेंगे। तुम्हारा जीवन सुखमय बनेगा" इस प्रकार पौराणिक के आस्वादन देने के पश्चात महरानी ने निश्चित मन से चट्टान के पास ही रहने के लिए एक आश्रम बनवालिया।

विजयनगर राज्य में घटित घटनाओं के बारे में जानकर गजिपति राजा बहुत घबरागये। राजकुमार रामचंद्र नाराज होकर अपनी बहिन रुचीदेवी की रक्षा के लिए और देवराय से बदला लेने के लिए संसिद्ध होगये। लेकिन महराजा ने उसे समझाया, कि राजकुमारी की सुरक्षा तो सही, परन्तु देवराज के खिलाफ कदम उठाना गलत है। रामचंद्रदेव ने विजयनगर पहुँचकर राजा के सामने ही यह साबित किया कि वह निर्दौष है। महामात्य तिस्मरुसु ने भी यह सलाह दी, कि रानी बेकसूर है। इसलिए उसे माफ करके स्वीकारना उचित है। देवराय का मन भी धीरे-धीरे बदलने लगा। लेकिन तुरंत रानी को वापस बुलाने केलिए वे सहमत नहीं है। रामचन्द्रदेव वापस जाते हुए, अपनी बहिन रानी रुचीदेवी के पास पहुँचा। वास्तव में रानी को वह अपने साथ घर लेजाना चाहता था। परन्तु रानी ने इनकार करदिया। एकसंत की तरह

---

2. रुचीदेवी - श्री वेंकय्य सूरी - पृ. -70

रूप घारण करके रानी वहाँ के गाँव वासियों की सेवा करती थी। इसलिए रामचन्द्रदेव उसे वापस लेजाने में असफल होकर, अकेले ही वापस लौटगये।

एक दिन मन्दिर के पुजारी ने रानी को एक ऐतिहासिक घटना के बारे में बताया। [1]''मन्दिर के पूरब दिशा में दो चट्टान हैं, उन दोनों के बीच में से चम्पा नदी, गुंड्लकम्मा और नल्लवागु के साथ मिलकर बहती हैं। अक्सर इस नदी के बाढ के कारण, यहाँ के आस-पास के गाँव के लोग बरबाद हो रहे हैं। इसलिए वहाँ पर एक बांद का निर्माण करना उचित है। शिलालेख के आधार से यह साबित होता है, कि यहाँ पर महामुनि जमदग्नि ने एकबार छोटा सा बांद बनवाया। बाद में कपिलेश्वर गजपति राजा ने भी बांद को बडाने का प्रयत्न किया। परन्तु असफल रहे थे। बांद को बडाकर मजबूत बनाने से यहाँ के लोग आराम के साथ जी सकते हैं। नदी के पानी से यहाँ की खेतीबारी भी अच्छी तरह चलेगी। यह कोई आसान काम नहीं है। इसे जो पूराकरेगा, उस का नाम अजर और अमर रहेगा। तमाम विषय सुनकर रानी रुचीदेवी ने यह निश्चय करलिया, कि जब तक बांद का निर्माण पूरा न होगा, तब तक यहाँ टहरने का निश्चय किया। रुचीदेवी ने महामुनि से कहा, कि स्वामी!, मै अब यही चाहती हूँ, कि मेरा सारा जीवन लोक सेवा में व्यतीत होजय। इससे बडकर मुझे कुछ नहीं चाहिए। तब महामनि ने कहा, कि इस पवित्र कार्य के लिए भगवान की दया चाहिए। इस प्रकार शुभमुहुर्त के दिन पवित्र काम आरम्भ कियागया है।''

4.11.2. काल्पनिकता :

विभिन्न प्राँतों से कारीगर और मजदूर बूलाये गये। किसान अपनी बैल-गाडियोंमें पत्थर-कंकड और मिट्टी जैसे आवश्यक चीज लाने लगे। हाथियों से निर्माण का माल पिसाया गया। देखते-देखते तालाब और बांद का निर्माण पूरा

1. रुचीदेवी - श्री वेंकय्य सूरी - पृ. - 112-115

होगया। यह ऐतिहासिक तथ्य है, कि बांद के निर्माण के बाद किसी एक व्यक्ति की बली चढ़ाई गई। परन्तु उपन्यासकार ने दो भाइयों के नाम यहाँ बताया, कि उन में से एक का नाम बडा कम्बडु और दूसरे का नाम छोटा कम्बडु है। कहा जाता है, कि इन दोनों अनाथ व्यक्तियों ने अपने प्राण त्याग दिये। शिला लेखनों के आधार पर यह कहा जाता है कि कम्बभाइयों की मृत्यु के पश्चात उस तालाब का नाम 'कम्ब चेरऊ' या कम्ब तालाब रखा गया है। वहाँ के दो गाँव के नाम भी बदल गये। एक गाँव का नाम छोटा कम्बम और दूसरे गाँव का नाम बडा कम्बम है। महरानी ने जो महान सहायता उन लोगों को किया, उस के प्रतिफल के रूप में, कम्बम प्राँत के लोगों ने उस तालाब के निकट ही एक मन्दिर बनवाया। उस का नाम वरदराजम्म या अन्नपूर्ण मन्दिर है। उस मन्दिर में महरानी की मूर्ति ही कायम की गई है। लोग मानते है, कि बिना बाढ या आँदी, कम्बम प्राँत इस प्रकार हरा-भरा रहने का कारण महारानी ही है। इसलिए उनके मन-मन्दिर में वह देवता बनगई है। यहाँ के समाचार धीरे-धीरे विजयनगर तक पहुँचने लगे। राजा देवराय भी गहरे सोच विचार मग्न होगये। राजा के मनोभावों को पहचानकर महामात्य तिम्मरुसु ने रानी को फिर वापस लाने का प्रयत्न किया। महराजा द्वारा लिखित 'आमुक्त माल्यदा' नामक महाकाव्य को आविष्कार करने का सुमुहूर्त निर्धारित किया गया। सुमुहूर्त के दिन रानी को लेआकर राजा को सौंपने का योजना बनाया गया। यह देखकर राजा भी खुश होगये। इस प्रकार उपन्यास का समापन हुआ। लेखक ने सारे उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्यों की परम्परा को जारी रखते हुए कहानी को रोचक और आकर्षक बनादिया।

परवस्तु वेंकय्यसूरी द्वारा लिखित यह उपन्यास प्रधानत: एक ऐतिहासिक तथ्य पर आधारित है। आँध्रप्रदेश के प्रकाशम जिले के कम्भम प्राँत में स्थित एक तालाब के बारे में शिलालेखों में उपलब्द विषय के आधार पर यह उपन्यास लिखित है। उपन्यासकार कम्बम प्राँत के हैं। तेलुगु भाषा व्याकरण कर्ता, श्रीमान् परवस्तु चिन्नयसूरी का पोता है। इतिहास के अनुसार गजपतिराजा और विजयनगर राजवंश के बीच युद्ध होना और उस में पराजित गजपति राजा अपनी बेटी को वधु के रूप

में देवराय राजा को सौंपता है। उपन्यासकार ने युद्ध के सन्दर्भ में कल्पनिक घटना का सहारा लिया। [1]"वीरभद्रगजपति अपने पिता महराजा गजपति का सेनाध्यक्ष है। उसने खास सामंतराजाओं के साथ विचार-विमर्श करके तमाम् सेना सहित विजयनगर राज्य पर चढाई की। यह काल्पनिक घटना है। क्यों कि इतिहास के अनुसार कलिंग राज्य की शक्ति, विजयनगर - सेना के सामने बहुती कम है। 'अप्पाजी' के जीवित रहते विजयनगर की ओर आँख उठाने का साहस किसी के पास नहीं रहा।" उपन्यासकार ने इस घटना के मध्यम से यह साबित करना चाहता है, कि वीरभद्रगजपति के मन में कलिंग राज्य के सिंहासन के प्रति मोह है। उपन्यासकार ने कहानी को आगे बढाने के लिए और एक काल्पनिक विषय का वर्णन किया, कि राजा अपनी बेटी रुचीदेवी का विवाह अपने खास रिश्तेदार के साथ और महरानी अपने भाई के साथ करवाना चाहते हैं। इस का ऐतिहासिक आधार नही रहा। यह भी काल्पनिक है, कि बंदी बनायेगये राजपरिवार को विजयनगर के कारावास से नरहरी ने छुडादिया। वास्तव में विजयनगर में ऐसा होना दुर्लभ है। श्रीकृष्ण देवराय और रुचीदेवी के विवाह के पश्चात घटित एक-एक घटना ऐतिहासिक है। परन्तु महरानी रुचीदेवी कम्भम प्राँत में पहुँचना और वही रुकजाने के निर्णय लेना आदि तो ऐतिहासिक होने पर भी लेखक ने काल्पनिक घटना के आधार पर वर्णन किया है।

4.11.3. इतिहास और कल्पना का अनुपात :

यह उपन्यास एक ऐतिहासिक घटना पर आधारित है। उपन्यासकार का जन्म स्थान कम्भम है। उस प्राँत में एक ऐतिहासिक तालाब है। उस तालाब का निर्माण महरानी रुचीदेवी ने किया। इस घटना के आधार पर उपन्यासकार ने यह उपन्यास लिखा। लेखक इस रचना के मध्यम से महरानी के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करना चाहता है। इतनाही नहीं, तालाब में कूदकर अपने प्राण त्याग करने वाले कम्भम-भाईयों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि व्यक्त करना भी वे अपना कर्तव्य माननेवाले हैं।

1. रुचीदेवी - श्री वेंकय्य सूरी - पृ. - 27

उपन्यास की कहानी को आगे बढ़ाने के लिए उन्हों ने जहाँ-तहाँ काल्पनिक घटनाओं का सहारा लिया। उपन्यासकार ने जहाँ तक होसके रुचीदेवी की जीवनी संबंधी विषयों को प्रधान स्थान दिया। परन्तु कम्भम प्राँत का भी स्थान उपन्यास में प्रधान रूप में दिखाई देता है। परिचय में उपन्यासकार ने स्वयं इस विषय को स्वीकार किया। उन्हों ने इस रचना को प्राण त्याग करनेवाले कम्भम भाइयों की आत्म शांति के लिए अंकित किया। इस प्रकार करने में ही लेखक के मन को भी शांति मिलेगी। अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थों के अध्ययन और शोध करने के पश्चात ही कथावस्तु निर्धारित की गई। लोक प्रचलित, किंवदंतियों को भी लेखक ने ग्रहण किया। क्यों कि आँध्रप्राँत में स्थित एक छोटा गाँव होने के कारण, लेखक ने तमाम सामाग्रि वहाँ बूढे लोगों से प्राप्त की। अपना जन्म स्थान होने के कारण, वहाँ के मंदिरों के शिलालेखों में प्राप्त विषयों को भी ग्रहण किया। उपन्यास लिखने में गाँव के लोगों से उन्हे प्रोत्साहन भी मिला। कम्भम भाईयों की जीवनीयों के बारे में सिर्फ जनश्रृति ही आधार है। यह तो सत्य है, कि कम्भम नामक भाइयों ने तालाब में कूदकर अपने प्राण त्याग दिये थे। यह भी सत्य है, कि वे दोनों अनाथ हैं। वे दोनों अविवाहित होने के कारण आज उनके वंशज भी नही रहे। इस प्रकार आमतौर पर एक ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास लिखने में लेखक कामयाब होगये थे।

4.12. श्री ताल्लपाक अन्नमाचार्युलु :-

श्री रामलिंगेश्वर राव जी द्वारा लिखित जीवनीपरक उपन्यासो में श्री ताल्लपाक अन्नमाचार्युलु भी एक है। उपन्यासकार ने संकीर्तनाचार्य अन्नमय्य की जीवनी के आधार पर प्रस्तुत उपन्यास लिखा था। अन्नमय्या का जन्म 'कडप' प्राँत के ताल्लपाक नामक गाँव में एक पंडित परिवार में हुआ था। माता-पिता के नाम नारायण सूरी और लक्कमाँबा है। वे अन्नमय्या को भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के वर का फल मानते हैं। वैशाक शुद्ध पूर्णिमा के दिन विशाख नक्षत्र में इस का जन्म हुआ था। बचपन से ही उस के मन में तिरुमल स्वामी के प्रति भक्ति दिन-ब-दिन बढ़ती गई। पाँच

वर्ष के उम्र में पिताजी उसे गुरु के पास लेगये थे। आचार्य ने उसकी परीक्षा करके यह प्रकट किया, कि अन्नमय्या एकसंधाग्रही है। उसकी रुची के अनुसार, उसे संगीत की शिक्षा दी गयी। एक दिन पिता की बात मानकर बालक अन्नमय्या घास काटकर लाने जंगल गया था। घास काटते समय उसकी उंगली कटी और खून बहने लगी। तुरंत उस के मन में परिवार सभ्यों के प्रति विरक्तभाव उत्पन्न होगया। तंबूरा लेकर भगवान तिरुमलेश के बारे में कीर्तना गाते हुये, तिरुमला की ओर चलपडा। रास्ते में भूख के मरे वह बेहोश होगया।

माता अलिवेलुमंगम्मा स्वयं उसे प्रत्यक्ष होकर परमान्न खिलाती है। तब से, वह कुछ समय तक तिरुमलक्षेत्र में रहना चाहता है। जब अन्नमय्या मंदिर तक पहुँचा, दर्शन-समय होगया था। इसलिए द्वार पर ताला लगाया गया है। विलपते हुये अन्नमय्या ने कीर्तनालापन किया। तुरंत ताला टूटगया और भगवान का दर्शन हुआ। यह दृश्य देखकर वहाँ के लोग अचरज होकर अन्नमय्या को साक्षात् नारदमुनी का प्रतिरूप मानने लगे। माता-पिता की अनुरोद से अन्नमय्या की शादी तिम्मक्क और अक्कलम्म से हुई। गृहस्त जीवन में उस के दो पुत्र हुये। गृहस्त जीवन से विरक्त होकर तिरुमल क्षेत्र में रहकर अन्नमय्या ने संकीर्तन यज्ञ किया। एक-एक दिन, एक-एक कीर्तन लिखते हुये उसने बत्तीस हजार कीर्तन लिखे थे। भक्त पुरंधरदास और अन्नमय्या दोनों गहरे मित्र हैं। टंगुटूर के राजा साल्व नरसिंहराय ने अन्नमय्य को राजाश्रय दिया। एकदिन दरबार में भगवान हरि के बारे में अन्नमय्या, ने एक कीर्तनालापन किया। सभी उस की सराह की। लेकिन राजा के बारे कीर्तनालापन के लिये उस ने इनकार किया। गुस्से में आकर राजा ने उसे लोहे के जंजीर में बंधी बनाया। मगर कुछ ही क्षण में उस के शरीर से जंजीर अलग होगये। घमंड राजा का गर्व भंग होगया। और उस ने अन्नमय्या से माफी माँगी। अन्नमय्या राजाश्रय त्याग करके फिर तिरुमलक्षेत्र में आकर अपना शेष जीवन बिताया। कुछ समय के पश्चात संकीर्तनाचार्य अन्नमय्य ने तिरुमलेश में अपने आप को मिलाया। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने संकीर्तनाचार्य के रूप में अन्नमय्य की जीवनी का

विश्लेषण किया। जहाँ-तहाँ इतिहास से दूर जाने पर भी लेखक ने सचेत होकर जीवनीपरक लक्षणों को साबित किया। आमतौर पर उपन्यास तो सफल जीवनचरितात्मक रचना है। लेकिन आकार में छोटा है। अनेक ऐतिहासिक घटनाओं का जिक्र लेखक ने किया।

4.13. निष्कर्ष :

उल्लिखित उपन्यासों में साहित्यकारों की और सामाजिक व्यक्तियों की जीवनीयों का विश्लेषण है। नोरि नरसिंह शास्त्री द्वारा लिखित उपन्यासों में कवि सार्वभौमुडु, कविद्वयमु, धूर्जटी और नारायणभट्टु आदि सफल जीवनीपरक उपन्यास है। कविसार्वभौमुडु नामक उपन्यास में महाकवि श्रीनाथ की जीवनी का विस्तार वर्णन कियागया। श्रीनाथ और डिंडिमभट्टु की साहित्यक-स्पर्था का वर्णन उपन्यासकार ने उचित ढंग से किया। कविद्वयम नामक उपन्यास में भी श्रीनाथ को लेखक ने एक प्रोत्साहक और स्फूर्तीदायक कवि के रूप में करूणरस प्रधान वर्णन किया है। भक्त पोतन की महानता के लिए श्रीनाथ को उचित कारण बताया । धूर्जटी नामक उपन्यास में शिव भक्त के प्रभाव से एक वेश्या भी भक्तिनी बनजाने का वर्णन है। नारायणभट्टु नामक उपन्यास में भक्त नारायण और नन्नय्या की दोस्ती का वर्णन है। आँध्रकविता पितामह नामक उपन्यास में पेद्दन्ना को वीर, धीरोधात और महानकवि के रूप में लेखक ने वर्णन किया। हरिभक्त, संकीर्तनाचार्य अन्नमय्या के चरित्र-चित्रण में लेखक को सफलता प्राप्त हुई। रोशनारा नामक उपन्यास में एक विचित्र, चरित्रहीन नारी की जीवनी प्रस्तुत की गई है। रुचीदेवी नामक उपन्यास में अन्नपूर्णदेवी को समाज सेविका के रूप में वर्णन किया। लकुमादेवी नामक रचना में प्रसिद्ध और नेक नर्तकी की जीवनी का वर्णन है। साहित्यिक, सामाजिक जीवनीपरक उपन्यासों के उल्लिखित उपन्यासों के अलावा अन्य में जीवनी का स्थान कम है। प्रस्तुत उपन्यास तो सफल जीवनीपरक उपन्यास हैं।

- अध्याय पाँच -

हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यासों का शिल्प-विवेचन

जीवनी प्रधान उपन्यासों की परम्परा में इतिहास, उपन्यास और जीवनी की त्रिवेणी का रूप है। जीवनी साहित्य अपने स्रष्ट की अग्नि परीक्षा लेता है। समग्र समर्पण आत्मदान माँगता है। वह मनुज के हृदय के हर स्पंदन और नब्ज की हर धडकन को निकट से मेहसूस करता है। आज तक जीवनी प्रधान उपन्यासकारों ने जीवन की घटनाओं का कलात्मक विन्यास किया है। जीवन पर आधारित उपन्यासों को पढते समय लोगों के मन में असीम आस्था जागती है। जीवन को देखना-भोगना तो प्रत्येक व्यक्ति के साथ होता है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति उसे अलग रूप से देखता और भोगता है। साहित्यकार की कृति में संदर्भित वस्तु-सत्य व्यक्ति विशेष और काल विशेष का अनुभूत सत्य होता है। साहित्याभिव्यंजनात्मक तभी बन पाता है जब भाषा-सत्य व्यक्ति-विशेष का होते हुए भी साहित्यकार का निजी सत्य होता है। यही आत्मीयता एवं निजता साहित्य का मौलिक धर्म है।

लेखक या कलाकार मूलतः वह व्यक्ति है जो वास्तविक जीवन से पलायन करता है। सत्य, शिव और सौंदर्य कला के तीन मुख्य तत्व हैं। और इन्ही की आधार शिला पर कला टिकी होती है। कला सौंदर्यात्मक सृजन है और सौंदर्य के अभाव में कोई भी कलापूर्ण नहीं। साहित्य भी एक कला है। साहित्य जीवन-आस्था के अधिष्ठान पर स्थित है। साहित्य व्यकित और समाज के यथार्थ से जुडा हुआ होता है। समाज के विकसित रूप को हम युग के रूप में स्वीकार करते हैं। साहित्यकार अपने मूलविधान के कारण समाज में अपना स्थान रखता है। इसलिए इस व्यक्तित्व का अध्ययन रोचक एंव आकर्षक होता है। सृष्टि का सर्वश्रेष्ट प्राणी मानव ही तो है। जीवनी साहित्य का मूल विकास और मुल मंत्र भी तो यही है। जीवनी प्रधान साहित्य में हमें व्यक्तियों की गूढ समस्याओं से परिचय एंव विशेषताओं से संदेश मिलता है।

हिन्दी के संबंध में यदि हम विचार करेंगे तो यहीं पायेंगे कि जीवनी का पक्ष उपेक्षित है। हिन्दी साहित्य में जीवनी पर उतना काम नहीं हो पाया, जितना विश्व के अन्य साहित्यों में हुआ है और हो रहा है। साहित्य तो एक सात्विक जीवन है, उसे कठिन तपस्या और महान यज्ञ समझना चाहिए। जहाँ व्यक्ति के व्यक्तित्व के कोई स्वतंत्र विषय नहीं रहजाते उच्च साहित्य की वह भव-भूमि है। जीवनी प्रधान साहित्य में लेखक किसी विशेष व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन का चित्र कुछ वास्तविक घटनाओं के आधार पर प्रस्तुत करता है। व्यक्ति यहाँ मुख्य है, जिवनी साहित्य व्यक्तिवादी घारणा है और सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में वैयक्तिकता की आश्चर्यजनक उपेक्षा की गई है। सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में वैयकितकता की उपेक्षा का मूल कारण पूर्वजन्मवाद और कर्मफलवाद में भारतीयों की अटूट आस्था है। यदि प्रत्येक युग के सभी लोग अपनी आत्मकथा लिखने में लगजाए तो उपन्यासों के काल्पनिक और झूठे अनुमानों से पाठकों को विशेष रूप से मुक्ति मिलजायेगी। आत्मकथा साधारण मजदूर से लेकर गाँधी तक सभी लोग लिख सकते हैं।

जीवनी में गद्य जैसी तथ्यात्मकता एवं पद्य जैसी भावात्मकता का समावेश आवश्यक है। वैसे जीवनी, काव्य का एक रूप है, वह महाकाव्य है, मुक्तक है, नाटक भी है और रूपक भी, जीवनी, कहानी भी है और उपन्यास भी। लेखक वास्तविक घटनाओं के आधार पर नायक के गुण दोषों का वर्णन करता है। सरल और सहज भाषा में ही एक रोचक जीवनी की प्रसादात्मकता बनाये रख सकती है, जीवनी का एक महत्वपूर्ण गुण प्रसादात्मकता है। जीवन चरित्र चाहे जीवनी, नाटक, कविता या फिर जीवनी प्रधान उपन्यास के माध्यम से ही क्यों नही प्रस्तुत हो रहा उसमें चरित्र नायक के समस्थ व्यक्तित्व का चित्रण आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी हैं। गुणों के साथ दोषों का भी उल्लेखन होना चाहिए। जीवनी लेखक अपने नायक के अस्तित्व, उसकी चेतना - संवेदना और अनुभूति तंत्र के साथ एकात्मकता स्थापित करने को कलात्मकता कह सकते हैं। वह घटनाओं की पृष्टभूमि में तत्व, रूपाकार एवं प्रेरणास्त्रों को भी महत्व देता है। वह व्यक्ति विशेष का तटस्थ मगर

खुलकर किया गया अध्ययन होता है। इसका कलात्मक प्रस्तुतीकरण ही इसे इतिहास न बनने देकर साहित्य की कोटि में खडाकर देते हैं।

साहित्य और जीवनी का घनिष्ठ संबंध है। मनुष्य का जीवन साहित्य का मूल स्रोत माना जाता है। साहित्य में जीवन के तत्वों के आकर्षण का महत्व व उन तत्वों की विवेचना महत्व रखती है। साहित्य में जीवन को अभिव्यक्त करने की दो विधाए हैं-गद्य एवं पद्य। जहाँ साहित्यकार अपनी जीवनगाधा को उपन्यास में अपने ही द्वारा प्रकट करता है, तब आत्मचरित्र प्रधान उपन्यास जन्म लेते हैं। जब साहित्यकार विशेष, माने किसी श्रद्धेय साहित्यकार की जीवनी को अपने उपन्यास की कथावस्तु बनाता है। तब वहाँ जीवनी प्रधान उपन्यास उत्पन्न होते हैं। ऐसे साहित्य में लेखक अपने व अन्य व्यक्ति के जीवन की विशेष विचारधारा, अनुभव, एवं जीवन के उत्थान-पतन इस क्रम से प्रस्तुत करता है कि पाठक उन्हें सराह सके व उनसे प्रेरणा ग्रहण कर सकें।

सूरदास, कबीरदास, तुलसीदास, बिहारीलाल, आदि ने अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को एक चुनौती समझकर जिया है। इन के जीवन में धन, यश या सांसारिक वस्तुओं का महत्व उतना नहीं था, जितना कि सिद्धांतो का। प्रत्येक ने अपने सिद्धांतों के लिए दूसरों से ही नहीं कहीं-कहीं तो स्वयं से भी लडा है। जीवनीप्रधान उपन्यासों में ये सारी विपत्तियाँ, दुख, दर्द, चीख, चिल्लाहट, यश, मान, अभिमान कल्पना द्वारा उदार नहीं लिये जाते बल्कि उस व्यक्ति विशेष के साहित्यक सृजन के अंग होते हैं। साहित्यकारों के जीवन पर आधारित उपन्यास आज उपेक्षित है पर समय के साथ-साथ ये भी प्रकाश में आ रहे हैं। सर्वप्रथम इन उपन्यासों के सृजन का श्रेय डॉ. रंगेय राघव को हैं। इन के द्वारा लिखित उपन्यासों में से 'भारती का सपूत' महान लेखक, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की जीवनी पर आधारित है। तत्पश्चात् 'विध्यापति' के जीवन पर आधारित 'लखिमा की आँखे' और 'बीहारी' के जीवन पर आधारित 'मेरी भव बाधा हरो' उनके द्वारा लिखित अंतिम रचनाओं में से 'तुलसी' के जीवन

पर आधारित 'रत्ना की बात' कबीर के जीवन पर आधारित 'लोई का ताना', और 'गोरखनाथ' के जीवन पर आधारित 'धूनी की धूआं' भी विख्यात है। समकालीन सन्दर्भ में अमृतलालनागर ने एसे दो उपन्यास लिखे हैं। तुलसीदास के जीवन पर आधारित 'मानस का हस' और सूर के जीवन पर आधारित 'खंजन नयन'।

अमृतलाल नागराजी ने मनोविज्ञान की सहायता से जीवनीपरक उपन्यासों के नायक भक्त कवियों के विशिष्ट तत्व, विभिन्न मनोवृत्तियों का अध्ययन भी किया है। किसी भी ऐतिहासिक व्यक्ति को अपनी रचना का विषय बना लेने पर उपन्यासकार के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वब ऐतिहासिक तथ्यों की सुरक्षा करें, वह उन तथ्यों से बंधा रहे और यदि वह उनकी उपेक्षा करता है तो वह उस विशिष्ट व्यक्तित्व को क्षति पहुँचाता है। यदि किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के संबंध में इतिहास मूक हैं, तो जीवनीप्रधान उपन्यासों के प्रणेता को अनुक्षतियों व किंवंदितियों से सामग्रि संकलन करना पडता है। पर कभी ऐसी स्थिति भी आ जाती है जब परंपरा व किंवदंदियों पर विराजमान पात्र चकाचक ग्राह्य और स्वीकार्य नहीं हो पाते।

साहित्यक व्यक्ति का जीवन चरित्र या जीवनीप्रधान उपन्यास लिखने के लिए लेखक को जहाँ इन तत्वों का चयन करना पडता है, वहीं उसे तत्कालीन साहित्य प्ररिस्थितियों का वर्णन करते हुए, यह सिद्धकरना पडता है कि, इन के अनुसार चलने पर कहां तक उस साहित्यकार विशेष का व्यक्तित्व सफल हुआ है और कहा तक उसका व्यक्तित्व प्रतिकूल परिस्थितियों में निखरा है। साहित्य का व्यक्ति का जीवन चरित्र या उस के जीवन पर किसी भी प्रकार की साहित्यक रचना करते समय, उस साहित्यकार, विशेष की कृतियों से भी साहयता ली जासकती है। यह इसलिए आवश्यक है क्यों कि उन्ही से उसके मस्तिष्क के विकास का ज्ञान हो सकता है। वस्तुत: जीवनीप्रधान उपन्यास, इतिहास, जीवनी और उपन्यास का एक सशकत त्रिभुज है।

साराशं यह है कि इतिहास,जीवनी और उपन्यास अपने आप में कोई अंर्तविरोधी वस्तु नही है। जीवनी एक ऐसी कलाकृती है जिसका आधार इतिहास होता है। इतिहास में किसी भी घटना का यथार्थ उल्लेख किया जाता है, जब कि यही इतिहास जब साहित्य की किसी भी विधा से बंध जाता है तो उस में कल्पना का रूप विलास भी परोक्ष रूप से सम्मिलित हो जाता है। इतिहास और जीवनी का भी एक दूसरे से संबंध है। जीवनी प्रधान साहित्य और इतिहास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि जीवनीकार और इतिहासकार में समानता कम और विषमता अधिक होती है। समानता केवल इतनी होती है कि दोनों सत्य पर आधारित होते हैं। परंतु विषमताएं अनेक हैं जीवनीकार या जीवनीप्रधान उपन्यासकार अपनी इच्छानुसार घटनाक्रम में परिवर्तन कर सकता है जब कि इतिहासकार को यह अधिकार प्राप्त नहीं। इतिहास और जीवनी में उद्‌देश्य की भी विषमता है। जीवनी प्रधान साहित्य में लेखक का उद्‌देश्य किसी एक व्यक्ति के जीवन को चित्रित करना होता है। इस में प्रमुखता व्यक्ति को दी जाती है। जीवन चरित्र के पीछे कोई न कोई व्यक्ति रहता है जब कि इतिहास में प्रधानता देश को मिलता है। इतिहासकार देश की पृष्टभूमि पर घटनाओं का चित्रण करता है अंगीदेश होता है, व्यक्ति तो उसका अंग मात्र होता है।

इतिहासकार युग की विशेषबातों को बखानता है तो जीवनीकार सूक्ष्म घटनाओं को भी महत्व देता है। वह चरित्र, नायक के खाने पहनने की रुची, प्रात:काल ईश्वर – वंदना या भ्रमण आदि का वर्णन उतने ही उल्लास के साथ करता है जितने उत्साह के साथ इतिहासकार किसी बडे युद्ध या राजपरिवर्तन का वर्णन करता है। इतिहास के लिए ऐसी बातें आवश्यक प्रतीत होती है, किंतु जीवनीकार के लिए वे अत्यावश्यक हैं। अत: हम कह सकते हैं कि किसी भी जीवन इतिहास को समृद्ध करने में सहायक बनसकता है, पर इतिहास नहीं। जन्म से मृत्यु तक व्यक्ति का जो क्रम बनता हैं जिस में उसकी भावनाएँ, मुद्राएँ उसके कार्य और अपने मन की छाप होती है, जिस में उसकी जीवन शैली होती है, जिस में उसकी आत्मा होती है और जिसमें उसके व्यक्तित्व का चित्र दीख पडता है इतिहास का विषय नहीं बनसकता है और

इसलिए दोनों इतिहास और जीवन चरित्र के अलग-अलग क्षेत्र है। वस्तुत: इतिहास घटनाओं और तथ्यों की सूची मात्र नहीं होता है और न साहित्य ही केवल मनोरंजन का साधना हमारी कल्पना का आधार भी यथार्थ होता है, और हमारी कल्पना का, हमारे स्वप्नों का प्रभाव यथार्थ के निर्माण पर पडे बिना नही रह सकता। जीवनी प्रधान उपन्यास एक कलाकृति है जहाँ पर उपन्यासकार अपनी मेधा और मार्मिक भावना से तथ्यों और घटनाओं को विशिष्ट आलोक प्रदान कर नया समाज दर्शन प्रस्तुत करता है।

सारांश यह है कि इतिहास, जीवनी और उपन्यास अपने आप में कोई अंतर विरोधी वस्तु नहीं है। जीवनी एक ऐसी कलाकृती है जिसका आधार इतिहास होता है। फिर भी इतिहास लेखक और जीवनीप्रधान उपन्यासकार की रचना-प्रक्रिया, दृष्टि आदि में पर्याप्त अंतर होता है। यद्यपि दोनों कल्पना का आय ग्रहण करते हैं, जहाँ इतिहासकार की कल्पना पतंग की तरह नियंत्रित रहती है, वहाँ उपन्यास में मुक्त कल्पना-विकाल केलिए पर्याप्त अवकाश रहता है। इतिहास नामों, तिथ्यों आदि पर अधिक ध्यान देता है, जब कि उपन्यास मानवीय, सत्य की सरस उपलब्धि पर बल देता है। वह तथ्यों की अवहेलना तो नहीं करता, पर वे उस के लिए बंधन नहीं बनते उप कारण-मात्र रहते हैं, जिन के माध्यम से वह किसी मौलिक, सनातन मानवी सत्य को प्रस्तुत करने की चेष्टा करता है। इतिहासकार का सत्य कठोर, शुल्क, तथ्यगत होता है, जब कि उपन्यासकार संभावित सत्य, भावना के सत्य को भी उतना ही और कभी-कभी उससे भी अधिक महत्व प्रदान करता है। उस के लिए एक और एक, दो ही नही ग्यारह भी हो जाते हैं। इतिहास और जीवनी साहित्य दोनों ही अतीत से सामाग्री करते हैं । किंतु एक विषय निष्ठ है तो दूसरी विषयी निष्ठ। इतिहास तथ्यों को अन्वेषण, अनुक्रम, आलोचन और विन्यास करने इतिहासकार की निजी, रुचि, दृष्टि-और मानसिकता को कम से कम हस्थक्षेप करने देता है। यद्यपि पूरी निरपेक्षता कल्पना की वस्तु है। इतिहास तथ्यों का प्रमाण है। ऐतिहासिक तथ्यों में किसी प्रकार हेर-फेर असंभव है। प्रामाणिकता की सुरक्षा ही इतिहास है। जीवनी

साहित्य तथ्यों के कंकाल को खडा नहीं करता अपितु उसमें हाड-माँस और रुधिर प्रवाहित कर पुनर्जीवन का संचार करता है।

जीवनी प्रधान उपन्यास जीवनी और उपन्यास के माध्यम की इकाई है। यथार्थ कल्पना भी यहीं सामंजस्य होता है। जीवनी तथ्यात्मक होती है तो उपन्यास मुख्यत: कल्पनात्मक परंतु जीवनीप्रधान उपन्यास कल्पना और तथ्य दोनों के दबाव को सहते हैं। जीवनीप्रधान उपन्यास इतिहास और साहित्य का मध्यवर्ती होता है जिसका रचयिता इतिहासकार की अपेक्षा अधिक स्वच्छेंद किंतु उपन्यासकार की तुलना में कम उन्मुक्त होता है। वस्तुत: जीवनीप्रधान उपन्यासकार वस्तु सत्य एवं भाव सत्य के बीच संतुलन स्थापित करता है। किसी भी ऐतिहासिक व्यक्ति को अपनी रचना का विषय बनालेने पर उपन्यासकार के लिए यह आवश्यक होजाता है कि वह ऐतिहासिक तथ्यों की सुरक्षा करें, वह उन तथ्यों से बंधा रहें और यदि वह उनकी उपेक्षा करता है तो वह उस विशिष्ठ व्यक्तित्व को क्षति पहुँचाता है। यदि किसी प्रतिष्टित व्यक्तित्व के संबंध में इतिहास मूक हो तो जीवनीप्रधान उपन्यासों के प्रणेता को अनुश्रुतियों व किंवदंतियों से सामग्री संकलन करना पडता है। पर कभी ऐसी स्थिति भी आजाती है, जब परम्परा व किंवदंतियों पर विराजमान पात्र चकाचक ग्राह्य और स्वीकार्य नहीं दो पाते। साहित्य व्यक्ति का जीवन चरित्र या जीवनीप्रधान उपन्यास लिखने के लिए लेखक के जहाँ इन तत्वों का चयन करना पडता है, वहीं उसे तत्कालीन साहित्यक परिस्थितियों का वर्णन करते हुए सिद्‌ध करना पडता है कि इनके अनुसार चलने पर कहाँ तक उस साहित्यकार विशेष का व्यक्तित्व सफल हुआ है और कहाँ तक उसका व्यक्तित्व प्रतिकूल परिस्थितियों में निखरा है। साहित्यक व्यक्ति का जीवन चरित्र या उसके जीवन पर किसी भी प्रकार की साहित्यक रचना करते समय उस साहित्य का विशेष की कृतियों से भी सहायता ली जा सकती है। यह इसलिए आवश्यक है क्यों कि उन्हीं से उसके मस्तिष्क के विकास का ज्ञान हो सकता है। वस्तुत: जीवनीप्रधान उपन्यास, इतिहास, जीवनी और उपन्यास का एक त्रिभुज है।

हिन्दी साहित्य में जीवनीप्रधान उपन्यासों का श्रीगणेश, स्वतंत्रता के बाद हुआ है। डाँ. रांगेय राघव ने विस्मुति या परंम्पराओं और किंवदंतियों के युग नायकों और साहित्यकारों के जीवन पर उपन्यासों की रचना की। इन उपन्यासों में छः उपन्यास ही साहित्यकारों के जीवन पर आधारित हैं। बाकी सभी मौलिक तत्व के आधार पर काल्पनिक है। धूनी का धूंआ, गोरखनाध की जीवन रेखाओं के पता देता है। लेखक आत्मा के विकास में गहरी आस्था रखता है। और योग के चमत्कारों को मिथ्या नहीं मानता। कबीरदास के जीवन पर लिखा गया उपन्यास 'लोई का ताना' प्रगतिशील दृष्टि से कबीर का मूल्यांकन कर, उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का रूपायित करने का प्रयास मात्र है। 'लखिमा की आँखें', विध्यापति युगीन सामाजिक जीवन का सफल चित्रण है। 'रत्ना की बात' महाकवि तुलसीदास के जीवन की औपन्यासिक प्रस्तुति है। 'मेरी भव बाधा हरो', महाकवि बिहारीलाल के जीवन पर आधारित है। 'भारती का सपूत' के नायक भारतेंदु हरिश्चंद्र है। इन के अतिरिक्त तीन और जीवनी प्रधान उपन्यास हैं, जो साहित्यकारों पर आधारित न होकर युग नायकों के जीवन पर आधारित है। यशोधरा जीतगई-गौतम बुद्ध पर लिखा गया। आँधी की नावें मध्यकालीन भारत के कुछ युगनायकों का जीवन है। 'देवकी का बेटा' कृष्ण के जीवन पर आधारित है। वस्तुतः जीवनी प्रधान उपन्यासों की रचना डा. रांगेय राघव के सृजनशील व्यक्तित्व का परिणाम है। इन स्मारक उपन्यासों के माध्यम से लोकमंगल की कामना और भारतीय संत परंपरा का मानवता वादी रूप ही उभरता है। इन उपन्यासों के अतिरिक्त समकालीन संदर्भ में अमृतलाल नागर ने भक्तिकाल के दो महान कवियों के जीवन पर उपन्यासों की रचना की है, जो सक्षमरूप में जीवनी प्रधान सिद्ध हुए थे। सूरदास के जीवन पर 'खंजननयन' और तुलसी के जीवन पर 'मानस का हँस'। इस प्रकार उपरोक्त तमाम् उपन्यास शुद्ध उपन्यास हैं। उपन्यास के सभी तत्वों से युक्त हैं।

इन उपन्यासों की शैली और शिल्प दोनों ही हिन्दी साहित्य में अभी तक उपेक्षित है, जो शोचनीय है। स्वतंत्र रूप से किसी भी साहित्यकार की जीवनी को

उपन्यास शैली में लिखकर उपन्यास का प्रतीकात्मक शीर्षक जब कोई लेखक देता है, तो वह किसी भी साहित्यक कृति से कम नहीं होती। जीवनी और उपन्यास दोनों ही तत्व ऐसी कृति में समाहित होते हैं। उपन्यास का मूल तत्व मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना है। वस्तुत: इन उपन्यासों में वास्तविकता व सत्य पर बल है, परन्तु उपन्यास की विद्या से संबंध होने के कारण उपन्यासकार को कल्पना का सहारा लेने की छूट है, लेकिन वहाँ सत्य को सुरक्षित रखना पडता है। इन उपन्यासों के नायक साहित्यकार थे, इसी कारण ये इतिहास पुरुष भी थे। इन का जीवन लिखते समय ये उपन्यासकार मात्र, इतिहासकार नहीं रहे हैं। इतिहासकार के लिए तटस्थ, निरपेक्ष पूर्वग्रह हीन दृष्टि का होना आवश्यक होता है जब कि उपन्यास में रचनाकार की जीवन दृष्टि मुक्त क्रीडा करती है, उसे अनुचित नहीं मानाजाता। यही कारण है कि इन जीवनीप्रधान उपन्यासों के रचनाकार सत्य मे स्वप्न, वास्तव में कल्पना और व्यवहार में आदर्श का समाहार कर पाये हैं। इन उपन्यासों में समाज और संस्कृति पर बल है। उपन्यासकारों की दृष्टि विगत पर ही न होकर वर्तमान और भविष्य पर भी रही है।

'भारती का सपूत' नामक उपन्यास हिन्दी साहित्य का पहला जीवनी - प्रधान उपन्यास है। इस में लेखक डा. रांगेय राघव ने भारतेंदु हरिश्चन्द्र की जीवन गाथा लिखी है। इन के जीवन से संबंधित विभिन्न व्यक्तियों को विभिन्न पात्रों की संस्था दी है। बैसे तो समस्त जीवनीप्रधान उपन्यास चरित्र प्रधान होते है क्यों कि इन उपन्यासों में बल नायक और उसके व्यक्तित्व, चरित्र को दिया जाता है। इस उपन्यास में भारतेंदु की प्रेमकथा का सविस्तार वर्णन है। फक्कड कवि की मस्ती का चित्रण करने में रांगेयराघव सफल हुए हैं। शिवाले के रईस लाला गुलाबराय की सुपुत्री मन्नादेवी से भारतेंदू का विवाह तेरह वर्ष की आयु में होता है। लेखक ने इसमें अनमोल विवाह की समस्या का वर्णन किया।

उपन्यास का उद्देश्य भारत के सपूत बाबू हरिश्चन्द्र की जीवन कथा को

पाठकों के समक्ष रखना है, पर इसके साथ-साथ भारतीय समाज और संस्कृति का भी सुंदर चित्रण उपन्यासकार ने किया है। भारतेंदु की पत्नी मन्नादेवी पति-प्रेम को ही नारी जीवन की सबसे बडी सार्थकता समझती है। पति की दानशीलता पर क्षुब्ध होकर वह पति का विरोध करती है। उपन्यासकार ने शिल्प की दृष्टि से, रचना को सफल बनाने के लिए, भाषा-शैली की सहायता से ऐसे संवादों को तैय्यार किया है, जिन से पूरा उपन्यास सार्थक हो गया। बाबू हरिश्चंद्र के विशेष गुण अनेक थे। साहित्य रचना, देशप्रेम, सामाजिक-कार्यकलाप, आदि कार्यकलापों में उन्होने आगे बढकर योग दिया। उन्हों ने गद्य की कई पत्रिकाएं जारी की। भारतेंदु के इन कार्यों के अतिरिक्त उन के अविस्मरणीय कार्यों में से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, उनकी मित्र मंडली जो उनकी मृत्यु के उपरांत काशी नगरी प्रचारणी सभा का मूलाधार बनी।

डा. शंगेय राघव ने बाबू हरिश्चंद्र के पांच नाटकों में से भारत दर्शन को ध्यान में रखकर भारतेंदु कालीन देशकाल व वातावरण का चित्रण किया है। जो परोक्ष रूप से उपन्यास के साथ-साथ निखरता है। वस्तुतः डाँ शंगेय राघव ने भारतेंदु के माध्यम से सामाजिक, सांस्कृतिक चेतना के अनेक रूप प्रस्तुत किये हैं। भक्ति कालीन उदात्त एवं मानवतावादी परम्परा एवं प्राचीन सांस्कृतिक गौरव की पुनः प्रतिष्ठा, सामाजिक कुरीतियों और अंध विश्वासों का विरोध और सामाजिक, धार्मिक आंदोलना शिल्प की दृष्टि से, लेखक यह साबित करना चाहते हैं, कि भारतेंदु बाबू साहित्यक-सांस्कृतिक एवं सामाजिक जागरण के मूलाधार है। संक्षेप में उस समय के अंग्रेज शासकों के अत्याचारों और शोषण से उत्पन्न सामाजिक चेतना को इस में पद्य और गद्य का महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। भारतेंदु इस अभिव्यक्ति के केंद्र बिन्दु थे। इसप्रकार लेखक ने शिल्प की दृष्टि से उपन्यास को सार्थक बनादिया।

अभिनव जयदेव के नाम से विख्यात कवि विद्यापति की जीवनी से भरी रचना का नाम 'लखिमा की आँखे' है। इस उपन्यास में भारतीय जीवन और साहित्य के स्वर्णयुग में संयम और त्याग की शालीन धाराएं भक्ति की पवन अनुभूतियों के साथ

मिलकर प्रकट होते हैं। विद्यापति भक्ति और श्रृंगार के श्रेष्ठ कवि मानेजोते हैं। विद्यापित के विषय में इतिहास मूक हैं। किंवदंतियों की सहायता से डाँ. रांगेय राघव ने विद्यापति के जीवन का चित्र 'लखिमा की आँखे' नामक इस उपन्यास में प्रस्तुत किया है। राजा शिवसिंह के मित्र व दरबारी कवि विद्यापति की जीवन गाथा भी अन्य साहित्यकारों की भांति कौतूहल से पूर्ण है। 'लखिमा की आँखे' में रांगेय राघव ने राजा शिवसिंह और विद्यापति की मित्रता के साथ-साथ रानी लखिमा का विद्यापति के प्रति आकर्षण भी बखाना है। विद्यापति मुख्यत: संयोग के कवि थे विप्रलंभ पर भी उन्हों ने कविता कहीं, प्रेम और सौंदर्य के अमर गायक बनगये। विद्यापति के जीवन, उनकी जन्म तिथि व मरण तिथी सठीक अग्राप्त है, फिर भी विद्यापति एक व्यक्ति नहीं पूरे युग की एक संज्ञा है इसी कारण डाँ. रांगेय राघव ने उनके जीवन का चित्रण उस काल की परिस्थितियों के साथ-साथ किया। यह उपन्यास रानी लखिमा और विद्यापति के सात्विक मानसिक प्रेम की कथा है। राजा शिवसिंह विद्यापति के आय दाता होने के साथ-साथ उनके मित्र भी थे। डा. रंगेय राघव ने विद्यापति के दोनों भक्त व श्रृगारी कवि रूपों का संघर्ष दिखाया है। तत्कालीन जनता परवर्ती जनता विद्यापति के विषय में किस दृष्टि से सोचती थी, इसका वर्णन भी इस उपन्यास में हुआ है। विद्यापति की जीवनगाथा के साथ ही तत्कालीन परिस्थितियों का वर्णन भी उपन्यास में सशक्त ढंग से किया गया है। विद्यापति के समय राजनैतिक थपेडों के कारण धर्म राजनीतिक का खिलौना बनगया था।

इतिहास और कल्पना कथावस्तु के आधार हैं। इस रचना में विध्यापति के इसी संघर्षरत जीवन का वर्णन किया है। उपन्यासकार ने विद्यापति के जीवन की प्रवृत्तियों का अंतर विरोध दर्शाया है और इन अंतर विरोध में जो रूपांतर घटित होता है। उस को भी दिखाया। संभव है लखिमा की कहानी पूरी जनश्रुति या कपोल कल्पना ही हो, यह भी संभव है कि इस कहानी में कुछ सत्य भी हो। जो भी हो इतना सत्य है कि पदावली के सर्वोष्टि गीत लखिमा और उन के पति राजा शिवसिंह को समर्पित है। इस उपन्यास के महत्व व इसकी उपयोगिता साहित्य में अविस्मरणीय

है, क्यों कि प्राचीनकाल में जो स्थान महाकाव्यों का था, वही स्थान आज उपन्यास का है। उसका महत्व अन्य साहित्यक रुपों की उपेक्षा कहीं अधिक है, क्यों कि वह जीवन को अधिक निकट से देखता है और उसका विश्लेषण करता है। शिल्प की दृष्टि से 'लखिमाँ की आँखे' सार्थक है।

रीतिकाल के श्रेष्ट कवि बिहारीलाल पर डाँ. शंगेय राघव ने 'मेरी भव बाधा हरो' नामक उपन्यास लिखा। संस्कृताचार्यों ने कविता को नौरसों में बांटा है। ये कविता के रंग होते हैं। प्रेम, भक्ति, क्रोध, हास्य, सौंदर्य आदि। हिन्दी साहित्य में भी तुलसी भक्ति रस के, सूर वात्सल्य के कवि हैं तो बिहारी सौंदर्य एवं प्रेम के कवि। सौंदर्य एवं प्रेम के इस कवि पर डाँ. राघव ने प्रस्तुत उपन्यास लिखा। इस में लेखक ने बिहारी युगीन समाज की स्थिति का चित्रण किया। बिहारी के युग में नारी का दुहिता, भगिनी , माता का रूप समाप्त होगया था, वह केवल विलासित की मूर्ति बनगई थी। बिहारी की पत्नी सुशीला के रूप में उपन्यासकार ने भारतीय नारी के सेवाभाव की अपूर्व छाया ऊर्जस्वित की है। सुशीला का व्यक्तित्व अपने पति के हित में पर्यवसित हो गया है, जिस से उसकी न तो अपनी कोई इच्छा है और न आवश्यकता ही। इस रचना के माध्यम से लेखक ने युगीन परिस्थितियों का भी चित्रण किया है। बिहारी के माध्यम से उपन्यासकार ने मुगल कालीन अनेक प्रसिद्ध सम्राटों की गतिविधियों पर प्रकाश डाला। बिहारी का जन्म अकबर राज्य काल के अंतिम वर्षों में हुआ था और मृत्यु ओरंगजेब के राज्यारोहण के कुछ वर्ष बाद। इस प्रकार अकबर, जहांगीर, शाहजहाँ एवं औरंगजेब का राज्यकाल बिहारी से संबंधित था। बिहारी के साहित्य एवं कविता के माध्यम से उपन्यास में देशकाल और वातावरण की करवट दिखती है। उपन्यासकार ने परिस्थिति व उपन्यास की कथा वस्तु की मार्ग के अनुकूल, उसका उपयोग किया।

लेखक ने 'मेरी भव बाधा हरो' उपन्यास की भूमिका भक्ति पर बनाई जब कि बिहारी काव्य की नींव श्रृगार पर टिकी है। भावव्याजना और शिल्प की दृष्टि से

प्रस्तुत उपन्यास उत्कृष्ट है। प्रेम के क्षेत्र में बिहारी की प्रतिभा उसके विविध पक्षों का सम्पर्क उद्‌घाटन करती है। संयोग की क्रीडाओं का वर्णन बिहारी के काव्य का विषय रहा है। एक रसिक, एवं श्रृंगारी कवि का जीवन चरित्र उपन्यास के रुप में लिखते, उपन्यासकार को रसात्मकता का ध्यान रखना चाहिये या जिसका अभाव कही – कही दृष्टव्य है।

डां शंगेय राघव द्‌वारा लिखित 'लोई का ताना' का नायक हिन्दी साहित्य के महान् समाज सुधारक, कवि व दार्शनिक संत कबीर है। लोई कबीर की पत्नी का नाम है। कबीर जुलाहे थे। लोई कपास की लट्‌ठी है, जिसकी सहायता से ताना बुनकर कपडा तैय्यार करते हैं। इसका शीर्षक प्रतिकात्मक है। यह एक ऐसा उपन्यास है जिस के माध्यम से उपन्यासकार ने कबीर के जीवन द्‌वारा उस युग की विद्रोहात्मक सामाजिक चेतना का चित्रण किया है। संत कबीर के द्‌वारा उपन्यासकार ने भूत, वर्तमान और भविष्य के मानव समाज को संशोधित संदर्भ प्रदान करने का प्रयत्न किया है। कबीर के जीवन संबंधी तथ्य अधिक नहीं मिलते, फिर भी उनके साहित्य को पढकर जिन निष्कर्षों पर वे पहुँचे है, वे प्रशंसनीय हैं। उपन्यासकार ने जीवनी, इतिहास और आलोचना की त्रिभुज द्‌वारा कबीर के जीवन का चित्रण किया है।

रामानंद से प्राप्त दीक्षा के बाद वे जात पात की ओर से संदिग्ध होगये। जोगी, सूफी, अवतारवादी, वेद, पुराणवादी और खुरानवादी सब उनके समक्ष छोटे हो गये। लेखक ने इस रचना में कबीर को दलित कुल और जात का व्यक्ति तो बताया पर साथ ही धन हीन अपितु अपनी मेहनत की कमाई खानेवाला अपराजित घोषित किया। राघवजी ने उपलब्ध सामग्री व कबीर ग्रंथावाली के पदों की सहायता से कबीर की मानसिक क्रियाओं का अध्ययन किया उनके जीवन के विभिन्न संदर्भों का सफल चित्रण भी किया है। मुख्यतः जातिभेद, सामाजिक कुरीतियों, रुढियां, झूठी परंपराएं व हिन्दू समाज में प्रचलित वर्ण व्यवस्था।

हिन्दुओं की वर्ण-व्यवस्था कबीर की नजर में मानव विरोधी थी, क्यों कि वह मानव-मानव के मध्य भेद भाव का समर्थन करती थी। यदि विधाता को मानव समाज की विषमता स्वीकार होती तो उसने इतने प्राणियों की भांति उनकी उत्पत्ति की प्रतिक्रियाओं को मत बनाया होता। कबीर काव्य पर विचारकों ने कई आरोप लगाये जिन में एक यह भी है, कि कबीर स्त्री को माया का रूप मानते हैं। कबीर ने स्त्री को कभी माया या पाप का नाम नहीं दिया, इस बात को राघवजी ने अपने उपन्यास में स्पष्ट किया। जीवनीप्रधान उपन्यासकार का यह कर्तव्य है कि वह जन मत में प्रचलित भ्रम दूर करे, जिसका प्रयास इस कृति के माध्यम से डा. रांगेय राघव ने किया है। उन्हों ने इस उपन्यास में नारी के विषय में कबीर के विचार स्पष्ट रूप से प्रतिष्ठित किये। कबीर ने नारी को आधा सृष्टी माना, पूर्ण माना, पुरुष का अंश समझा और हमेशा यही कहा कि अनंत भगवान भी स्त्री हीन नहीं है, परंतु स्त्री को छोडकर वन जानेवाले में केवल कामिनी ही दिखाई देती है। पुरुष की विकृत वासना ही है जो उसमें केवल कामिनी रूप देखती है। परन्तु स्त्री की आत्मा के पूर्णत्व को नहीं देखती। कबीर ने गृहस्थाश्रम के पालन में आत्म की तृप्ती पाई। कबीर की वाणी समयानुकूल है। डा. रांगेय राघव ने कबीर के संदेश को उपन्यास का आकार दिया है। ईश्वर-प्रेम मनुष्य को संसार में मिलता है, वह अगम, अगोचर और रहस्य है, पर ममता और निष्कलंक प्रेम के अंतिम सान्निध्य में है। इस प्रेम को बुरा समझनेवाली आत्माएं हमेशा छटपटाती पहाडों, जंगलों में सन्यासियों और ढोंगियों का रूप धारण कर भीख मांगती, भटकती रहती हैं। शिल्प की दृष्टि से लेखक ने कबीर के माध्यम से जीवन के चैराहे पर भटकनेवाले प्रत्येक मनुष्य के लिए यही संदेश दिया है। जीवनी साहित्य की सार्थकता इस रचना में है।

भक्तिकाल की सगुण परंपरा के श्रेष्ट संत कवि तुलसीदास पर हिन्दी साहित्य में दो उपन्यास लिखे गये । डाँ. रांगेय राघव द्‌वारा 'रत्ना की बात', और अमृतलाल नागर द्‌वारा 'मानस का हंस'। रत्ना की बात में उपन्यासकार ने देशकाल और वातावरण पर अधिक बल दिया है। तुलसी के समय की युगीन परिस्थितियाँ, उनके

व्यक्तित्व निर्माण में अवश्य महत्वपूर्ण भूमिका रकती है, पर इन के अलावा तुलसी एक लोक नायक थे। रांगेय राघव ने तुलसी के चरित्र चित्रण में उनके लोक नायक रूप को चित्रित न कर संत व ब्राहमण रूप को अधिक निखार प्रदान कर पाये हैं। तुलसी के व्यक्तिव का सबसे शक्तिशाली व महत्वपूर्ण पक्ष उन का लोक नायक पक्ष है, लोक नायक वही हो सकता है जो समन्वय कर सके। रत्ना की बात में तुलसी द्वारा जनता का मार्ग दर्शन अवश्य हुआ है, पर प्रचलित मान्यताओं के अभाव में तुलसी का अधिक परिपक्व चित्रण नहीं कियागया है। 'रत्ना की बात' शीर्षक तुलसी की पत्नी रत्नावली से संबंधित है। अपरूप सुन्दर, लावण्यवती रत्ना पर मोहित तुलसी पर एक लोक प्रचलित कहानी थी। क्षणभंगुर शरीर के प्रति मोहित तुलसी को वह दुत्कार देती है। रत्ना ने कहा था, कि इतना प्रेम यदि तुम अपने राम से करते, तो अब तक वे तुम्हें दर्शन दिये होते। अत: रत्ना के कहने पर तुलसी लोक नायक तुलसीदास बनपाये। रत्ना, तुलसी की पत्नी थी और स्वयं कवइत्री थी। तुलसी अपनी रचनाओं के माध्यम से कवि कभी कहलाना नहीं चाहते थे। अपितु उनका ध्येय भक्ति ही था। इसे साबित करने के लिए उपन्यासकार ने रामचरितमानस, कवितावली, आदि रचनाओं का सहारा लिया। तुलसी के लक्ष्य, कार्य, प्रभाव आदि द्वारी यह स्पष्ट है कि वे एक धर्म गुरु थे। तुलसी की भक्ति सामाजिक रूप में वेद, धर्म और व्यक्ति पक्ष में भगवान से याचना थी। तुलसी ने राम को आदर्श सामंत के रूप में स्वीकार किया है। इन सब बातों के साथ-साथ डॉ. रांगेय राघव ने तुलसी के व्यक्तिगत जीवन में प्रचलित लोक कथाओं की सहायता से कथानक को निखारा है। जिस में तुलसी की दयनीय बाल्यावस्था, अपनी पत्नी रत्नावली द्वारा दुत्कारे जाने पर कबीर युवावस्था एवं वैराग्यपूर्ण वृद्धावस्था शामिल है। जीवनीपरक उपन्यास में विगत की जीवन भूमी पर मनुष्य की चरित्र कथा कही जाती है। जीवनी प्रधान उपन्यास तभी सफल है जब वह विगत को वर्तमान से जोडता है। आज के संघर्षशील युग में वह मुक्ति लोक है। जीवनीप्रधान मनुष्य रूप का अन्वेषण करता है। रत्ना की बात इसका सफल उदाहरण है।

'धूनी का धूआं' गोरखनाथ के जीवन पर लिखा जीवनी प्रधान उपन्यास है। उपन्यासकार डॉ. रांगेय राघव ने योगी के चमत्कारों का वर्णन किया है। डॉ. रांगेय राघव ने यह उपन्यास इसी उद्देश्य से लिखा कि मध्यकालीन वातावरण में योग संबंधी जो प्रयोग हुए , उन पर वैज्ञानिक ढंग से भविष्य में मनन हो सके। गोरखनाथ के समय में भारत में घोर योनि पूजा प्रचलित थी, तभी वे स्त्री विरोधी लगते हैं। रांगेय राघव ने अपने इस उपन्यास में सिद्ध किया, कि वे स्त्री विरोधी नहीं थे। बौद्धों और तांत्रिकों ने साधना के लिए स्त्री को केवल योनिधारिणी के रूप में लिया था। इसलिए योगी और साधक के लिए स्त्री का निषेध, गोरख का विशेष स्वर था। गोरख एक महान योगी, नेता थे। वे पहले वज्रयानी थे, बाद में वे नाथ-मत में आये। वे स्वामी मत्स्येंद्र द्वारा दीक्षित हुए। गोरखनाथ ने योग संबंधी जो प्रयोग किये वे मनुष्य के इतिहास में एक ऐसा प्रयोग है, जो मानव जाति की ओर एक नया इशारा करता है। योग का अर्थ केवल वैज्ञानिक सत्यों का अन्वेषण मात्र नहीं है। योग साधना के विषय में मस्तिष्क के विकास को सर्वोपरि मानते हैं। इस उपन्यास को पढने के बाद ऐसा प्रतीत होता है, कि भारत के भविष्य में संभवत: संसार को पथ दिखानेवाली ज्योति उदय होगी। गोरख ने अपने समाज मे प्रचलित योनि पूजा का घोर खंडन किया और संयम के मार्ग को प्रभावित किया। लेकिन यह उद्धेश्य उतना सार्थक नहीं हो पाया है, क्यों कि एक अति का खंडन दूसरी अति से हुआ है। गोरख ने योग को एकांत साधना से संप्रदायों से लाकर शुद्ध किया। उपन्यास पढ़ते समय यह आभार होता है कि लेखक ने गोरखनाथ को अधिक व्यक्तिवादी एवं अतिवादी रूप में चित्रित किया है।

'मानस का हंस' तुलसी के जीवन पर नागरजी की प्रौढ एवं परिष्कृत रचना है। नागरजी ने ऐतिहासिक-सांस्कृतिक धरातल पर अवस्थित एक भक्त मनीषि का जीवन वृत्त अंकित किया है। तुलसी के व्यक्तिगत जीवन से संबंधित विभिन्न घटनाओं और तथ्यें में सामंजस्य स्थापित करने के लिए नागरजी ने स्वामीजी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है। उपन्यासकार ने प्रचलित किंवदंतियों का सहारा

लेकर तुलसी की जनवादी दृष्टि को उजागर किया है। तुलसी भक्त, कवि, समाज सुधारक व लोक नायक होने के साथ-साथ एक ऐतिहासिक व्यक्ति भी है। किन्तु उनकी वैयक्तिक विशेषता के प्रति इतिहास मौन है। मानस का हंस बृहद् एक उपन्यास है। इसकी कथावस्तु भाव और उद्देश्य के निर्वाह में पूर्ण सफल है आदि से अंत तक तुलसीदास का तेजस्वी रूप पूरे उत्कर्ष के साथ प्रस्तुत हुआ है। जीवन चरित्र होते हुए भी इसमें कलात्मकता का शुद्ध संयोजना है। मानस का हंस के तुलसीदास का समस्त जीवन संघर्षों के घात -प्रतिघातों से अस्तव्यस्त होता हुआ आस्था के चरम उत्कर्ष को प्राप्त होता है। लेखक किंवदंतियों प्रमाणों व अपनी चिंतन शक्ति की सहायता से तुलसी, को लोक जीवन का जीवंत आख्याता और अध्येता बन पाया है। इस उपन्यास में कहीं भी तुलसी, नारी विरोधी चित्रित न हुए, न उन्होंने नारी को नरक का द्वार कहा है। तुलसी के बीहड संघर्षरत जीवन और लोक प्रिय धार्मिक नेतृत्व को इतिहास, साहित्य और श्रद्धासिक्त अनुश्रुतियों के बीच से निर्विवाद और अविरोधी स्तर पर निकाल कर लेजाना वास्तव में एक कठिन कार्य था, जो आलोच्य कृति में संभव हुआ है। उपन्यास में तुलसी के जीवन से संबंधित विविध पक्षों का सजीव चित्रण हुआ है। महाकवि व्यक्तिगत संघर्षों, प्रेरणाओं और अनुभूतियों का मार्मिक चित्रण किया गया है। नागरजी ने तुलसी के जीवन विभिन्न अंतरिक संघर्ष को और व्यक्तित्व को तेजस्वी बनाया है। तुलसी के काम और राम के द्वंद्व को अधिक उभारा गया है। तुलसी के गौरवपूर्ण व्यक्तित्व को लेखक ने अनुपम एवं सशक्त सोपान बनाया है।

'खंजन नयन' भक्त कवि सूरदास के जीवन चरित्र पर आधारित उपन्यास है। इस उपन्यास में लोक बोल उठता है कि सूरदास लोक कवि है। सूर का समग्र साहित्य पढ़कर साधारण पाठक भी वात्सल्य, श्रृंगार एवं शांत रस की त्रिवेणी में गोते लगाने लगता है। खंजन नयन का पाठक भी इसी अनुभूति का अनुभव करता हैं। इस उपन्यास की दृष्टि से सब से पहले सूर का अपना व्यक्तित्व और उसका विकास महत्व रखता है। जन्म से शिशु सूरदास को माता-पिता का प्रेम नहीं मिला। इस

विषय का वर्णन लेखक ने करुण रस प्रधान घटनाओं के माध्यम से किया। सूर ने अपने बारे में स्पष्ट रूप से नहीं लिखा। सूर का व्यक्तित्व एक समर्पित व्यक्तित्व था और नागरजी ने इसी व्यक्तित्व को पाठक के सम्मुख लाकर खडा किया है जिस में समग्र लोक जीवन के तथ्य विद्यामान हैं। वे लोक जीवन के अध्येता है। लोक-कवि व्यकित न होकर लोक होता है। भक्ति और काव्य दोनों का संबंध लोक और शास्त्र है। खंजन नयन में अमृतलाल नागर ने लोक और शास्त्र का समन्वय किया है। अमृतलालनागर ने सूरदास के व्यक्तित्व निर्माण में राधा भाव (कांत भाव) और सामाजिक साधना के लिए वात्सल्य भाव का प्रयोग किया है। नागरजी ने कांत भाव या राधा भाव में सत्य के स्थायित्व की पराकाष्ठा को प्रदर्शित किया है। उस से उज्वल या मधुर रस की प्राप्ति होती है। सूर के व्यक्तित्व का यह कांतभाव गहराई में से जाता है पर वात्सल्य भाव विस्तार करता है। माता अपने बच्चे की सेवा किसी स्वकीय लाभ से नहीं करती। इसलिए वात्सल्य भाव अपने मूल में ही निष्काम होता है। कांत भाव का मूल पीति में है और वात्सल्य का मूल करुणा है। नागरजी ने पाठकों का ध्यान इन दो बातों की ओर सूर के खंजन नयन के माध्यम से खींचा है। यह उपन्यास मानवीय संबंधों और मानव की विविध दिशाओं के आयाम को प्रत्यक्ष करता है। नागरजी ने लोक कथाओं, किंवदंतियो ं एवं सूर साहित्य की सहायता से इस बात पर अधिक बल देने का प्रयत्न किया है कि वास्तव में सूर थे क्या? यह रचना अतीत अनुभवों की यथार्थ प्रतिलिपि है। कल्पना नें अतीत अनुभवों के नये नमूनें में सजाये गये हैं। इस प्रकार शिल्प की दृष्टि से यह सफल जीवनीप्रधान उपन्यास है।

निष्कर्ष : –

शिल्प की दृष्टि से उल्लिखित उपन्यास, सफल जीवनीप्रधान उपन्यास हैं। वस्तुतः जीवनी प्रधान उपन्यास इतिहास, जीवनी और उपन्यास का एक सशक्त त्रिभुज है। अतः जीवनीप्रधान उपन्यासकार को इतिहास, जीवनी और उपन्यास की विशेषताओं एवं सीमाओं में बद्ध कर ही साहित्य सृजन करना पडता है। जीवनी प्रधान उपन्यास जीवनी और उपन्यास के मध्य की इकाई है। यथार्थ और कल्पना का भी यही सामंजस्य होता है। जीवनी तथ्यात्मक होती है तो उपन्यास मुख्यतः कल्पनात्मक परन्तु जीवनीप्रधान उपन्यास इतिहास और साहित्य का मध्यवर्ती होता है जिसका रचयिता इतिहासकार की अपेक्षा अधिक स्वच्छंद किंतु उपन्यासकार की तुलना में कम उनमुक्त होता है। वस्तुतः जीवनीप्रधान उपन्यासकार वस्तु सत्य एवं भाव सत्य के बीच संतुलन स्थापित करता है। शिल्प की दृष्टि से उपन्यास को सफल बनाने के लिए उपन्यासकार के लिए यह आवश्यक है कि ऐतिहासिक तथ्यों की सुरक्षा और उन में बंधे रहे। यदि उन की उपेक्षा करता है तो शिल्पगत विवेचन सठीक नही होता। शिल्पक्षेत्र में उपन्यास को सफल बनाना जीवनीप्रधान उपन्यासकार का प्रधान लक्ष्य है।

- अध्याय छः -

तेलुगु के जीवनीपरक उपन्यासों का शिल्प-विवेचन

1857 ई॥ के भरत के प्रधम स्वतंत्र संग्राम के पश्चात अपने आप को बदलकर, पूरे तेलुगु साहित्यकारों में भी बदलापन लानेवाले नवयुग वैतालिक कंदुकूरि विरेशलिंगम पंतुलजी है। साहित्यिक समीक्षकों के अनुसार तेलुगु साहित्य में विरेशलिंगमजी द्वारा लिखित 'राजशेखर चरित्र' ही प्रथम सामाजिक उपन्यास है। वास्तव में 'उपन्यास' नामक विधा, हमे प्राचीन साहित्यिक प्रक्रियाओं में दिखाई नहीं देता। अंग्रेजी साहित्य के संम्पर्क में से राजशेखर चरित्र नामक उपन्यास का उदय हुआ है। तेलुगु साहित्य के अनेक लेखक, आलोचकों की दृष्टि में उपन्यास की परिभाषा देना कठिन है। फिर भी अनेक साहित्यकारों ने प्रयत्न किया। वे मानते हैं कि उपन्यास के लिए 'अलंकार शास्त्र' नहीं रहा। यह उपन्यास का खास लक्षण है। सौभाग्यवश उपन्यास को नियंत्रण करने के नियम नहीं थे। 'उपन्यास' के अंदर कविता भी हो सकती है। मानव का यथार्थ जीवन ही उपन्यास का बुनियाद है। समकालीन मानव के वास्तविक जीवन पर आधारित काल्पनिक गद्य प्रक्रिया का दूसरा नाम ही 'उपन्यास' है। इस के चरित्र और घटनायें मानव जीवन का प्रातिनिद्य करते हैं। इस के करीब सौ पृष्ठ से अधिक पूष्ठ होते हैं।

उपन्यास के चार प्रधान अंग है। (1) कथा (2) कथावस्तु (3) चरित्र और (4) वातावरण (नेपथ्य)। ये चार अंग अन्योन्याश्रित है। एक के बिना दूसरा कमजोर होजाता है। कालक्रम में घटित संघटनओं की परम्परा को कथा कह सकते है। ये तमाम संघटनायें एक दूसरे से संबंध रखती और एक दूसरे से जन्म लेती हैं। यदि इन के बीच रिश्ता नहीं होता तो, कथा विफल होती है। कथा, हमे क्या बताती है? यह प्रश्न लगाने पर जो जवाब हमे मिलता है, उसे कथावस्तु कहना उचित है। कथा के कारण पाठक के मन में यह कौतूहल या जिज्ञाशा उत्पन्न होता है कि कथावस्तु में

आगे क्या होगा? कथावस्तु ही यह सब हमे बता देती है। कथावस्तु चरित्रों पर आधारित है। अर्थात कथावस्तु को अपने साथ आगे लेजानेवाले विभिन्न चरित्र या पात्र हैं। उपन्यास के इन तीन प्रधान अंगों को एक साथ जुटाने वाला चौथा अंग ही, नेपथ्य है। समीक्षकों की दृष्टि में यदि नेपथ्य जमीन है, तो बाकी तीन प्रधान अंग इस में उगनेवाले फैधे हैं। ये तीन पौधे नेपथ्य नामक जमीन से आधार लेते हैं। इसे अंग्रेजी में 'ब्याकग्रौंड' और हिन्दी में वातावरण भी कहते हैं। उदाहरण के रूप में नेपथ्य ही रंगस्थल है जिस पर विभिन्न पात्र आकर अपने - अपने धर्म उचित ढंग से कथावस्तु के अनुसार निभाते हैं। इस पर भी कथा आगे बढती है। इस प्रकार ये पाँच उपन्यास के प्रधान अंग हैं। उपन्यासों में सामाजिक, राजनैतिक, वैयक्तिक, ऐतिहासिक उपन्यास होते हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों के अंतर्गत ही जीवनीप्रधान उपन्यास स्थित हैं।

यदि कविता किसी शब्द की हकीकत है, तो उपन्यास उसका दर्पण है। दर्पण जितना मूल्यवान होगा, उस में प्रतिबिम्बित उतना ही स्पष्ट दिखाई पडेगा। उपन्यास एक जीवन्त गद्य विधा है तथा यह ईमानदारी एवं होशियारी से समसामायिक भारतीय परिप्रेक्ष्य को कथाचित व रूपासित कर रही है। उपन्यास जीवन की एक उज्वल पुस्तक है। उपन्यास एक ऐसी थरथराहट है, जो समूचे जीवित मनुष्य को कंपासकती है। उपन्यास का अनिवार्य रूप 'कथा-शिल्प' होता है। उपन्यास का प्रश्न केवल कथ्य अथवा चेतना से ही नहीं जुडा होता, शिल्प का प्रश्न भी बडा अहम होता है। उपन्यास विभिन्न शिल्पों का प्रयोक्ता है। उपन्यास में निबन्धात्मकता, संसारणात्मक, नाट्यात्मक आदि सभी प्रकार के शिल्प प्रयोग में आये हैं। व्यंग्यात्मकता, जीवनचरितात्मकता उपन्यास शिल्प के आयम है।

[1]''प्रश्न है शिल्प क्या है? कुछ विद्वानों के अनुसार कलात्मक कार्य कोई भी यांत्रिक या ललितकला, काव्य, संगीत, अभिनय और नृत्य आदि, किसी भी

1. वृन्दावनलाल का उपन्यास साहित्य - डा. मोहिनी सहाय - पृ - 292

कलात्मक कार्य में कौशल और रूप, आकृति आदि शिल्प के विविध अर्थ हैं। 'आप्टे' ने इन अर्थों के साथ ही कला किसी भी कला में कौशल कार्य, सृजन आदि को भी शिल्प के अर्थों में स्वीकार किया है। विविध मनीषियों के मतों का उल्लेख न करके यह कहना ही अधिक उपयुक्त लगता है कि 'शिल्प' शब्द को रचना, क्रिया-कौशल एवं कला-कौशल के अर्थ में ही स्वीकार करना चाहिए।'' आधुनिक आलोचक शिल्प, शिल्प-विधि, शिल्प विधान, आदि शब्दों का प्रयोग अंग्रेजी भाषा के आर्ट एक्स प्रेशन, टोकनीक और क्राप्ट आदि किसी न किसी शब्द के पर्याय के रूप में प्रयोग करते हैं। 'आर्ट' कला है, एकसप्रेशन अभिव्यक्त है, टेकनीक प्रविधि है और क्राम्ट शिल्प है। हिन्दी में प्रयुक्त शिल्प शब्द अंग्रेजी के "Croft" का हिन्दी पर्याय है। यद्यपि कुछ लोग टेकनीक का हिन्दी पर्याय शिल्प मानते हैं, जो भ्रमोत्पादक है। वास्तव में शिल्प से किसी रचना के कौशल का बोध होता है, जब कि टेकनीक का अर्थ है- शिल्प-प्रविधि। 'टेकनीक' का संबंध तो 'शिल्प' से है, किन्तु मात्र इतना कि वह निर्माण की विधि का ज्ञान करानी है। हमारी धारणा है कि शिल्प का सही अंग्रेजी शब्द "Craft" ही है।

उपन्यास की सृजन-प्रक्रिया में शिल्प उसका अंतरंग बनकर आता है। शिल्प के अनेक तत्व है, अनेक उपादान है। इन में संगति होना भी परम आवश्यक है। उसे चाहिए कि वह अपने अनुभूत को, वर्ण विषय को सही प्रस्तुती दे। इस के लिए उसे शिल्प के प्रति न केवल सतर्क रहना चाहिए, अपितु अनुरागी भी होना चाहिए। यों उपन्यास के सन्दर्भ में प्रयुक्त शिल्प की गति शीलता स्वत: प्रामाणित है। उपन्यास-रचना एक कला है और उसका शिल्प चरम परिणति । अत: शिल्प और कला यदि दूसरे के पर्याय नहीं तो परस्पर सम्बन्धित अवश्य है। किसी भी उपन्यास के कला-शिल्प का मूल्यांकन न केवल भाषा-शैली और प्रतीकान्वेषण के सहारे किया जा सकता है, अपितु उस के लिए आवश्यक है कि हम कथा-शिल्प, चरित्र-शिल्प, संवाद-शिल्प और परिवेश, की सम्पूर्ण शैली को भी देखें, समझें। यह ठीक है कि किसी एक उपन्यासकार का शिल्प दूसरे से मिलता जुलता नहीं हो सकता है। कारण

शिल्प एक गतिशील रचना-प्रक्रिया है। शिल्प-विधान के अंन्तर्गत हम उपन्यास की व्यवस्था अथवा प्रबंध का अध्ययन करते हैं। ऐसी स्थिति में यह स्वत: ही स्पष्ट होजाता है कि सृजन-प्रक्रिया शिल्प विधान का महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय बिन्दु है, किन्तु तभी, जब हमें उपन्यास की सृजन प्रक्रिया ज्ञात हो। सृजन-प्रक्रिया के दो रूप होते हैं। मानसिक और भौतिक। शिल्प के अनेक रूप हैं। औपन्यासिक शिल्प, कथा शिल्प, चरित्र-शिल्प, संवाद-शिल्प, भाषिक शिल्प, शिल्प सौन्दर्य, कहानी शिल्प आदि मुख्य हैं।

आधुनिक तेलुगु उपन्यासकार 'श्रीप्रसाद' द्वारा लिखित उपन्यासों में से 'आर्य चाणक्य' में सुन्दर शिल्प की अभिव्यक्ति हुई है। उपन्यास के आरम्भ में ही आर्य चाणक्य के व्यक्तित्व और आकृति के बारे में सुन्दर ढंग से वर्णन कियागया है। करीब तेईस सौ साल के पहले आर्य चाणक्य का जमाना है। विश्व विख्यात आर्य वर्त (भारत देश) में तक्षशिला मशहूर और यशस्वी विश्वविद्यालय है। उस के अर्थशास्त्र विभागाध्यक्ष पद पर आर्य विष्णुगुप्त बैठा है। यहाँ पढने केलिए देश-विदेश से अनेक छात्र आते हैं। आर्य चाणक्य के चेहरे में ब्रह्मतेज सुस्पष्ट दिखाई देता है। उसकी आँखें विशाल, चमकती और प्रभावभरित है। दोस्त हो या दुशमन हो, उस की आँखों में सीधे देख नही सकते । उसकी आँखों की भृकुटिकाएँ भी घने, काले बाल से भरी हैं। उस का नाक लंबा और शीर्ष भाग नोक की तरह है। उस के बाल भी घने और लंबे हैं। उस की चोटी नागिन की तरह लटकती है। उस के एक-एक अंग सुन्दर हैं। परन्तु समूचे शरीर को देखने से वह अनाकार, कुरूप और कलिया की तरह है। उस की आँखों से शोले गिरने लगते हैं। लेकिन वह अपार ज्ञान भांडार है। उस के द्वारा लिखित 'अर्थशास्त्र' विश्व विख्यात रचना है। इसे चुराकर ले जाने का प्रयत्न अनेक शत्रु करते हैं।

शिल्प की दृष्टि से, चाणक्य की युद्धनीति एक प्रमुख उदाहरण है। चन्द्रगुप्त को राजा बनाने के लिए आर्य चाणक्य ने जो नीति अपनाई, वह सराहनीय है। नंद

वंश के विपरीत विप्लव करने के लिए पहले चाणक्य ने नंद राजा के शत्रुराजाओं के साथ समझौता करलिया। चाणक्य की नीति के अनुसार चन्द्रगुप्त के साथ नंदवंश के शत्रुराजा लोग पर्वतिक, कीरातक और कलिंग राजा की समझौता हुई है। राज्य के बाहर इस प्रकार चन्द्रगुप्त का बल बढ़ने लगा। अन्त:पुर में भी चाणक्य की योजना के अनुसार माता मुरादेवी महानंद के द्वारा लिखित विरासत प्रतियाँ, उन लोगों को दिखाने लगी, जो नंद के खिलाफ थे। उन में से सर्व सेनाधीश भद्रभट प्रमुख है। बचपन से वह चन्द्रगुप्त के साथ पढ़ाई और खेल-खूद में साथ रहा। यह विषय जानकर बहुत खुश होगया। उसने वचन दिया कि सही वक्त पर चन्द्रगुप्त की सहायता के लिए वह संसिद्ध रहेगा। चाणक्य नीति के अनुसार भटभद्र ने नंदराजा को यह सलाह दी कि शत्रुराजा के साथ मिले चन्द्रगुप्त को अंत करने के लिए राज्य से दूर जाकर युद्ध करना है। क्यों कि राज्य के अंदर तमाम् लोग चन्द्रगुप्त से परिचित है और एक राज्याधिकारी के रूप में सब लोग उस से परिचित हैं। इसलिए चन्द्रगुप्त की ओर उन के मन में सहानुभूति जागने की आशंका है। लेकिन हकीकत यह है कि राज्य से दूर ले जाकर नंद राजाओं को मारना सेनाधीश की योजना है। वह, यह भी सोचता है कि राज्य से दूर ले जाने के बाद अपने अधीन में रही तमाम सेना को क्राँति करने का अवसर मिलेगा। क्यों कि तमाम सेना भी नंद राजा के अकृत्यों से पीडित हैं। इस प्रकार चाणक्य की रण नीति के कारण ही नौ नंद की मृत्यु हुई है।

चन्द्रगुप्त को राजा बनाने के लिए चाणक्य के सामने तीन अवरोध हैं। उन में से पहला अवरोध स्वयं नव-नंद थे। उन को चन्द्रगुप्त ने अपनी भुजबल से और आर्य की बुद्धि बल से पूरा किया। दूसरा अवरोध, सहायता करनेवाले अन्य राजाओं को प्रलोभन देकर उन को शांत करना है। तीसरा अवरोध, राक्षस मंत्रि में परिवर्तन लाना। दूसरे और तीसरे काम तो आर्य की बुद्धि बल पर ही निर्भर हैं। इसे साबित करने में उपन्यासकार ने सफलता प्राप्त किया। शिल्प की दृष्टि से यह एक उत्तम उदाहरण है। विजेता चन्द्रगुप्त का स्वागत करने के लिए मगध राजधानी पाटलीपुत्र सुन्दर और सुशोभित होने लगा। राक्षसामात्य, भद्रभट, बलगुप्त, आदि तमाम

राज्याधिकारी सविनय होकर नगर-द्वार पर चन्द्रगुप्त का सादर आह्वान करने संसिद्ध हैं। राक्षस योजना के अनुसार चन्द्रलेख नामक हाथी पर चढकर आनेवाले चन्द्रगुप्त पर कल्याण मंडप के स्तंभ गिरने, एक व्यक्ति ऊपर तैय्यार है। लेकिन चाणक्य नीति के अनुसार हाथी पर चन्द्रगुप्त के बदले उसका हमशकल बैठा है। ऐन मौके पर स्थंब गिरा। हाथी, उन्मत्त होकर सेना को तितर-बितर किया। फलतः हाथी के आस-पास खडे पर्वतिक और कलिंग सेना मरगई। राक्षस मंत्रि के द्वारा भेजीगई विषकन्या के कारण पर्रतिक और मलकेतु भी मारे गये। इस प्रकार राक्षसामात्य के द्वारा चन्द्रगुप्त को मारने के लिए किये गये तमाम कार्यों के कोण, चाणक्य के द्वारा बदल दिये गये। इस प्रकार करने से दो काम सिद्ध हुए। पहला काम- अर्थ राज्य दिये बिना चन्द्रगुप्त की सहायता करनेवाले अन्य देश के राजा और उस की सेना का भी अंत होगया। दूसरा काम- विजेता महराज चन्द्रगुप्त पर होने वाले हत्या यत्नों के कारण, लोगों में राजा के प्रति सहानुभूति और आदर भाव बढ़ने लगे। धीरे-धीरे राक्षसामात्य का मन भी बदलने लगा। अंत में चाणक्य ने उसे समझाया कि नंदवंश का असली वारिस सिर्फ चन्द्रगुप्त ही है। क्यों कि महानंदराजा और छोटी रानी मुरादेवी का एक मात्र सन्तान ही चन्द्रगुप्त है। इसलिए चन्द्रगुप्त ही राजसिंहासन का हकदार है। इस प्रकार राक्षसामात्य भी पूरी तरह बदल जाता है। इस प्रकार उपन्यासकार ने प्रस्तुत उपन्यास में सुन्दर शिल्प का अभिव्यक्त किया।

श्री नोरि नरसिंह शास्त्री का जन्म गुप्टूर प्राँत के एक विशिष्ट पंडित परिवार में हुआ है। उन के द्वारा लिखित ऐतिहासिक उपन्यास, शिल्प की दृष्टि से विशिष्ट हैं। प्रस्तुत उपन्यास 'रुद्रमदेवी' में उपन्यासकार शास्त्रीजी ने रोचक ढंग से शिल्पवर्णन किया। उदाहरण के रूप में उपन्यास के प्रधम अध्याय में ही नामकरण महोत्सव को हम ले सकते हैं। रानी रुद्रमदेवी की बेटी मुम्मिडम्म की शादी महादेवराज के साथ हुई। उन के घर में बेटे का जन्म हुआ। यह समाचार सुनकर पहले रानी रुद्रमा बहुत खुश हुई। बूढ़े राजा गणपति देव के मृतक चहरे में धीरे-धीरे आशा की किरणें व्याप्त

होकर उसका चेहरा विकसित होगया। राज दरबार के ज्यतिशशास्त्रोंज्ञों को बुलाया। उन का कहना है कि यह बच्चा बडा होकर महान राजा बनेगा। राजवंश का गौरव बढ़ायेगा। यह सुनकर राजा का मन और रुद्रमा का मन भी प्रसन्न हो गये। बेद पंडित ने भी घोषित किया कि यह बच्चा सम्राट बनेगा। चार साल बाद उस का नामकरण महोत्सव धूम-धाम से मनाया गया। उत्सव मंदिर में राजा गणपति देव सिंहासन पर विराजमान है। उन की बेटी रुद्रमदेवी पुरुष वेष धारण करके एक महान योद्धा के रूप में समारोह में मौजूद है। विभिन्न स्थानों पर अन्य कर्मचारी, अधिकारी और सामंत राजा भी विराजमान हैं। साधारण जनता भी बच्चे को देखने और नामकरण महोत्सव में शामिल होने वहाँ उपस्थित हैं। पुरोहित, पंडितगण, वेद-पुराण पढने लगे। निश्चित मुहूर्त में रुद्रमदेवी ने अपने पोते को हाथों में लेकर सब को दिखाते हुये, राजा के पास जाकर, बच्चें को उसके चरणों के सामने रखकर यह घोषित किया कि पिताजी! यह मेरा ही बेटा, भविष्य सम्राट और वंशोधारक है। इसे स्वीकार करके आशीस दीजिये। यह बच्चा हमारेलिए भगवान का दियागया तोहफा है। बच्चे से रानी ने कहा कि महराज के चरण स्पर्श करो। रुद्रमा की बात मानकर नन्हे बच्चे ने महाराज के चरण स्पर्श करके प्रणाम किया। बूढा राजा गणपति देव का मन उल्लास और उत्साह से भरगया। रुद्रमा की विनती के अनुसार वंश-गौरव बढाने के लिए उस बच्चे का नाम, राजा ने ''प्रताप रुद्रदेव'' रखने का आदेश दिया। समारोह में एक ओर उपस्थित मुम्मिडम्मा और उसके पति महादेवराज भी खुशहोकर राजा के सामने आकर मोतियों से भरी सोने की थाली में सोने की अंगूटी के सहारे बच्चे का नाम प्रताप रुद्रदेव लिखा। निश्चित मुहूर्त में नाम लिखने के बाद लोग हर्ष-उल्लास के साथ जयगान करने लगे। मंगलवाद्यगान गाने लगे। इस प्रकार नामकरण महोत्सव में युवराज प्रताप रुद्रदेव के भविष्य को सोने की अंगुटी के सहारे श्रीकार किया गया है। इस प्रकार लेखक ने उपन्यास में शिल्प को प्रत्येक स्थान दिया। शास्त्रीजी की रचनाओं में उपन्यास का हर एक लक्षण स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। शिल्पगत विवेचन की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास अनुपम रचना है।

श्रीप्रसादजी ने 'अकबर' नामक उपन्यास में शिल्प की दृष्टि से सफल ढंग से एक-एक घटना का वर्णन किया। उपन्यास के पहले अध्याय में अकबर का रूप वर्णन, इस का जीवित उदाहरण है। अकबर का बदन लंबा-चौडा भरपूर विग्रह है। वह उतना दुबला नहीं और अधिक मोटा भी नहीं। कडक व्यायाम करने के कारण शरीर में हर एक अंग मजबूत होकर हट्टा-कट्टा दिखाई देने लगे। विशाल बाहु वाले अकबर को मोटा कहना गलत है। गौर वर्णनवाले अकबर बहुत ही आकर्षक और सुन्दर रूपवान हैं। उस की आँखे विशाल, गोले, और गंभीर हैं। उन पर उचित ढंग से व्याप्त भृकुटियाँ अधिक प्रभावभरित हैं। लेकिन उन को मूँदने वाले पलक तो लंबे हैं। सफेद पट पर काले काले और गोले दो आँखे तारों की तरह चमकनेवाली हैं। उन दो आँखों के बीच बहुत ही लंबा और पतला नाक, नोक के साथ आकर्षक है। नाक के बाई तरफ छोटा-काला निशान होने पर भी, भयानक नहीं दिखता । उस के मूँछ घने और उचित ढंग से बढाये गये है। लेकिन मुसलमान-धर्म नियम के अनुसार बढ़ाने वाली दाडी तो उस के चेहरे पर नहीं थी। उस का स्वर गंभीर और सुननेलायक होता है। जब वह हँसता है तो, चेहरे के हर एक अंग में उस का झलक दिखाई देता है। इस प्रकार लेखक ने अकबर का रूप वर्णन करके, उस का साकार रूप पाठकों के सामने रखा।

अपने पिताजी पर विद्रोह करके जब सलीम अपने आप को स्वतंत्र राजा घोषित करता है, तब अकबर दक्षिण देश की यात्रा पर गया था। लेखक ने उस घटना का वर्णन सुन्दर ढंग से किया। सलीम अपने आप को राजा घोषित करने के लिए सुमुहूर्त रखा गया है। वह इतना खुश है कि उसे बादशाह बनने से, इस दुनिया में कोई नहीं रोक सकता। अगले दिन ही घोषणा का इंतजाम किया गया है। पूरब दिशा में सिंधूर वर्णवाले सूरज के निकलते ही, किले के ऊँचे स्थान पर नगारा बजाया जाता है। इस के साथ ही नगर के प्रधान रास्तों से लेकर गली-गलियों तक मंगलवाद्य धूम धाम से बजने लगते हैं। इन मंगलध्वनियों से लोगों को यह पता चलता है कि सलीम अब सिंहासन पर बैटनेवाला है। इसलिए तमाम नगरवासी उत्सव कार्य में भाग लेने

के लिए आगे बढते हैं। प्रात: काल के बाद दो घडियों के बीतने से सुमूर्त आजाता है। उसी वक्त सलीम को जहंगीर उपनाम से तक्त पर बैठना है। इस प्रकार उपन्यासकार ने रोचक ढंग से एक-एक घटना का वर्णन किया है। आमतौर पर उपन्यास में शिल्पगत विवेचन सहीं ढंग से किया गया है।

श्रीमान् परवस्तु वेंकय्यसूरी द्वारा लिखित 'रुचीदेवी' एक ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है। शिल्प की दृष्टि से यह अच्छी रचना है। इतिहास में श्री कृष्णदेवराय जी की विजय परम्परा के लिए विशिष्ट स्थान है। गजपति महाराजा पराजित होकर, सम्राट देवराय के साथ अपनी बेटी रुचीदेवी की शादी करने के लिए तैय्यार होता है। परन्तु महामन्त्री अप्पाजी की योजना के अनुसार देवराय के स्थान में वहाँ पर एक वीर खड्ग भेजदिया गया। उन दिनों में यह सर्वसाधारण विषय है। वीर खड्ग के साथ महारानी की शादी होजाती है। नववधु के आगमन के बाद सुहाग रात ही एक दुर्घटना घटती है। शत्रुलोगों के शाजिश से महरानी पर हत्यारोपण किया गया। उस के कटिभाग के आभूषण में विष भरी चाकू छिपाई गई। परन्तु यह किसी दासी का कृत्यु है। विद्रोहियों के कारण यह घटना घटती है। महराज ने महरानी को देश छोडकर चलेजाने की सजा दी। महामात्य ने बहुत समझाया, लेकिन राजा ने हट नहीं छोडा। महरानी मान छोडकर मायका जाना नहीं चाहती। इसलिए वह अपना जीवन लोकसेवा में व्यतीत करना चाहती है। नल्लमल जंगल में स्थित कम्भम नामक प्राँत में रहकर गाँव वासियों के लिए एक तालाब बनवाती है। उस तालाब के निर्माण के पश्चात कम्भ-भाइयों ने प्राण त्याग करके बलि छडादी। उन के नाम के आधार पर ही दोनों गाँवों को, इन दोनों भाइयों के नाम पर एक गाँव का नाम चिन्न कम्भम् और एक का नाम पेद्द कम्भम् है। अर्थात छोटा-कम्भम् और बडा कम्भम् है। कम्भम् तालाब के निर्माण करनेवाली महरानी रुचीदेवी का यश चारोंतरफ व्याप्त होगया । उपन्यासकार ने स्वयं लिखा है कि यह इतिहास है। यह एक यथार्थ कथा है। शासनों के आधार पर कम्भम् प्राँत में व्याप्त किंवदंतियों के माध्यम से उपन्यासकार ने यह रचना की। उपन्यास में शिल्पगत विवेचन रोचक ढंग से कियागया है।

उपन्यास के आरम्भ में कम्भम प्राँत के खान मन्दिर और तालाब आदि प्रमुख छायाचित्र भी छपाये गये हैं।

उपन्यासकार ने देवराय और वीरभद्र नामक गजपति वंशज के बीच के द्वंद्व युद्ध का वर्णन रोचक ढंग से किया। कोंडवीडु दुर्ग को देवराय ने आक्रमण किया। विवश होकर वीरभद्र गजपति ने जो प्रयत्न किया वह बहुत ही सराहनीय है। गुप्त वेश धारण करके, वह पहले देवराय के खास तंबू में छुपता है। बाद में देवराय के सो जाने के बाद उस पर हमला करता है। लेकिन सदा सचेत रहनेवाला देवराय ने अपने आप को शत्रु के प्रहार से बचाया। बिना हत्यार ही देवराय वीरभद्र के प्रहारों से बचते हुये शत्रु की खड्गविद्या की प्रशंसा करने लगे। यह घटना शिल्प की दृष्टि से बहुत ही रोचक है। रुचीदेवी का वर्णन करते समय लेखक ने बहुत ही सुन्दर और प्रभावभरित शब्दों का प्रयोग किया। प्रतापरुद्र गजपति के तीन संतान हैं। दो बेटे और एक बेटी है। बहुत समय के बाद बेटी का जन्म हुआ। बेटी के लिए महारानी ने महालक्ष्मी की पूजा की। इसलिए अपनी एकलौती बेटी का नाम उन्हों ने जगन्मोहिनी रखा। परन्तु इसे दुर्गादेवी, तुखाराणी, भद्र, ज्योतिर्मई, रुचीदेवी, अन्नपूर्णादेवी और सुभद्रा आदि नाम से पुकारतें हैं। असमान सौन्दर्यवति होने के कारण उसे तुख्खा कहते हैं। तुख्खा का अर्थ तोता है। कांति रेखा की तरह प्रभावशाली होने के कारण, उसे रुचीदेवी भी कहते हैं। बाह्य सौन्दर्य ही नहीं आंतरिक रूप से भी वह सुशील, प्रवीण है। संगीत और साहित्य क्षेत्र में वह विदूषी हैं। राजनीति क्षेत्र में भी वह कभी - कभी अपने पिताजी की सहायता करने योग्य प्रशासनिक लक्षण उसके अन्दर पाये जाते हैं। गरीब और अनाथ लोगों के प्रति बहुत ही दयामई है। हरदिन पवित्र रामायण का पाठ भक्ति-श्रद्धा के साथ पढकर अपने पिताजी के मन को शांति पहुँचाती है। इसप्रकार वह बहुमुख प्रज्ञावान और सुकोमल सुन्दरी है। इसलिए प्रतापरुद्र गजपति अपनी बेटी का विवाह किसी योग्य वर के साथ करना चाहता है। वह सदा भगवान से प्रार्थना करता है कि उस की बेटी की जिन्दगी सुख और चैन से बीते।

उपन्यासकार ने तीसरे अध्याय के आरम्भ में विजयनगर पुर का सुन्दर वर्णन किया। पवित्र तुंगभद्र नदी के तट पर यह शहर स्थित है। शत्रु राजवंशज होने पर भी नरहरि का मन, उस शहर को देखकर आनंद से भरगया। अलकापुर की शोभा को भुलादेने की शोभा विजयनगर में दिखाई देती है। सही ढंग से एक सरल रेख की तरह बनायेगये विशाल रास्ते, और उसके दोनों तरफ छायादार वृक्ष एवं आसमान को छूनेवाले बडे-बडे सुन्दर इमारत हैं। सन्ध्या समय में सूरज के प्रकाश से सुशोबित विजयनगर नरहरि की दृष्टि में पद्म रागमणियों से निर्मित शिल्प कलासाम्राज्य की तरह विराजित है। लेखक ने रुचीदेवी के विवाह का वर्णन भी बहुत सुन्दर ढंग से किया। महामात्य अप्पाजी की योचना के अनुसार देवराय के बदले उनके वीरखड्ग को भेज दिया गया है। उस के साथ खास सिपाही और अप्पाजी भी आचुके हैं। उन का स्वागत, गजपति राजा ने बहुत ही धूम-धाम से किया। स्वयं गजपति राजा सपरिवार नगर के बाहर आकर, देवराय के खड्ग का स्वागत वैभव के साथ किया। देखनेवालों को ऐसा मेहसूस होने लगा मानों स्वयं सम्राट देवराय ही आगये हैं। विजयनगर से आये लडकेवालों के लिए एक खास सुन्दर राजप्रसाद में टहरने का जगह दिया गया है। विवाह का समय नजदीक आने लगा। उत्कल राज्यलक्ष्मि रुचीदेवी वधु के रूप में सर्वांग सुन्दर रूप में अलंकृत होकर विवाह मंडप में आ पहुँची। पुजारी वेदमन्त्र पढनेलगे। महामात्य अप्पजी ने एक सिपाही के माध्यम से वर के रूप में अलंकृत एक वीरखड्ग को विवाह मंडप में भेज दिया। तब तक सर झुकाकर बैठी महरानी रुचीदेवी ने सर उठाये बिना ही उस खड्ग की ओर एक पल के लिए देख लिया। खड्ग की ओर देखते समय उसे ऐसा मेहसूस होने लगा मानो वहाँ पर स्वयं सम्राट देवराय ही बैठे हैं। क्यों कि उस खड्ग के पीछे, सम्राट का चित्र भी रखलिया गया है। इस प्रकार विवाह कार्यक्रम का सुन्दर वर्णन किया गया है। यह शल्प की दृष्टि से बहुत ही रोचक उदाहरण हो सकता हे।

तालाब के निर्माण के समय में उपन्यासकार ने उन तमाम घटनाओं का वर्णन किया, जिन के बारे में लोक प्रचलित किवदंतिया हैं। जनश्रुतियों से जो सामाग्री प्राप्त

है, उसका सुन्दर दृश्य है। तीन चट्टानों के बीच और एक चट्टान के ऊपर, यह मन्दिर स्थित है। चट्टानों के चारों ओर घाट हैं। उन घाटियों में चार सरितायें बहती हैं। उन में से चम्पानदि, गुण्डलकम्मा आज भी प्रचलित हैं। वे दोनों कम्भम प्राँत से होती हुई सागर में जाकर मिल जाती हैं। ऐतिहासिक सत्य को उपन्यासकार ने बहुत ही सुन्दर ढंग से वर्णन किया। इसे पढते वक्त पाठकागण की आँखों के सामने वह दृश्य स्पष्टरूप से दिखाई देता है। ऐसे पवित्र स्थान में दुःख की बात यह है कि गरमी के दिनों में पानी का बूंद तक नहीं मिलता। खेतीबारी के लिए योग्य जमीन होने पर भी सिंचाई के योग्य छोटी धाराएँ नहीं हैं। इसलिए महरानी ने तालाब का निर्माण करने का फैसला करलिया।'' उन चट्टानों में स्थित मंदिरों में नरसिंह स्वामी का मन्दिर बहुत ही प्रचलित है। नरसिंह स्वामी का जन्म एक स्थंभ से हुआ था। स्थंभ का दूसरा नाम ही 'कम्भ' है। इसलिए उस जगह का नाम कम्भम बना है। यह लोक प्रचलित कहानी है। इन सभी विषयों को लेखक ने सुन्दर ढंग से वर्णन किया। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास शिल्प की दृष्टि से बहुत ही अच्छी रचना है।

'लल्लादेवी' द्वारा लिखित 'सम्राट अशोक' नामक उपन्यास दो भागों में विभाजित है। दोनों भाग, दो प्रतियों के रूप में प्रकाशित कियेगये हैं। प्रथम भाग में सम्राट अशोक के राजवंश का आरम्भ और उस की विशेषताओं के बारे में वर्णन किया गया है। मौर्य वंश की स्थापना में आर्य चाणक्य का योगदान और अशोक बाल्य जीवन का वर्णन, प्रथम भाग में हैं। शिल्प की दृष्टि से बाल्यजीवन का वर्णन बहुत ही सुन्दर है। तप करने वाले आर्य चाणक्य को यह ज्ञात होता है कि बिंदुसार महाराज के यहाँ पुत्र का जन्म हुआ है। उसे 'अशोक' नाम रखना उचित है। महामात्य के आगमन से राजा और परिवार सभ्य आनंद से अवाक रहजाते हैं। महामात्य के सलाह पर ही बालक का नाम अशोक रखा गया। अमात्य ने भविष्यवाणी सुनादी कि यह बालक यशास्वी और विशाल भरत वर्ष का सम्राट बनेगा। उन के प्रशासन में लोग सुख और चैन से रहेंगें।

उपन्यास के दूसरे भाग में अशोक का विवाह, राजा बनना और कलिंग युद्ध का सुविशाल वर्णन है। प्रशासन व्यवस्था में सुस्थिरता लाने के पश्चात अशोक ने सुविशाल साम्राज्य कायम किया। अशोक की विशाल और पराक्रम सेना के बारे में सुनकर अनेक राजा लोग अपने आप को सामंत बनाचुके थे। लेकिन कलिंग के राजा ने अशोक की सत्ता को तिरस्कार किया। विवाश होकर अशोक को कलिंगराजा से युद्ध करना पडा। कलिंग की सेना भी पराक्रम और धीरोदात्त है। दोनों के बीच भीकर युद्ध हुआ। लाखों लोग मारे गये। कलिंग राजा भी मारा गया। भयानक रूप में इस युद्ध का वर्णन किया गया है। शिल्प की दृष्टि से उपन्यासकार ने भयानक रस का वर्णन सही ढंग से किया। सम्राट अशोक पूरीतरह बदलजाता है। अनुताप से उस ने बुद्ध-धर्म स्वीकार किया। अपना अंतिम जीवन उस ने बुद्ध-धर्म को व्याप्त करने में व्यतीत किया। उस के प्रभाव से उस के बेटा और बेटी दोनों धर्म-प्रचार कार्य में तल्लीन होने लगे। शिल्प की दृष्टि से 'सम्राट अशोक' नामक उपन्यास सुन्दर, रोचक रचना साबित हुआ है।

'श्रीप्रसाद' द्वारा लिखित 'अप्पाजी' ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास है। साम्राट श्रीकृष्ण देवराय महामंत्री तिम्मरुसुजी को प्यार और इज्जत से 'अप्पाजी' कहते हैं। महारानी अपने बेटे को सम्राट बनाने के लिए, छोटी रानी की संतान कृष्ण देवराय को जंगलों में लेजाकर मारने को कहती है। उस बच्चे को अप्पजी ने ही अपनाकर पालन-पोषण करके बडा किया और उचित शिक्षा में प्रशिक्षित किया। सही समय पर उसे अप्पाजी ने महाराजा बनाया। विजयनगर राज्य को सुविशाल साम्राज्य बनाकर सम्राट श्रीकृष्ण देवराय को तरह विख्यात प्राप्त महान व्यक्ति बनाने में अप्पाजी का अधिक योगदान है। अप्पाजी का जन्म गरीब ब्राह्मण परिवार में गुण्टूर के निकट कोंडवीडु प्राँत में हुआ था। माँ-बाप की मृत्यु के पश्चात बालक अप्पाजी पेट की पालन के लिए विजयनगर की ओर चलपडा था। रास्ते में भूख और थकावट से वह बेहोश होगया था। एक वैशीली साँप अपना फण फैलाकर सूरज के किरणों से बचाकर उसे छाया देने लगा। एक संत ने यह दृश्य देखा और उसे अपने साथ

लेजाकर, तिम्मरुसु नाम देकर तमाम शास्त्रों में प्रवीण बनादिया। वह कम समय में विजयनगर राज्य के दीवान के रूप में विख्यत हो गया था। साम्राट श्री कृष्णदेवराय की हर एक विजय के पीछे अप्पाजी का हाथ है। अपनी राजनीति के आधार पर ही गाजपति राज्य और विजयनगर राज्य के बीच अप्पाजी ने रिश्ता जोडदी। अप्पाजी की योजना के अनुसार ही देवराय और गजपति की बेटी अन्नपूर्णादेवी की शादी सम्पन्न हुई है। शिल्प की दृष्टि से बाल्यजीवन में घटित घटना और विवाह की योजना महत्वपूर्ण उदाहरण है। लेकिन अप्पाजी के अंतिम समय का वर्णन करुणरस प्रधान है। उपन्यासकार ने यह साबित किया है कि 'अप्पाजी' की मृत्यु के परचात विजयनगर सम्राज्य का सूरज डूब गया। राजनैतिक ज्ञानी के रूप में अप्पाजी का वर्णन कियागया है। अप्पाजी के पारिवारिक जीवनी के बारे में कम सामग्री प्रस्तुत की गई है।

जीवनीपरक उपन्यासों की सिलसिले में 'शाहजहाँ' एक कडी है। यह श्री प्रसाद द्वारा लिखित सफल उपन्यास है। शिल्प की दृष्टि से इस उपन्यास में शाहजहाँ और मुम्ताजमहल के प्रेम का निरुपण हुआ है। जहांगीर के पश्चात तक्त के लिए हुई लडाई में 'शाहजहाँ' कामयाब होता है। जहांगीर की प्रेयसी नूरजहाँ ने अपनी बेटी की शादी जहागीर के चार बेटों में से एक 'शाहयाज' के साथ करती है। परन्तु वह तक्त प्राप्त करने में विफल होजाता है। शाहजहाँ ने अपने राज्य को सुस्थिर बनाने के लिए बहुत मेहनत किया। भारत के इतिहास में शाहजहाँ का समय स्वर्ण युग कहाजाता है। क्यों कि शाहजहाँ के समय में अनेक सुन्दर इमारत बनवाये गये हैं। कलापोषक के रूप में वह विख्यात हो गया है। शाहजहाँ की शादी 'मुम्ताजमहल' नामक सुन्दर नारी के साथ हुई। उस के चार बेटे और दो बेटियाँ हुए। इन में से औरंगजेब और रोशनारा के द्वारा अनेक समयस्याँए उत्पन्न हुये हैं। धीरे-धीरे मुम्ताजमहल का स्वास्थ्य बिगड गया। अनेक राज-वैध्य विभिन्न दवाएं दे चुके हैं। लेकिन विफल हो चुके हैं। अंतिम क्षणों में मुंताज ने अपने पति शाहजहाँ से दो वर माँगे। पहले वर के अनुसार बच्चों पर सौतेली माँ का असर न पड़े। दूसरे वर के अनुसार उनके प्रेम के निशानी

के रूप में 'मुम्ताजमहल' नामक संगमरमर का इमारत बनालिया जाय। शाहजहाँ ने दोनों इच्छायें पूरी कर दी। पूरे मोगल वंश के प्रशासन काल में शाहजहाँ का समय स्वर्णयुग माना जाता है। मुम्ताजमहल की मृत्यु के बाद विरक्त मन से 'ताजमहल' को देखते हुये आग्रा खिले में अपना जीवन बिताने लगता है। पूरे मुगल वंश के प्रशासन काल में शाहजहाँ का समय स्वर्ण युग मानाजाता है। सिंहसन के लिए चारों पुत्र आपस में लडते हैं। लेकिन अंत में औरंगजेब कामयाव होता है। रोशनारा के सलाह पर औरंगजेब अपने पिता को बंदी बनाता है। बंदीगृह में रहकर भाइयों की आपसी लडाई के बारे में सुनकार बादशाह का मन विचलित होजाता है। अंतिमक्षणों में जेल में पिता की दुस्थिति देखकर वह बहुत दु:खित होता है। इस प्रकार ताजमहल में जाकर शाहजहाँ अंतिम श्वास छोड देता है। प्रस्तुत उपन्यास में शाहजहाँ को एक अमर प्रेमी के रूप में उपन्यासकार ने वर्णन किया। शिल्प की दृष्टि से यह सफल रचना है।

'लल्लादेवी' द्वारा लिखित जीवनीपरक उपन्यासों में 'छत्रपति शिवाजी' वीररस प्रधान सफल उपन्यास है। मुसलमान सत्ता को चुनौती देकर हिन्दू राज्य कायम करने में शिवाजी का योगदान अविस्मरणीय है। शिल्प की दृष्टि से वीररस, वात्सल्यरस, भक्तिरस और राष्ट्रीय-धारा से यह रचना भरी है। शाजी भौसलें और जिजियाबाई का अकेला पुत्र, शिवाजी है। दादाजी कोंडदेव नामक आचार्य के पास शिवाजी ने शिक्षाग्रहण की। शिवाजी को उत्तम व्यक्ति और महान योद्धा बनानेवालों में चार प्रधान व्यक्ति हैं। शिवाजी की माता जिजियाबाई नीति और धार्मिक कहानियाँ सुनाती थीं। समर्थरामदास नामक संत ने हिन्दू धर्म की रक्षा के बारे में समझाया। भक्त तुकाराम ने भक्तिमार्ग सिखाया। कोंडदेव ने हिन्दू-राज्य कायम करने की स्फूर्ती दी। इस प्रकार शिवाजी एक महान व्यक्ति और शक्तिमान के रूप में उभर आये। मुसलमानों के दुरव्यवहार से तंग आकर अनेक युवापीडी एक टोली के रूप में बनकर शिवाजी को अपना नायक बनाया। तब से उस टोली का नाम 'शिवसेना' है। रायघड को अपना राजधानी बनाकर स्वराज्य नामक विस्तृत राज्य को उसने कायम किया।

'छत्रपति' नामक उपनाम से शिवाजी ने राज-पद ग्रहण किया। औरंगजेब के रास्ते में शिवाजी एक प्रतिबंध हो गया। इसे मारने के लिए औरंगजेब ने अफजलखाँ को भेजा। शिल्प की दृष्टि से इस घटना का वर्णन सुन्दर है। क्यों कि इन दोनों के बीच हुए द्वन्द्व युद्ध में शिवाजी ने कूटनीति से अफजल को मारा। विवश होकर औरंगजेब ने शिवाजी ने अपने दरबार में आने का निमन्त्रण भेजा और शिवाजी एवं उसके पुत्र शंभूजी को भी बंधी बनादिया। लेकिन फिर एक बार टोकरी में छिपकर ये दोनों भाग जाते है। शिल्प की दृष्टि से यह एक सफल उदाहरण है। शिवाजी के अंतिम दिन बहुत कष्टों में व्यतीत हुये। गोल्कोंडा के नवाब की सहायता के लिए जाकर उसके दीवान अक्कना और मादन्न के जाल में फँस जाता है। मगर अंत में अपने आप को संभालकर फिर वापस अपना राज्य पहुँचता है। जीवन के अंतिम दिनों में रोगग्रस्त होजाता है। उसके विरासत में राजा का पद शंभूजी ने ग्रहण किया। इस प्रकार शिल्प की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास में शिवाजी को हिन्दू-राज्य कायम करनेवाले महान योद्धा के रूप में लेखक ने वर्णन किया। यह एक उचित जीवनीपरक उपन्यास है।

श्री सुब्रह्मण्य शर्माजी ने स्वतंत्र सेनानी लक्ष्मीबाई की जीवनी को उपन्यास का रूप दिया है। शिल्प की दृष्टि से 'झाँसी लक्ष्मी बाई' नामक उपन्यास सकल रचना है। इस उपन्यास में लक्ष्मीबाई की पूरी जिन्दगी का सुविशाल वर्णन है। संतान हीन पीश्वा दूसरे बाजीराव ने नाना फडनवीस नामक बालक को गोद लिया। अपने दोस्त, सरदार मोरोपंत की बेटी 'मनूबाई' को भी पीश्वा ने अपनी बेटी की तरह पालन-पोषण करने लगा। किशोरावस्था में 'मनूबाई' लडकों के साथ युद्ध कलाओं में प्रशिक्षित होगई। शिल्प की दृष्टि से यह वीररस प्रधान है। सुन्दर ढंग से उपन्यासकार ने युद्ध प्रशिक्षण का वर्णन किया है। सयान होने के पश्चात मनूबाई की शादी झाँसी राज्य के राजा गंगाधरराव के साथ हुई। मनूबाई में बचपन से युद्ध कलाओं के प्रति रुची है। इसलिए शादी के पश्चात भी लक्ष्मीबाई ने एक बेटे को जन्म दिया। लेकिन तीन महीनों में ही उस बच्चे की मृत्यु हुई। राजा की बात मानकर 'मनू' ने अपना नाम 'लक्ष्मीबाई' रखलिया। बुजुर्ग लोगों की सलाह पर राजा ने 'आनन्दराव' नामक

बालक को गोद लिया और उनका नाम 'दामोदराव' रख लिया। स्वास्थ्य बिगडने के कारण जब राजा की मृत्यु हुई, तब राणी की आयु 18 साल की है। अंग्रेजी सरकार ने 'झाँसी' राज्य को अपने राज्य में मिला लिया। सरकार की ओर से राणी को वार्षिक आमदनी मिलती है। राणी ने युद्ध कलाओं में सुशिक्षित नारियों की एक टोली बना हैं। शिल्प की दृष्टि से प्रथम स्वतंत्र संग्राम -1857 की योजना बहुत ही रोचक है। उसे सफल बनाने के लिए तात्याटोपे और नानापडनवीस जैसे योद्धाओं ने बहुत मेहनत किया। हिन्दू सेना ने अंग्रेजी सेना का सामना किया। स्वयं पुत्र दामोदरराव को अपने पीट पर बाँधकर राणी ने घमासान युद्ध किया और अंत में वीरगति प्राप्त की। देशभक्तिन, वीरनारी के रूप लक्ष्मीबाई का रोचक वर्णन, शिल्प की दृष्टि से उपन्यास को सफल बनादिया है।

श्री शातवाहन द्वारा लिखित उपन्यास 'तिप्पूसुल्तान' देशभक्ति प्रधान जीवनीपरक उपन्यास है। शिल्प की दृष्टि से यह एक वर्णनात्मक उपन्यास है। इस में 'तिप्पूसुल्तान' की जीवनी का वर्णन साफ-साफ किया गया है। समीक्षकों का कहना है कि इस में एतिहासिक तथ्यों का बहुत कम जिक्र कियागया है। लेकिन लेखक ने खुलेआम कहा कि यह उपन्यास जीवनीपरक उपन्यास जरूर है। मैसूर महराज के दरबार में हैदराली एक साधारण सिपाही का काम करता रहता है। एक संत के आशीस से हैदर की पत्नी फकृन्नीसा ने एक बेटे को जन्म दिया। इसलिए संत के नाम पर बेटे का नाम 'तिप्पूसुल्तान' रखा गया। उस्ताद अब्दुल्ला और गोवर्दन के पास धार्मिक और योद्धा गाजीखान के पास युद्धकलाओं की शिक्षा तिप्पू ने प्राप्त किया। उसकी बेटी के साथ ही तिप्पू की शादी हुई। अंग्रेजों से लडते समय हैदराली की मृत्यु होती है। उसके पश्चात कुशलत से तिप्पू राज्याधिकार ग्रहण करता है। इतिहास में यह साफ लिखा गया है, कि तिप्पूसुल्तान ने सब से पहले अंग्रेजी-सेना पर बन्दूक चलाया। पत्नी की मृत्यु के पश्चात तिप्पू का मन विचलित होजाता है। अपने दोनों पुत्रों के साथ राज्य का प्रशासन व्यवस्था सुधारता है। शिल्प की दृष्टि से

लेखक ने सुन्दर ढंग से ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन किया है। तिप्पू का वर्णन वीर धीरोधात्त एवं देशभक्त के रूप में किया गया है।

श्री तुम्मलपल्लि रामलिंगेश्वरराव द्वारा लिखित 'तिक्कन सोमयाजी' नामक उपन्यास एक सफल जीवनी परक उपन्यास है। विक्रमसिंहपुर के महामंत्रि सिद्दना का पुत्र ही तिक्कना है। खड्ग तिक्कना और कवि तिक्कना, दोनों रिस्ते में भाई समान हैं। इन दोनों के विवाह भी पेद्द चानम्मा और चिन्न चानम्म के साथ होते हैं, जो दोनों बहिन हैं। उपन्यास में शिल्प की दृष्टि से उत्कृष्ट घटना, 'महाभारत' का अनुवाद है। महाभारत जैसे महानग्रंथ के लिए तिक्कनामात्य ने 'सोमयज्ञ' किया और 'सोमयाजी' उपनाम भी प्राप्त किया है। लेखक ने खड्ग तिक्कना के वीरमरण का वर्णन सुन्दर ढंग से किया है। उपन्यास में कवि तिक्कना की जीवनी का सफल और विस्तृत वर्णन है। वैयक्तिक जीवन से ज्यादा राजव्यवहारों से संबद्ध विषय की ओर ध्यान दिया गया है। वास्तव में, ऐतिहासिक उपन्यास पढ़ते वक्त पाठकों के मन में जिज्ञासा उत्पन्न होजाता है। लेखक ने विशेष भाषा-शैली में, मन को छूनेवाली ढंग से, इसकी रचना की। पति के लिए चिन्न चानम्मा का तप, पति की मृत्यु के बाद खड्गतिक्कना के साथ पेद्द चानम्मा का सहगमन, करुण रस प्रधान घटनाएँ हैं। राजमहेन्द्रवरम से आयोजित कवि सम्मेलन में तिक्कन ने विजय प्राप्त किया। इसलिए स्वयं मनुमसिद्धि महराज ने कवि तिक्कना का स्वागत अपने दरबार में किया था। महराणी पुण्यस्त्री-व्रत करना चाहती है। इसलिए कवि तिक्कना और चानम्मा, दोनों को रानिवास में बुलाकर पूजापाठ करती है। उस रस्म का वर्णन लेखक ने भक्ति रस निरूपण के साथ किया। इस प्रकार आमतौर पर उपन्यास में शिल्पगत विवेचन सुन्दर ढंग से किया गया है।

'आँध्र कविता, कविता पितामह' नामक उपन्यास में 'अल्लसानि पेद्दन' की जीवनी का वर्णन है। उपन्यास का आरम्भ बालक श्री कृष्णदेवराय की आँखे उखाडकर मारने की आज्ञा देनेवाले वीरनरसिमंहराय के जीवन के अंतिम समय के साथ होता

है। उपन्यास का अंत भी 'अप्पाजी' की आँखे उखाडकर मारने की घटना के साथ होता है। उपन्यासकार ने उपन्यास के आरम्भ और अंत में सामीप्य रखा है। पेद्दना का जीवन सिर्फ साहित्य क्षेत्र से ही नहीं, बल्कि राजाधिकार, प्रशासनविदान और युद्धकलाओं के साथ भी जुडा है। विभिन्न क्षेत्रों में विशेष होने के कारण पेद्दना को देवराय ने 'आँध्र कविता पितामह' उपनाम से अलंकृत किया। पेद्दना को 'अष्टदिग्गज' का नेता बनाकर स्वयं देवराय ही उसे सोने का कंकण, आदर के साथ पहनाता है। गजपति राजकुमारी अन्नपूर्णादेवी और देवराय के प्रेम-विवाह में पेद्दना का विशेष योगदान है। लेकिन अंत में 'अप्पाजी' को मारकर भयानक भूल करनेवाले देवराय से पेद्दना विरक्त होकर राज्य छोडकर भगवान तिरुमलेश के मंदिर में चलाजाता है। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में पेद्दना और देवराय की दोस्ती की कहानी है। उपन्यास की भाषा-शैली आम जनता के समझ में आनेवाली है। इस रचना में देश-काल-वातावरण का भी वर्णन है। शिल्पगत विवेचन की दृष्टि से पेद्दना को 'उपनाम' से अलंकृत करने की घटना बहुत ही रोचक है। भूमिका के रूप में उपन्यासकार ने स्वयं उपन्यास लिखने में घटित घटनाओं का और कथावस्तु में घटित विशेष घटनाओं का भी जिक्र किया। यह, शिल्प की दृष्टि से बहुत ही उपयुक्त अंश है। इस प्रकार शिल्प की दृष्टि से समूचे उपन्यास को सठीक रचना मानना उचित है।

पंडित नोरि नरसिंहशास्त्री द्वारा लिखित जीवनीपरक उपन्यासों में 'कविसार्वभौमुडु' एक सफल रचना है। कोंड्वीडु राज्य के राज दरबार में कवि श्रीनाथ विद्याधिकारी के रूप में काम करते थे। उन्हों ने वेदों, उपनिषदों और अन्य शास्त्रों का गहरा अध्ययन किया। उन की रचनाओं में 'श्रृंगार नैषदम' ख्याति प्राप्त काव्य है। उन का यश देश-विदेशों में कम समय में व्याप्त होगया। इन का जन्म साधारण किसान परिवार में हुआ था। कवि श्रीनाथ ने दरबारी कवि बनने के पश्चात आलीशान जीवन बिताते हुए एक सन्दर्भ में कहा कि 'वाणी मेरी रानी'। यह घटना शिल्प की दृष्टि से सुन्दर है। श्रीनाथ ने अपनी बहिन का विवाह भक्तकवि बम्मेर

पोतनामात्य के साथ कर दिया है। श्रि विद्यानगर में आयोजित साहित्य स्पर्था में विख्यात कवि अरुणगिरिनाथ 'डिंडिमभट्टु' का मुकाबला महानकवि श्रीनाथ ने किया था। प्रत्योगिता में श्रीनाथ ने विजय प्राप्त किया। इसलिए उन्हे 'कविसार्वभौमुडु' नामक उपनाम भी मिला। शिल्प की दृष्टि से यह बहुत सुन्दर घटना है। उपन्यासकार ने यहाँ, यह साबित किया है कि 'श्रीनाथ' सचमुच 'श्रृंगार कवि' है। लेकिन श्रीनाथ के अंतिम दिन बहुत ही दयनीय हैं। राजद्रोह के अपराध में उसे गिरफतार किया गया। राचकोंड राजा ने भरी सभा में श्रीनाथ का घोर अपमान किया। सिपाहियों को यह आज्ञा दी गई कि श्रीनाथ कवि को कोडों से पीटता, सडकों पर घसीडता लेजाय। शिल्प की दृष्टि से यह करुण रस प्रधान घटना है। इस प्रकार उन्हों ने जितना यश साहित्य क्षेत्र में श्रीनाथ कवि ने प्राप्त किया, उतना ही अपार दु:ख उस ने अनुभाव किया। इस प्रकार श्रीनाथ ने विलपते प्राण त्याग दिया। प्रस्तुत उपन्यास में श्रीनाथ के व्यक्तिक जीवन का काम और साहित्यक जीवन का प्रधान स्थान दिया गया। शिल्प की दृष्टि से उपन्यास में नौ रस, उपलब्ध है। भाषा-शैली सरल और सुबोध है। आमतौर पर शिल्प की दृष्टि से यह एक सफल उपन्यास है।

नोरी की रचनाओं में से 'कविद्वयमु' दो महान कवियों पर आधारित अनोखा उपन्यास है। इस में महाकवि श्रीनाथ और भक्त कवि पोतना की जीवनियों का विश्लेषण किया गया है। प्रथम पत्नी की मृत्यु के बाद श्रीनाथ ने भूदेवी से विवाह करलिया। पोतना अपने परिवार के साथ श्रीशैल क्षेत्र में खेती का काम करके जीवन बिता रहा है। शिवरात्रि महोत्सव नामक काव्य की रचना श्रीनाथ ने की। श्रीनाथ ने पोतना को भी सलाह दिया कि किसी राज दरबार में राजाश्रय प्राप्त करे। परन्तु भक्त पोतना सिर्फ भगवान श्रीकृष्ण के दरबार में आश्रय प्राप्त करना चाहते हैं। मगर श्रीनाथ की काव्य कला से प्रभावित पोतना ने भगवान श्रीकृष्ण के गीतोपदेश का अनुवाद तेलुगु में किया। उस मधुरकाव्य में भगवान श्रीकृष्ण की जीवनी है। उस महाकाव्य का नाम 'महाभागवत' रखा गया है। इस रचना से भगवान श्रीकृष्ण की कहानी जन साधारण तक पहुँची है। इस संदर्भ में उपन्यासकार ने यह साबित किया

कि शिल्प की दृष्टि से भागवत कितना महान है। विपरीत स्थिति के कारण श्रीनाथ का जीवन मुसीबतों के जाल में फँस जाता है। वह अपने परिवार के साथ अमरावति गाँव में खेती करते हुये जीवन बिताने लगा। लेकिन बाढ के कारण श्रीनाथ ने भूमी का कर नहीं चुकाया। इस अपराध के कारण नागय्या नामक राजाधिकारी ने श्रीनाथ को बन्धी बनाने की आज्ञा दी। फलत: सिपाही श्रीनाथ को जंजीरों में बाँधकर कोडों से मारने लगे। यह दृश्य बहुत ही करुणरस प्रधान है। और एक तरफ भगवान श्रीकृष्ण की भक्त गाथा को जन साधारण तक पहुँचानेवाले भक्त पोतना का यश आमजनता में व्यप्त होगया। उपन्यासकार ने शिल्प की दृष्टि से यहाँ पर तुलनात्मक वर्णन किया है। एक तरफ शान और शैकत से घमंड जीवन बिताकर, विपरीत स्थित में किस्मत का मारा श्रीनाथ कवि और दूसरी तरफ कष्ट झेलते-झेलते आम जनता को महान काव्य भागवत ग्रन्थ देनेवाले परम भक्त के रूप में भक्त पोतना है। इस प्रकार शिल्पगत विवेचन करने से यह साबित होता है कि उपन्यासकार ने श्रृंगारकवि श्रीनाथ और भक्त पोतनामात्य की जीवनियों का तुलनात्मक अध्ययन किया है। शिल्प की दृष्टि से यह सफल उपन्यास है।

'धूर्जटी' नामक जीवनीपरक उपन्यास तो, श्री नोरी की रचनाओं में से एकमात्र शिव भक्ति से भरी रचना है। विजयनगर-सम्राट श्री कृष्णदेवराय के दरबार का नाम 'भुवनविजयम' है। उस के दरबार में आठ महान कवि है, जिन में से धूर्जटी ही एक मात्र शिव भक्त कवि है। इन का जन्म श्रीकालहस्ती नामक शिवक्षेत्र में हुआ था। इन्हों ने अपनी कविता कला और अपने पांडित्य से विजयनगर दरबार में उत्तम कवि स्थान प्राप्त किया है। कविता प्रेरणा के लिए यह कभी-कभी 'मोहिनी' नामक वेश्य के पास जाकर, उस की नृत्यकला में तन्मय होता था। शिल्प की दृष्टि से एक अनुपम संघटना है। समयोचित शिवपूजा करना कवि की आदत है। रात के वक्त, जब कवि महोदय, मोहिनी के शयनकक्षा में विश्राम कररहा था, तब शिव-पूजा की धंटी बजी। तुरंत कवि ने मोहिनी के वक्षस्थल को ही शिवलिंग मानकर, उस की पूजा की। उपन्यासकार ने बहुत ही उत्तम शैली में भक्ति रस निरुपन किया है।

शिल्पगत विवेचन में यह एक अनुपम उदाहरण है। एक बार देवराय ने विद्यांपरिषद की चर्चा में भाग लेने के लिए आठ महान कवियों को संदेशा भेजा। उस वक्त धूर्जटी राज्य की सुरक्षा के लिए रुद्र यागा करने में निमग्न है। इसलिए चर्चा में वह शामिल हो नही सका। पहले राजा कृधित होगये और बाद में असलियत जानकर राजा ने उस का सम्मान किया। राजकुमार तिरुमलराय की हत्या के अपराध में अप्पाजी को मृत्युदंड दिया गया। इस घटना से विचलित होकर धूर्जटी ने राज दरबार छोड दिया। श्रीकालहस्थी में जाकर वह रहने लगा। यहाँ कवि ने अनुपम शिवभक्ति पुराण ''श्रीकालहस्तीश्वर महत्यम'' की रचना की। कवि के प्रोत्साहन से वहाँ पर ''सिरिलुत'' नामक शिल्पि ने उग्र नरसिंह मूर्ती की प्रतिमा बना दी। उस मूर्ती की प्रतिष्टा के लिए अच्युतराय ने एक मंदिर का निर्माण किया। उसी मंदिर में कवि ने अपना अंतिम समय बिताया। यहीं इन का स्वर्गवास हुआ था। शिल्प की दृष्टि से यह एक उत्तम उपन्यास है। धूर्जटी को, लेखक ने परम शिव भक्त के रूप में वर्णन किया है।

'नारायणभट्टु' नामक उपन्यास, एक सफल जीवनीपरक उपन्यास है। इन का जन्म कल्याणकटकम नामक राज्य में हुआ था। बचपन में इन को लोग नन्नि नारायण कहा करते थे। उस वक्त जैनधर्म के प्रभाव से अन्य धर्मो के प्रति लोग अनुचित व्यवहार कर रहे थे। इसलिए नारायण अपने परिवार सहित राजमहेंद्रवरम पहुँचता है। वहाँ राजराजनरेंद्र के दरबार में आश्रय प्राप्त करता है। दिन-ब-दिन पंडित नारायण भट्टु का यश बडने लगा। विद्याध्ययन करते समय नारायण और नन्नय्या दोनों सहपाठी और मित्र भी थे। नारायण के प्रोत्साहन से ही नन्नय्या ने महाभारत की रचना आरम्भ किया। नारायण की योजनाओं के अनुसार ही राजा नरेंद्र ने सीमाप्राँतों में होनेवाले विद्रोंहों को दबादिया। राज्य की सुरक्षा के लिए पंडित नारायण ने सोमयाग भी किया। लेकिन धीरे-धीरे उस का स्वस्थ बिगढगया। आखिर एक दिन उस का देहावसान भी होगया। प्रस्तुत उपन्यास में नारायण को

राजनीतिज्ञ पंडित के रूप में उपन्यासकार ने वर्णन किया है। शिल्प की दृष्टि से यह सफल रचना है।

श्री तुम्मलपल्लि रामलिंगेश्वरराव द्वारा लिखित श्री पोतनामात्युलु नामक रचना, सफल जीवनीपरक उपन्यास है। राचकोंड राज्य के बम्मेर नामक गाँव में पोतना का जन्म हुआ है। इस के माता-पिता परम शिवभक्त हैं। पोतना का बडा भाई तिप्पना सिपाही के रूप में काम कर रहा है। छोटे उम्र में ही पोतना ने वीरभद्र विजयमु नामक महापुराण कहानी लिखी। उसे पढकर महान कवि श्रीनाथ ने पोतना की सराह की और अपनी बहिन का हाथ उस के हाथ में रखा। माता-पिता की मृत्यु के पश्चात् पोतना ने खेती का काम शुरु किया। भगवान मल्लिकार्जुन स्वामी के अनुष्ठान के बाद उस के घर में एक लडके का जन्म हुआ। इसलिए पोतना ने अपने पुत्र का नाम मल्लना रखा। बालक मल्लना भी पढाई में ध्यान रखते हुये, पिता के काम-काज में सहायता करने लगा। रेड्डिराजा के दरबार में आश्रय प्राप्त करने के उपरान्त श्रीनाथ कवि एकबार परिवार सहित पोतना को देखने बम्मेर गाँव पहुँचता है। उस वक्त पोतना अपने बेटे के साथ खेत में हल जोत रहा है। अपना हाट-बाट दिखाने के लिए श्रीनाथ ने अपने पालकी को हवा में उडाते हुये, चमत्कार किया। फिर भी पोतना ने इस की तरफ ध्यान नहीं दिया। मल्लना ने तुरंत हल से दोनों बौलों को हटा दिया। फिर भी हल जोतरहा है। लज्जित होकर श्रीनाथ ने भक्त पोतना से क्षमा की याचना की। उपन्यासकार ने इस घटना का वर्णन रोमाँचक ढंग से किया। शिल्प की दृष्टि से यह बहुत ही उत्तम उदाहरण है। भगवान श्रीकृष्ण के दर्शन से प्रभावित होकर पोतना ने भगवान श्रीकृष्ण की कहानी और गीतोपदेश को एक ग्रंथ के रूप सृजन किया। उस अनुपम रचना का नाम 'महा भागवत' है। यह जनसाधारण तक श्री कृष्ण की कहानी लाती है। राचकोंड राजा ने उसे अपने नाम अंकित करने की आज्ञा दी। परन्तु पोतना ने उसे भगवान श्रीकृष्ण को ही अंकित करदिया। राजा ने उसे बंदी बनाने सिपाहियों को भेजा। तब एक जंगली जानवर ने तमाम गाँववालों के सामने ही सिपाहियों को मारकर चला गया। यह करिश्मा देखकर तमाम लोग

पोतना को सराहने लगे। राजा का मन भी बदल गया। शिल्प की दृष्टि से यह एक उदाहरण है। इस प्रकार यह बेशक जीवनीपरक उपन्यास है।

श्रीप्रसाद द्वारा लिखित रोशनारा नामक रचना एक खलनाइका के जीवन पर आधारित उपन्यास है। मुगल सम्राट औरंगजेब की बडी बहिन रोशनारा है। वह देखने में बदशकल, काली, और हिजडे की तरह दिखती है। उस में स्त्री से भी ज्यादा पुरुष लक्षण दिखाई देते हैं। इसलिए उसे बचपन से ही माता-पिता का पर्याप्त प्रेम-अनुराग नहीं मिला। इसलिए उस में प्रतिकूल और विपरीत लक्षण जगृत हुये हैं। वह मुसलमान धर्म की परम अनुयायी है। अपने छोटे भाई औरंगजेब को राजा बनाने के लिए बडे भाई दारा की हत्या करवाती है। पिताजी को अंधकार खैद में बंधी बनाती है। वह अपने आप को भगवान की प्रतिनिधि मानती है। उस की बात औरंगजेब के लिए आज्ञा के समान है। शिल्प की दृष्टि से उस का रूप वर्णन एक सफल उदाहरण है। उपन्यासकार ने रोचक ढंग से उसका बदशकल और राजनैतिक परिज्ञान का वर्णन किया है। पहलीबार शिवाजी को देखकर उसके मन में स्त्री सहज प्रेम का उदय होता है। वह किसी भी तरह शिवाजी को अपनाना चाहती है। शिवाजी को हराने के लिए सामंत राजा जस्वंतसिंह को सेनाध्यक्ष बनाकर औरंगजेब पूना भेजता है। हिन्दू धर्मवाले जस्वंत पर कडी नजर रखने के बहाने रोशनारा भी सेना के साथ युद्ध भूमी पहुँचती है। अकेले रोशनारा, शिवाजी के पास जाकर अपनी इच्छा व्यक्त करती है। परन्तु शिवाजी उसे माता कहकर ज्ञानोपदेश करता है। कृधित होकर वह दिल्ली लौटती है। युद्ध में हारने के पश्चात औरंगजेब शिवाजी और उसके पुत्र शंभूजी को सादर दिल्ली आने का निमन्त्रण भेजता है॥ दिल्ली के दरबार में दोनों को बंदी बनाकर खैद में डालता है। उन दोनों को धीरे-धीरे मारने के लिए, हरदिन विषाहार भेजदिया जाता है। लेकिन रोशनारा उन दोनों को बचाती है। खैद से बागजाने में सहायता करती है। यह समाचार औरंगजेब तक पहुँचता है। इसलिए औरंगजेब अपनी बहिन को मारना चाहता है। शिवाजी के प्रेम से वंचित रोशनारा स्वयं विरक्त मन से विषमिला पानी पीकर आत्महथ्या करलेती है।

इस प्रकार अंत में प्रेम से विरक्त एक अभागिन की तरह रोशनारा दिखती है। शिल्प की दृष्टि से यह अनुपम घटना है। इस प्रकार प्रतिकूल लक्षणों से भरे मनवाली रोशनारा जीवन का अंत दयनीय स्थिति में होता है। शिल्प की दृष्टि से यह सफल उपन्यास है।

लल्लादेवी द्वारा लिखित 'लकुमादेवी' नामक जीवनीपरक उपन्यास में एक नर्तकी की जीवनी है। आँध्रप्राँत में रेड्डिराजाओं का जमाना स्वर्णयुग मानाजाता है। वेलमनायुडु नामक राजा ने अपने दरबार की विख्यात नर्तकी को माँ बनाकर, धोका देकर जंगलों में छोडदिया। उस नर्तकी ने कमलयेगिनी नामक सन्यासिनी के आश्रम में एक बेटी को जन्म देकर, वहीं छोडकर चलीजाती है। सन्यासिनी ने उस का नाम लकुमा रखकर पालन पोषण कर के बडा किया। ग्यारह वर्ष के उम्र में ही नृत्यु कला में वह प्रवीण हो गई। उस की नृत्यु भंगिमाओं को देखकर शांतिवर्धन नामक शिल्पी ने तन्मयता से उस की प्रतिमा बनादी। रेड्डिराज वंश मे राजकुमार कोमर गिरिरेड्डी बहुत ही वीर, धीरोधात्त और सुन्दर भी है। उस के प्रति लकुमा के मन में प्रेम भाव उत्पन्न होगया। लकुमा की प्रतिमा को देखते ही राजकुमार के मन मे लकुमा के प्रति प्रेम भाव जागृत होगया सन्यासिनी के समक्ष आश्रम के मंदिर में उन दोनों का विवाह होता है। लकुमा की नृत्य से प्रभावित राजकुमार नाट्यशास्त्र लिखना चाहता है। महरानी की इच्छा पूरी करने के लिए, राजा को राज्याधिकार का जिक्र कराने के लिए लकुमा प्राणत्याग करती है। राज ने जो वचन मरते वक्त लकुमा को दिया, उस के अनुसार ही सुस्थिर राज्य पालन किया। शिल्प की दृष्टि से यह सफल उपन्यास है।

श्री रामलिंगेश्वरराव द्वारा लिखित जीवनीपरक रचनाओं में 'श्री ताल्लपाक अन्नमाचार्य' एक सफल उपन्यास है। इनका जन्म कडप प्राँत के ताल्लपाक नामक गाँव में हुआ है। माता-पिता के नाम नारायणसूरी और लक्कमाँबा हैं। वे दोनों अन्नमय्य को भगवान वेंकटेश्वर स्वामी के वर का फल मानते हैं। बचपन से ही उस के मन में तिरुमलस्वामी के प्रति भक्ति दिन-ब-दिन बडती गई। पाँच वर्ष की उम्र

में गुरु ने उस की परीक्षा करके बताया कि अन्नमय्य एक संधाग्रही है। उस की रुची के अनुसार ही उसे संगीत की शिक्षा दी गई। पारिवारिक काम-काज से विरक्त होकर, तंबुरा और करताल लेकर वह तिरुमलक्षेत्र पहुँचगया। अन्नमय्य की भक्ति के प्रभाव से मंदिर का ताला भी टूट गया और रात के वक्त भी उसे भगवान का दर्शन होगया। यह दृष्य देखकर वहाँ के लोग इसे साक्षात नारद मुनि का अवतार मानने लगे। गृहस्ताश्रम से विरक्त होकर वह तपकरने लगा। एक - एक कीर्तन लिखते हुए, उस ने बत्तीस हजार कीर्तन लिखे। भक्त पुरंधरदास और अन्नमय्या दोनों गहरे मित्र थे। हरी कीर्तन करने वाले अन्नमय्या को अपने बारे में कीर्तन करने के लिए राजा सालव नरसिंहराय ने आज्ञा दी। इनकार करनेवाले अन्नमय्या को जंजीरों में बन्दी बनादिया। लेकिन कुछ ही क्षण में वे जंजीर फूलमाला के रूप में बदलगये। इस प्रकार अंत तक कीर्तनालाप करते हुये अपने आप को अन्नमय्या ने तिरुमलेश में मिलालिया। शिल्प की दृष्टि से इस उपन्यास में भक्ति रस निरुपण हुआ है।

समीक्षा :-

उल्लिखित उपन्यासों में साहित्यकारों की सामाजिक व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित उपन्यासों का शिल्पगत विवेचन कियागया है। नोरि नरसिंह शास्त्री द्वारा लिखित उपन्यासों में कवि सार्वभौमुडु, धूर्जटी और नारायणभट्टु मुख्य है। इन में महान कवि पंडितों की जीवनियाँ है। शिल्प की दृष्टि से इन रचनाओं में शुद्ध ग्राँथिक भाषा शैली का प्रयोग हुआ है। धूर्जटी नामक रचना में कवि को परम शिव भक्त के रूप में वर्णन किया है। रोशनारा नामक उपन्यास में एक खलनायिका का वर्णन मिलता है। लकुमा नामक उपन्यास में विख्यात नर्तकी की जीवनी है। अन्मय्य नामक रचना में हरिभक्त की जीवनी का वर्णन है। इस प्रकार अनेक महान साहित्यकारों और सामाजिक व्यक्तियों की जीवनियों का शिल्पगत विवेचन प्रस्तुत अध्याय में कियागया है।

- - -

- अध्याय सात -

उपसंहार

विश्व साहित्य में आज उपन्यास सर्वाधिक लोक प्रिय साहित्यिक विधा है। उपन्यास आधुनिक युग की देन है। शिल्प की दृष्टि से उपन्यास अन्य कलाओं की अपेक्षा अधिक सहज एवं बोधगम्य है। उपन्यासकार अन्य कलाकारों की भाँति एक सर्जक होता है। वह अपने अनुभवों और भोगे हुए सत्य को यथार्थ परिस्थितियों और वातावरण के बीच चरित्रों के माध्यम से प्रकट करता है। वास्तव में कथा का परम्परागत विकसित स्वरूप ही, आज का उपन्यास है। उपन्यास मानव जीवन का यथार्थ चित्रण है। गद्य के रूप में रहने पर भी, इस का प्रभाव महत्वपूर्ण है। कुछ विद्वानों के अनुसार उपन्यास का जन्म पूँजीवाद के उत्थान के साथ हुआ है। आरम्भ से आज तक उपन्यास ने अनेक मंजिलों को पार किया, उस में से जीवनीपरक मंजिल भी एक है। जीवनीपरक उपन्यास अर्थात किसी महान व्यक्ति की जीवनी का मौलिक रूप में वर्णन करने वाली गद्य रचना। इस उपन्यास की विशेषता यह है, कि उस के पात्र ऐतिहासिक होते हैं, काल्पनिक नहीं। जीवनी और उपन्यास के मध्य का सेतु ही, जीवनीपरक उपन्यास है। वस्तुतः जीवनीपरक उपन्यासकार वस्तु सत्य एवं भाव सत्य के बीच संतुलन स्थापित करता है। जीवनीपरक उपन्यासों के अध्ययन के लिए उन के तत्व पर ध्यान देना आवश्यक है।

जीवनीप्रधान साहित्य में उपन्यास का स्थान अनोखा है। हिन्दी साहित्य में मौलिक जीवनीपरक उपन्यासों की संख्या कम है। लेकिन अनुदित उपन्यास अनेक हैं। साहित्य क्षेत्र में 'जीवनी' एक विधा है। परन्तु जीवनीपरक या जीवनी पर आधारित उपन्यास लिखना विशिष्ट काम कहलाता है। उपन्यास विधा के माध्यम से सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक या ऐतिहासिक महापुरुष की जीवनी अपने उद्देश्य की पूर्ति कर सकती है। हिन्दी में श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासकार केवल चार-पाँच ही हैं। उन में से रांघेय राघव, बृन्दावनलाल वर्मा, अमृतलाल नागर, आदि

मुख्य जीवनीपरक ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं। डा. रांगेय राघव द्वारा लिखित उपन्यासों में 'यशोधरा जीत गई', जो बुद्ध भगवान की जीवनी पर आधारित लघु जीवनीपरक उपन्यास है। वाल्मीकि त्रिपाठी द्वारा लिखित 'सम्राट अशोक' नामक उपन्यास दो भागों में विभाजित है। इन के द्वारा लिखित दूसरा उपन्यास 'महराज', महराजा हर्ष की जीवनी पर आधारित है। बृन्दावनलाल वर्मा द्वारा लिखित उपन्यासों में 'महरानी दुर्गावती' और 'झाँसी की रानी' मुख्य हैं। 'शिवनेर केसरी' नामक रचना में मराठ वीर छत्रपति शिवाजी की जीवनी का वर्णन है। सत्यशकुनजी द्वारा लिखित 'तान्त्याटोपे' नामक उपन्यास भारत के प्रथम स्वतंत्र सेनानी तान्त्याटोपे की जीवन गाथा है। वास्तव में जीवनी-घटनाओं का अंकन नही, वरन चित्रण है। जीवनी परक उपन्यासों में काव्य के सभी गुण है। एक मनुष्य अंतरिक और बाह्य स्वरूप का कलात्मक निरूपण है। जिस प्रकार चित्रकार अपने विषय का एक ऐसा पक्ष पहचान लेता है, जो विभिन्न पक्षों में ओत-प्रोत रहता है और जिसमें नायक की सभी कलाएं और घटाएँ समन्वित हो जाती है, ठीक उसी प्रकार उपन्यासकार अपने नायक का वर्णन करता है। जीवनीपरक उपन्यास तो व्यक्ति-जिवन की ऐतिहासिक घटनाओं का स्थूल साहित्यक उल्लेख नहीं है। यह उपन्यास, नायक के जीवन का चित्रण करता है, तो वह उस के चित्रण की विशेषताओं का भी उल्लेख करता है। नायक के व्यक्तित्व का रेखाचित्र पाठकों के सम्मुख रखने का प्रयत्न किया जाता है। इस व्यक्तित्व में उस के गुण, अवगुण, उसका चरित्र, उस के आचार, व्यवहार, असका आंतरिक मन, उसकी संस्कृति तथा सांस्कृतिक उपार्जन, इन सब का एक रसायन प्रस्तुत होता है। हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यासकारों ने यह साबित किया है। विश्लेषित उपन्यासों में हर नायक या नायिका का वर्णन इसीप्रकार किया गया है। जीवनी प्रधान उपन्यासों में नायक के समस्त व्यक्तित्व का चित्रण आवश्यक है। इसलिए व्यक्तिगत गुणों के साथ दोषों का भी उल्लेख होना चाहिए।

दूसरे अध्याय में हिन्दी के ऐतिहासिक सामाजिक और साहित्यिक व्यक्तियों पर आधारित जीवनीपरक उपन्यास चुनेगये हैं। इन उपन्यासों में जीवन चरितात्मकता,

उपन्यास की अवश्यक विधा है। इस में इतिहास समुचित साहित्यकारों या समाज-सेवियों के व्यक्तियों के समग्र पहलुओं को प्रकाशित करने का आग्रह होता है, जिन के जीवन को इतिहासकारों ने विस्तृत करदिया है, ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने प्राय: इतिहास-प्रसिद्ध राजनैतिक पुरुषों को प्रस्तुत किया है। प्रागैतिहासिक कथा-वस्तु के उपन्यास प्राय: काल्पनिक पात्रों पर आधारित होते है, जो जीवन चरितात्मक उपन्यास के लिए सम्भव नहीं हैं। जिन उपन्यासों का विश्लेषण प्रस्तुत अध्याय में किया गया है, उन की कथावस्तु, औपन्यासिकता, जीवनीपरक है। लोई का ताना, नामक उपन्यास में लोई के जीवन के माध्यम से लेखक ने कबीर की जीवनी का विश्लेषण किया। 'रत्ना की बात' में भी तुलसी को महान कवि बनानेवाली एक प्रोत्साहक चीज का वर्णन है। महाकवि बिहारी की जीवनी पर आधारित 'मेरी भव बाधा हरो' नामक रचना में रीतिकालीन विशेषताओं का भी वर्णन किया है। इस प्रकार हर उपन्यास सफल जीवनीपरक उपन्यास साबित हुआ है।

तीसरे अध्याय में तेलुगु के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यासों का विश्लेषण किया गया है। उपन्यासों में खास व्यकित्यों की जीवनीयाँ दिखाई देती है। जीवनियों पर आधारित उपन्यासों की जीवनीपरक उपन्यास मानना उचित है। प्रस्तुत अध्याय में ऐतिहासिक राजवंश से निकट सम्बन्ध रखनेवाले मंत्रियों की जीवनियाँ भी उपलब्ध है। 'आर्य चाणक्य' की जीवनी पर आधारित उपन्यास में मौर्य वंश की जानकारी भी प्राप्त होती है। क्यों कि मौर्य वंश की स्थापना में और चन्द्रगुप्त को सम्राट बनाने में राजगुरु के रूप में एवं अर्थशास्त्र, जैसे महान ग्रन्थ के लेखक के रूप में उस का बहुमूल्य योगदान है। इसीप्रकार 'अप्पाजी' जिस का असली नाम तिम्मरुसु है, उस की जीवनी पर आधारित उपन्यास में विजयनगर की विशेषता और श्रीकृष्ण देवराय के यश के बारे में भी वर्णन किया गया है। इन रचनाओं को ध्यान से परखने पर, हमें यह ज्ञात होता है, कि दो, तीन उपन्यासों को छोडकर बाकी सभी उपन्यास ऐतिहासिक सामाग्री पर ही लिखित हैं। लेकिन उपन्यासों में काल्पनिकता का सहारा लेना सहज

लक्षण है। उपन्यास को रोचक बनाने के लिए लेखक को काल्पनिकता का सहारा लेना पडता है। आमतौर पर सभी उपन्यास सफल जीवनी परक उपन्यास हैं।

इस प्रबन्ध रचना के चौथे अध्याय में तेलुगु के ऐतिहासिक सामाजिक और साहित्यक व्यक्तियों की जीवनियों पर आधारित उपन्यास हैं। उस में साहित्यकारों की और सामाजिक व्यक्तियों की जीवनियों का विश्लेषण है। नोरि नरसिंह शास्त्री द्वारा लिखित उपन्यासों में कवि सार्वभौमुडु, कविद्वयम, धूर्जटी और नारायण भट्टु आदि सफल जीवनीपरक उपन्यास हैं। कविसार्वभौमुडु नामक उपन्यास में महाकवि श्रीनाध की जीवनी का विस्तार वर्णन किया गया । श्रीनाथ और डिंडमभट्टु की साहित्यक-स्पर्था का वर्णन उपन्यासकार ने उचित ढंग से किया। कविद्वयम नामक उपन्यास में भी श्रीनाथ को लेखक ने एक प्रोत्साहक और स्फूर्तीदायक कवि के रूप में करुण रस प्रधान वर्णन किया है। भक्त पोतना की महानता के लिए श्रीनाथ को उचित कारण बताया। धूर्जटी नामक उपन्यास में शिव भक्त के प्रभाव से एक वेश्य भी भक्तिनी बनजाने का वर्णन है। नारायण भट्टु नामक उपन्यास में भक्त नारायण और नन्नय्या की दोस्ती का वर्णन है। आँध्रकविता पितामह नामक रचना में पेद्दन्ना को वीर, धीरोधात्त और महान कवि के रूप में लेखक ने वर्णन किया। हरि-भक्त, संकीर्तनाचार्य अन्नमय्या के चरित्र-चित्रण में लेखक को सफलता प्राप्त हुई। रोशनारा नामक उपन्यास में एक विचित्र, चरित्रहीन नारी की जीवनी प्रस्तुत की गई है। 'रुचीदेवी' नामक उपन्यास में रानी अन्नपूर्णदेवी को समाज सेविका के रूप में वर्णन किया।'लकुमादेवी' नामक रचना में सुप्रसिद्ध और नेक नर्तकी की जीवनी का वर्णन है। साहित्यक, सामाजिक,जीवनीपरक उपन्यासों में उल्लिकित उपन्यासों के अलावा अन्य रचनाओं में जीवनी का स्थान कम है।

शिल्प की दृष्टि से हिन्दी और तेलुगु के उपन्यास सफल जीवनी प्रधान उपन्यास हैं। वस्तुतः जीवनी प्रधान उपन्यास इतिहास, जीवनी और उपन्यास का सशक्त त्रिभुज है। अत: जीवनी प्रधान उपन्यासकार को इतिहास, जीवनी और उपन्यास की विशेषताओं एवं सीमाओं में बन्द कर ही साहित्य सृजन करना पडता

है। जीवनी प्रधान उपन्यास, जीवनी और उपन्यास मध्य की इकाई है। यथार्थ और कल्पना का भी यही सामंजस्य होता है। जीवनी तथ्यात्मक होती है, तो उपन्यास मुख्यतः कल्पनात्मक, परन्तु जीवनी प्रधान उपन्यास इतिहास और साहित्य का मध्यवर्ति होता है, जिसका रचइता इतिहासकार की अपेक्षा अधिक स्वच्छंद, किंतु उपन्यासकार की तुलना में कम अनुरक्त होता है। वस्तुतः जीवनी प्रधान उपन्यासकार, वस्तु सत्य एवं भाव सत्य के बीच संतुलन स्थापित करता है। शिल्प की दृष्टि से उपन्यास को सफल बनाने के लिए उपन्यासकार के लिए यह आवश्यक है, कि ऐतिहासिक तथ्यों की सुरक्षा और उन में बंधे रहे। यदि उन की उपेक्षा करता है, तो शिल्पगत विवेचन सठीक नहीं होता । शिल्पक्षेत्र में उपन्यास को सफल बनाना जीवनी प्रधान उपन्यासकार का प्रधान लक्ष्य है। 'यशोधरा जीत गई' नामक उपन्यास में यह साबित किया गया है, कि महराज गौतम को भगवान बुद्ध भगवान बनाने में यशोधरा कामयाब हुई है। श्रीरामचन्द्र को लोक नायक के रूप वर्णन करनेवाले 'लोक कवि' तुलसी की जीवनी का वर्णन 'रात्ना की बात' में कियागया। 'मानस का हंस' नामक उपन्यास में लोककवि तुलसी की अनुपम रचना 'रामचरितमानस' को प्रधान स्थान दिया गया है। कृष्णभक्त कवि सूरदास की जीवनी पर आधारित 'खंजन नयन' नामक उपन्यास में 'अंध कवि' की वर्णनात्मक शैली का विश्लेषण किया गया। रीतिकालीन श्रृंगार कवि बिहारी की जीवनी और रचनाओं में रस सिद्धी का वर्णन 'मेरी भव बाधा हरो' नामक उपन्यास में किया गाय है। आधुनिक युग के आरम्भिक हिन्दी साहित्यकारों में से भगवती माँ सरस्वती के सुपुत्र के रूप में भारतेंदु हरिश्चंद्र का वर्णन 'भारती का सापुत' नामक उपन्यास में किया गया है। झाँसी की राणी, तात्याटोपे, शिवनेर केसरी, आदि उपन्यासों में वीर रस और देश-भक्ती का निरुपण हुआ है।

तेलुगु के जीवनी परक उपन्यासों में 'आर्य चाणक्य' प्रथम जीवनीपरक उपन्यास है। इस में कुशल राजनीतिज्ञ, परम देशभक्त, सफल प्रशासक, महान आचार्य के रूप में चाणक्य का वर्णुन किया गया है। 'रूद्रमदेवी' नामक उपन्यास में उपन्यासकार ने स्त्री को अबला नहीं सबला का रूप दिया। मुगल बादशाह अकबर

की जीवनी पर आधारित उपन्यास 'अकबर' में उसे वीर, धीरोदात्ता और सफल प्रशासक के रूप में अभिवर्णन किया गया है। 'शाहजहाँ' नामक रचना में मुम्ताजमहल और शाहजहाँ की प्रेम कहानी है। श्रीकृष्ण देवराय की पत्नी राणी अन्नपूर्णादेवी की जीवनी पर आधारित उपन्यास 'रुचीदेवी' में राणी को उत्तम समाज सेविका के रूप में वर्णन किया। 'लकुमादेवी' में आँध्र नाट्य में सुप्रसिद्ध नर्तकी लकुमा की जीवनी है। 'अप्पाजी', नायक उपन्यास में महामात्य तिम्मरुस की जीवनी है। इस में विजयनगर साम्राज्य को इतिहास में सुवर्ण युग का स्थान दिलाने वाले अमात्य के रूप में अप्पाजी का वर्णन किया गया है। वात्सल्य, वीर रस और भक्तिरस का संगम स्थान 'छत्रपति शिवाजी' नामक उपन्यास है। इस में शिवाजी का वर्णन हिन्दू धर्म संरक्षक और हिन्दू राज्य संस्थापक के रूप में किया गया है। 'झाँसी लक्ष्मीबाई' और 'तिप्पुसुल्तान' नामक उपन्यासों में उन दोनों का वर्णन स्वतंत्र सेनानियों के रूप में किया गया है। हिन्दी और तेलुगु के जीवनीपरक उपन्यासों की तुलना में अधिक साम्य और कम अंतर दिखाई देता है। साम्य के लिए, उदाहरण के रूप में चार उपन्यासों को हम ले सकते हैं। सम्राट अशोक, रानी अहल्याबाई, झाँसी की रानी और छत्रपति शिवाजी। ये चार चरित्र तो ऐतिहासिक प्रधान चरित हैं। हिन्दी में बृन्दावनलाल वर्मा द्वारा झाँसी की रानी और रानी अहल्याबाई लिखित हैं। वाल्मीकी त्रिपाटी द्वारा सम्राट अशोक और यादवचन्द्र जैन द्वारा शिवनेर केसरी दोनों श्रीप्रसाद द्वारा लिखित हैं। लल्लादेवी द्वारा छत्रपति शिवाजी नामक उपन्यास लिखागया है। झाँसी लक्ष्मीबाई नामक उपन्यास की रचना श्री सुब्रह्मण्य शर्मा द्वारा किया गया है। इन चारों उपन्यासों में कथावस्तु एह ही है। लेकिन भाषा-शैली में थोडा अंतर जरूर है। ऐतिहासिक घटनाओं को एक सिलसले में रखने में सभी उपन्यासकार सफल हुए हैं। उपन्यास को रोचक बनाने के लिए एक-एक लेखक ने एक-एक तरीका अपनाकर काल्पनिकता का सहारा लिया है। यह सच है कि काल्पनिकता की सहायता लिये बिना उपन्यास को रोचक बनाना मुष्किल है। हिन्दी और तेलुगु के दोनों उपन्यासकारों ने महान कविगण की जीवनियों पर आधारित उपन्यास लिखे। हिन्दी में लोई का ताना, कबीर की जीवनी पर आधारित है। रत्ना की बात और मानस का हंस महान कवि तुलसी की जीवनी पर आधारित है। खंजन

नयन भक्त कवि सूरदास की जीवनी पर आधारित है। लकिमा की आँखें और मेरी भव बाधा हरो ये दोनों श्रृंगार कवि विद्यापति और बिहारी की जीवनियों पर आधारित है। 'भारती का सपूत' आधुनिक हिन्दी के पिता माने जाने वाले महान कवि भारतेन्दु हरिश्चंद्र की जीवनी पर आधारित है। इस प्रकार तेलुगु साहित्यकारों की जीवनियों पर उपन्यास लिखे गये हैं। उदाहरण के रूप में महान कविगण- पेद्दना, तिक्कना, श्रीनाथ, धूर्जटि और नारायण भट्टु आदि। साम्य यह है कि एक-एक महान कवि की जीवनी संबंधी उच्च स्थानों का वर्णन तो साफ-साफ किये गये हैं। लेकिन तेलुगु में श्रीनाथ कवि की जीवनी में अंतिम दशा का वर्णन बहुत ही करुण रस प्रधान ढंग से किया गया है। क्यों कि चर्चित किसी भी कवि की अंतिम दशा इतना दयनीय नहीं रहा। कवि श्रीनाथ को सिपाही, कोडों से मारते ले जाने का दृश्य सचमुच हृदय में ग्लानि उत्पन्न करता है। 'अप्पाजी' नामक उपन्यास में भी अंतिम भाग भी करुण रस से भरा है। क्यों कि गलत फहमी से अप्पाजी को हत्यारा मानकर देवराय अपने ही पिता समान अप्पाजी की आँखे निकालने की आज्ञा देता है। अंधा होकर अप्पाजी तडपते-तडपते मरजाता है। यह भी करुणरस प्रधान रचना है। हिन्दी में संगीत सम्राट तानसेन की जीवनी पर उपन्यास लिखा गया है। तेलुगु में भक्त कवि और संगीत स्रष्टा अन्नमाचार्य की जीवनी पर उपन्यास लिखित है। तानसेन नामक उपन्यास में राजश्रय प्राप्त करके, शान से जीवन बिताने वाले तानसेन के द्वारा की गई गलती को सुधारने के लिए बैजू नामक संत ने जो कार्य किया उस का वर्णन है। इस प्रकार तानसेन अपनी गलती सुधार लेता है। इसी प्रकार अन्नमय्या ने समाज में व्याप्त अंधविश्वासों का खंडन करके भक्तिसार, साधारण जनता तक संगीत के माध्यम से पहुँचाया। इस प्रकार तेलुगु और हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यासों में अधिक साम्य और अंतर कम है। मोटे तौर पर देखाजाय तो तेलुगु में एक खलनाइका की जीवनीपर आधारित उपन्यास लिखित है। उस का नाम रोशनारा है। उपन्यासकार ने उस के प्रति सहानुभूति जगाने का प्रयास किया है। इस प्रकार का उपन्यास हिन्दी में उपलब्ध नहीं था। इस प्रकार प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में हिन्दी और तेलुगु के ऐतिहासिक, सामाजिक साहित्य जीवनीपरक, मौलिक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ: हिन्दी के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास

	उपन्यास का नाम	लेखक का नाम	प्रकाशन	प्र. वर्ष
1.	खंजन नयन	श्री अमृतलाल नागर	राजपाल एण्ड संस	1980
2.	झाँसी की रानी	श्री वृन्दावनलाल वर्मा	मयूर प्रकाशन झाँसी	1985
3.	तात्याटोपे	श्री सत्यशकुन	राजपाल एण्ड संस	1989
4.	तानसेन	श्री महेन्द्र कुमार मुकुल		1984
5.	धुनी का धुंआ	डा. रांगेय राघव	राजपाल एण्डसंस	1978
6.	भरती का सपूत	डा. रांगेय राघव	राजपाल एण्डसंस	1954
7.	मानस का हंस	श्री अमृतलाल नागर	राजपाल एण्ड संस	1985
8.	मेरी भव बाधा हरो	डा. रांगेय राघव	राजपाल एण्ड संस	1976
9.	महराजा हर्ष	श्री वाल्मिकि त्रिपाटी	ग्रंथम पिंटिंग प्रेस-क.पु.	1983
10.	महाराणा प्रतापसिंह	श्री सूर्यकांत त्रिपाटी निराला	राजकमल प्रकाशन-दिल्ली	1988
11.	यशोधरा जीतगई	डा. रांगेय राघव	राजपाल एण्ड संस	1977
12.	रत्ना की बात	डा. रांगेय राघव	राजपाल एण्ड संस	1957
13.	रानी अहल्याबाई	श्री वृन्दावनलाल वर्मा		1984
14.	रानी दुर्गावती	श्री वृन्दावनलाल वर्मा		1987
15.	लकिमा की आँखें	डा. रांगेयराघव	राजपाल एण्ड संस	1974
16.	लोई का ताना	डा. रांगेय राघव	राजपाल एण्ड संस	1957
17.	शिवनेर केसरी (शिवाजी)	श्री यादव चंद्र जैन		1989
18.	सम्राट अशोक	श्री वाल्मिकि त्रिपाटी		1985

आधार ग्रंथ : तेलुगु के ऐतिहासिक जीवनीपरक उपन्यास

1.	अकबर	श्रीप्रसाद	नवज्योति प.ब.-वि.वा.	1989
2.	अप्पाजी	श्रीप्रसाद	नवज्योति प.ब.-वि.वा.	1984
3.	अहल्याबाई	श्री लक्ष्मी नरसिंह	नवज्योति प.ब.-वि.वा.	1991
4.	आँध्रकविता पितामहुडु	श्री जी. आँजनेयुलु	प्रेमा पब्लीषर-वि.वा.	1980
5.	आर्य चाणक्युडु	श्री सूर्यनारायण शर्मा		1977
6.	कवि द्वयम	श्री नोरि नरसिंह शास्त्री	जयंति प.ब.-वि.वा.	1989
7.	कवि सार्वभौमुडु	श्री नोरि नरसिंह शास्त्री	जयंति प.ब.-वि.वा.	1986
8.	छत्रपति शिवाजी	श्री लल्लादेवी	नवज्योति प.ब.-वि.वा.	1987
9.	झाँसी लक्ष्मी बाई	श्री सुब्रह्मण्य शर्मा	आर्य प्रचुरण-वि.वा.	1990
10.	तिक्कन सोमयाजी	श्री रामलिंगेश्वरराव		1985
11.	तिप्पु सुल्तान	श्री शातवाहन	वंशी पब्लीषर-वि.वा.	1987
12.	धूर्जटि	श्री नोरि नरसिंहशास्त्री	जयंति प.ब.-वि.वा.	1983
13.	नारायण भट्टु	श्री नोरि नरसिंहशास्त्री	जयंति प.ब.-वि.वा.	1984
14.	रुचीदेवी	श्री परवस्तु वेंकय्यसूरी		1990
15.	रुद्रमदेवी	श्री नोरि नरसिंहशास्त्री	जयंति प.ब.-वि.वा.	1985
16.	रोशनारा	श्रीप्रसाद	नवज्योति प.ब.-वि.वा.	1985
17.	लकुमादेवी	श्री लल्लादेवी	नवज्योति प.ब.-वि.वा.	1990
18.	शाहजहाँ	श्रीप्रसाद	नवज्योति प.ब.-वि.वा.	1987
19.	श्री ताल्लपाक अन्नमाचार्युलु	श्री रामलिंगेश्वरराव	क्रान्ति प्रेस-मद्रास	1974
20.	श्री पोतनामात्युलु	श्री रामलिंगेश्वरराव	क्रान्ति प्रेस-मद्रास	1984
21.	साम्राट अशोक	श्रीप्रसाद	नवज्योति प.ब.-वि.वा.	1992

सदर्भ ग्रंथ : हिन्दी

1. काव्य के रूप — बाबू गुलाबराय
2. उपन्यासकार प्रचकार प्रेमचंद और हंस — डा. रत्नाकर पांडेय
3. प्रेमचंद पूर्व के हिन्दी उपन्यास — ज्ञानचंद जैन
4. समीक्षा के सिद्धांत — प्रों. सत्येन्द्र
5. साहित्य का उद्देश्य
6. हिन्दी उपन्यास का उद्भाव और विकास — डा. प्रतापनारायण टंडन
7. हिन्दी उपन्यास का प्रारम्भिक विकास — डा. कुमारी शैलबाला
8. हिन्दी उपन्यास : विशेषत: प्रेमचन्द- — विलोचन शर्मा
9. हिन्दी के साहित्यकारों की जीवनी पर आधारित उपन्यास - डा. प्रतिभा पारकर
10. हिन्दी लघु उपन्यास - घनश्याम मधुप
11. हिन्दी साहित्य में जीवन चरित्र का विकास - डा. चंद्रावतीसिंह
12. भार्गव आदर्श हिन्दी शब्दकोश - प्रं रामचन्द्र पाठक

सदर्भ ग्रंथ : तेलुगु

1. आँध्र नवला परिणाममु — वी.कुटुंबराव
2. आँध्रुल प्राचीन चरित्र — जी.पी.कोंडय्य
3. आँध्र साहित्य चरित्र — पी.लक्ष्मीकाँतम
4. आँध्र चरित्र — आरुद्र
5. आँध्र साहित्य दर्पणमु — वी.वी.रविशास्त्री

सदर्भ ग्रंथ : अंग्रेजी

1. Advanced History of India - Nilakanta Sastri
2. English and Telugu Dictionary - P. Sankar narayana
3. An Introduction to Literary Criticism - Arvest
4. Indian History - Romella Thafer.
5. Novel and the People - Cross